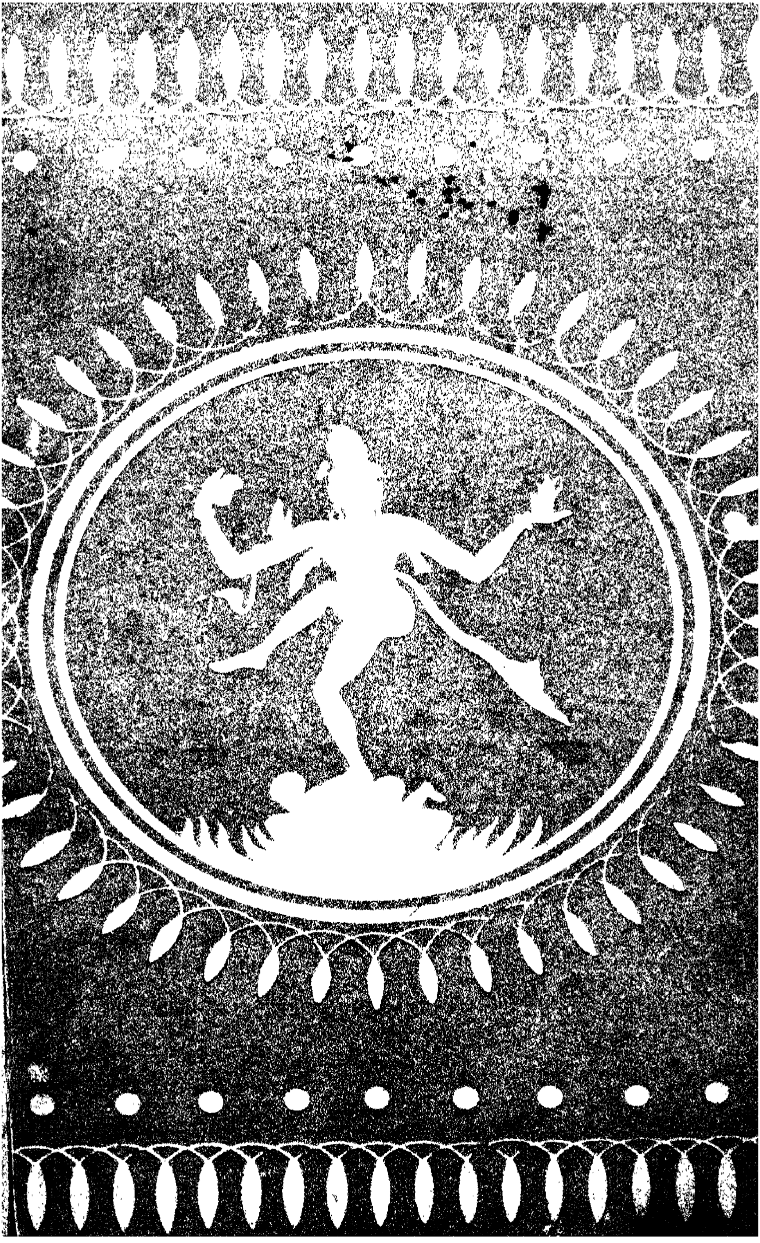




श्री गुरुदत्त जी का जन्म सन् १८८४, दिसम्बर मास में लाहौर में हुआ। आपका परिवार आर्य समाज आन्दोलन से प्रभावित था। अतएव आपके विचारों का निर्माण उसी वातावरण में हुआ। एफ० एस-सी० तक तो डी० ए० वी० स्कूल तथा कॉलेज के विद्यार्थी रहे। पश्चात् एम० एस-सी० तक गवर्नमेंट कॉलेज, लाहौर में शिक्षा प्राप्त की। सन् १६१६ में पंजाब यूनिवर्सिटी से एम० एस-सी० पास कर, यूनिवर्सिटी के रिसर्च-स्कॉलर के रूप में कार्य किया; तत्पश्चात् गवर्नमेंट कॉलेज में डिमॉस्ट्रेटर रहे। गांधीजी द्वारा संचालित असहयोग आन्दोलन में आपने सरकारी नौकरी छोड़ दी तथा कांग्रेस द्वारा स्थापित नैशनल स्कूल में हैडमास्टर बन गए। १६३१ में आपने आयुर्वेद का अध्ययन कर चिकित्सा-कार्य आरम्भ कर दिया।

आपका प्रथम उपन्यास 'स्वाधीनता के पथ पर' सन् १६४२ में छपा और उससे ही आपकी गणना श्रेष्ठ उपन्यासकारों में होने लगी। अब तक आपके बाईस उपन्यास छप चुके हैं। ये राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक इत्यादि भिन्न-भिन्न विषयों पर लिखे गए हैं। आपके सभी उपन्यास सोद्देश्य और रोचक हैं। कई उपन्यासों के विषय अति गम्भीर होते हुए भी, उनकी विवेचना में रोचकता का अन्तर नहीं आया। समालोचकों द्वारा इनकी भूरि-भूरि प्रशंसा हुई है।

दासता के नए रूप

लेखक

श्री गुरुदत्त

भारती साहित्य सदन

नई-देहली

प्रकाशक :

भारती साहित्य सदन,

३०/६० कनॉट सरकस, नई दिल्ली—१

प्रथम संस्करण

जनवरी, १६५७

मुद्रक :

श्री गोपीनाथ सेठ,

नवीन प्रेस, दिल्ली

भूमिका

जब स्मृतिकार महाराज मनु ने आज से सहस्रों वर्ष पूर्व यह लिखा था कि श्रुति में भी अयुक्तिसंगत बात हो तो माननीय नहीं है, तो मानव की दासता की शृंखलाओं पर घोर आघात किया था। यही कारण है कि भारतीय आचार-व्यवहार में अथवा भारतीयों की मान्यताओं में युक्ति एक विशेष निर्णायक आधार रही है।

स्मृतिकार के ऐसा विधान करने पर भी सत्ताधीश लोग मनुष्य को दासता की शृंखलाओं में बांधने का यत्न करते रहे हैं। राजनीतिक सत्ता अथवा आर्थिक व सामाजिक प्रभुत्व प्राप्त कर लोग अन्य मनुष्यों को अपनी सत्ता अथवा प्रभाव के अधीन रखने के लिए अनेकानेक ढंग प्रयोग करते हैं। ये हैं दासता उत्पन्न करने के उपाय। समय के साथ इसके रूप बदलते हैं। इस पर भी दासता तो दासता ही है। रूप बदलने से दासता की तीव्रता कम नहीं होती और न ही उसके दुष्परिणामों से बचा जा सकता है।

आम के पेड़ का अंकुर, जमने के समय भी आम का पेड़ रहता है। वह संगतरा अथवा नींबू का अंकुर नहीं हो सकता। इसी प्रकार दासता प्रारम्भिक रूप में भी दासता ही रहती है। वह स्वतन्त्रता नहीं कही जा सकती। दासता का अंकुर विचारों में उत्पन्न होता है। विचार से दासता, आचरण में भी दासता ही उत्पन्न करेगी। अन्य कुछ नहीं।

आज संसार में विचार-स्वातन्त्र्य का लोप हो रहा है। जन साधा-

रण की बात छोड़ भी दी जाय, कहे जाने वाले पढ़े लिखे लोग भी विचार-स्वातन्त्र्य को अवांच्छित मानने लगे हैं। वे विचारों की दासता और नियन्त्रण में भेद नहीं समझ पाते।

राजनीति में दलबन्दी दासता का एक रूप है। ऐसा माना जाता है कि राजनीति बिना दल बनाने के चल नहीं सकता। दल-निर्माण के समय तो मुख्य तथा आधारभूत सिद्धान्तों की मान्यता ही निहित होती है, परन्तु समय-समय पर, जब प्रत्येक विषय में दल के सदस्यों पर 'ह्विप' (आदेश) चलाये जाते हैं तो नियन्त्रण अधिनायकवाद में बदल जाता है और दल एक दासों का बाड़ा बन जाता है। शासन के पार्लियामेंटरी रूप (Parliamentary System of Government) में दलबन्दी एक विशेष अंग माना जाता है और साधारण बातों में भी दल के सदस्यों को 'ह्विप' के अनुसार मतदान करना होता है। यूं तो इसको नियन्त्रण का नाम दिया गया है, वास्तव में यह अधिनायकवाद का एक रूप है ही।

भारतीय संसद में कांग्रेस का अतुल बहुमत होते हुए भी निरन्तर 'ह्विप' की आवश्यकता बनी रहती है। वे विषय भी, जो दल बनाते समय अथवा निर्वाचनों के समय किसी के ध्यान में नहीं होते, जब विचार के लिए उपस्थित होते हैं, तो दल के नियन्त्रण के अधीन सब को एक ही मत देना होता है। इसको दासता नहीं कहेंगे तो और क्या कह सकते हैं?

जब मध्यप्रदेश के कुछ मन्त्रीगणों के, लाभ के कार्यों में भाग लेने का विषय १९५३ में उठा तो इस पर भी संसद में कांग्रेस का 'ह्विप' जारी हुआ और जब उत्तर प्रदेश के एक संसदीय सदस्य ने, कांग्रेस के नेता के आदेश के विरुद्ध अपनी आत्मा की पुकार के अधीन मत दिया तो उसको दल से बाहर करने की धमकी दी गई और उस बेचारे से क्षमा याचना कराई गई।

जो लोग संसदीय कांग्रेस पार्टी की मीटिंगों में कांग्रेस नेता की फटकारें सुनते रहते हैं, वे मध्यकालीन राजाओं-महाराजाओं के आदेशों के

पालन करने वाले मानसिक दासों के चित्र का एक नवीन संस्करण तैयार करते प्रतीत होते हैं।

दासता का यह रूप केवल संसदीय अथवा धारा सभा के दलों तक ही सीमित नहीं रहा। आज कांग्रेस के चार आना सदस्यों पर भी नियन्त्रण का चक्र चलाया जा रहा है। उन पर भी स्वतन्त्र विचार रखने पर अनुशासनात्मक कार्यवाही (डिसिप्लिनरी एक्शन) की जाती है। कांग्रेस का मान रखने के लिये कांग्रेस के प्रत्येक सदस्य को अपनी वाणी और कार्यों पर काबू रखने का आदेश है। परिणाम यह हो रहा है कि विचारशील, चरित्रवान् तथा योग्य व्यक्तियों के लिए राजनीतिक दलों में स्थान कम होता जाता है और गुण्डे, चरित्रहीन, स्वार्थी तथा मूर्खों के लिए दलों में स्थान बढ़ता जाता है। यह तो ऐसे ही है, जैसे चाटुकार राजाओं-महाराजाओं के पास खुशामदी और स्वार्थी लोगों का जमघट लग जाता था। अन्तर केवल यह हुआ है कि जहां पिछले काल में अधिनायकवाद व्यक्तिगत होता था, वहां आज यह पार्टी के नेताओं का बन गया है।

पार्टी के नेताओं के प्रभाव और उनकी सत्ता का सिक्का जन-साधारण में बनाए रखने के लिये जो उपाय प्रयोग में लाए जाते हैं, वे वही हैं, जो बीते युग में शासकों की सत्ता बनाए रखने के लिए प्रयोग में लाए जाते थे।

बहुत दूर जाने की आवश्यकता नहीं। आज से चालीस-पचास वर्ष पूर्व, जो-कुछ अंग्रेज शासकों के प्रभाव को स्थिर रखने के लिए किया जाता था, वही आज कांग्रेस शासकों के लिए किया जा रहा है। लार्ड कर्जन तथा उस समय के 'प्रिंस ऑफ वेल्स' के भ्रमण के समय, जिस प्रकार स्कूलों के विद्यार्थियों को उनके स्वागत के लिये सड़कों के किनारे खड़ा कर, उनके हाथों में कागज के बने 'यूनियन जैक' की झंडियां पकड़ाकर 'हिप हिप हुर्रे' के नारे लगवाए जाते थे, वही आज देश के दो-चार व्यक्तियों के लिये किया जा रहा है। केवल रूप में अन्तर है।

अपने देश के किसी एक व्यक्ति के लिये, बिना उसकी विचारधारा को समझने की शक्ति रखने वाले कोटि-कोटि विद्यार्थियों के मुख से, उसके लिए जय-जयकार बुलवाने का प्रयास तो किसी सीमा तक क्षम्य भी माना जा सकता है, यद्यपि है यह दासता का एक रूप ही, परन्तु विदेशियों को, जिनके न तो विचार हमसे मिलते हैं, और न ही उनके काम हमें पसन्द हैं, यहाँ बुला, केवल संस्कार डालकर भारत के बालकों के मन में उनकी मानप्रतिष्ठा बैठाना तो घोर दासता का चिन्ह है। यह तो किसी प्रकार भी क्षम्य नहीं हो सकता।

आज राजनीतिक और आर्थिक मान्यताएँ वैसे ही जनता के मन में डाली जा रही हैं, जैसे किसी काल में धर्मगुरु और भगवान् की मान्यताएँ सरलचित्त बालकों के मन में डाली जाती थीं। भगवान् के अस्तित्व में सन्देह करने वाले पर तो भारत में प्रतिबन्ध कभी नहीं था, परन्तु राजनीतिक तथा आर्थिक धारणाओं पर सन्देह करने वालों के लिए तो आज जेल और फांसी तक का दण्ड नियत है। इस कारण मजहबी दासता से कहीं अधिक राजनीतिक तथा आर्थिक विचारों की दासता पतन की बात मानी जानी चाहिए।

इस सब का परिणाम यह हो रहा है कि जनता तो दास की दास ही है। केवल शासक बदल गये हैं। किसी काल के राजा महाराजाओं के स्थान में, किसी काल के धनी-मानी जमींदारों के स्थान पर, अथवा किसी काल के वायसरायों, कमिश्नरों और डिप्टी-कमिश्नरों के स्थान पर आज राजनीतिक नेता आसीन हो गये हैं। जनता तो वैसी-की-वैसी ही दासता में जकड़ी पड़ी है।

जब कोई व्यक्ति अपनी बुद्धि का प्रयोग न कर, किसी अन्य की बात को इस कारण मानता है कि वह धनी-मानी अथवा अन्य प्रकार से बड़ी पदवी पर पहुँच गया है, वह दास ही तो कहायेगा। अवस्था अतिचिन्तनीय तब हो जाती है, जब जनसाधारण इस दासता में आनन्द अनुभव करने लगता है। आज जन साधारण महात्मा गांधी,

पंडित जवाहरलाल तथा अन्य नेताओं अथवा कार्ल मार्क्स, लेनिन और स्टालिन को इस कारण माननीय मानता है क्योंकि वे नेता हैं अथवा रहे हैं। भले ही उनकी बातें अथवा सिद्धान्त उनकी समझ से दूर हों और परीक्षा करने पर अशुद्ध सिद्ध हों।

ये हैं दासता के नये रूप, जिनकी एक झलक मात्र ही इस पुस्तक में दिखाने का यत्न किया गया है। यूँ तो यह उपन्यास है और इसमें वर्णित पात्र तथा स्थान सब काल्पनिक हैं और किसी विशेष व्यक्ति तथा स्थान के अर्थवाचक नहीं। शेष तो पढ़ने और समझने से सम्बन्ध रखता है और यह पाठकों के विचार और निर्णय करने की बात है।

गुरुदत्त

प्रथम परिच्छेद

: १ :

'महात्मा गांधी की जय ! महात्मा गांधी की जय !!' के गगनभेदी नारों में गाड़ी चल पड़ी ।

अमृतसर स्टेशन से रेलगाड़ी, तोबड़तूर लदी हुई चल पड़ी । गाड़ी में तिल भरने को भी स्थान नहीं था । छत पर, बाहर पायदान पर और इंजिन के आगे-पीछे, अभिप्राय यह कि एक इंच भर भी ऐसा स्थान नहीं था, जहाँ कोई-न-कोई व्यक्ति बैठा, खड़ा अथवा लटका हुआ न हो ।

१६ अगस्त, १६४७ का दिन था और अमृतसर से इसी प्रकार लदी हुई गाड़ियाँ भारत की राजधानी की ओर धड़ाधड़ जा रही थीं । इस पर भी अमृतसर में पश्चिमी पंजाब से आए विस्थापित जनों की भीड़ कम नहीं हो रही थी । जितने लोग रेल, मोटर, बसों इत्यादि से जाते थे, उनसे कहीं अधिक पाकिस्तान के अधीन आए पंजाब से आ जाते थे ।

सन् १६४४ में महात्मा गांधी और मिस्टर जिन्ना में पाकिस्तान बनाने के विषय पर वार्तालाप हुई थी । इस वार्तालाप में गांधीजी यह मान गए थे कि देश का बँटवारा हो जाए । केवल दो बातों पर मतभेद रहा था । एक तो देश के बँटवारे के साथ-साथ हिन्दू और मुसलमानों की अदला-बदली पर और दूसरा महात्माजी के हिन्दुओं की ओर से बोलने के अधिकार पर ।

मिस्टर जिन्ना का यह विचार था कि देश का बँटवारा होना चाहिए हिन्दू और मुसलमानों के आधार पर और बँटवारे के पश्चात् सब मुसल-

मान पाकिस्तान चले जाएँ और सब हिन्दू भारत में। महात्माजी इस बात को ठीक नहीं समझते थे। उनका विचार था कि लोग जहाँ रहते हैं, वहाँ ही रहें और अपने देश की बनने वाली सरकारों के अधीन देश-भक्त बनकर रहें। मिस्टर जिन्ना इसको अस्वाभाविक और अव्यवहारिक बताते थे।

मिस्टर जिन्ना का कहना सत्य और महात्माजी की इच्छा असत्य सिद्ध हुई। महात्मा गांधी और कांग्रेस के विपुल प्रयत्न करने पर भी हिन्दू पाकिस्तान में नहीं रह सके। जैसे मधु-मक्खियों को अपने छत्ते से धुआँ कर भगा दिया जाता है, वैसे ही पाकिस्तान में हिन्दुओं के साथ किया गया।

हिन्दुओं को बनने वाले पाकिस्तान से भगाने का प्रयत्न १५ अगस्त १९४६ से ही आरम्भ हो गया था। इस प्रयत्न का श्रीगणेश कलकत्ता में 'डायरेक्ट एक्शन डे' के नाम पर हुआ। कलकत्ता में इस प्रयत्न को सफलता नहीं मिली। कलकत्ता से अधिक सफलता मिली पंजाब में। यहाँ यह काम ३ मार्च, १९४७ को आरम्भ किया गया। इस दिन मुस्लिम-लीग के दबाव के कारण खिज़िर मन्त्री-मण्डल को त्याग-पत्र देना पड़ा। गवर्नर ने मुस्लिम लीग को मन्त्री-मण्डल बनाने का निमन्त्रण दिया, परन्तु कांग्रेसी और सिख नेताओं ने मुस्लिम लीग के मन्त्री-मण्डल बनाने का विरोध किया और इसके लिए सार्वजनिक आन्दोलन आरम्भ कर दिया।

यह निर्विवाद सत्य है कि १९२१ के पश्चात् धीरे-धीरे हिन्दुओं का नेतृत्व कांग्रेस के हाथ में चला गया था। १९४६ के निर्वाचनों के समय ९५ प्रतिशत हिन्दुओं के वोट कांग्रेस को मिले थे। इससे ३ मार्च, १९४७ की लाहौर की गड़बड़ का पूर्ण उत्तरदायित्व कांग्रेस पर ही माना जाना चाहिए।

लाहौर की इस गड़बड़ के पश्चात् पंजाब में गवर्नर का शासन हो गया और गवर्नर महोदय मुस्लिम लीग की लूटमार के आन्दोलन को

रोकने में असमर्थ सिद्ध हुए। इस तरह हिन्दुओं को, बनने वाले पाकिस्तान से निकालने का प्रयास, जो कलकत्ता में असफल रहा था, पंजाब में सफल होने लगा।

ज्यों-ज्यों समय व्यतीत होता गया, पंजाब से हिन्दुओं का निकास बढ़ता गया। १५ अगस्त १९४६ के कलकत्ता के 'डायरेक्ट ऐक्शन' के ठीक एक वर्ष के पूर्ण होते-होते 'डायरेक्ट ऐक्शन' का उद्देश्य सिद्ध हो गया।

कांग्रेस के नेताओं का कहना कि भारत में स्वराज्य महात्मा गांधी के शान्तिमय आन्दोलनों के कारण मिला है, एक निर्विवाद सत्य नहीं; परन्तु पाकिस्तान का केवल एक वर्ष में हिंसात्मक आन्दोलन से बनना एक उल्लेखनीय सत्य है। पाकिस्तान बना और मिस्टर जिन्ना के विचारानुसार पाकिस्तान से हिन्दुओं का पत्ता कट गया। उनका वहाँ रहना असम्भव हो गया।

१५ अगस्त, १९४६ से लेकर कांग्रेसी नेता निरन्तर यह कहते रहे थे कि पंजाब तथा पूर्वी बंगाल के हिन्दुओं को अपने-अपने घरों में ही रहना चाहिए, पाकिस्तान नहीं बनने दिया जाएगा। पश्चात् जब पाकिस्तान स्वीकार कर लिया गया तो ये नेतागण कहने लगे कि हिन्दू पाकिस्तान में रह सकेंगे, उनको भारत नहीं आना चाहिए; परन्तु उनके ये सब कथन निरर्थक सिद्ध हुए।

कुछ हिन्दू ऐसे भी थे, जो कांग्रेसी नेताओं के इन आश्वासनों पर विश्वास न कर, बनने वाले पाकिस्तान से चले आए थे। ऐसे हिन्दुओं की संख्या बहुत कम थी। इनमें भी प्रायः तो लूटमार के भय से ही आए थे। इन लोगों को, जो १५ अगस्त, १९४७ से पूर्व ही भारत में आ पहुँचे थे, यहाँ के हिन्दू, जो कांग्रेसी विचार रखते थे, भीरु, कायर कहते थे।

लाहौर के एक प्रसिद्ध नागरिक ने इसी प्रकार जब देहरादून में अपना निवास बनाया और जब एक प्रसिद्ध कांग्रेसी नेता ने उनसे कहा, "पण्डित जी! डरकर भाग आये न?" तो उनका उत्तर था, "डर कर

नहीं, प्रत्युत् सोच-विचार कर, व्यवहारिक बुद्धि को दृष्टि में रखकर। दुर्भाग्य से आप-जैसे मूर्खों को कौम ने नेता माना हुआ है, जो ऐसी अवस्था में हमारी रक्षा के अयोग्य सिद्ध हुए हैं।"

यह कांग्रेसी पंजाब के ही रहने वाले, पंजाब विधान सभा के सदस्य थे। वे कह उठे, "वाह ! अपनी दुर्बलता को छिपाने के लिए हम पर ही पिल पड़े। हम क्या कर सकते हैं ? पंजाब में गवर्नर का राज्य है और हम अब कुछ नहीं हैं।"

"यही तो कह रहा हूँ। तुम जब कुछ नहीं कर सकते तो दूसरों को, जो अपनी बहू-बेटियों की रक्षा के लिए अपने घर छोड़कर यहाँ आ रहे हैं, भीरु क्यों कहते हो ?

"देखिए श्रीमान् जी ! फौज पंजाब के गवर्नर के अधीन नहीं है। वह तो केन्द्रीय सरकार के अधीन है और वहाँ आपके पूज्य नेता पण्डित जवाहरलाल नेहरू बहुत कुछ हैं। वे तो बहुत कुछ कर सकते हैं।

"मुझको स्मरण है कि मार्च मास में पण्डित नेहरू लाहौर पधारे थे और वे हिन्दू मुहल्लों की तबाही देखकर रो पड़े थे। परन्तु दिल्ली पहुँचकर सब-कुछ भूल गए और अब जून का महीना समाप्त होने को आ रहा है। केवल मिस्टर जिन्ना और महात्मा गांधी के संयुक्त वक्तव्य ही प्रकाशित हुए हैं। इसके अतिरिक्त हिन्दुओं की रक्षा के लिए क्या हुआ है ?

"मुसलमान हमको डरपोक और कायर कह सकते हैं। वे और उनके नेता अपने उद्देश्य को समझते हैं और उसकी पूर्ति के लिए वे प्रत्येक प्रकार का प्रयत्न करते हैं। मुसलमान जनता अपने नेताओं की आज्ञा-पालन करती है और नेता उनकी रक्षा के लिए सदैव तैयार रहते हैं। इसके विपरीत हिन्दू जनता अपने नेताओं की आज्ञा पालन तो करती है, परन्तु नेता लोग आ रही मुसीबत को न तो देख सके हैं और न ही उसकी चिकित्सा कर सके हैं।

"श्रीमान् जी ! जाइये। मसूरी की ठण्डी हवा खाइये। यदि आपको वोट देने वाले, आपकी आज्ञा पालन करने वाले जल-भुन रहे हैं, लुटे-

मारे जा रहे हैं तथा उनकी बहू-बेटियों का अपहरण हो रहा है तो आपको क्या ?"

"तो आप हमसे क्या आशा करते हैं ?"

"आपका कर्त्तव्य था कि आप दिल्ली जाकर पण्डित जवाहरलाल जी के घर पर धरना दे देते और उनको पंजाब के हिन्दुओं की रक्षा के लिए सक्रिय प्रयत्न करने को कहते।"

हिन्दुओं में ऐसे मुँहफट बहुत कम थे। भोले-भाले हिन्दू कांग्रेसी वाग्जाल में फँसे हुए, कांग्रेस से बाहर किसी भी समझदार व्यक्ति को अपना नेता मानने के लिए तैयार नहीं थे और कांग्रेसी नेता उन हिन्दुओं को केवल यह कहने के अतिरिक्त कि अपने-अपने घरों में बैठे रहो, कुछ भी सुझाव दे नहीं सके थे।

१५ अगस्त के कई दिन पीछे तक भी कांग्रेसी नेता पंजाबियों के लिए यही उचित समझते रहे थे कि वे पाकिस्तान में बैठे रहें और उनकी उचित रक्षा की जा सकेगी।

परिणाम यह हुआ कि अरबों रुपयों की हानि सहकर, सहस्रों स्त्रियों का अपहरण कराकर और लाखों के मौत के घाट उतारे जाने पर, पंजाब के हिन्दू अपने बचे-खुचे सामान को पोटलियों में बाँध, रेलगाड़ियों के साथ लटके हुए, अमानुषिक यन्त्रणाएँ सहते हुए भारत को चल पड़े।

इन सब प्रकार की मानसिक तथा शारीरिक यन्त्रणा को सहते हुए भी बेचारे भूखे पेटों, सूखे गलों और भर्राई आवाज़ों के साथ 'महात्मा गाँधी की जय' बुला रहे थे।

: २ :

गाड़ी के एक डिब्बे में एक व्यक्ति अपनी पत्नी और दो बच्चों के साथ बैठा था। ये चार प्राणी डिब्बे की दीवार के साथ भिचे हुए थे। डिब्बा खचाखच भरा हुआ था। स्त्री एक कोने की सीट पर बैठी थी। बच्चे गाड़ी के फ़र्श पर बैठे थे। स्त्री के पास ही उसका पति

बैठा था।

इस व्यक्ति के साथ ही सटा हुआ एक फ्रण्टियर का रहने वाला बैठा था। उसके पास उसकी बीवी भूमि पर पिचककर बैठी हुई थी। उस फ्रण्टियर के रहने वाले की बीवी के हाथ में एक पोटली थी।

जब गाड़ी चल पड़ी तो डिब्बे में बैठे एक युवक ने नारा लगा दिया, "महात्मा गांधी की···जय !"

पठान के साथ बैठे व्यक्ति ने, अपने सूखे गले की भर्राई आवाज़ से नारे का उत्तर दिया। पठान पसीने से तरबतर हो रहा था। उसने अपने साथी के भर्राए गले से गांधी जी की जय की आवाज़ सुनी तो हँस पड़ा और उससे पूछने लगा, "तुम्हारे गले से आवाज़ तो निकलती नहीं, फिर चिल्ला क्यों रहे हो ?"

"तो क्या करूँ ? सवेरे से गाड़ी में बैठा प्यास से मरा जा रहा हूँ।"

"ठीक है दोस्त ! पर यह चिल्ला क्यों रहे हो ? तुम्हारे चिल्लाने से गांधीजी की जय कैसे हो जाएगी ?"

"वह तो हो गई है। स्वराज्य जो मिल गया है।"

"पर हमको तो पाकिस्तान मिला है, जहाँ से धक्के मार-मारकर निकाल दिये गए हैं। जानते हो, लाखों की जायदाद का मालिक था। एक पाई नहीं ला सका। यह औरत अपने कुछ भूषण इस पोटली में बाँध लाई है। इनमें से ही रिश्वत देकर गाड़ी में जगह पा सका हूँ।"

"वैसे तो मैंने भी पचास रुपये बाबू को दिए हैं, तब कहीं जाकर जगह मिली है। इस पर भी मेरा विचार है कि दिल्ली जाकर हमारी मुसीबतों का अन्त हो जाएगा।"

वह पठान मुस्कराया और पूछने लगा, "कहाँ से आए हो ?"

"लाहौर कृष्ण नगर का रहने वाला हूँ। वहाँ दर्ज़ी और कपड़े की बहुत बड़ी दुकान थी। दस कारीगर दुकान पर काम करते थे। मज़े में गुज़र होता था। मेरा लाहौर छोड़ने का विचार नहीं था।

"मैं दुकान के ऊपर मकान पर ही रहता था। दुकान तो कई महीनों

से बन्द पड़ी थी। घर में ही पड़ा रहता था और खाने-पीने के अतिरिक्त कुछ काम नहीं था। मैं समझता था कि १५ अगस्त के बाद अवस्था सुधरने लग जाएगी और मैं शान्तिपूर्वक अपना कारोबार चला सकूँगा।

"परन्तु १५ तारीख को एक साहब बलोच फ़ौजियों के साथ आए और मुझसे पूछने लगे, 'मास्टर साहब ! आप कब जा रहे हैं ?'

'कहाँ ?' मैंने पूछा।

'हिन्दुस्तान को और कहाँ ?'

'मेरा जाने का इरादा नहीं है। यहाँ दुकान है, मकान है और फिर मेहनत-मज़दूरी कर पेट भर सकता हूँ। क्या करूँगा जाकर ?'

'नहीं मास्टर साहब ! हिन्दू यहाँ नहीं रहेंगे। आपके लिए अभी फ़ौजी ट्रक आएगा और आपको डी० ए० वी० कॉलेज ले जाएगा।'

"मैं भौचक्का हो देखता रह गया। मेरे देखते-देखते ही फ़ौजियों ने मेरी बीवी और बच्चों को मकान से नीचे उतार सड़क पर खड़ा कर दिया। इसके पश्चात् बलोचियों के साथ आए साहब बोले, 'देखो मास्टर ! चुपचाप नीचे उतर जाओ। नहीं तो गोली मारकर ख़त्म कर दिए जाओगे।'

"मुझे एक बात सूझी। मैंने बहुत ही नम्रतापूर्वक मिन्नत करते हुए कहा, 'मुझे कोट तो पहन लेने दो।'

'हाँ पहन लो।'

"खूँटी के साथ टँगा कोट पहन मैं एकदम नीचे उतर आया। मेरे कोट की जेब में तीन सौ रुपया था। बस वही मैं अपने साथ ला सका हूँ।

"मैं सड़क पर पहुँचा तो उस आदमी ने एक सौ रुपये का एक नोट बलोचियों को दिया और मकान तथा दुकान को ताला लगाकर, वहाँ ही बैठ गया।

"कुछ देर के बाद डोगरा फ़ौजियों का ट्रक आया और मुझको तथा

मेरी बीवी-बच्चों को बैठाकर डी० ए० वी० कॉलेज कैम्प में ले गया। यह औरत कहती है, 'जान बची लाखों पाए।'

"डी० ए० वी० कॉलेज से हमको कल अमृतसर लाया गया और आज पचास रुपये बाबू को देकर यहाँ बैठने को जगह मिल सकी है। सवेरे छः बजे से गाड़ी में बैठे हैं। एक-एक रुपये में पानी का गिलास मिला है। भगवान् का शुक्र है गाड़ी तो चली।"

: ३ :

जैसे किसी अज्ञात कारण से दो भाई एक ही परिवार में जन्म लेने के कारण परस्पर प्रेम करने लगते हैं, वैसी ही बात रेल की यात्रा में होती है। एक पेशावर के होटल 'मीना महल' का मालिक और दूसरा लाहौर कृष्णनगर का दर्ज़ी, दोनों मिल गए गाड़ी में, परस्पर धक्कम-धक्का हुआ, बातचीत हुई और मित्र बन गए।

गाड़ी १६ अगस्त दो बजे मध्याह्नोत्तर की चली हुई, बीस तारीख को दस बजे रात दिल्ली पहुँची। पठान का नाम मोतीराम था और दर्ज़ी का नाम रामलाल। दोनों की पत्नियों में भी बातचीत हुई और दोनों सहेलियाँ हो गईं।

दिल्ली पहुँचने पर मोतीराम ने पूछा, "दोस्त! कहाँ टहरोगे?"

"कुछ पता नहीं! रात को कहीं स्टेशन पर पड़ा रहूँगा। सवेरे देखूँगा कि स्थान कहाँ मिलता है।"

"तो तुम मेरे साथ चलो। मेरा एक जानने वाला यहाँ है। उसके घर का पता मैं जानता हूँ। उसको ढूँढकर वहीं रहेंगे।"

"खान! बहुत तकलीफ़ होगी तुमको और तुम्हारे दोस्त को।"

"वह दोस्त नहीं। मेरे होटल का नौकर था। मैंने उसको तीन महीने पहले यहाँ भेजा था कि कारोबार का प्रबन्ध करें। जब फ्रन्टियर में 'प्लेबिसाईट' हुई थी, तब ही मैं समझ गया था कि उसमें मुस्लिम लीग की जीत होगी और मेरे जैसे खुदाई ख़िदमतगार के लिए पेशावर में रहना

मुश्किल हो जाएगा। बादशाह खान ने भी महात्मा गांधी की भाँति कुछ गलत बातें की हैं। प्लेबसाईट में उसने हमें उसका बायकाट करने की आज्ञा दी थी। मुस्लिम लीग दंगा करने के लिए तैयार थी और हमारे नेता दंगे से डर गए। हमने प्लेबिसाईट का बायकाट किया और हम हार गए।

"जून के महीने में ही मैंने सोहनसिंह को दस हज़ार रुपया देकर दिल्ली भेजा था कि कोई उचित स्थान ले ले और पश्चात् मैं आ जाऊँगा। उसकी एक चिट्ठी आई थी कि अच्छी जगह के लिए दस हज़ार काफी नहीं है। मैंने बाद में दस हज़ार और भेजा। पिछले महीने तक उसकी चिट्ठी आती रही थी। एक महीने से उसका कोई पत्र मुझे नहीं मिला। यह झगड़े के कारण प्रतीत होता है। उसके घर का पता मेरे पास लिखा हुआ है। चलकर ढूँढ लेंगे।"

रामलाल को यह, डूबते को तिनके का सहारा, मिल गया। तीन सौ रुपयों में से, जो वह लाहौर से लेकर चला था, लगभग एक सौ रुपया वह व्यय कर चुका था। एक अपरिचित नगर में, वर्तमान हलचल के बीच, दो सौ रुपयों में वह कुछ कर सकेगा. उसे विश्वास नहीं होता था। अतएव उसने इस आश्रय को ठुकराया नहीं।

गाड़ी दिल्ली स्टेशन पर पहुँची और वे उसमें से उतर, असंख्य यात्रियों की भीड़ में से रास्ता बनाते हुए बाहर निकले। टाँगे वाले ने दरियागंज के दो रुपये माँगे और वे दो रुपये देकर दरियागंज जा पहुँचे। टाँगेवाले ने अन्सारी रोड पर दस नम्बर के सामने उन्हें जा उतारा।

वे विचार कर रहे थे कि नम्बर दस कोई मकान का नम्बर होगा। वास्तव में यह एक मुहल्ला था और उसमें रात के साढ़े ग्यारह बजे सोहन-सिंह पेशावरिये को ढूँढ निकालना सुगम काम नहीं था।

एक युवक, सौभाग्य से घूमता हुआ वहाँ आ निकला। वह उसी मुहल्ले में रहता था। उसे इन बेसरो-सामान यात्रियों की दशा पर दया आ गई और उसने इनकी सहायता कर दी। उसने एक मकान का

दरवाज़ा खटखटाया तो सोहनसिंह की स्त्री ने दरवाज़ा खोल दिया। मोतीराम ने उसे पहचान लिया और युवक को धन्यवाद दे, विदा कर दिया।

सोहनसिंह की बीवी ने भी मोतीराम को पहचाना परन्तु उसने कह दिया, "सरदार जी घर पर नहीं हैं।"

"तो क्या हुआ?" मोतीराम ने कहा, "मैं पेशावर से आया हूँ और रात यहाँ ठहरूँगा।"

"भीतर तो स्थान नहीं है। हम एक कोठरी में, जो दस रुपया महीने किराये की है, रहते हैं।"

"कुछ हरज नहीं। हम आदमी बाहर सो लेंगे और ये औरतें भीतर जाकर सो रहेंगी। सोहनसिंह कहाँ गया है और कब आएगा।"

"वे सिनेमा देखने गए हैं।"

"तो आने वाला ही होगा।" यह कह मोतीराम वहीं बैठ गया और अपनी पत्नी को बोला, "सुन्दरी! जाओ भीतर। तुम दोनों तथा बच्चे भीतर सो जाना। सोहनसिंह बाहर हमारे पास सो रहेगा।"

रामलाल को, सोहनसिंह की बीवी की बातों से बहुत झेंप लग रही थी। उसने मोतीराम के कान में कहा, "चलिए रात किसी बाग में लेट रहेंगे। सवेरे यहाँ आकर बात कर लेंगे।" मोतीराम ने यह उचित नहीं समझा। उसने कहा, "तुम्हारे बच्चे तो सो गए हैं। इनको यहाँ भूमि पर लिटा दो। औरतें भीतर जाकर सो रहेंगी। हम बैठकर सोहनसिंह की प्रतीक्षा करते हैं।"

मोतीराम ने सोहनसिंह की बीवी को कहा, "ज़रा ठंडा पानी भिजवा दो। दोपहर बाद से पानी नहीं पीया।"

सोहनसिंह की बीवी भीतर गई और पीतल के गन्दे गिलासों में नल का पानी भरकर ले आई। ये लोग अभी पानी पी ही रहे थे कि सोहन-सिंह और उसका एक साथी शराब के नशे में झूमते हुए वहाँ आ पहुँचे। वह अपने मकान के बाहर इतने लोगों को खड़ा देख पूछने लगा, "कौन

हो जी तुम ?"

मोतीराम चुपचाप उसकी हालत देखता हुआ खड़ा रहा। इस समय सोहनसिंह की बीवी ने उसको बाँह पकड़कर झकझोरा और कहा, "लालाजी हैं।"

सोहनसिंह ने नशे में ही कहा, "कौन लालाजी ?"

"पेशावर से आए हैं।"

अब सोहनसिंह के होश ठिकाने हुए। उसने कहा, "लालटेन जलाओ तो। बहुत अँधेरा कर रखा है।"

वास्तव में वहाँ अँधेरा नहीं था। सड़क पर लगी बत्ती का प्रकाश पर्याप्त था; परन्तु सोहनसिंह नशे में चूर था और उसकी दृष्टि ठीक काम नहीं कर रही थी।

मोतीराम ने बात बीच में ही काटकर कहा, "लालटेन की ज़रूरत नहीं। मैं मोतीराम हूँ। बहुत गन्दी जगह पर रहते हो सोहनसिंह ?"

"ओह, लालाजी ! आप दिन के वक्त क्यों नहीं आए।"

"भाई ! गाड़ी अभी आई है। देखो तुमने शराब पी हुई है और यह तुम्हारे साथ कौन है ?"

"मेरा साला है।"

सोहनसिंह को समझ तो आ गई थी कि कौन आया है, परन्तु उसका मस्तिष्क शराब पी होने के कारण ठीक काम नहीं कर रहा था। मोतीराम ने इस समय उससे बात करना बेकार समझ, उसको छोड़, उसकी पत्नी से कहा, "इन औरतों को भीतर ले जाओ और इन बच्चों को भी। हम यहाँ बाहर ही रात गुज़ार देंगे। सोहनसिंह !" उसने उसकी ओर मुख कर कहा, "आराम करो, सवेरे बातचीत होगी।"

मोतीराम और रामलाल बहुत थके हुए थे। इस कारण मकान के बाहर, चबूतरे पर लेटते ही सो गए। मोतीराम की नींद सवेरे सूर्य निकलने पर ही खुली। इस समय अन्य मकानों में रहने वाले सड़क पर आने-जाने लगे थे। मोतीराम उठा तो शौच से निवृत्त हो स्नान करने

के लिए स्नानगृह में चला गया। स्नान करते समय उसे पता लगा कि स्नानगृह और साथ के कमरे में एक पतली लकड़ी का पर्दा ही है। साथ के कमरे में सोहनसिंह और उसकी बीवी की बातचीत उसे सुनाई दे रही थी। उनकी बातचीतों में अपना उल्लेख सुन वह ध्यान से सुनने लगा। सोहनसिंह कह रहा था, "नकद तो अब कुछ है नहीं। मकान खरीदा था, सब रुपया उसमें व्यय हो गया। मकान का किराया आया है, परन्तु वह सब-कुछ तो व्यय हो गया है। दो सौ ही तो था। अब इस समय लालाजी को देने के लिए मेरे पास कुछ नहीं।"

"पर यह है तो सब-कुछ उन्हीं का।"

"कानून की रूह से यह सब-कुछ मेरा है। मकान की रजिस्ट्री मेरे नाम से हुई है। दख़ल मुझको मिला है। किरायेनामा मेरे नाम है और फिर मैं यहाँ तीन महीने से भाग-दौड़ कर रहा हूँ। उसका कुछ नहीं चाहिए क्या?"

"पर वे कहाँ जाएँगे?"

"अपने साथ जरूर बहुत-सा रुपया लाए होंगे। उससे उनके कारोबार तथा रहने का प्रबन्ध कर दूँगा।"

"मुझको तो खाली हाथ आए मालूम देते हैं।"

"यदि खाली हाथ आए हैं तो महा मूर्ख हैं।"

मोतीराम इस वार्तालाप को सुन स्तब्ध रह गया। वह समझ गया कि सोहनसिंह का दिल बेईमान हो गया है और उसने कानूनी बात सब ठीक कर रखी है। इस ओर से बिलकुल आशा छोड़ वह मन में जीविकोपार्जन के विषय पर विचार करने लगा।

स्नानादि से निवृत्त हो वह यह जानने के लिए उत्सुक था कि कौन-सा मकान उसके रुपयों से खरीदा गया है। जब तक रामलाल तथा परिवार के अन्य लोग स्नानादि कर रहे थे, उसने सोहनसिंह को बुलाकर, उससे रुपये और मकान के विषय में बात कर ली। सोहनसिंह ने स्पष्ट कह दिया, "आपने मुझे कोई रुपया नहीं दिया और न ही मुझे कोई

आपका ड्राफ्ट मिला है। मैंने एक मकान खरीदा है। उसका रुपया मैंने जूए में जीता था।"

"तो कहाँ है तुम्हारा मकान ?"

"इस मुहल्ले में ही है। किराए पर चढ़ा हुआ है। दो सौ रुपया महीना किराया आता है।"

"तुम स्वयं इस गन्दे मकान में क्यों रहते हो ?"

"जब मकान लिया था तो वह किराए पर चढ़ा हुआ था और किराए पर चढ़ा मकान खाली नहीं करवाया जा सकता।"

"यहाँ कोई मकान किराए पर खाली भी है ?"

"तो आप लेंगे उसको ?"

"और कर ही क्या सकता हूँ ? सबसे पहले रहने का ठिकाना तो बनाना ही पड़ेगा। पीछे कारोबार की बात भी विचार लूँगा।"

"मकान तो वह सामने वाला है, परन्तु एक सौ रुपया मासिक किराया है।"

"मैं दे दूँगा। तुम मकान का प्रबन्ध कर दो।"

"मैं तो पहले ही सोच रहा था कि आप अवश्य कुछ-न-कुछ प्रबन्ध करके ही आए होंगे।"

मोतीराम चुप रहा। रामलाल को भेज उसने बाज़ार से पूरी साग मँगवाया और भोजन करने के पश्चात् वह अपनी पत्नी सुन्दरी को लेकर बाज़ार चला गया। वहाँ वह ज़ेवर, जो सुन्दरी पोटली में साथ लाई थी, दो हज़ार तीन सौ रुपयों में बेच, अपने और सुन्दरी के लिए और कुछ रामलाल, उसकी बीवी तथा बच्चों के लिए कपड़े खरीद लाया।

रामलाल मोतीराम की इस कार्यवाही पर चकित रह गया। उसने कहा, "दादा ! तुमने यह सब कष्ट किया है, जब तुम्हारे पास भी काफी नहीं है। मैं तुम्हारे अहसान के नीचे जीवन-भर दबा रहूँगा।"

"अच्छा ! अच्छा ! देख लेंगे। सोहनसिंह यह सामने वाला मकान हमको किराए पर ले देगा। तुम भी हमारे साथ ही रहना।"

मकान अढ़ाई मंजिल का था। सब सात कमरे थे और बिजली तथा नल का प्रबन्ध था। एक महीने की पेशगी देने पर मकान मिल गया और मोतीराम, रामलाल आदि सब उसमें रहने चले गए।

रहने का प्रबन्ध कर, कामकाज के विषय में विचार होने लगा। मोतीराम ने रामलाल को बताया, "देखो दोस्त! इस समय मेरे पास लगभग अट्ठारह सौ रुपया है। इसमें ही कोई ऐसा काम सोचना चाहिए, जिससे हमारा गुज़ारा चल सके।"

"मेरे पास दो सौ रुपया है।" रामलाल ने जेब में से रुपया निकालकर दिखाते हुए कहा, "मैं तो एक ही काम सीखा हूँ और उसके विषय में ही अपनी राय दे सकता हूँ। यदि कोई अच्छी-सी दुकान मिल जाए तो मैं दर्ज़ी के काम से ही तीन-चार सौ रुपया महीना पैदा कर सकता हूँ। इतने से हमारा गुज़र होने लगेगा। पीछे फिर और विचार लेंगे।"

बात तय हो गई। साझेदारी में काम करने का विचार हो गया। मोतीराम का विचार था कि एक बार काम चालू होने लगेगा तो फिर आगे देख लिया जायगा।

: ४ :

पंजाब के विस्थापित लोग धड़ाधड़ दिल्ली में आ रहे थे। सत्तर-अस्सी लाख के लगभग हिन्दू पश्चिमी पाकिस्तान छोड़ने पर विवश कर दिए गए थे। इनका विचार छोड़ महात्मा जी ने यह निर्णय कर लिया कि वे नौआखाली में जाकर, वहाँ के हिन्दुओं को पाकिस्तान में ही कहीं रहने के लिए कहेंगे और उनके लिए वहाँ मुसलमान पड़ोसियों से आश्वासन दिलवायेंगे।

महात्मा जी १५ अगस्त से पूर्व ही उस ओर चल पड़े थे। वे १५ अगस्त को कलकत्ता में थे और पाकिस्तान सरकार से, अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए, वहाँ जाकर रहने के लिए स्वीकृति माँग रहे थे। स्वीकृति अभी मिल नहीं रही थी। इसी समय, १७ अगस्त को कलकत्ता में हिन्दू-

मुसलमान झगड़ा हो गया। यह कहा जाता है कि जिन्ना साहब को पूर्ण विश्वास था कि 'रेड क्लिफ मिशन' कलकत्ता और लाहौर को पाकिस्तान में दे देगा, परन्तु दोनों विषयों में उनको निराशा हुई थी। लाहौर के विषय में तो मिस्टर जिन्ना को १० अगस्त को ही पता चल गया कि वह हिन्दुस्तान को दिया जा रहा है। वहाँ पर परिस्थिति उसके अनुकूल थी और ग्यारह अगस्त को नगर के सैकड़ों स्थानों पर आग लगा दी गई और एक ही दिन में सहस्रों को मौत के घाट उतार दिया गया। इस तबाही को देख, यह कहा जाता है कि कांग्रेस के नेता लाहौर को पाकिस्तान में देने के लिए तैयार हो गए।

'रेड क्लिफ मिशन' की रिपोर्ट १३ अगस्त को प्रकाशित होने वाली थी, परन्तु ११ अगस्त के लाहौर के हत्याकाण्ड को देख, इस रिपोर्ट को रोक दिया गया। जिन्ना साहब ने भी यह घोषणा कर दी कि लाहौर के बिना वे पाकिस्तान स्वीकार नहीं करेंगे। इस पर, शायद लॉर्ड माउन्टबेटन के कहने पर, कांग्रेसी नेता लाहौर पाकिस्तान को देने के लिए तैयार हो गए। यद्यपि 'रेड क्लिफ मिशन' की रिपोर्ट १७ अगस्त को ही प्रकाशित की जा सकी, परन्तु पंजाब के गवर्नर ने लाहौर १५ अगस्त को ही मुसलमानों के हवाले कर दिया।

यही बात कलकत्ते के मुसलमान कलकत्ता में करने का विचार रखते थे। परन्तु यहाँ उनका प्रयास अगस्त सन् १९४६ के प्रयास की भाँति ही विफल गया। मुसलमान हिन्दुओं का 'कत्लेआम' नहीं कर सके। १९४६ में भी मुसलमान हिन्दुओं को पहले दिन ही मारने में सफल हुए थे। इस बार न तो वहाँ सुहरावर्दी प्रीमियर था और न ही पुलिस मुसलमान थी। अतएव मुसलमानों द्वारा हिन्दुओं का हत्याकाण्ड कुछ घण्टों से अधिक नहीं चल सका। पहले दिन ही वे पिटने लगे। परिणामस्वरूप दल-के-दल मुसलमान महात्मा जी के पास जाने लगे और उनके सामने हाय-तोबा मचाने लगे। महात्मा जी भी, बिना विचार किए कि दंगा आरम्भ किन्होंने किया है और किस उद्देश्य से किया है, साथ ही

अन्य स्थानों पर मुसलमान क्या और क्यों कर रहे हैं, हिन्दुओं को धमकाने लगे कि यदि उन्होंने झगड़ा बन्द नहीं किया तो वे आमरण-व्रत रख लेंगे।

हिन्दू महात्मा जी के लिए मन में अगाध श्रद्धा रखते थे। अतएव झगड़ा तुरन्त बन्द हो गया। मुसलमानों ने तो झगड़ा बन्द किया था, क्योंकि वे सफलतापूर्वक चला नहीं सके थे, और हिन्दुओं ने झगड़ा बन्द किया महात्मा जी का आदेश मानने के लिए।

इस तरह जो योजना लाहौर में सफल हुई, वह कलकत्ता में विफल गई।

लाहौर में सफलता प्राप्त करने पर मुसलमानों ने दिल्ली में उत्पात मचाना आरम्भ कर दिया। यद्यपि दिल्ली के मुसलमानों को पाकिस्तान से सहायता मिल रही थी, परन्तु शीघ्र ही यहाँ पर भी उनका साहस टूट गया और वे दिल्ली छोड़कर भागने लगे।

दिल्ली में झगड़ा दो और तीन सितम्बर की रात को आरम्भ हुआ। इस झगड़े का प्रथम शिकार करोलबाग़ का एक हिन्दू हलवाई था। पीछे एक डॉक्टर जोशी गोली से मार दिये गए। परन्तु यहाँ के मुसलमानों की स्थिति लाहौर के मुसलमानों से अधिक दुर्बल थी। यह झगड़ा बढ़ता-बढ़ता नौ और दस सितम्बर को अति उग्र रूप में पहुँच गया। इस समय तक नगर के प्रायः मुसलमान नगर छोड़ हुमायूँ के मकबरे में जा पहुँचे थे और वहाँ सरकार ने उनकी रक्षा का प्रबन्ध कर दिया था।

भारत सरकार ने महात्मा जी से, जो अभी तक कलकत्ता में पाकिस्तान सरकार से पाकिस्तान जाने की स्वीकृति की प्रतीक्षा कर रहे थे, सहायता माँगी कि वे आकर हिन्दुओं से मुसलमानों की रक्षा करें अर्थात् झगड़ा शान्त करावें। महात्मा जी पूर्वी पाकिस्तान में हिन्दुओं की रक्षा का विचार छोड़ दिल्ली चले आए। वे ११ सितम्बर को दिल्ली पहुँचे।

दिल्ली में हिन्दू-मुसलमान झगड़े का एक परिणाम यह हुआ कि सहस्रों मुसलमानों की दुकानें और मकान खाली हो गए। ३ सितम्बर

से ७ सितम्बर तक तो मुसलमान छुट-पुट हमले हिन्दुओं पर करते रहे। ८ और ६ सितम्बर को उन मुहल्लों में, जहाँ हिन्दू और मुसलमानों की साझी आबादी थी, डटकर मुकाबला हुआ। १० सितम्बर को मुसलमानों की आशाएँ टूट गईं और वे नदी के बहाव की भाँति मथुरा रोड पर हुमायूँ के मकबरे की ओर जाने लगे।

१० तारीख को सोहन सिंह कहीं से एक जीप पकड़ लाया और नई दिल्ली तथा दरियागंज के चक्कर काटने लगा। उस दिन नई दिल्ली, कनॉट प्लेस में मुसलमानों की दूकानें लूटी जा रही थीं। सोहन सिंह इस अवसर से लाभ उठाने के लिए जीप में लूटा हुआ माल लाद-लाद कर फैज़ बाज़ार में, एक मकान में एकत्रित करने लगा। यह मकान भी एक मुसलमान का खाली किया हुआ था और इस पर सोहन सिंह ने अधिकार कर लिया था।

जीप का ड्राइवर खद्दर पहने हुए था। उसके सिर पर गांधी टोपी थी। सोहन सिंह उस जीप में जाता था और लूटा हुआ सामान लादकर ले आता था। इस प्रकार दिन-भर चलता रहा।

एक-आध बार पुलिस ने जीप को रोका भी, परन्तु पाँच रुपये का नोट, जीप-ड्राइवर की गांधी टोपी और सोहनसिंह का कहना कि एक मुसलमान का सामान फैज़ बाज़ार में सुरक्षित स्थान पर पहुँचा रहा है, सहायक हो जाते। वह छूट जाता और लूट का सामान एकत्रित होता जाता।

यह कार्यक्रम ११ सितम्बर को भी चलता रहा। ११ सितम्बर को महात्मा जी आ गए और साथ ही मद्रास की मुसलमान फ़ौज का पहरा लग गया। इस दिन कांग्रेस के नेतागण मुसलमानों की रक्षा के लिए निकल पड़े।

इस पर भी तीस-चालीस सहस्र मुसलमान हुमायूँ के मकबरे में तथा बीस सहस्र के लगभग ईदगाह में पहुँच चुके थे और पाकिस्तान से आए विस्थापित लोग, जो अभी तक धर्मशालाओं, मन्दिरों, बागों और पटरियों

पर भरे हुए थे, मुसलमानों द्वारा खाली किए मकानों पर अधिकार करने लगे।

रामलाल ने, जो अभी तक मोतीराम के साथ रह रहा था, बाज़ार में परिस्थिति देख मुसलमान द्वारा खाली की गई एक दुकान पर अधिकार कर लिया। घर पहुँच उसने मोतीराम से कहा, "पन्द्रह दिन हो गए थे और इतना प्रयत्न करने पर भी कोई दुकान नहीं मिली थी। आज मुसलमानों की खाली दुकानों पर कब्ज़ा किया जा रहा है। मैं भी एक दुकान पर अपना ताला लगा आया हूँ। दुकान सड़क पर है, अच्छी-खासी बड़ी है। मेरा विचार है कि वहाँ काम खूब चलेगा।"

मोतीराम को यह छीना-झपटी पसन्द नहीं थी, परन्तु दुकान पाने की कठिनाई को वह अनुभव कर रहा था। दिल्ली वालों ने पंजाब के विस्थापितों के आने पर दुकानों की पगड़ियाँ बढ़ा दी थीं। अभी तीन-चार दिन ही हुए थे कि अन्सारी रोड पर एक दुकान के लिए मालिक दो हज़ार रुपया माँगता था। इतना देने की सामर्थ्य न होने के कारण मोतीराम मुख लटकाए वहाँ से चला आया था।

आज रामलाल की कार्यवाही को सुन, इच्छा न रहते हुए भी, वह चुप कर रहा और रामलाल मोतीराम की अनुमति समझ, उस दुकान पर काम आरम्भ करने की योजनाएँ बनाने लगा।

पाँच-दस दिनों में नगर में शान्ति स्थापित हो गई और बीस-इक्कीस सितम्बर को रामलाल ने दुकान में सफेदी करवाई और एक कपड़ा सीने की मशीन, एक पटरा, एक कैंची, एक अलमारी तथा अन्य आवश्यक सामान खरीद लिया। दुकान पर 'मोतीराम रामलाल टेलर्स ऐण्ड ड्रैपर्स' का बोर्ड लगा, बैठ गया।

: ४ :

पेशावर में मोतीराम का होटल 'मीना महल' लाल कुर्ती वालों का विख्यात अड्डा था। मोतीराम खुदाई खिदमतगारों में सालार था। यों

भी होटल रखने के कारण, वहाँ इस संस्था के छोटे-बड़े अधिकारी आते रहते थे।

'प्लेबिसाईट' के समय खान बादशाह की आज्ञा आई थी कि उन्होंने इसका बहिष्कार करना है। प्रायः खिदमतगार यह समझते थे कि यदि वे बहिष्कार न कर, इसमें यत्न करते तो उनके जीतने की बहुत आशा थी; परन्तु बादशाह खान महात्मा गांधी की भाँति नैतिक प्रेरणा को अधिक सफल समझता था।

मोतीराम पढ़ा-लिखा हिन्दू होने के कारण और एक अच्छे चलते हुए होटल का मालिक होने से एक समझदार व्यक्ति माना जाता था और प्रायः उसके साथी उससे भिन्न-भिन्न विषयों पर विचार-विमर्श करने आया करते थे। मोतीराम ने होटल में एक कमरा इसी कार्य के लिए निश्चित कर रखा था। इस कमरे में खुदाई खिदमतगार आते-जाते रहते थे और वहाँ दिन-रात राजनीति पर चर्चा चलती रहती थी।

तीन जून की घोषणा पर सब लोग मिली-जुली भावनाएँ रखते थे। वे प्रसन्न थे कि भारत को स्वराज्य मिला है, परन्तु उनके हृदय विषाद से भर रहे थे कि उनको पाकिस्तान मिला। पाकिस्तान बनने पर कोई भी हिन्दू प्रसन्न नहीं था। मुसलमान लाल कुर्ती के सदस्य भी यही चाहते थे कि काश्मीर और काश्मीर द्वारा फ्रन्टियर प्रान्त भी भारत में सम्मिलित रहता तो ठीक था। फ्रन्टियर के पठान पंजाब के मैदानी मुसलमानों पर विश्वास नहीं करते थे। परन्तु ऐसा हुआ नहीं।

मोतीराम यह समझता था कि यदि लाल कुर्ती वाले 'प्लेबिसाईट' में भाग लेते तो वोट पड़ते समय बहुत रक्तपात होता, परन्तु उस समय मन्त्री-मण्डल डॉ० खान का था और यदि ये लोग चाहते तो 'प्लेबिसाईट' सम्पन्न होता और परिणाम इनके पक्ष में ही होता। फ्रन्टियर भारत के साथ रहने पर काश्मीर भी विवश भारत के साथ मिल जाता और जिन्ना साहब का स्वप्न अधूरा रह जाता।

परन्तु जहाँ यह भूल थी कि फ्रन्टियर में 'प्लेबिसाईट' स्वीकार की गई,

वहाँ यह भी भूल थी कि इसका बहिष्कार किया गया। मोतीराम को यह समझ आया कि रक्तपात से गांधी जी और उनके शिष्य बादशाह खान डर गए और उन्होंने सब चौपट कर दिया।

इस पृष्ठभूमि के साथ मोतीराम दिल्ली पहुँचा था। वह महात्माजी की सदैव सर्वत्र अहिंसात्मक प्रवृत्ति पर विश्वास नहीं रखता था। इस पर भी गांधीजी तथा फ्रन्टियर गांधी खान अब्दुल गफ्फार खाँ के लिए मन में भारी श्रद्धा रखता था।

जब से वह दिल्ली में पहुँचा था, वह कांग्रेसी नेताओं तथा सरकारी अधिकारियों से मिलता रहता था। उसको रहने को मकान तो मिल गया था, परन्तु दुकान के लिए वह बहुत परेशान था। इस कारण रामलाल के एक मुसलमान की दुकान पर अधिकार कर लेने पर मन-ही-मन सन्तोष अनुभव करने लगा था।

जब रामलाल ने दुकान खोली तो वह दुकान को देखने गया। उसने दुकान देख उसमें बहुत से परिवर्तन और सुझाव उपस्थित किए। रामलाल का विचार था कि एक सहस्र रुपया दुकान पर खर्च हो चुका है। अब और खर्च जेब में से न किया जाए और ज्यों-ज्यों धन आता जाए, वे परिवर्तन करते जाएँ।

जब मोतीराम इधर से कुछ निश्चिन्त हो गया तो महात्मा गांधी से मिलने की सोचने लगा। सितम्बर मास का अन्त हो रहा था और इन्हीं दिनों एक दिन वह बिड़ला हाऊस जा पहुँचा। महात्माजी के प्रति अत्यन्त आदर और श्रद्धा से भरा हुआ वह वहाँ पहुँचा और वहाँ पहुँच उसने एक कागज़ पर उर्दू में अपना परिचय लिखकर भीतर भेज दिया। महात्माजी ने उसे भीतर बुला लिया।

मोतीराम के अन्दर आने पर उसे बैठने का संकेत कर, महात्माजी पूछने लगे, "तो आप खान बादशाह के मित्रों में से हैं?"

"मैं अपने को उनके मित्रों में कहने का साहस नहीं कर सकता। हाँ, उनकी पार्टी का एक सक्रिय कार्यकर्ता अवश्य था। मैं वहाँ से चलने

के चार दिन पूर्व ही उनसे मिला था।"

"कैसे थे वे?"

"वे हिन्दुस्तानी नेताओं से नाराज़ थे। उनका कहना था कि हिन्दुस्तानी नेताओं को फ्रन्टियर में प्लेबिसाईट नहीं माननी चाहिए थी।"

"पर यह तो माऊण्टबेटन की योजना थी।"

"ठीक है, पर क्या हमारे नेता ब्रिटिश सरकार के प्रतिनिधि की सारी बातों को मानने के लिए नेता बने थे? उनकी मानते तो आपको स्वराज्य मिलता क्या? आप १६२१, १६३१ और फिर १६४२ में अंग्रेजों की बात मानते तो क्या होता?"

"पण्डित नेहरू मानते थे कि प्लेबिसाईट होनी ठीक है।"

"बादशाह खान समझते थे कि यदि आप पण्डित नेहरू जी को समझा देते तो वे कभी यह स्वीकार नहीं करते।"

"पर मैं कौन हूँ, जो सरकार के कामों में राय दूँ?"

मोतीराम गांधीजी को इस प्रकार बात टालते देख क्षुब्ध हो गया, परन्तु फिर स्मरण कर कि इस व्यक्ति के सन्मुख पूर्ण देश शीश झुकाने को तैयार है, उसने यत्न कर अपने-आपको शान्त किया और चुपचाप बैठा रहा। इस पर महात्मा जी ने कहा, "देखो मोतीराम! मेरे पास फ़ौज, पुलिस नहीं है। मेरे पास तो आत्मिक बल है। उससे ही मैं भूले-भटके भाई-बहनों को सन्मार्ग पर लाना चाहता हूँ। मैं सरकार की नीति में हस्तक्षेप नहीं कर सकता।"

मोतीराम का साहस फिर बँध गया। उसने कहा, "आप कई बातों में तो सरकार की सहायता करते हैं, कई स्थानों पर विरोध भी करते हैं। फिर आप यह कैसे कह सकते हैं कि आप इसके कामों में हस्तक्षेप नहीं करते?"

"जहाँ-जहाँ सरकार मेरी सहायता चाहती है, वहाँ-वहाँ मैं उसके कामों में सहायता देता हूँ।"

"परन्तु आप विरोध किसके कहने पर करते हैं?"

"विरोध अपनी आत्मा की पुकार से।"

"पर क्या आपकी आत्मा मुसलमानों और देश का बँटवारा चाहने वालों की सहायता करने को ही कहती है? फ्रन्टियर में प्लेबिसाईट का विरोध तो आपकी आत्मा को स्वीकार नहीं था न?"

गांधीजी युक्ति से जब निरुत्तर हो जाते तो बात बदल दिया करते थे। यहाँ भी उन्होंने यही किया। बात बदलकर पूछने लगे, "कहाँ ठहरे हैं आप?"

"दरियागंज में अंसारी रोड नम्बर दस में। मकान रहने को तो मिल गया है, परन्तु अभी कोई दुकान कारोबार के लिए नहीं मिली थी। कुछ दिन हुए भागने वाले मुसलमानों में से एक की खाली दुकान पर अधिकार कर लिया है।"

महात्मा जी मोतीराम का मुख देखते रह गए। इस प्रकार की बात, महात्मा जी के सामने, करने का साहस किसी को नहीं होता था। इस कारण उनकी बातचीत सुनने वाले अन्य भी आश्चर्य में मोतीराम को देखते रह गए।

महात्मा जी ने कुछ विचार कर कहा, "पर यह तो गुनाह है।" अपने भाव को अधिक बल देने के लिए महात्मा जी ने फ़ारसी शब्द 'गुनाह' का प्रयोग कर दिया।

"जी हाँ। गुनाह तो है, परन्तु यह मैंने नहीं किया। यह गुनाह उन लोगों ने किया है, जिन्होंने देश का बँटवारा मज़हबी बिना पर स्वीकार किया है और साथ ही बँटवारे के समय जनता का देश बदलने का प्रबन्ध नहीं किया। हम लोग तो उन हालात के दबाव में काम कर रहे हैं, जिनको कांग्रेस, ब्रिटिश सरकार और मुस्लिम लीग के नेताओं ने पैदा किया है।

"महात्मा जी! दिल्ली में यह बात कही जा रही है कि यहाँ दो हज़ार से ऊपर मुसलमान दो-चार दिन के भीतर मार डाले गए हैं। इन हत्याओं का पाप क्या उन लोगों के सिर पर नहीं, जिन्होंने मुसलमानों

के लिए पृथक् देश तो मान लिया, परन्तु यहाँ से मुसलमानों के जाने का प्रबन्ध नहीं किया ?"

"इसकी आवश्यकता नहीं समझी गई ....।" महात्मा जी क्रोध में कुछ और कहना चाहते थे, परन्तु इसी समय एक खद्दरधारी व्यक्ति पिछले कमरे में से निकल आया और कहने लगा, "मालिश के लिए सामान तैयार है।"

महात्मा जी उठ खड़े हुए और जाने से पूर्व मोतीराम को कहने लगे, "यह दुकान जिसकी है, लौटा दो।"

"पर किसकी है मुझे पता नहीं।"

महात्मा जी ने यह बात सुनी अथवा नहीं, कहा नहीं जा सकता। वे दूसरे कमरे में चले गए।

मोतीराम महात्मा जी से, उसके दुकान पर कब्ज़ा करने को अनुचित कहे जाने पर गम्भीर विचार में पड़ गया। एक ओर तो उसकी बुद्धि कहती थी कि गुनाह तो दूर, उसने कोई भी अनुचित बात नहीं की है। पेशावर में उसके होटल पर मुसलमान काम कर रहे होंगे, तो वह क्यों नहीं किसी मुसलमान की दुकान पर बैठकर काम कर सकता ? मुसलमान को उसने निकाला नहीं है, जब कि उसको पेशावर से सरकारी फ़ौजियों ने निकाला था। उसने किसी मुसलमान के माल पर अधिकार नहीं जमाया और उसके होटल पर तो मुसलमानों ने कब्ज़ा कर, उसका तमाम फ़र्नीचर, बर्तन और दूसरा सामान छीन लिया था।

जब वह अपने साथ किये गए व्यवहार का स्मरण करता था तो विचार करता था कि उसने कोई अनुचित बात नहीं की; परन्तु उसकी महात्मा जी पर श्रद्धा और भक्ति उसको कहती थी कि अवश्य उससे बुरी बात हो गई है। एक बात उसको बुरी तरह चुभ रही थी। पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने कुछ दिन पूर्व 'कॉन्स्टिट्यूएन्ट असेम्बली' में एक वक्तव्य में कहा था कि पाकिस्तान से आए विस्थापित लोगों को बसाने का उत्तरदायित्व भारत सरकार पर नहीं है। मोतीराम मन में विचार

करता था कि यदि यह उत्तरदायित्व भारत सरकार का नहीं है, तो किसका है? पाकिस्तान सरकार भी उनके जानोमाल की रक्षा का उत्तरदायित्व नहीं लेती और भारत सरकार भी नहीं लेती।

मोतीराम अपने को एक ऐसी स्थिति में पाता था, जिसका वह शब्दों में वर्णन नहीं कर सकता था। वह मन में सोचता था कि विचित्र भाग्य है उन लोगों का। मिस्टर जिन्ना, लार्ड माउण्टबेटन और पण्डित जवाहरलाल दिल्ली में बैठ गए और निर्णय कर दिया कि हिन्दुस्तान का इतना भाग पाकिस्तान और इतना भारत रहेगा। पाकिस्तान में रहने वाले हिन्दू जिन्ना के भक्त और हिन्दुस्तान में रहने वाले मुसलमान नेहरू के वफ़ादार बने रहेंगे।

समस्या का यह रूप समझ वह हँस पड़ा। वह सोचता था, "हमारी वफ़ादारी को खरीदने और बेचने वाले……।" वह हँसता हुआ चला जा रहा था। एकाएक उसका ध्यान इस बात की ओर चला गया कि एक हिन्दू का पाकिस्तान की सरकार के प्रति वफ़ादार रहने का अभिप्राय मज़हब परिवर्तन भी है, अर्थात् कुछ लोगों ने हिन्दुओं का पाकिस्तान का वफ़ादार बनने का निर्णय कर, उनको हिन्दू से मुसलमान होना भी स्वीकार कर लिया, विचित्र है।

इतना विचार कर भी वह एक बात समझ नहीं सका कि महात्मा गांधी जैसे बुद्धिमान् व्यक्ति क्या यह नहीं समझते। यहाँ तक विचार कर वह अपने-आपको एक बन्द गली के अन्त तक पहुँच गया पाता था। इससे आगे उसको मार्ग नहीं सूझता था।

: ६ :

मोतीराम इसी उधेड़-बुन में घर पहुँचा तो उसने देखा कि सोहन सिंह उसकी प्रतीक्षा कर रहा है। रामलाल उससे बातचीत कर रहा था। सोहन सिंह मोतीराम को देख कहने लगा, "लाला जी! पिछले दिनों मैंने एक मकान पर अधिकार कर लिया था। अब मैंने निश्चय किया

है कि उस मकान में होटल खोलूँगा। वह मकान काफ़ी बड़ा और सड़क के किनारे पर है।"

"परन्तु इसके लिए रुपया कहाँ से आएगा?"

"उसका प्रबन्ध भी हो गया है। तीन दिन तक दिल्ली में मुसलमानों की दुकानें लूटी जाती रही हैं। उस लूट में मैंने अपना भाग ले लिया है। लूट का माल बेचने पर मुझको पाँच हज़ार नकद मिल गया है। इस रुपये से होटल शुरू करने का विचार है।"

लूट में हिस्से की बात सुन मोतीराम को महात्मा जी का कथन कि यह 'गुनाह' है, स्मरण हो आया। उसके मन में आत्म-ग्लानि होने लगी। इस समय उसको अपने होटल की बात स्मरण हो आई। कितनी मेज़ें, कुर्सियाँ, शीशे, दरियाँ, कालीन आदि सामान था उसके होटल में। उसको सब एक-एक कर याद आने लगा। सब उससे छीन लिया गया था। यह स्मरण कर वह सोहन सिंह को कुछ कह नहीं सका। वह मन में विचार करता था कि यह क्या हो रहा है। इस पर वह झगड़े के मूल पर विचार करने लगा।

वह जानता था कि इस्लाम केवल एक मज़हबी संगठन नहीं, यह मज़हब के साथ-साथ राजनीतिक आन्दोलन भी है। इस मज़हबी और राजनीतिक आन्दोलन को शुद्ध राजनीति में सम्मिलित करने वाले महात्मा गांधी थे। १६२० में जब कलकत्ता में कांग्रेस का विशेष अधिवेशन हुआ था तो महात्मा जी ने अपने स्वराज्य-प्राप्ति के आन्दोलन के साथ खलाफ़त के प्रश्न को भी सम्मिलित कर लिया था। उस समय देश के प्रायः सब नेता महात्मा जी की इस नीति के विरुद्ध थे, किन्तु अपने जन-साधारण पर प्रभाव के कारण वे, सब नेताओं को परास्त कर, स्वयं भारत के भाग्य के कर्णधार बन गए। तब से इस्लाम, जिसकी एक टांग राजनीति में है और एक मज़हब में, कांग्रेस के इतिहास पर छा गई। अन्त हुआ पाकिस्तान बनने में और अस्सी लाख के लगभग हिन्दुओं का घरों से बाहर निकाल दिए जाने में।

सोहन सिंह मोतीराम को चुप देख कहने लगा, "लाला जी! होटल तो खुलेगा ही। मैं चाहता हूँ कि आप उसमें काम करें। आप अनुभव रखते हैं और इस समय बेकार भी हैं।"

मोतीराम अभी भी चुप था। इसको सोहन सिंह ने स्वीकृति समझ आगे कहा, "मैं अभी कुछ वेतन तो नहीं दे सकता। इस पर भी पचहत्तर रुपया माहवार तक दे सकूँगा।"

मोतीराम को अपने नौकर द्वारा नौकर रखने की बात सुन क्रोध चढ़ आया। उसने माथे पर त्योरी चढ़ाकर कहा, "सोहनू के बच्चे! मेरा बीस हज़ार ग़बन कर अब मुझे अपना नौकर बनाना चाहते हो?"

"लाला जी! क्रोध करने से लाभ क्या? आपके पास क्या प्रमाण है कि मैंने यह रुपया लिया है। यदि है तो दावा कर दीजिए न। मैंने तो आप लोगों की बुरी हालत देख, यह तज़वीज़ की थी। यह इसलिए नहीं कि मैंने आपका कुछ देना है।"

"मकान जो तुमने खरीदा है, उसके लिए रुपया कहाँ से लाए हो?"

"इस बात का पूछने का आपको हक नहीं। मैंने डाका डाला है, अथवा जूआ खेलकर जीता है या और कुछ किया है। इससे आपको कुछ मतलब नहीं। आपका मैंने कुछ देना है तो सबूत दिखाइए।"

मोतीराम चुप था। सोहन सिंह ने फिर कहा, "मैं आपका पुराना नौकर हूँ। इस कारण मुझे आपकी हालत देख दया आ रही है। मेरा कहा मान लीजिए। पचहत्तर रुपया तो अभी दे रहा हूँ। काम चलने पर वेतन बढ़ा दूँगा।"

"नहीं।" मोतीराम ने स्पष्ट शब्दों में कहा, "तुम जैसे बेईमान की नौकरी करना गुनाह है।"

उक्त घटना के तीन दिन पीछे की बात है, पुलिस के एक दर्जन कॉंस्टेबल आए और रामलाल को दुकान के नीचे उतार, उसकी दुकान को ताला तथा सील लगाकर चले गए।

मोतीराम थाने में पहुँचा और इसका कारण जानने का यत्न करने

लगा। फैज़ बाजार थाने वालों ने उसके गिड़गिड़ाने पर दया कर उसे कह दिया, "लाला! इसका कारण जानना है तो शहर कोतवाली में जाओ।"

शहर कोतवाली जाने पर पता चला कि दो-तीन दिन पूर्व नियुक्त हुए पुनर्वास मन्त्री की आज्ञा का पालन हुआ है। पुनर्वास के इस विचित्र ढंग को देख वह आश्चर्य में पड़ गया। वह मन में विचार कर रहा था कि मन्त्री महोदय को उसकी दुकान-विशेष का ज्ञान कैसे हो गया, जब कि अन्य सहस्रों दुकानों का ज्ञान नहीं हुआ।

रात को जब मोतीराम घर लौटा तो रामलाल घुटनों में सिर दिये हुए शोकग्रस्त बैठा था। उसकी पत्नी, रानी कमरे में एक कोने में बैठी अविरल बह रहे अपने आँसू पोंछ रही थी।

मोतीराम आया तो रामलाल ने उत्सुकता से पूछा, "क्या हुआ है दादा?"

मोतीराम ने उसको ढाढस बँधाने के लिए कह दिया, "चिन्ता की कोई बात नहीं। मैं सब बात समझ गया हूँ। कल पुनर्वास मन्त्री से मिलूँगा और यत्न करूँगा कि दुकान मिल जाए।"

"नहीं ख़ान भाई! कुछ नहीं मिलेगा। मुझको तो उसी दिन इस बात का भय लग गया था, जिस दिन महात्मा जी से तुमने कब्जे की बात कही थी। धनी आदमी निर्धनों की विवशताओं को समझ नहीं सकते। इसी प्रकार ये बड़े-बड़े नेता जनसाधारण की कठिनाइयों का अनुमान नहीं लगा सकते।

"वैसे तो महात्मा जी प्रत्येक बात में न्याय-धर्म, अधिकार-अनधिकार की बातें विचार करते रहते हैं परन्तु वे इस बात का अनुमान नहीं लगा सकते कि एक बाल-बच्चेदार आदमी, जिसका सब-कुछ अन्याय से छीन लिया गया है, कहाँ से खाए अथवा पहने।"

रामलाल के यह कहते-कहते आँसू निकल आए। पाकिस्तान में सब-कुछ छिन जाने पर भी उसको इतना दुःख नहीं हुआ था। पाकिस्तान

सरकार को तो वह अपना शत्रु समझता था और इस कारण पाकिस्तान सरकार के अत्याचार का सामना करना वह बहादुरी समझता था। वह समझता था कि अवसर पड़ने पर वह अपना सब-कुछ वापस लेने के लिए सिर-धड़ की बाज़ी लगा देगा; परन्तु यह तो अपनी सरकार थी, जिसने उसकी थोड़ी-सी पूँजी को भी छीन लिया था। इस सरकार को वह अपना शत्रु नहीं समझता था और इसके विरुद्ध लड़ने का विचार भी नहीं कर सकता था। ये विवशता के आँसू थे, जो वह रोक नहीं सका था।

उसने रोते हुए कहा, "मुझको विश्वास-सा हो रहा है कि हमको इसमें से कुछ नहीं मिलेगा।"

"तो फिर क्या किया जाए?" मोतीराम ने कहा, "मुझको जब महात्मा जी ने दुकान पर अधिकार करना गुनाह बताया था, तभी भय लगने लगा था; परन्तु यह छिन जाने का भय नहीं था। जो लाखों की सम्पत्ति छोड़ आया है, वह इस एक हज़ार के सामान के लिए रोयेगा नहीं। मैं तो बुरे और भले काम का विचार कर काँप उठा था।"

मोतीराम ने जब यह कहा, रामलाल समझ नहीं सका। उसने कुछ विचार कर कहा, "दादा! मैं तुम्हें किसी प्रकार का भी गुनाह करने के लिए नहीं कहता। परन्तु मैं इन बच्चों का पेट भरना एक पुण्य-कार्य समझता हूँ। किसी दूसरे के बच्चों का हक़ छीनकर नहीं, परन्तु अपनी मेहनत और मुशक्कत से। यही तुम्हारे आने से पहले मैं विचार कर रहा था।"

"दोस्त!" मोतीराम ने उसकी पीठ पर हाथ रखकर कहा, "निराश मत होओ। भगवान् पर विश्वास रखो। कुछ-न-कुछ तो बनेगा ही। जिसने जन्म दिया है, वह पालन भी करेगा।

"देखो, एक यह सोहन सिंह है। इसको मैंने बीस हज़ार किसी दुकान का प्रबन्ध करने के लिए दिया था। इसने वह रुपया तो हज़म कर लिया और अब मुझे अपनी नौकरी करने को कहता है। इस पर भी मैं उसके

विरुद्ध कुछ नहीं कर रहा। मैं उस समय की प्रतीक्षा कर रहा हूँ, जब ईश्वर उसके मन में न्याय तथा सत्य की प्रेरणा करेगा।"

रामलाल महात्मा जी तथा अन्य कांग्रेसियों की इस प्रकार की बातें सुनता रहता था। साधारण हिन्दुओं की भाँति उसके मन में भी इस प्रकार की फिलौसोफी का प्रभाव हुआ था; परन्तु यह प्रभाव लाहौर की दशा देख, पंजाब में घट रही घटनाओं के वृत्तान्त सुन, प्रायः मिट-सा गया था। उस प्रभाव को मन से पूर्णरूप से मिटाने वाली, लाहौर में उसको मकान से निकाले जाने वाली घटना सिद्ध हुई थी। उसको और उसके बच्चों को घर से कान पकड़कर, दुकान से बेदखल कर, पाकिस्तान से निकाल दिया गया था।

वह मोतीराम की बात सुन चुप कर रहा और पुनः घुटनों में सिर दे विचारमग्न हो गया। मोतीराम ने समझा कि रामलाल उसकी बात समझ गया है। वह अपने मन में पुनर्वास मन्त्री से मिलने की योजना बनाता हुआ अपने कमरे में चला गया।

रामलाल की पत्नी ने उठकर भोजन तैयार किया और सबने खाया। रामलाल अभी भी किसी गम्भीर विचार में डूबा हुआ था। भोजन करने के पश्चात् मोतीराम और सुन्दरी सो गए। रामलाल अभी तक जाग रहा था। रात के ग्यारह बजे के लगभग वह घर से बाहर जाने के लिए उठा तो उसकी पत्नी ने पूछा, "कहाँ जा रहे हो?"

"अपने साथ न्याय की माँग करने।"

"इस समय? कौन अफ़सर बैठा है आपकी बात सुनने के लिए?"

"है।"

"पर इस समय तो कर्फ्यू लगा है।"

"मुझको मालूम है। देखो रानी! सो जाओ। मैं दो-तीन घण्टे में लौट आऊँगा। बाहर से ताला लगाकर जा रहा हूँ, जिससे दरवाज़ा खटखटाना न पड़े। दादा की नींद बहुत जल्दी खुलती है।"

रामलाल गया और उसकी पत्नी वहीं बन्द दरवाजे के समीप बैठ,

अपने पति के लौट आने की प्रतीक्षा करने लगी। वह बैठी-बैठी सो गई। उसकी नींद खुली, जब बाहर ताला खुलने का शब्द हुआ। वह उठ खड़ी हुई। दरवाजा खुला तो उसने देखा कि रामलाल दो फौजियों के बीच खड़ा था। रानी की चीख निकलने ही वाली थी कि रामलाल ने अपने मुख में उँगली रखकर उसे चुप रहने का संकेत कर दिया। बाहर प्रातःकाल का धुँधला प्रकाश हो रहा था और उस प्रकाश में रामलाल का मुख प्रसन्न प्रतीत हो रहा था। रामलाल ने रानी के कान में कहा, "संदूकची में से एक सौ रुपये निकाल लाओ।"

रानी ने समझा कि यह रिश्वत है, जो उसका पति अपने छूटने के लिए दे रहा है। इस कारण वह भागी-भागी भीतर गई और दस-दस रुपये के दस नोट निकालकर ले आई। रुपया पति के हाथ में देकर, उत्सुकता से देखने लगी। रामलाल ने वह रुपया एक फौजी के हाथ में देकर कहा, "इसे बाँट लेना।"

फौजी रुपया लेकर चले गए तो रामलाल ने भीतर आकर दरवाजा बन्द कर लिया और रानी को लेकर सोने के कमरे में चला गया। वहाँ जा, रानी को सोने के लिए कह, स्वयं कपड़े बदल वह अपने बिस्तर में घुस गया।

रानी अभी भी उसकी चारपाई के पास खड़ी थी। उसने पूछा, "हुआ क्या है?"

"हमारी सरकार ने मुसलमानों की रक्षा के लिए मद्रास से मुसलमान फौजी बुलाकर दिल्ली में नियुक्त कर दिए हैं। मैं मुसलमान बन इनके पास गया था और बहुत ही मार्के का काम कर आया हूँ।"

"क्या कर आए हैं?"

"एक-दो दिन में पता चल जायगा। परन्तु दादा से या भाभी से कुछ मत कहना। वे साधु आदमी हैं। दादा को किसी बात का पता चल गया तो वह अफसरों से कहता फिरेगा और फिर सारा बना-बनाया काम बिगड़ जायगा।"

रानी पति का मुख देखती रह गई। इस पर रामलाल ने उसको बाँह से हिलाकर कहा, "रानी ! जाओ अब सो रहो। मुझको भी कुछ आराम कर लेने दो।"

: ७ :

मोतीराम दिन चढ़ने पर उठा तो स्नानादि से निवृत्त हो, रामलाल को अपने साथ ले चलने के लिए, उसके कमरे के बाहर आकर खड़ा हो गया। रामलाल और रानी दोनों सो रहे थे। बच्चे बाहर बरामदे में खेल रहे थे। मोतीराम ने रामलाल के लड़के से कहा, "मानिक ! जाओ पिताजी को बुला लाओ।"

रामलाल आँखें मलता हुआ कमरे से बाहर निकला तो मोतीराम ने कहा, "भाई ! तैयार हो जाओ। मन्त्री महोदय से मिलने जाना है।"

"दादा ! क्षमा करना। रात नींद काफी देर तक नहीं आई थी, इस कारण उठने में देर हो गई। बस अभी तैयार हो जाता हूँ।"

आधा घण्टा पश्चात् मोतीराम और रामलाल दोनों नई दिल्ली में एडवर्ड रोड पर पुनर्वास मन्त्री के रहने के स्थान पर जा पहुँचे। वहाँ जाकर पता चला कि वे दिल्ली टाउनहॉल के कन्ट्रोल रूम में गए हैं।

वे दोनों वहाँ से पैदल ही चलते हुए टाउनहॉल के कन्ट्रोल रूम के बाहर जा पहुँचे। कमरे में डिप्टी कमिश्नर, चीफ कमिश्नर, पुलिस कमिश्नर तथा मद्रास फौज के कमाण्डर उपस्थित थे। वे सब उस दिन की परिस्थिति से मन्त्री महोदय को अवगत करा रहे थे।

यह २६ सितम्बर का दिन था और दिल्ली में झगड़ा शान्त हो चुका था। मुसलमान शान्तिपूर्वक घरों से निकल-निकलकर हुमायूँ के मकबरे की ओर जा रहे थे। मथुरा रोड सारी और हुमायूँ के मकबरे के चारों ओर का इलाका, 'प्रोटेक्टिड एरिया' घोषित कर दिया गया था और वहाँ किसी भी हिन्दू को फटकने नहीं दिया जा रहा था।

मोतीराम ने अपना संक्षिप्त परिचय एक कागज़ पर लिखकर भीतर

कन्ट्रोल रूम में मन्त्री महोदय के पास भेज दिया। साथ ही उसने भेंट के लिए प्रार्थना कर दी।

जब उसकी पर्ची मन्त्री महोदय के हाथ में पड़ी तो उन्होंने उसे पढ़, डिप्टी कमिश्नर के हाथ में दे दी। डिप्टी कमिश्नर ने कह दिया, "यह वही आदमी है, जिसके विषय में महात्माजी के प्राईवेट सेक्रेटरी ने रिपोर्ट की थी। यों तो इसने वही किया है, जो अन्य हज़ारों विस्थापितों ने किया है; परन्तु महात्माजी के प्राईवेट सेक्रेटरी की बात को हम टाल नहीं सके। कल इसकी दुकान को सील कर दिया गया है। महात्माजी को हम अपनी कारगुज़ारी दिखाने का यह एक अच्छा ढंग समझते हैं।"

"ठीक है।" मन्त्री महोदय ने कागज़ और प्रार्थना फाड़कर रद्दी की टोकरी में फेंक दी। उसके पश्चात् पुनः सुरक्षा-सम्बन्धी बातचीत चलने लगी।

इन लोगों के लिए दो ही चिन्ताएँ थीं। एक तो यह कि जो भी मुसलमान नगर छोड़ना चाहें, उनकी रक्षा कर, उनको हुमायूँ के मकबरे अथवा ईदगाह पहुँचा दिया जाए। दूसरी समस्या यह थी कि पंजाब से आने वाले हिन्दुओं की संख्या, जो दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही थी, कैसे कम की जाए।

अन्त में डिप्टी कमिश्नर ने कहा, "इनके आगमन को रोकना तो हमारे अधीन नहीं। पाकिस्तान सरकार यह कर सकती थी; परन्तु या तो वह सरकार इनको वहाँ रखना नहीं चाहती अथवा वहाँ रख नहीं सकती। हाँ, इन लोगों की ट्रेनें दिल्ली लाने के स्थान कहीं दिल्ली से दूर भेजी जा सकती हैं; परन्तु फिर एक और समस्या खड़ी हो जायगी। ये लोग जहाँ भी जायँगे, वहाँ जाकर वही कुछ करेंगे, जो इन्होंने यहाँ किया है। इस तरह ये झगड़े उन सब स्थानों पर फैल जायँगे, जहाँ-जहाँ ये लोग जाएँगे। इससे झगड़ों का कन्ट्रोल और भी कठिन हो जायगा।"

यह समस्या हल नहीं हो सकी और न ही इसका कोई सुझाव किसी को समझ आया। अतएव मन्त्री महोदय कार्यवाही को पूर्ववत् चलाने का

आदेश दे वहाँ से चल दिए।

इसी समय बिड़ला हाऊस से टेलीफ़ोन आया और वहाँ पर सन्तोष-जनक समाचार देकर चीफ़ कमिश्नर महोदय भी चले गए।

मोतीराम और रामलाल ग्यारह बजे के लगभग टाउन हॉल के बाहर पहुँचे थे। साढ़े ग्यारह बजे मोतीराम ने पर्चा अन्दर भेजी थी और तीन बजे तक वे इस प्रतीक्षा में कन्ट्रोल रूम के बाहर बैठे रहे कि अभी मन्त्री महोदय उनको भीतर बुलायेंगे। तीन बजे तक कोई उत्तर न आने पर, मोतीराम ने चपरासी से पूछा, "भाई! पता करो मेरी प्रार्थना का क्या हुआ है?"

"क्या प्रार्थना थी तुम्हारी?" चपरासी ने पूछा।

"मिनिस्टर साहब से भेंट के लिए थी।"

"वे तो कितनी देर हो गई, यहाँ से चले गए हैं। बारह बजे के कुछ ही पीछे वे चले गए थे। अब आज दोबारा यहाँ नहीं आयेंगे।"

मोतीराम मुख देखता रह गया। उसने रामलाल के मुख पर देखा। वह भी सवेरे से भूखा-प्यासा वहाँ बैठा था। इस कारण उसने कह दिया, "दादा! चलो। बाहर नल से पानी तो पी लें।"

निराश दोनों टाउन हॉल के अहाते से बाहर निकले। दोनों ने पानी पिया और घर की ओर पैदल ही लौट पड़े।

रामलाल ने कहा, "दादा! इन तिलों में तेल नहीं प्रतीत होता। घर चलकर कुछ और बात विचारनी चाहिए।"

"तुम ठीक कहते हो। इस पर भी मेरी स्थिति कुछ ऐसी है कि मैं किसी गैर-कानूनी बात में भाग नहीं ले सकता। मैं पेशावर में कांग्रेस का कार्यकर्ता था। लाल कुर्ती वालों में भी मेरी विशेष स्थिति थी। उस दिन जब मैं महात्माजी से मिलने गया था, तो वे आधा घण्टा तक मुझसे बातें करते रहे। मेरी बातों को चुपचाप सुनते रहे। यह केवल इसलिए था कि मैं कांग्रेस का कार्यकर्ता हूँ।

"अब कांग्रेस का राज्य हुआ है तो मुझको इस राज्य को सुदृढ़ करने

के लिए कुछ तो त्याग करना ही चाहिए।"

रामलाल मोतीराम की बात सुन भौचक्का हो उसका मुख देखता रह गया। उसको आश्चर्य इस बात का हुआ था कि मोतीराम समझता था कि कांग्रेस का राज्य हो गया है। उसके अपने मन में तो इस बात की कल्पना भी नहीं आई थी।

मोतीराम को समझ आई कि रामलाल उसकी बात को समझ गया है। उसने रामलाल को अमृतसर स्टेशन पर 'महात्मा गांधी की जय' कहते सुना था। अतएव वह समझता था कि इस आदमी के मन में कुछ तो देश-भक्ति का अंश है। इस कारण उसने उसका साहस बँधाते हुए कहा, "देखो रामलाल! हमारा काम नेताओं का कहना मानना है। यह नेताओं का काम है कि हमारी सुख-सुविधा का प्रबन्ध करें।"

रामलाल से और अधिक नहीं सहा गया। उसने कह दिया, "दादा! मुझको भारी दुःख है कि जब से मैं दिल्ली आया हूँ, तुम्हारे आश्रय में पल रहा हूँ। अब तो मैं देख रहा हूँ कि तुम्हारे पास भी कुछ नहीं रहा। भाभी के भूषणों से प्राप्त धन भी समाप्त हो रहा है। इस अवस्था में मैं बहुत ही लज्जित हूँ। मैं तुमसे उऋण होना चाहता हूँ, पर नहीं जानता कि यह कैसे हो सकेगा।"

"तुम रुपयों की चिन्ता मत करो। जब तक श्वास तब तक आस। लखपति के पास एक कौड़ी भी होगी तो फिर लाखों पैदा कर लेगा। मैं भाग-दौड़ कर रहा हूँ। इसका कुछ-न-कुछ तो परिणाम निकलेगा ही।"

"यह बात तो मैं मानता हूँ कि हमको यत्न करते रहना चाहिए। हमें अपना सिर ऊँचा रखने के लिए अपनी सारी शक्ति लगा देनी चाहिए और देखना चाहिए कि पानी सिर के ऊपर से न निकलने पाये।

"इस पर भी मेरा एक निवेदन है कि आज की भाँति मैं अपना समय व्यर्थ नहीं गँवा सकता। मेरे और तुम्हारे विचारों में अन्तर आ गया है। अतएव यदि हम पृथक्-पृथक् रहकर काम-धन्धा ढूँढें तो ठीक रहेगा।

इतना मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ कि जो-कुछ भी कमाकर लाऊँगा, तुम्हारे साथ बांटकर खाऊँगा।"

"ठीक है परन्तु विचारों में कहाँ अन्तर आ गया है?"

"आपका विचार है कि कांग्रेस का राज्य स्थापित हो गया है और मैं समझता था कि हिन्दुस्तान में हिन्दुओं का राज्य हुआ है।"

"क्या? हिन्दुओं का राज्य कैसे हुआ है? देशवासियों का हुआ कह सकते हो। इसमें पारसी, ईसाई और मुसलमान सभी सम्मिलित हैं।"

"यही तो मैं भी कह रहा हूँ; परन्तु यहाँ के देशवासी हिन्दू ही तो हैं। हिन्दू हिन्दुस्तानी हैं और हिन्दुस्तानी हिन्दू हैं।"

"मुसलमान तो अपने को हिन्दू नहीं कहते।"

"ठीक है और वे अपने को हिन्दुस्तानी भी नहीं कहते। दादा! क्या तुम यह भूल गए हो कि मुसलमानों ने पाकिस्तान अर्थात् अपने लिए पृथक् देश माँगा था। क्या इसका यह अर्थ नहीं कि ये हिन्दुस्तानी बनकर रहना नहीं चाहते?"

"पर जो मुसलमान यहाँ रह गए हैं, उनका क्या होगा?"

"वे रह गए हैं केवल इसलिए कि उनको पाकिस्तान में मन मर्ज़ी का स्थान नहीं मिला! वे अपनी इच्छा से नहीं, परन्तु विवश होकर यहाँ रह रहे हैं।"

"नहीं! नहीं!! ऐसी बात नहीं। उनमें से बहुत हैं, जो हिन्दुस्तानी बनकर यहाँ रहना चाहते हैं।"

"हिन्दुस्तानी के अर्थ जानते हो दादा? हिन्दुस्तानी के अर्थ हैं हिन्दुस्तान के रहने वाले और हिन्दुस्तान का अर्थ है हिन्दुओं का स्थान।"

"ओह! तभी तो हमारी विधान सभा ने इस देश का नाम भारत मान लिया है।"

"भारत और हिन्दुस्तान शब्दों में कोई अर्थ-भेद नहीं है। जब इस देश का नाम भारत था, तब इसमें वे ही लोग रहते थे, जिनको पीछे

मुसलमानों ने हिन्दू माना है।

"दादा ! मुसलमानों के आने से पहले, इस देश के रहने वालों को भारतीय ही कहा जाता था। मुसलमानों ने भारतीयों को हिन्दू के नाम से पुकारा और अपने को, हिन्दुओं से पृथक् रखने के लिए, मुसलमान ही माना। उन्होंने अपने को कभी भी इस देश का रहने वाला नहीं माना।

"एक समय अकबर शाहंशाह ने हिन्दू-मुसलमानों का एका करने के लिए एक नवीन मत की योजना चलाई थी। परन्तु उसको अपनी योजना में सहायक हिन्दू ही मिले, मुसलमान नहीं। इसी प्रकार गुरु नानक, दादू, कबीर इत्यादि ने भी मुसलमानों और हिन्दुओं को एक करने के लिए यत्न किए। इन प्रयासों में भी हिन्दुओं ने ही भाग लिया, मुसलमानों ने नहीं। जानते हो दादा ! यह क्यों नहीं हो सका ? यह इसलिए कि मुसलमान इस देश में रहते हुए भी इस देश के नागरिक बनकर नहीं रहना चाहते थे। मुसलमानों ने अपने को कभी भी इस देश का बाशिन्दा नहीं कहा।"

"पर हिन्दू शब्द से हिन्दू मज़हब का भास होता है और मुसलमान अपना मज़हब छोड़ना नहीं चाहते।"

"हिन्दू मज़हब क्या है ? कहाँ है ? इसकी मान्यताएँ क्या हैं ?"

"मैं हिन्दू हूँ। हिन्दू देवी-देवताओं को मानता हूँ, चुटकी रखता हूँ, यज्ञोपवीत पहनता हूँ।"

"दादा ! तुम कुछ नहीं जानते। आर्यसमाजी देवी-देवताओं को नहीं मानते और वे भी हिन्दू हैं। सहस्रों हिन्दू न चुटकी रखते हैं और न यज्ञोपवीत पहनते हैं। अरे बाबा ! हिन्दू वह है, जो हिन्दुस्तान में रहता है और हिन्दुस्तान को अपनी मातृभूमि और पुण्य-भूमि मानता है।

"मुसलमान ऐसा नहीं समझता। यही कारण है कि हिन्दुस्तान के स्थान पर अपने लिए पाकिस्तान चाहता है।"

"पर ईसाइयों का क्या होगा ?"

"ईसाई अपने को इण्डियन मानते हैं अथवा नहीं ? इण्डियन और हिन्दुस्तानी शब्दों में केवल भाषा का अन्तर है। दोनों शब्द पर्याय-वाचक हैं। जब ईसाई हिन्दी पढ़ जायेंगे, तब वे अपने को हिन्दुस्तानी और हिन्दुस्तान का रहने वाला मानने लगेंगे। दूसरे शब्दों में वे हिन्दू ही माने जावेंगे। ईसाई तो किसी देश के रहने वाले का सूचक नहीं।

"पाकिस्तान मुसलमानों का देश है। तो भला बताओ हिन्दुस्तान हिन्दुओं का देश नहीं तो किनका है ? हिन्दुस्तान में रहने वाले ही तो हिन्दू माने जावेंगे।"

मोतीराम के मस्तिष्क में बात कुछ-कुछ तो बैठ रही थी। उसने विस्मय में रामलाल से पूछा, "कौनसी जमायत तक पढ़े हो ?"

"पढ़ा तो हूँ मैट्रिक तक, पर पढ़े-लिखे विद्वानों की संगत की है।"

"पर यह बात चलेगी नहीं।"

"इसीलिए तो कहता हूँ कि मेरे और तुम्हारे विचारों में मतभेद आ गया है।"

"तुम कुछ संघियों की-सी बातें करते हो।"

रामलाल हँस पड़ा। उसने केवल यह कहा, "दादा ! संघी होता, तो देश-विभाजन से पूर्व ही अपना सामान निकालकर यहाँ आ जाता। मैं गांधीजी को बहुत ही बुद्धिशील हिन्दुस्तानी समझता था। यही कारण था कि उनका आदेश मानकर पाकिस्तान का वफ़ादार नागरिक बनने के लिए वहीं बैठा रहा था। परन्तु पाकिस्तानियों ने अपने व्यवहार से सिद्ध कर दिया है कि महात्मा जी की सूझ-बूझ में गलती थी और मैं भी वही गलती करने जा रहा था। उन्होंने मेरे कान पकड़कर, मुझको पाकिस्तान से बाहर निकाल यह सिद्ध कर दिया है कि पाकिस्तान मुसलमानों का ही देश है। इसका स्वाभाविक अर्थ यह निकलता है कि हिन्दुस्तान मुसलमानों का देश नहीं।"

"तुम बहुत ही दुष्ट प्रतीत होते हो।" मोतीराम ने माथे पर त्योरी चढ़ाकर कहा।

"अच्छा दादा ! तुम अपने मार्ग पर चलो और मैं अपने मार्ग पर चलता हूँ। हिन्दुस्तान में मुसलमान रहते हैं तो रहें, नहीं रहते तो न सही। यह देखना तो सरकार का काम है। पर मैं हिन्दू हूँ और हिन्दुस्तान मेरा देश है। यह मेरी जन्मभूमि है और मेरी पुण्य-भूमि भी। मैंने तो यहाँ रहना है। मेरे बाल-बच्चों ने भी यहीं रहना है। मैं देख रहा हूँ कि यदि मैं शीघ्र ही कुछ कमाता नहीं तो हमारा यहाँ रहना कठिन हो जाएगा। प्रकृति हमको भूखों मार देश से बाहर निकाल देगी।"

बातचीत करते-करते जब दोनों लाल किले के सामने जा पहुँचे तो रामलाल ने विदा माँगी और कहा, "दादा ! मैं काम ढूँढने जा रहा हूँ। आप तो कांग्रेस सरकार से सहायता की आशा कर सकते हैं। आप कांग्रेसी हैं। मैं नहीं कर सकता। यूँ तो मैंने भी देश-भक्ति का पाठ पढ़ा है, परन्तु वह कांग्रेस की सीमाओं के भीतर रहकर नहीं।"

"कहाँ जा रहे हो काम ढूँढने ?"

"पा जाऊँगा तो बता दूँगा।"

यहाँ से रामलाल और मोतीराम का मार्ग अलग-अलग हो गया। रामलाल लाल किले के दरवाज़े पर एक फ़ौज़ी को कुछ कह भीतर चला गया और मोतीराम घर की ओर चला गया।

मोतीराम जब घर पहुँचा तो उसकी पत्नी ने बहुत ही उत्सुकता से पूछा, "क्या हुआ है ?"

"आज मन्त्री महोदय से भेंट नहीं हो सकी। कल फिर जाऊँगा।"

"पर घर में तो खाने को समाप्त होता जाता है।"

"क्यों किधर गया है सब रुपया ?"

"आज एक महीने से ऊपर हो गया है, घर का खर्चा चलाया जा रहा है। मकान का भाड़ा है, दुकान का सामान आया था और फिर कपड़े आए। खाना-पीना भी तो चलता है। आखिर रुपया था ही कितना ?"

इस समय रामलाल की पत्नी, जो बाजार से सामान खरीदने गई थी, सामान लेकर आ गई। उसने सुन्दरी को हिसाब दे दिया। दस

रुपये का नोट लेकर वह बाज़ार गई थी। उसने बताया, "साढ़े सात सेर आटा राशनकार्ड पर तीन रुपये का और पाँच सेर आटा ब्लैक मार्केट से पाँच रुपये का। इस तरह आठ रुपये का आटा। सब्ज़ी एक रुपये की, मसाला आठ आने का और यह शेष आठ आने बचे हैं।"

: ८ :

मोतीराम अकेला दिन में डेढ़ सेर आटा खाने वाला था। उसकी पत्नी सुन्दरी भी खूब खाने वाली थी। साथ ही रामलाल और उसका परिवार भी था। यह साढ़े बारह सेर अन्न तो चार दिन की खुराक थी। रानी से हिसाब लेकर सुन्दरी ने मोतीराम को कहा, "यह सप्ताह-भर नहीं चलेगा। सप्ताह में एक बार फिर ब्लैक मार्केट से मँगवाना पड़ेगा।"

"अब नकद तुम्हारे पास क्या रह गया है?"

"एक सौ और कुछ रुपये शेष रह गये हैं।"

"दस-पन्द्रह दिन तक तो काम चल जायेगा। तब तक कुछ-न-कुछ प्रबन्ध हो ही जायेगा। देखो सुन्दरी! धीरज से रहो। यदि यहाँ के हिन्दू मुसलमानों से झगड़ा न करते तो यह कठिनाई अब तक दूर हो गई होती और हम कहीं काम पर लग गये होते।"

"सोहनसिंह आज भी आया था और आपको बुला गया है।"

"वह कहता है कि मैं उसकी नौकरी कर लूँ। मैंने माना नहीं।"

मोतीराम ने दिन का खाना सायंकाल खाया और कुछ काल तक विश्राम कर सोहनसिंह से मिलने चला गया। आज वह मन में विचार कर रहा था कि सोहनसिंह यदि उसके मकान का किराया और पचहत्तर रुपया वेतन देना स्वीकार कर ले, तो वह उसके होटल में नौकरी कर लेगा।

रामलाल दस बजे घर आया। मोतीराम अभी सोहनसिंह के घर से लौटा नहीं था। बच्चे खाना खाकर सो गये थे; परन्तु रानी और सुन्दरी ने अभी खाया नहीं था। दोनों उसकी प्रतीक्षा कर रही थीं।

रानी ने रामलाल के देरी से आने पर रोष प्रकट करते हुए कहा, "बहुत देरी कर दी है। देखिए, बहन जी ने अभी खाना नहीं खाया। कहती थीं कि मर्दों को खिलाकर ही औरतों को खाना चाहिये।"

"भाभी!" रामलाल ने कहा, "यह तो ठीक नहीं। मर्द कामकाजी व्यक्ति हैं। उनके लिए अबेर-सबेर हो जानी सहज है। इस प्रकार स्त्रियां प्रतीक्षा करने बैठेंगी तो अपना स्वास्थ्य तो बिगाड़ेंगी ही, साथ ही हमारी भी काम में रुचि नहीं रहेगी।"

"पर कौन काम कर रहे हैं आप?" सुन्दरी ने आँखें नीची किये हुए कहा, "घर में रुपया समाप्त होता जा रहा है और आप दोनों मर्द एक महीने में एक पैसा भी तो नहीं ला सके।"

"रुपयों की तो बहार लग जायेगी, भाभी! अभी तक तो मैं बँधा हुआ था। अब स्वतन्त्र हो गया हूँ। काम बनेगा और धन मिलेगा। तुम भी क्या कहोगी कि रामलाल की भाभी बनकर तुम्हारी कोई आवश्यकता अपूर्ण रह गई है।"

"तो कहीं काम मिल गया है?"

"काम मिला नहीं करता, भाभी! काम पैदा किया जाता है। जो मनुष्य अपने लिए काम पैदा नहीं कर सकता, वह ही भूखा मरता है।"

"तो फिर क्या करने जा रहे हो? वह दर्ज़ी की दुकान तो सरकार ने ले ली है न।"

"वह ले ली है तो क्या हुआ? दिल्ली में दुकानें बहुत हैं। केवल उनको लेने का ढंग आना चाहिये।"

"तो ढंग सीख लो न।"

"सीख लिया है, भाभी! और एक दुकान मिल भी गई है। कल से उसको खोलने का विचार कर रहा हूँ।"

"क्या काम करोगे?"

"बस वही। टेलर, कटर और ड्रैपर।"

"देखो रामलाल भैया!" मोतीराम की पत्नी ने कहा, "तुम्हारे

दादा तो अब काम करेंगे नहीं। वे रात कह रहे थे कि कांग्रेस का राज्य हो गया है और कांग्रेस में काम करने वाले भूखे नहीं मर सकते।"

"भाभी! वे भी ठीक ही कहते हैं! वे अपने पिछले त्याग और कष्टों की सूची बना भारत सरकार के मन्त्रियों के पास जाना चाहते हैं। वे उनसे इनकी कीमत वसूल करना चाहते हैं। पर मैं कांग्रेस की सीमाओं में नहीं रहा। अतएव मैं तो अपने वर्तमान प्रयत्न से ही जीने की आशा कर सकता हूँ।"

रात जब सोने लगे तो रामलाल से रानी ने इस वार्तालाप का अर्थ समझने के लिए पूछा, "क्या सत्य ही कहीं दुकान मिल गई है?"

"देखो रानी! तुमको बताता हूँ, परन्तु किसी अन्य से नहीं कहना। भाभी से भी नहीं। मैंने जब यह देखा कि दादा की संगत में रहकर मुझको वह कुछ भी प्राप्त नहीं हो सकता, जो सहस्रों अन्य हिन्दुओं को प्राप्त हो रहा है, तो मैंने उनकी संगत छोड़ दी। कुछ दिन हुए दादा महात्मा जी से मिलने गये थे और वहाँ उन्होंने दुकान पर कब्जे की बात कह दी। ऐसा प्रतीत होता है कि वहाँ यह बात किसी ने सुन ली और पुलिस में रिपोर्ट कर हमारी दुकान छिनवा दी है।

"मैंने अब एक दुकान कनॉट प्लेस में ऐसे ढंग से ली है कि उसमें कुछ झूठ बोलना पड़ा है और एक अफ़सर को कुछ देना पड़ा है। दुकान पर मेरा कब्ज़ा हो गया है। कल बोर्ड वग़ैरा लगवा कर काम आरम्भ कर दूँगा। दूकान माल से लदी हुई है और बहुत ही अच्छे स्थान पर है। भगवान् ने चाहा तो मालामाल हो जाऊँगा।"

"शीघ्र करिए। मुझको दूसरों के आश्रय पलते लज्जा लगती है।"

"क्या भाभी ने कुछ कहा है।"

"नहीं। वे तो बहुत अच्छी हैं, परन्तु मैं देख रही हूँ कि उनके पास भी तो अब रुपया समाप्त होता जाता है और दस रुपये नित्य से कम खर्च नहीं हो रहा।"

अगले दिन रामलाल मोतीराम के जागकर तैयार होने से पहले

ही, कनॉट प्लेस की दुकान पर अधिकार करने चला गया। मोतीराम जागा तो स्नानादि से निवृत हो पुनर्वास मन्त्री के कार्यालय को चल पड़ा। दोनों रात के भोजन के समय अपने-अपने काम से लौटे।

मोतीराम का मुख उतरा हुआ था और रामलाल प्रसन्नवदन था। मोतीराम ने अपनी दिन-भर की कारगुज़ारी सुनाई। उसने कहा, "मैं ठीक दस बजे पुनर्वास मन्त्रालय में जा पहुँचा था। ज्यों ही मैंने अपना नाम भीतर भेजा कि मैं बुला लिया गया। ऐसा मालूम होता है कि मेरे विषय में बहुत जाँच-पड़ताल हो चुकी है। मन्त्री महोदय के सामने एक फ़ाइल रखी थी और वे उसमें से देख-देखकर मुझसे प्रश्न पूछ रहे थे। मुझसे सम्बोधन करते समय उन्होंने मेरा नाम ऐसे लिया, मानो वे मुझको भली भाँति जानते हैं।

"मैं बैठा तो कहने लगे, 'आप जैसे कांग्रेसी व्यक्ति से हम यह आशा नहीं करते थे। यह मानवता के विरुद्ध है कि एक निहत्थे और शान्तिमय व्यक्ति को लूटा और मारा जाये।'

"मैंने उत्तर में कहा, 'हुजूर और भी तो कांग्रेसी हैं, जो मुसलमानों की जायदाद पर अधिकार किये बैठे हैं। मैंने ही कौन पाप किया है कि मेरी दुकान पर फ़ौज भेजने की आवश्यकता समझी गई?'

"वे कहने लगे, 'बात यह है कि किसी ने तुम्हारे विषय में महात्मा जी से कह दिया है। इस कारण तुम्हारी दुकान सबसे पहले वापस करनी आवश्यक हो गई है। यूँ तो किसी भी मुसलमान की सम्पत्ति किसी भी हिन्दू के पास रहने नहीं दी जायेगी। यदि हम इस प्रकार राज्य के अन्दर छीना-झपटी होने देंगे, तो यह शासन की दुर्बलता बन जायेगी।'

"मैंने उनसे अपनी पूर्ण सहमती प्रकट की और कहा, 'मगर हुजूर! हमारे खाने-पहिरने की भी तो कठिनाई है। हमारा सब-कुछ तो पाकिस्तान में रह गया है। अब गुजर करने में भी दिक्कत हो रही है।'

'उसका प्रबन्ध हम कर रहे हैं। मैंने एक योजना बनाई है। उसके अनुसार एक रजिस्टर खोला जायेगा। उसमें पाकिस्तान से आये सब का

नाम, पता और जो-कुछ वे वहाँ छोड़ आये हैं, सब-कुछ लिखा जायेगा। तब हम इस सब-कुछ की पाकिस्तान सरकार से माँग करेंगे।'

'कितना समय लगेगा इसको ?'

'मेरे सेक्रेटरी उस रजिस्टर की रूप-रेखा बना रहे हैं। बनते ही वे छपने भेज दिये जायेंगे और फिर वे रजिस्टर देश के मुख्य-मुख्य स्थानों पर खोल दिए जायेंगे। इस सब प्रबन्ध में छः महीने तो लग ही जायेंगे और फिर पाकिस्तान से बातचीत में और वसूली में दो-तीन वर्ष लग जाने सहज हैं।'

'तब तक तो हम सब भूखे मर जायेंगे।'

'तब तक कुछ काम करना सीखो, जिससे रोटी पैदा की जा सके।'

'कहाँ काम करूँ ? दुकान तो की थी, परन्तु छीन ली गई। उसमें एक सहस्र रुपये की लागत का सामान अपने पास से लाकर रखा था। वह भी पुलिस ने कब्जे में ले लिया है।'

'पर तुमने वह दुकान ली क्यों ? किसी दिल्ली के हिन्दू से दुकान लेते।'

'वे पगड़ी माँगते हैं। हमारे पास पगड़ी के लिए रुपये नहीं।'

'तुम दिल्ली कांग्रेस कमेटी के प्रधान से मिलो। वे तुम्हारी सहायता कर देंगे।'

"मैं वहाँ से दिल्ली कांग्रेस कमेटी के कार्यालय में जा पहुँचा। कार्यालय बल्ली मारां में है परन्तु उसको ताला लगा हुआ था। पता करने पर मालूम हुआ कि सेक्रेटरी मुसलमान था और वह डर के मारे कहीं छुपा बैठा है और दफ़्तर में नहीं आता।

"वहाँ से प्रधान का नाम और पता पूछ कर कीलिंग रोड पर जा पहुँचा। वहाँ कांग्रेस के प्रधान मिल गये। वे बहुत ही सहानुभूतिपूर्वक मिले। अन्त में उन्होंने कहा कि वे शरणार्थियों के लिए कैम्प खोल रहे हैं। दो-तीन दिन में मिलना।

"मैंने उत्तर में कहा, 'मुझको रहने को मकान तो मिल गया है।

अब तो कारोबार के लिए दुकान चाहिये।'

"मैंने उनको अपना पूर्व परिचय और दिल्ली में पहुँचने के पश्चात् का वृत्तान्त बता दिया। वे मेरी कथा सुन बोले, 'आपने यह बात महात्मा जी के सामने बताई क्यों?'

'महात्मा जी जैसे सत्यवक्ता के सामने अपने मन की बात छुपा नहीं सका।'

"इस पर प्रधान महोदय ने बहुत ही सहानुभूति प्रकट करते हुए कहा, 'आप कुछ दिन में आइए, मैं आपके लिए यत्न करूँगा।' "

रामलाल मोतीराम की पूर्ण दिन की कहानी सुनकर मुस्कराया और बोला, "तो दादा! तुम अपनी दिन-भर की कमाई पर सन्तुष्ट हो क्या?"

"भाई! सहज पके सो मीठा हो।"

"अच्छी बात है, दादा! आप मीठा पकाओ। पर मैंने तो कुछ जल्दी में जैसा-तैसा बना, पका लिया है। अभी तो यही खाओ। जब आप मीठा पकाकर लायेंगे तो वह भी खा लेंगे।"

"क्या बना लाये हो?"

"कर्नॉट प्लेस में मुहम्मद याकूब टेलर, कटर और ड्रैपर की दुकान और मकान उसके मालिकों से मिल गया है। दस हज़ार रुपया नकद देना पड़ा है। सब माल ख़रीद लिया है और लिखा-पढ़ी हो गई है। कल से माल बेचूँगा। उम्मीद है, दस हज़ार में से पचास हज़ार बनाऊँगा। दो नौकर और एक चौकीदार रख लिया है। दुकान के ऊपर मकान भी है। कुछ मुरम्मत और सफ़ाई करानी है। पीछे वहाँ चले जायेंगे। इस मकान से वह बहुत अच्छा और साफ़-सुथरा है।"

मोतीराम बितर-बितर मुख देखता रह गया। वह जानता था कि रामलाल के पास इतना रुपया नहीं था। उसको आश्चर्य हो रहा था कि यह सौदा हुआ कैसे।

: ६ :

अगले दिन मोतीराम कनॉट प्लेस में गया और रामलाल को, एक दुकान पर जो माल से ठसाठस भरी थी, बैठा देख आश्चर्य करने लगा। रामलाल ने मोतीराम को दुकान दिखाई। पश्चात् उसको एक ओर ले जाकर कहा, "यद्यपि यह दुकान मैंने अपने नाम पर ली है, परन्तु इसकी कमाई के आप बराबर के पत्तीदार होंगे। इस कारण इस दुकान को तुम अपनी ही समझो। इस पर भी यदि तुम यह चाहते हो कि यह भी, पहली दुकान की भाँति सरकार छीन न ले, तो कृपा कर यहाँ बहुत कम आया करो और किसी से मत कहना कि यह दुकान तुम्हारी है।"

"क्यों ? क्या तुमने यह ख़रीदी नहीं है ?"

"नहीं दादा ! बात यह नहीं है। मुझको भय है कि सरकार के घर में तुम्हारी फ़ाइल बन चुकी है। वह फिर कहीं रंग न लाये। एक बार सरकार ने कब्ज़ा कर लिया तो मुकद्मा मैं कर न सकूँगा। मेरे पास उसके लिए न तो रुपया है, न ही समय। उससे बचने के लिए जितना चुप रहा जाए, उतना ही अच्छा है।"

"तुम क्या समझते हो कि सरकारी कर्मचारी इतने अन्धे हैं कि बिना किसी आधार के ही मकान-दुकान छीनने लगेंगे ?"

"मैंने यह नहीं कहा। इस पर भी बचकर रहना चाहिए। मुझको तो यह समझ आता है कि महात्मा गांधीजी महाराज जिस किसी के भी विरुद्ध हो जाते हैं, फिर उसका खुर-खोज मिटाकर ही छोड़ते हैं।

"यह मैं मानता हूँ कि महात्माजी का विरोध किसी स्वार्थ के कारण नहीं होता। इस पर भी मतभेद होने पर वे विरोधी का खुर-खोज मिटाये बिना नहीं छोड़ते। उन पर भगवान् की कृपा है कि वे जो-कुछ भी कह दें, जनता उसको वेद प्रमाण मानती है।"

मोतीराम को महात्माजी पर यह लाञ्छन भला प्रतीत नहीं हुआ। उसने रामलाल को कहा, "रामलाल ! छोटा मुख बड़ी बात मत करो।

जब जनता उनके कहने पर फूल चढ़ाती है, तो यह व्यर्थ नहीं हो सकता। महात्माजी के कथन में सच्चाई है, तभी तो जनता उनकी बात मानती है।"

रामलाल इस व्यर्थ के वादविवाद में पड़ना नहीं चाहता था। इस कारण उसने कह दिया, "दादा! तुम ठीक ही कहते हो। पर मैं चाहता हूँ कि यह दुकान तो हमारे लिए बच रहे। इस कारण तुम कृपा कर इसको अपनी मत प्रकट करना। मैं तुम्हारा बहुत आभारी रहूँगा।"

इस पर तो मोतीराम को और भी क्रोध आया। उसने कहा, "देखो जी! अमृतसर स्टेशन से चलते समय तुम्हारी बीवी को देखकर मेरे मन में दया आ गई थी और मैं अपना रुपया तुम्हारे साथ बाँटकर प्रयोग करने लगा था। यदि उस समय मुझको विदित होता कि तुम इतने दुष्ट हो और महात्माजी के विषय में ऐसे विचार रखते हो तो तुमको कभी मुख लगने न देता। मैं आज से तुम्हारा मुख नहीं देखूँगा।"

रामलाल कुछ कहना ही चाहता था कि मोतीराम दुकान से निकल गांधीजी के निवासस्थान, बिड़ला हाउस की ओर चल पड़ा। इस पर भी वह रामलाल से तटस्थ रह नहीं सका। उसी रात जब वह घर पहुँचा तो सुन्दरी के सामने कपड़ों का ढेर लगा देख, विस्मय करता रह गया। रामलाल आज बच्चों को लेकर घूमने गया हुआ था। कई दिन के पश्चात कर्फ्यू आर्डर खुला था।

मोतीराम ने सुन्दरी से पूछा, "ये कहाँ से आये हैं?"

"रामलाल दे गया है। कहता था कि दादा का कोट फट रहा है और उसकी सलवारें और कुर्ते घिस गए हैं। सो कोट के लिए और चार-चार सलवारों तथा कमीज़ों के लिए कपड़ा दे गया है। मेरे लिए ये दो साड़ियां हैं और सलवारों तथा कुर्तों के लिए भी कपड़ा है। इसके अलावा वह तीन सौ रुपया घर के खर्चे के लिए दे गया है।"

"ख़ुद कहाँ गया है?"

"रानी और बच्चों को लेकर ज़रा घूमने गया है। आता ही

होगा ।"

"पर मैं तो उससे लड़ चुका हूँ ।"

"क्यों ?"

"वह महात्माजी की निन्दा कर रहा था ।"

"तो फिर क्या हुआ ? आज पंजाब से आये प्रायः सभी महात्माजी की बातों को पसन्द नहीं करते । महात्माजी अच्छे हैं तो आपके कहने के कारण हैं क्या ? और वे रामलाल के कहने से बुरे नहीं हो जायेंगे । छोड़ो इन बातों को ।

"रामलाल भी एक भला आदमी है । कहता था, दिल्ली में आने के बाद आज कमाई की है और इसीलिए इस कमाई में से सबसे पहले अपने दादा और भाभी के चरणों में रखने के लिए यह सब-कुछ ले आया हूँ ।"

मोतीराम कुछ कहने ही वाला था कि रामलाल के सीढ़ियाँ चढ़ने का शब्द सुनाई दिया । वह चुप कर रहा । रामलाल पहले पहुँचा और रानी तथा बच्चे पीछे रह गए थे । उसे देख, सुन्दरी ने कहा, "तुम्हारे भैया कहते हैं कि वे तुम्हारे साथ लड़ पड़े थे ।"

"भाभी !" रामलाल ने मुस्कराते हुए कहा, "बड़े भाई छोटों को डाँटा ही करते हैं । इसको लड़ाई नहीं कहते । इनका अधिकार है कि लड़ा करें । बड़े हैं, पूज्य हैं और फिर नेता हैं । पर मैं तो नहीं लड़ सकता । मैं तो छोटा हूँ और इनके अहसान के नीचे दबा हुआ हूँ । दादा ! क्षमा कर दो । फिर ऐसी गुस्ताख़ी नहीं करूँगा ।"

रामलाल ने मोतीराम को कुछ कहने का अवसर ही नहीं दिया । सबसे बड़ी बात यह थी कि मोतीराम अपने और सुन्दरी के फटे कपड़ों को देख रहा था और कांग्रेस की ओर से सहायता समीप दिखाई नहीं देती थी ।

मोतीराम ने भोजन किया और सोहनसिंह के होटल को चल पड़ा । उसकी मुरम्मत और सफाई हो चुकी थी । सोहनसिंह होटल में कुर्सी

लगाये बैठा था। उसके पास तीन आदमी और थे। मकान के बाहर 'मीना महल' होटल का बोर्ड लगा था।

जब मोतीराम पहुँचा तो सोहनसिंह ने उसको एक खाली कुर्सी पर बिठाकर पहले बैठे व्यक्तियों का परिचय करा दिया। उसने कहा, "ये हैं चौधरी मथुरासिंह। इस इलाके की ओर से म्युनिसिपल कमिश्नर हैं। कांग्रेस के पुराने कार्यकर्ता हैं। तीन बार जेल-यात्रा कर चुके हैं।

"और ये हैं बाबू मुकुटविहारी माथुर। नगर के प्रसिद्ध वकील हैं। वह बेला रोड पर दो मंज़ली कोठी इन्हीं की है।

"और ये हैं विपिनबिहारी जोशी! ये कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य हैं। जब १९४० में सरकार ने कम्युनिस्टों को पकड़ लिया था, तो कम्युनिस्टों को सरकार के अनुकूल करने में इन्होंने भारी यत्न किया था।

"मैंने आज होटल का मुहूर्त किया है। इसमें अन्य ओस-पड़ोस के लोगों के साथ मैंने दिल्ली के इन तीन नेताओं को भी आमन्त्रित किया है। मैंने शकुन माथुर साहब के कर-कमलों से ही कराया है।"

इसके पश्चात् सोहनसिंह ने मोतीराम का परिचय करा दिया। तीनों नेता मोतीराम के १९४२ में पेशावर में कांग्रेस के 'क्विट इण्डिया आन्दोलन' में भाग का वृत्तान्त सुनकर बहुत प्रभावित हुए। पश्चात् इधर-उधर की बातें होने लगीं। सोहनसिंह का प्रस्ताव था कि जैसे पेशावर में लाला मोतीराम का होटल लालकुर्ती वालों का अड्डा बना हुआ था, वैसे ही यह 'मीना महल' बन जाय। उसने कहा, "यदि आप लोग सायंकाल, समय मिलने पर, यहाँ आने का कष्ट किया करें तो यह होटल कांग्रेस और राजनीतिक विचारों के आदान-प्रदान का अड्डा बन सकेगा। यदि आप यहाँ चाय लेने के लिए आ सकें तो मैं अपना अहोभाग्य समझूँगा।"

मुकुट विहारी को यह बात बहुत पसन्द आई। उसने कहा, "यहाँ कई कमरे हैं। यदि तुम इस काम के लिए एक कमरा नियत कर रखो, जहाँ हम बैठकर विचार-विमर्श और राजनीति पर चर्चा कर सकें, तो बहुत ही अच्छा हो। हमारे लिए यह स्थान एक आकर्षण का केन्द्र बन

जायेगा। हम दिन-दिन के समाचारों पर आलोचना कर, उसका निष्कर्ष भी निकाल सका करेंगे।"

"यही तो मैं निवेदन कर रहा हूँ।"

इस प्रकार सोहनसिंह का होटल कांग्रेसियों का अड्डा बन गया और मुहल्ले के प्रायः और कभी-कभी बाहर के भी कांग्रेसी यहाँ आकर माथुर साहब की सुलझी हुई राजनीतिक सम्मति से लाभ उठाने लगे।

: १० :

मोतीराम बेकार होने के कारण अपना समय महात्मा जी के दर्शनों के लिए और उनकी प्रार्थना सुनने में व्यय किया करता था। सोहनसिंह उसको होटल में काम देने को तैयार था, परन्तु वेतन अभी कम देता था। रामलाल घर का खर्चा दे ही रहा था। इस कारण मोतीराम कम वेतन पर काम करने को तैयार नहीं होता था। अब किसी प्रकार की घबराहट नहीं थी। वह धीरज से किसी अच्छे काम की प्रतीक्षा में था। जब भी खाली बैठा वह ऊब जाता, तो महात्माजी की प्रार्थना सुनने चल पड़ता।

आज वह इसी प्रयोजन से क्वीनस्वे पर जा रहा था, तो पीछे से किसी ने आवाज़ दे दी, "लाला मोतीराम, लाला मोतीराम!"

मोतीराम घूमकर खड़ा हुआ तो एक आदमी भागकर आया और उससे गले मिलकर आँसू बहाने लगा। मोतीराम को उसको पहचानने में कुछ कठिनाई हुई। उसके कपड़े बहुत मैले हो रहे थे और मुख पर दाढ़ी बढ़ आई थी। मोतीराम ने पहचाना तो कहा, "ओह, गोकुलचन्द हो? सुनाओ भाई! यहाँ कैसे पहुँचे?"

"कुछ न पूछो, दादा! मैं उसी गाड़ी से आया हूँ, जिसमें गुजरात के पास कत्लेआम हुआ था।"

"कत्लेआम? कब हुआ है?"

"तो तुम आजकल समाचार-पत्र नहीं पढ़ते क्या?"

"नहीं, जेब में पैसे ही नहीं। न ही अवकाश है, इस प्रकार की बातों पर विचार करने का। तुम मुझसे जून में मिले थे न? मैं तो तब ही समझ गया था कि पेशावर में रह सकना असम्भव है। हमारे पास एक सोहनसिंह नौकर था। मैंने उसको दस हज़ार देकर दिल्ली भेजा था कि वह यहाँ कोई दुकान पगड़ी ले-देकर ले ले। उसने चिट्ठी लिखी कि दस हज़ार और भेजूँ। वह भी भेज दिया। पीछे उसका कोई उत्तर नहीं आया। आखिर पन्द्रह अगस्त को मुस्लिम लीगियों ने बाँह से पकड़कर होटल से बाहर कर दिया और ट्रक में बिठाकर हवाई अड्डे पर पहुँचा दिया। हवाई जहाज़ से अमृतसर पहुँच गया। वहाँ से रेलगाड़ी में बैठकर दिल्ली आ गया हूँ। यहाँ आकर पता चला है कि सोहनसिंह ने मेरे रुपये से अपने नाम जायदाद ले ली है और मुझको अँगूठा दिखा रहा है।"

"यह सोहनसिंह वहाँ तो बहुत ही भोला-भाला प्रतीत होता था।"

"पर यहाँ तो मुसलमानों का माल लूटकर खुद होटल का मालिक बन बैठा है।"

"तुम्हारा लड़का?"

"वह पहली अगस्त को पेट में छुरा घोंपकर मार डाला गया था।"

"दादा! हमारे साथ तो इससे भी अधिक तबाही हुई है। जून में तुमसे मिलकर मैं बन्नू चला गया था। वहाँ जाकर मैं, अपने घर वालों को बन्नू छोड़ दिल्ली चले आने के लिए तैयार करने लगा; परन्तु एक तो बीवी बीमार थी, दूसरे दो जवान लड़कियों को लेकर अकेले आने में मन डरता था। फिर दिल्ली आने के लिए कोई नहीं माना। जिसको भी चलने के लिए कहता था, वह पूछता था, 'क्यों? क्या बादशाह खान मर गया है? जब तक वह है और हमारी लाल कुर्ती फ़ौज है, किसी हिन्दू का बाल भी बाँका नहीं हो सकता।' परिणाम यह हुआ कि मेरे साथ आने के लिए कोई भी तैयार नहीं हुआ। विवश मैं वहाँ ही रह गया।

"आखिर बारह सितम्बर को बन्नू शहर में डुग्गी पीट दी गई कि सब हिन्दू अपने बाल-बच्चों को लेकर बन्नू स्टेशन पर पहुँच जावें। यह हुक्म फ़ौज की ओर से था। विवश मैं अपनी बीमार औरत और लड़कियाँ लेकर स्टेशन की ओर चल पड़ा। मेरी पत्नी ने अपने भूषणों की पोटली बगल मे दबाई हुई थी। वह फ़ौजियों ने छीन ली और कह दिया कि ज़ेवर ले जाने की इजाज़त नहीं है।

"हम तीन दिन तक स्टेशन पर पड़े रहे। पश्चात् हमको ले चलने के लिए एक रेलगाड़ी आई और वह हमको लेकर अमृतसर की ओर चल पड़ी। दो दिन तो आराम से गुज़रे, परन्तु जब गाड़ी गुजरात के समीप पहुँची तो एकाएक वह जंगल में रुक गई और पूर्व इसके कि हम समझ सकते कि क्या हो रहा है, हमारे डिब्बे में तलवार, बर्छे आदि लिये हुए बीस आदमी घुस आये और सबको मौत के घाट उतारने लगे। मेरे ऊपर की सीट पर, जो सामान रखने के लिए बनी थी, पाँच सवारी घुस कर बैठी थीं। पहले उन पर वार किया गया। मैं तो दादा, इस प्रकार रक्त बहता देख और ऊपर की सीट पर बैटे हुओं की लाशों को अपने ऊपर गिरता देख अचेत हो गया। मुझको पता नहीं कि पीछे क्या हुआ।

"जब मुझको चेतना हुई तो गाड़ी अमृतसर स्टेशन के प्लेटफ़ार्म पर पहुँच चुकी थी। मेरे ऊपर से शव उठाये तो मुझको चेतनता हुई। मेरी पत्नी का शव मेरे पास पड़ा था। लड़कियों के शव वहाँ नहीं थे। मैं समझता हूँ कि वे उनको जीवित ही पकड़ ले गए हैं।

"अमृतसर से मुझको दिल्ली भेज दिया गया। यहाँ मैं सब्ज़ी मण्डी कैम्प में ठहरा हूँ। मुझको कहा गया है कि महात्माजी के सामने उपस्थित होकर इस घटना का वृत्तान्त सुनाऊँ।"

"तो तुम महात्माजी के स्थान पर जा रहे हो?"

"हाँ।"

"मैं भी वहीं चल रहा हूँ।"

इस प्रकार बातें करते हुए दोनों बिड़ला हाउस जा पहुँचे। गोकुल-

चन्द और मोतीराम ने अपने नाम और पते लिखकर भीतर भेज दिए। दोनों को भीतर बुला लिया गया।

गोकुल ने अपनी पूर्ण कथा व्याख्या के साथ महात्माजी को बताई। उसने अपनी लड़कियों के अपहरण की बात भी बताई। महात्माजी ने गोकुल की कहानी सुनी और मोतीराम से उसके विषय में पूछने लगे, "अब कैसा काम-काज है मोतीराम ?"

"जी, दुकान तो पुनर्वास विभाग ने लौटा ली है, परन्तु अभी जीवन-निर्वाह का कोई साधन नहीं मिला। मैं तो भगवान् के भरोसे ही हूँ।"

"बहुत ही ठीक कर रहे हो। परमात्मा सब-कुछ देखता है। उस पर विश्वास रखो। अभी तो तुम कांग्रेस कार्यालय में चले जाओ। वहाँ तुम्हारे लिए काम-धन्धे का प्रबन्ध कर दिया जायगा।"

"मैं उस दिन वहाँ गया था और कांग्रेस के प्रधान से मिला था। वे बहुत ही सहानुभूति से मिले थे और उन्होंने कुछ दिनों में फिर मिलने के लिए कहा है।"

"ठीक है। कुछ और कहना है ?"

"जी नहीं। मैं तो केवल दर्शन करने के लिए आया था।"

"तो बाहर चलकर बैठो। अभी प्रार्थना होगी। उसमें सम्मिलित होना।"

प्रार्थना आरम्भ होने में अभी समय था। इस पर भी लोग एकत्रित होने आरम्भ हो गये थे। मोतीराम और गोकुल कोठी से निकल बाहर लॉन में आ गए। ये दोनों प्रार्थना सुनने के लिए एकत्रित लोगों में जा बैठे। गोकुल को गम्भीर देख, मोतीराम ने पूछा, "क्या बात है, गोकुल भैया ?"

"कुछ विशेष बात नहीं। मैं एक बात विचार कर रहा था कि महात्माजी को मेरी बात पर विश्वास नहीं आया, अन्यथा वे अवश्य उसके विषय में कुछ कहते। कल रात मैंने अपनी कथा कैम्प में सुनाई थी।

सब लोग सुनकर रोने लगे थे। सब क्रोध से लाल-पीले हो रहे थे; परन्तु यहाँ तो महात्माजी के माथे पर एक भी बल नहीं पड़ा। यह कहना कठिन है कि उनको इस घटना से किसी प्रकार का भी दुःख हुआ है क्या ?"

"भाई ! वे महात्मा हैं। वे सांसारिक दुःख-सुख से ऊपर हैं। वे छोटी-मोटी घटनाओं से प्रभावित नहीं होते।"

"तो तुम इसका यह कारण समझते हो ! इसीलिए जब मैं बात समाप्त कर चुका तो एकदम तुमसे पूछने लगे कि काम-काज कैसा है ?"

"यही तो बड़े आदमियों में गुण होता है। उनको किसी के मरने-जीने से दुःख-क्लेश नहीं होता और वे एक विषय से किसी भी दूसरे विषय पर अपना ध्यान इस प्रकार ले जा सकते हैं, जैसे लोग किताब का एक पन्ना पलटकर दूसरा पन्ना निकाल लेते हैं।"

गोकुल का परिचय नेताओं से इतना अधिक नहीं था, जितना मोतीराम का था। वह सीधा-साधा एक देहाती दुकानदार था। महाजनी में हिसाब-किताब रखने के अतिरिक्त वह और कुछ नहीं जानता था। लाल कुर्ती वालों में एक साधारण ख़िदमतगार के रूप में सम्मिलित हुआ था और पीछे सालार बना दिया गया था। मोतीराम को महात्माजी की बुद्धि और योग्यता का बखान करते देख, वह बहुत प्रभावित हुआ। इस कारण अपनी सब हानि और दुःख-क्लेश भूल, महात्माजी की प्रार्थना सुनने के लिए दत्त-चित्त हो गया।

मोतीराम के समीप एक सिख बैठा था। वह समय-समय पर अपनी जेब से रुमाल निकाल-निकालकर आँखें पोंछ रहा था। इन दोनों को परस्पर बातें करते और उनमें बन्नु और पेशावर का नाम लेते सुन, वह पूछने लगा, "कहाँ से आये हैं आप ?"

उत्तर मोतीराम ने दिया, "मैं तो पेशावर से आया हूँ और ये, मेरे मित्र बन्नु से आये हैं।"

"ओह। तो आप हैं, जो बन्नु वाली गाड़ी में से बचे हैं।"

"जी।"

"मैं डेरा इस्माईल खाँ का रहने वाला हूँ। मेरे घर के पन्द्रह प्राणी थे। उनमें सात औरतें थीं। मुझको बूढ़ा समझ छोड़ दिया गया और शेष पुरुषों को तलवार के घाट उतार दिया गया। युवा औरतों से मेरी आँखों के सामने व्यभिचार किया गया। मेरी दस वर्ष की लड़की से जब बदसलूकी की गई और वह चीखें मार-मारकर रोई तो मैं अचेत हो गया। जब मुझको चेतनता हुई तो वे मेरा घरबार लूटकर चले गए थे। पीछे कुछ गोरखे हिन्दू फ़ौजी आये और मुझको जीवित देख, साथ बिठाकर ले आये।

"यहाँ पहुँचकर मुझको कहा गया कि महात्माजी की प्रार्थना सुनकर चित्त को शान्ति मिलती है। सो शान्ति प्राप्त करने के लिए यहाँ चला आया हूँ।"

गोकुल का ध्यान इस वृद्ध सिख का वृत्तान्त सुनकर पुनः अपनी लड़कियों की ओर चला गया और उसकी आँखों से अविरल आँसू बहने लगे। मोतीराम ने इस वृद्ध सिख का नाम पूछा तो उसने बताया, "सुन्दरसिंह। मैं फ़ौज का रिटायर्ड कैप्टन हूँ। मेरे पास बन्दूक थी। पन्द्रह अगस्त को डिप्टी कमिश्नर बहादुर की आज्ञा आई कि मैं बन्दूक और कारतूस जमा करा दूँ। मैं समझता था कि आसपास के सब मुसलमान मेरे मित्र हैं, उनसे मेरा लेन-देन है और मुझको किसी प्रकार का भय नहीं। मेरे लड़के मुझको कहते थे कि हमको हिन्दुस्तान चला आना चाहिए; परन्तु मैं कहता था, 'भगवान् पर भरोसा रख, अपने मन से मैल निकालकर रहो।' मुझको किसी प्रकार की चिन्ता नहीं थी। मेरे इस साहस और मुसलमान मित्रों पर विश्वास को देखकर, मेरे अन्य सम्बन्धी भी मेरे घर आ गए और उन सब के साथ जो-कुछ हुआ, उस सबका ज़िम्मेदार मैं हूँ।"

इतना कह, वह बिलख-बिलखकर रोने लगा। गोकुल भी अपनी आँखों में से आँसू पोंछने लगा। उनको देख, मोतीराम और अन्य समीप बैठे हुओं के भी आँसू बहने लगे थे।

इस समय महात्माजी दो लड़कियों के कन्धों पर हाथ रखे हुए अन्दर से निकल आये। सब उपस्थित जन खड़े हो गए। महात्माजी अपने स्थान पर बैठे तो लोग भी बैठ गये।

: ११ :

प्रार्थना का कार्यक्रम आरम्भ हुआ। सबसे पहले एक लड़की ने बहुत ही मीठे स्वर में "राम है मेरो सहाई" भजन गाया। पश्चात् एक भद्र ने गीता में से कुछ श्लोक पढ़े। तदनन्तर गुरु ग्रन्थ साहब में से पाठ किया गया और पश्चात् कुरान की तिलावत की गई।

कुछ दिन हुए एक प्रार्थना सुनने वाले ने प्रार्थना में कुरान पढ़े जाने पर आपत्ति उठाई थी। उस दिन महात्माजी ने प्रार्थना बन्द कर दी थी। आज उन्होंने इस विषय में बात आरम्भ की। उन्होंने कहा:—

"यह प्रार्थना सार्वजनिक नहीं है। इसमें जनता के लोग आ सकते हैं; परन्तु जो भी यहाँ के रीति-रिवाज को पसन्द नहीं करता, उसको अधिकार है कि वह यहाँ न आये। किसी को भी हमारे कार्यक्रम में विघ्न डालने का अधिकार नहीं।" (दिल्ली डायरी, पृ० ३३)

"मैंने एक दिन कहा था कि मैं कुरान में कोई खराबी नहीं समझता। उसमें सब धर्म वालों से न्याय और बराबरी का व्यवहार करने को कहा है।

"इसको सुनकर आज मेरे पास एक आर्यसमाजी महाशय अरबी में लिखी एक पुस्तक लेकर आये थे। वे उसको कुरान कहते थे। मैं अरबी जानता नहीं। वे कहने लगे कि कुरान में लिखा है कि काफ़िरों को मोमिनों के बराबर हक नहीं मिल सकते। उनकी जायदाद, औरतें और पशु मोमिनों के लिए हलाल हैं।

"मैंने उनको कहा कि यह ग़लत है। यह ठीक नहीं हो सकता। महाशय जी ने मुझको उस किताब में से कुछ सुनाया और फिर उसमें कुछ सफ़ों पर निशान लगाकर दे दिए हैं। मैंने मौलाना साहब से पूछ

कर उनको उत्तर देने का वचन दिया है।

"पर मैं कहता हूँ कि यह बात ठीक नहीं हो सकती। मौलाना साहब ने तो मुझे इससे उल्टी बात बताई थी।

"इस समय पचास हज़ार मुसलमान पुराने किले में भागकर पनाह ले रहे हैं। हुमायूँ के मकबरे में भी बहुत हैं। उनकी हालत बहुत ही चिन्ताजनक है।

"उनकी हालत को इस कारण युक्तिसंगत बताना कि भारत राज्य संघ में अथवा पाकिस्तान में हिन्दुओं से भी दुर्व्यवहार हुआ है, मुझको ठीक प्रतीत नहीं होता। हिन्दू और सिखों को बहुत कष्ट हुआ है, इसमें सन्देह नहीं। उनको न्याय दिलाना भारत सरकार का काम है। मैं जानता हूँ कि लाहौर की हिन्दू और सिख संस्थाओं को बहुत हानि पहुँची है। वहाँ बहुत उत्तम स्कूल, कॉलेज और हस्पताल थे, जो सहस्रों दानियों की दान-दक्षिणा से चलते थे। इन सब संस्थाओं की और जनता की सम्पत्ति वापस दिलवानी चाहिए। परन्तु यह व्यक्तिगत बदला लेने से कैसे हो सकता है? भारत सरकार को चाहिए कि सबको उनकी हानि दिलवाये।

"जब दो व्यक्ति घोड़े पर सवार हो जा रहे हों और एक घोड़े से गिर पड़े, तो क्या दूसरे का भी कर्त्तव्य हो जाता है कि वह भी गिर पड़े?

"यह कोई युक्ति नहीं कि पाकिस्तान के हिन्दुओं के साथ दुर्व्यवहार हुआ है, तो भारत में मुसलमानों के साथ भी हो।

"अभी-अभी समाचार मिला है कि इलाहाबाद से नैनी के मार्ग में कुछ मुसलमानों को रेलगाड़ी से बाहर फेंक दिया गया है। मैं तो इसमें कोई कारण और युक्ति समझ नहीं सकता। इस प्रकार की घटनाओं से प्रत्येक हिन्दुस्तानी का सिर लज्जा से झुक जाना चाहिये।"

सुन्दरसिंह, गोकुलचन्द और मोतीराम प्रार्थना से भिन्न-भिन्न प्रभाव लेकर लौटे। सुन्दरसिंह के मुख पर सन्तोष और शान्ति दिखाई देती थी।

गोकुल के मुख पर बेचैनी और चंचलता थी और मोतीराम प्रसन्न था। तीनों ख़ामोश अपने-अपने विचारों में लीन चले जा रहे थे। वे यॉर्क-प्लेस के पास पहुँच कनाट प्लेस की ओर घूम गये। इस समय तक गोकुल को मन की चंचलता असह्य हो उठी थी और उसके मुख से फूट-फूटकर निकलने लगी थी। उसने कहा, "दादा मोतीराम! यह तुम्हारा महात्मा कुछ भी कहे, यह संसार का जीव नहीं है। यह इस संसार का भला और बुरा समझ नहीं सकता। जब समझता नहीं तो उसके दुःख का इलाज क्या करेगा?"

"समझता क्यों नहीं?" मोतीराम ने प्रश्न-भरी दृष्टि से उसके मुख की ओर देखते हुए पूछा।

"एक आदमी के पेट में शूल हो रहा था। जब हकीम उसको देखने आया तो उसकी दृष्टि बीमार के पाँव पर एक छोटे-से घाव पर जा पड़ी। हकीम ने तुरन्त कह दिया, 'इस घाव पर यह मरहम लगा दो।'

"रोगी ने कहा भी कि उसको पाँव के घाव से कष्ट नहीं हो रहा। उसको पेट में कष्ट है। हकीम का उत्तर था, 'कोई बात नहीं। यह घाव ठीक होना चाहिये। पेट के दर्द की बात पीछे देख लेंगे।'

"मुझको तो महात्माजी की बात ऐसी ही प्रतीत हो रही है। गुजरात वाली गाड़ी पर सैंकड़ों ही मार डाले गये। इस घटना से उनके मस्तिष्क को चोट नहीं लगी, परन्तु नैनी के समीप दो मुसलमानों का गाड़ी से बाहर फेंक दिया जाना सुन, उनके मस्तिष्क को चक्कर आने लगा है।"

"तो क्या तुम उनका गाड़ी से बाहर फेंक दिया जाना ठीक समझते हो?"

"मैंने यह कहा है क्या? मैं तो कह रहा हूँ कि इनकी दस वर्ष की लड़की की चीखें तो महात्माजी के मन पर कुछ भी प्रभाव उत्पन्न नहीं कर सकीं।"

"पर मैंने तो यह बात उनको बताई ही नहीं। मैं उनको व्यर्थ में दुःख देना नहीं चाहता था।" सुन्दरसिंह ने कहा।

"पर मैंने तो गुजरात के समीप हुई घटना की बात बताई थी ।"

"पर वे बेचारे अकेले क्या कर सकते हैं ?" मोतीराम ने पूछ लिया ।

"वे एक बात कर सकते हैं कि इन प्रार्थनाओं के समय केवल भगवान् का सिमरण ही किया करें । किसी अन्य बात पर वार्तालाप न किया करें । उनके पास न तो साधन हैं, जिनसे वास्तविक परिस्थिति को जान सकते हैं और न ही उनके पास शक्ति है कि वे रोग की वास्तविक चिकित्सा कर सकें । वे पेट की शूल की औषधि नहीं जानते । पाँव के घाव की मरहम उनके पास है और वही देकर चिकित्सक बनना चाहते हैं । सबसे मजेदार बात यह है कि पाँव के घाव पर मरहम लगाकर पेट की शूल दूर करने का दावा कर रहे हैं । अपनी अज्ञानता को इस प्रकार प्रकट न करें तो ठीक ही होगा ।"

"वे अज्ञानी हैं क्या ? गोकुल ! वे महात्मा हैं । वे सबके लिए मन में दया-भाव रखते हैं । उनके लिए सब एक समान हैं ।"

इस पर सुन्दरसिंह ने बात बदल कर कहा, "कितनी सौम्य वाणी है उनकी ! ऐसा प्रतीत होता है कि साक्षात् भगवान् ने भूमि पर अवतार लिया है ।"

"ठीक है ।" गोकुल ने एक बिजली के खंभे के समीप हो उसका सहारा लेकर कहा, "मेरे मन का बहुत-सा भ्रम तो निवारण हो गया है । इस पर भी मैं समझ नहीं सका कि यह महात्माजी की बुद्धि का फेर है अथवा उनकी नियत का ?"

"न बुद्धि का है न नियत का ।" मोतीराम और सुन्दरसिंह विस्मय में गोकुल के मुख पर देखते हुए वहाँ खड़े हो गये । गोकुल बिजली के खंभे के साथ ढासना लगाये हुए था और वह बहुत ही परेशान प्रतीत होता था । मोतीराम ने उसको आश्वासन देते हुए कहा, "महात्माजी की बुद्धि कुन्दन के समान निर्मल है । उनकी नियत में केवल एक बात है और वह है मानवता की रक्षा करना ।"

इस पर सुन्दरसिंह ने महात्माजी के भाषण का प्रभाव अपने मन पर

वर्णन कर दिया, "मैं तो आज अपने-आपको कृत-कृत्य समझने लगा हूँ। मुझको कुछ ऐसा प्रतीत हो रहा है कि मेरे मन की चंचलता और अशान्ति महात्माजी के कथन से विलीन हो गई है।"

गोकुल अपने सिर को हाथों में पकड़े हुए, आँखें मूँदे खंभे से ढासना लगाये खड़ा था। वह अपने दोनों साथियों की बातें सुन रहा था। उसके मन में अपनी पत्नी के शव का दृश्य आ रहा था। एकाएक वह बोल उठा, "तो एक बात जरूर है कि मैं पागल हो गया हूँ। दोनों में से एक बात सत्य ज़रूर है। या तो ये महात्मा नहीं हैं। अथवा मैं पागल हूँ।

"देखो न, एक आर्य-समाजी महाशय ने कहा कि कुरान में काफ़िरों के माल, जायदाद और औरतों पर मोमिनों का अधिकार होना लिखा है। इस पर आपने फरमाया कि मौलानाजी ने तो इससे उलट बताया है, इस कारण यह सत्य नहीं है। मैं नहीं जानता कि ये मौलाना कौन हैं, अथवा कुरान में क्या लिखा है? मैं यह जानता हूँ कि मुसलमानों को मुल्ला लोग अपने वाज़ों में यह बताते हैं और मुसलमान ऐसा ही करते हैं। वे काफिरों की हर चीज़ को ले लेना हलाल समझते हैं।

"साथ ही जो-जो कुछ मुसलमानों के राज्य में पंजाब में होता रहा और जो-कुछ पाकिस्तान में हो रहा है, वह उस आर्य-समाजी की बात को ठीक और महात्माजी के मौलाना के कथन को ग़लत सिद्ध करता है।

"हे भगवान्! अब तुम मुझको इस संसार से उठा लो। महात्माजी के कथन को, जब मैं ग़लत समझता हूँ और देश-भर के हिन्दू उसको ठीक समझते हैं, तो फिर मेरे लिए यहाँ से उठ जाना ही ठीक है। मेरा मन अपनी बीवी के हत्यारों और लड़कियों के अपहरण करने वालों को भाई मानने को तैयार नहीं होता, तो क्या करूँ? यह सब झूठ है। यह महात्मा नहीं हो सकता। नहीं! नहीं!! मैं पागल हूँ। मुझको आत्म-हत्या कर लेनी चाहिये...।"

बात बीच में ही काटकर सुन्दरसिंह ने कहा, "भाई गोकुल! मेरी

ओर देखो। मैंने अपनी तीन लड़कियों के साथ बदफ़ेली होती देखी है। पर भाई! यह काम तो सरकार का है कि इस प्रकार की बातों को रोके। एक व्यक्ति का अधिकार नहीं कि वह कानून को अपने हाथ में ले ले।"

"तो क्या मैंने कहा है कि मुझको बदला लेना चाहिये? कब कहा है? मैंने किसी मुसलमान को नहीं मारा। न मारने के लिए कहा है। मैं तो यह कह रहा हूँ कि जिन लोगों ने मेरे परिवार से यह दुर्व्यवहार किया है, उनको मैं अपना भाई नहीं मान सकता। यदि उनके साथ कहीं कुछ अनुचित व्यवहार हुआ है, तो उसके लिए मेरा सिर लज्जा से झुक नहीं सकता। जो जैसा करता है, वैसा भरता है। मुझको उनकी चिन्ता नहीं और सरकार के कार्य को मैं कर नहीं सकता। इसी प्रकार महात्माजी सरकार नहीं। उनको भी सरकार के काम स्वयं करने के लिए यत्न नहीं करना चाहिये। उनको दो मुसलमानों की हत्या तो हत्या प्रतीत हुई और पाँच सौ से ऊपर हिन्दुओं की हत्या पर उनके पास कहने को शब्द नहीं। मैं अनुभव करता था कि जब मैं उनको आप-बीती बता रहा था तो उनको मेरे कहने पर विश्वास नहीं आ रहा था।

"और फिर देखो न क्या उदाहरण दिया है! घोड़े पर दो सवार जाते हों, एक गिर जाए तो क्या दूसरे को भी गिर जाना चाहिए? बात इससे उलट हो रही है। एक सवार ने अपने साथी को धोखे से धक्का देकर गिरा दिया है। अपने साथी को गिराकर, जब वह महात्माजी की प्रार्थना में आवे तो क्या उसको गले लगाकर उसको मस्कीन कहा जावे?

"हे भगवान्, मेरी अक्ल को क्या हो गया है? मैं महात्माजी के दृष्टि-कोण को समझता क्यों नहीं? मुझ पागल की बुद्धि में यह क्यों आता है कि उस सवार को पकड़कर पुलिस के हवाले कर दूँ और यदि पुलिस इतनी निकम्मी हो कि उसके कुकर्मों का फल दे न सकती हो तो स्वयं उसको दण्ड दे दूँ।

"पर यह तो ग़लत है न? इसीलिए तो कहता हूँ कि यह संसार मेरे जैसे आदमियों के लिए नहीं है।"

इतना कह गोकुल फिर अपने सिर को हाथों में पकड़ आँखें मूँद खड़ा हो गया। मोतीराम ने समझा कि वास्तव में वह पागल हो गया है। उसके मन में आया कि उसने बहुत भयानक दृश्य देखे हैं और इससे उसका मस्तिष्क हिल गया है। अतएव उसने समझा कि इसको कैम्प में पहुँचा देना चाहिए। वहाँ कुछ दिन आराम करेगा तो उसका दिमाग़ ठीक हो जायगा।

उसने सुन्दरसिंह को कहा और दोनों गोकुल को बाहों से पकड़कर कनाट प्लेस की ओर ले चले। चलते हुए मोतीराम ने कहा, "गोकुल भैया! तुमको आराम की ज़रूरत है। मालूम होता है कि भयंकर दृश्य देखने से और पिछले कई दिन की भाग-दौड़ से तुम बहुत थक गये हो। चलो तुमको ताँगे में चढ़ाकर कैम्प में भेज दूँ।"

गोकुल सत्य ही व्याकुल हो रहा था। सर्वथा संज्ञाहीन-सा अपने साथियों से पकड़ा हुआ चला जा रहा था। कुछ दूर तक चलने पर एक ताँगे वाला मिला। मोतीराम ने उसको सब्ज़ी मण्डी कैम्प तक चलने के लिए कहा। ताँगे वाले ने अढ़ाई रुपये माँगे। इतने रुपये तीनों में से किसी के पास नहीं थे। इस कारण तीनों एक-दूसरे का मुख देखने लगे। मोतीराम ने जेब ख़ाली होने की बात छुपाने के लिए कहा, "एक रुपया ले लो।"

ताँगे वाले ने बिना एक शब्द भी और कहे ताँगा भगाया और कनाट-प्लेस की ओर ले गया। विवश मोतीराम और सुन्दरसिंह गोकुल की बाँहों से पकड़े हुए कनाट-प्लेस ले आये। यहाँ पहुँचकर मोतीराम को रामलाल की याद आई। उसने सोचा कि कहने पर वह गोकुल को कैम्प में भेजने का प्रबन्ध अवश्य कर देगा। अतएव वे तीनों रामलाल की दुकान पर जा पहुँचे।

दुकान में रामलाल सामान समेट रहा था। वह इनको इस प्रकार आता देख समझा कि कहीं कोई दुर्घटना हो गई है और यह तीसरा आदमी घायल हो गया है। अतएव वह अपनी गद्दी से उठ, भागा हुआ

बाहर आया और मोतीराम से पूछने लगा, "दादा ! क्या हुआ है ?"

गोकुल ने, वहाँ रखी एक कुर्सी पर बैठते हुए कहा, "मैंने बहुत दूर जाना है। सब्ज़ी मण्डी कैम्प में। पर मैं थक गया हूँ। ऐसा अनुभव होता है कि मेरी टाँगों में जान नहीं रही। कई वर्षों की भाग-दौड़ और मेहनत-मशक्कत, आज एकदम प्रार्थना के उपरान्त प्रकट हुई है।"

"तो सब्ज़ी मण्डी कैम्प में क्या है ? क्या वहाँ तुम्हारे परिवार के लोग रहते हैं ?"

"नहीं, वहाँ कोई नहीं है। मेरा कोई नहीं है। मैं थक गया हूँ और मुझसे चला नहीं जाता।"

इस समय मोतीराम ने रामलाल को गोकुल का परिचय दे दिया, "यह मेरा मित्र है। लाल कुर्ती फ़ौज में यह भी सालार था। बन्नु से लुट-पिटकर आया है, इससे इसका मस्तिष्क ख़राब हो गया है। यह सब्ज़ी मण्डी कैम्प में ठहरा हुआ है। मेरी इच्छा है कि इसको ताँगा कर वहाँ पहुँचा दिया जाय।"

"मैं समझता हूँ कि मेरे पाँव-तले से मिट्टी खिसक गई है।" गोकुल ने बात के बीच में ही कहना आरम्भ कर दिया, "मैं अपने को संसार में निराधार लटका हुआ पाता हूँ।

"हम समझते थे कि वे लोग, जो पाकिस्तान बनाना चाहते थे, देशद्रोही हैं और हम, जो पाकिस्तान नहीं चाहते थे, देश-भक्त हैं। हमको देशद्रोहियों से सहानुभूति नहीं थी। पर यहाँ तो बात ही उलटी निकली। हमारे महात्माजी को तो उनसे अज़हद हमदर्दी है। पाँच सौ से ऊपर वे लोग, जिनसे भारत को धोखा नहीं हुआ था, मारे गये। उनके लिए तो महात्माजी के मन में किसी प्रकार की चिन्ता और दुःख नहीं था, परन्तु पाकिस्तान बनाने में सहयोग देने वालों के लिए महात्माजी के मन में अगाध सहानुभूति है।"

रामलाल को बात कुछ-कुछ समझ में आने लगी थी। उसने पूछा, "भाई साहब ! महात्माजी की प्रार्थना सुनकर आ रहे हैं ?"

"हाँ।" सुन्दरसिंह ने उत्तर दिया, "वहाँ ये अपनी दुःख-कथा सुनाने गये थे। ऐसा प्रतीत होता है कि महात्माजी ने इनकी कथा सुन या तो कथा पर विश्वास नहीं किया और यदि किया है तो इस घटना को इतना भी महत्त्व नहीं दिया, जितना दो मुसलमानों का नैनी के समीप गाड़ी में से बाहर फेंक देने को दिया है। इससे ये ऐसी बहकी-बहकी बातें करने लगे हैं।"

"ओह! अब समझ गया हूँ। भाई गोकुल! तुम आज यहाँ ही आराम करो। वहाँ इतनी दूर जाकर क्या करोगे?"

"कहाँ?" मोतीराम ने पूछा।

"यहाँ, जहाँ मैं रहता हूँ। कैम्प में इसका कोई है नहीं। इसको यहाँ आराम मिलेगा।"

"पर तुम अपने घर रखोगे?"

"क्या हरज है? दादा का मित्र तो मेरा भी मित्र हुआ। क्यों गोकुल भैया?"

गोकुल ने अभी उत्तर नहीं दिया था कि रामलाल ने दुकान के एक नौकर को आवाज़ दी, "सालिगराम! इनको ऊपर ले जाओ और शोभा की माँ को कहना कि मित्र हैं। इनके कपड़े इत्यादि बदलवा, भोजन का प्रबन्ध कर दें। मैं अभी आ रहा हूँ।"

पश्चात् रामलाल ने मोतीराम की ओर देखकर कहा, "दादा! अब तुम भी यहाँ आ जाओ। दरियागंज के मकान का भाड़ा, एक सौ रुपया फोकट में दिया जा रहा है।"

"नहीं रामलाल! अभी नहीं।"

: १२ :

कनॉट प्लेस के मकान में सात कमरे थे। एक कमरे में, जो बाहर बरामदे में खुलता था, साफ करवा, गोकुल को टिका दिया गया। उसको बदलने के लिए कपड़े देकर उसके भोजन का प्रबन्ध कर दिया

गया । रात को सोने से पूर्व उसे दूध भी मिल गया ।

अगले दिन प्रातःकाल रामलाल गोकुल से मिला और पूछने लगा, "गोकुल भैया ! अब तबीयत कैसी है ?"

"तबीयत तो रात-भर आराम करने से ठीक हो गई मालूम होती है । पर जो सदमा महात्माजी की प्रार्थना सुनकर पहुँचा था, वह अभी भी वैसा-का-वैसा ही है ।" गोकुल ने अपनी पूर्ण कथा और फिर गुजरात के समीप कत्लेआम तथा लड़कियों के अपहरण की सब बात बताकर कहा, "मैं समझता था कि महात्मा जी को इस कथा को सुनकर दुःख होगा, परन्तु इससे कुछ उलटी बात देख मस्तिष्क चकराने लगा था और वह घबराहट अभी भी चल रही है ।"

"गोकुल ! एक बात मैं तुमसे पूछता हूँ कि यदि महात्मा जी तुम्हारी कथा सुनकर रो देते, तो तुमको शान्ति मिल जाती क्या ? किस प्रकार वे उस हानि की पूर्ति कर देते, जो उनकी अपनी अशुद्ध नीति के कारण ही हुई है ?

"भैया ! हम लोग तो भगवान् के आश्रय हैं । इन नेताओं के आश्रय तो पाकिस्तान में बैठे रहे थे । ये हमारी कुछ भी तो सहायता नहीं कर सके । मेरी बात मानो । अब यह रोना-धोना छोड़ो । कुछ काम कर जीविकोपार्जन करो । इनके आश्रय बैठे रहने से, अथवा इनके वक्तव्य तथा प्रार्थनाएँ सुनने से कुछ नहीं बनेगा । इनसे एक भी विस्थापित व्यक्ति का पेट नहीं भरेगा ।

"एक बात और भी है । प्रयत्न करने के दो ढंग हैं । एक तो हमारे दादा मोतीराम प्रयोग कर रहे हैं । वे अफसरों से मिल रहे हैं । कांग्रेस कमेटी के अधिकारियों के घरों में चक्कर काट रहे हैं और फिर महात्मा जी के दर्शन कर रहे हैं । इस प्रकार दादा का विचार है कि लीडरों और सरकारी अधिकारियों को वे विस्थापितों की सहायता के लिए प्रेरणा देकर काम बना लेंगे । एक दूसरा ढंग भी है । वह मैं चला रहा हूँ । देश के कानून से बचकर, अपनी टाँगों पर आप खड़े होने का यत्न कर रहा हूँ ।

मैं समझता हूँ कि यह उपाय अधिक सफल हो रहा है। मैं तुमको अपने एक परिचित की कथा बताता हूँ। लाला बालकराम लाहौर के एक रईस आदमी थे। लाहौर में उनकी सम्पत्ति कई लाख रुपये की थी। वे जब दिल्ली पहुँचे तो सिवाय उन कपड़ों के, जो वे पहिने हुए थे, उनके पास कुछ नहीं था। वे और उनके तीन लड़के दिल्ली में चाँदनी चौक की पटरी पर बैठकर कपड़ा बेचने का काम करने लगे हैं। मैं उस दिन चाँदनी चौक में से गुज़रा तो देखा कि पचास वर्ष की आयु के लाला बालकराम पटरी पर बैठे कपड़ा नाप रहे हैं। मैंने लाला जी से सहानुभूति प्रकट करते हुए पूछा, 'क्या मैं आपकी कुछ सहायता कर सकता हूँ?' तो कहने लगे, 'जितनी मैं अपनी सहायता स्वयं कर सकता हूँ, उतनी कोई दूसरा क्या करेगा? मेरा बहुत-सा रुपया ट्रेडर्स बैंक में था और उसने रुपया देना बन्द कर दिया है। इस पर भी यदि एक-दो महीने और निकल गये तो दुकान मिल जाएगी और हम अपनी मान-प्रतिष्ठा की रक्षा करते हुए दिल्ली में रह सकेंगे।"

गोकुल को रामलाल की बातों से साहस बँधने लगा था। इस पर रामलाल ने कहा, "अभी तुम यहाँ रहो। जब तुम्हारा स्वास्थ्य बिलकुल ठीक हो जाए, तब किसी काम के विषय में विचार किया जा सकेगा।"

गोकुल ने बताया, "यही बात हमारे एक पड़ोसी सामलदास कहते थे। बन्नू में वे हिन्दू महासभा के कार्यकर्त्ता थे। उस समय हमारी, मेरा मतलब है, लाल कुर्ती वालों की धूम थी और उसकी कोई नहीं सुनता था। इसपर भी उसने जून मास में मुझको बुलाकर कहा कि वह बन्नू छोड़ रहा है और मुझको भी उसके साथ चलना चाहिए। मैंने उसको लाल कुर्ती फौज की शक्ति के विषय में बताया तो वह हँसकर बोला, 'गोकुल! जब तक फ्रण्टीयर का भारत के साथ रहने का निश्चय था, तुम्हारे खान बादशाह और डॉक्टर खान भारत के लीडरों से सांठ-गाँठ रखे हुए थे। उनका भारत के नेताओं के साथ रहने में लाभ था; परन्तु ज्यों ही फ्रण्टीयर के भारत से पृथक् होने का निश्चय हुआ, ये सब अब

यहाँ के मुसलमानों और मुस्लिमलीग वालों से अधिक वास्ता रखना चाहेंगे। पहिले लाल कुर्ती के मुसलमानों का लाभ भारत के साथ रहने में था। अब उनका हित पाकिस्तान के मुसलमानों के साथ रहने में होगा। परिणाम यह होगा कि लाल कुर्ती के मुसलमान, यद्यपि वे हिन्दुओं को लूटेंगे नहीं, तो भी वे हिन्दुओं को लुटने से बचायेंगे भी नहीं। वे बचा सकेंगे भी नहीं।'

"उस समय मुझको उसकी युक्ति समझ नहीं आई और मैंने साथ जाने से न कर दी। इस पर उसने कहा, 'मुझको तुम्हारी युवा लड़कियों पर दया आती है। इसीलिए कहता हूँ।'

"मैंने कहा, 'मुझको अपने साथी मुसलमानों पर विश्वास है और बादशाह खान के रहते कोई भी यहाँ के हिन्दुओं को हानि नहीं पहुँचा सकता।'

"उसने पूछा, 'तो तुम उनके आश्रय यहाँ टिके रह सकने की आशा करते हो?'

'हाँ।' मेरा उत्तर था।

'जो दूसरों के सहारे जीना चाहते हैं, वे जी नहीं सकते। निश्चय ही वे मरे हुए समझे जाने चाहिएं।'

"वह आ गया और मैं रह गया। वह अपने बाल-बच्चों के साथ रुड़की के पास एक फार्म खरीद कर रह रहा है और मैं···।"

रामलाल ने उसका साहस बँधाते हुए कहा, "चिन्ता न करो, गोकुल! पीछे की बात तो लौट नहीं सकती, पर आगे के विषय में तो हम प्रयत्न कर ही सकते हैं। मेरी राय मानो। तुम यहाँ ही रह जाओ। मेरी दुकान पर काम मिल जाएगा। निर्वाह की चिन्ता नहीं रहेगी। समय पाकर कोई स्वतन्त्र काम भी करवा दूँगा।"

एक-दो दिन और आराम करने पर गोकुल को रामलाल के कथन में सार प्रतीत हुआ और वह उसकी दुकान पर काम करने लगा। गोकुल को रामलाल की दुकान पर काम करते देख मोतीराम को आश्चर्य हुआ।

रामलाल ने उसको नये और उचित ढंग के कपड़े बनवा दिए थे। वह वहाँ बैठा, बिक्री के रुपये वसूल करता था और हिसाब-बही में लिखता था।

मोतीराम ने रामलाल से पूछा, "कैसा काम करता है गोकुल?"

"काम कुछ अधिक नहीं है, पर अब मैं अपने-आप में अधिक निश्चिन्तता अनुभव करता हूँ। पहले मैं दुकान छोड़ कहीं जा नहीं सकता था। अब मुझको दुकान से छुट्टी मिल सकती है और मैं काम को कुछ बढ़ाना चाहता हूँ।"

मोतीराम ने गोकुल से भी पूछा। गोकुल का कहना था, "मुझको पाँव रखने के लिए आधार मिल गया है। अब मैं अनुभव कर रहा हूँ कि शीघ्र ही कोई स्वतन्त्र काम करने के योग्य हो जाऊँगा। रामलाल बाबू बहुत अच्छा आदमी है। मुझको इसकी सूझ-बूझ पर विश्वास है। यह समझदार, योग्य और व्यापार में चतुर है।"

"अब तो तुम बँध गए हो। कभी फिर गांधीजी का प्रवचन सुनने नहीं चल सकोगे?"

"क्या रखा है उनकी प्रार्थना में? मैं तो एक बार जाकर ही अघा गया हूँ।"

"यह रामलाल की सोहबत का प्रभाव प्रतीत होता है। वह महात्मा जी के विषय में विचित्र विचार रखता है।

"देखो गोकुल! हम लोगों ने अपनी जान की बाज़ी लगाकर भारतवर्ष में स्वराज्य प्राप्त किया है। इस यत्न में हमने महात्मा जी के नेतृत्व में काम किया और जब स्वराज्य मिल गया है तो महात्मा जी को छोड़ छीना-झपटी में लग जाना महापाप है।"

"छीना-झपटी का क्या मतलब?"

"यह रामलाल की दुकान एक मुसलमान की है और इसने दुकान पर डाका डाला हुआ है। मैंने पुनर्वास मन्त्रालय में सूचना भेजी हुई है। वहाँ से इस विषय में जाँच आरम्भ होने वाली है। जाँच पूरी होते ही इसका भट्ठा बैठने वाला है। इस कारण मैं नहीं चाहता कि तुम

इनके साथ रहकर बदनाम हो जाओ। हमको अपना सिर इस पाप से ऊँचा रखना चाहिए।"

"तो दादा! तुमने रामलाल की रिपोर्ट की है?"

"रिपोर्ट ही समझ लो। मगर मैंने यह नहीं कहा कि अगर रामलाल ईमानदार है, तो भी उसको बेदख़ल किया जाए। मेरा तो कहना यह है कि यदि इसने कोई धोखा-धड़ी की है, अथवा चोरी-डाका डाला है तो इसको दण्ड दिया जाए।"

"दादा! क्या हो गया है तुमको? यह रामलाल तीन सौ रुपया महीना तुम्हारे खाने-पीने को दे रहा है।"

"तभी तो मेरे पेट में शूल उठने लगा है।"

"तो तुम इसका रुपया लेना बन्द कर दो।"

"मैं तो नहीं लेना चाहता। पर तुम्हारी भाभी है। वह इस दर्जी के बच्चे पर लट्टू हो रही है।"

गोकुल बितर-बितर मोतीराम का मुख देखता रह गया। मोतीराम ने उसका मुख देख कहा, "मैं महात्मा जी की प्रार्थना सुनने जा रहा हूँ। चलो मेरे साथ।"

"नहीं दादा! तुम जाओ। मुझको विचार करने दो। मैं अभी विचार नहीं कर सका कि क्या करूँ। फिर कभी मिलना। तुमने आज फिर मेरे मस्तिष्क में हलचल मचा दी है। मैं तो अभी यही कह सकता हूँ कि या तो तुम मूर्ख हो या मैं पागल हूँ।"

गोकुल और मोतीराम दुकान के बाहर बरामदे में खड़े बातचीत कर रहे थे। गोकुल मोतीराम को वहीं छोड़ दुकान के भीतर आ गया। वह अपनी गद्दी पर बैठ दाम वसूल करने लगा। रामलाल गोकुल के मुख पर चिन्ता की रेखाएँ देख, उसके पास आकर पूछने लगा, "क्या हुआ है गोकुल भैया?"

गोकुल ने दो ग्राहकों को दुकान में आते देख कहा, "भैया! तुम उनसे बात करो। मेरी बात लम्बी है। रात को विचार करेंगे।"

: १३ :

मोतीराम बिड़ला हौस को जा रहा था। उसको सुन्दरसिंह भी उधर ही जाता मिल गया। "ओह लाला मोतीराम! सुनाओ गोकुल का क्या हाल-चाल है?"

"स्वास्थ्य तो ठीक है। पर वह एक चोर के पल्ले पड़ गया है और उसने उसके मस्तिष्क को और भी दूषित कर दिया है।"

"कौन है वह?"

"वही रामलाल, जिसकी दुकान पर हमने उसको छोड़ा था। कहता था, क्या पड़ा है महात्मा जी की प्रार्थनाओं में? मैं तो एक दिन जाकर ही अघा गया हूँ।"

"देखो मोतीराम! उस दिन की उसकी बातें सुनकर तो मेरे विचारों को भी भारी ठेस पहुँची थी। महात्मा जी की वाणी में कुछ प्रभाव है ज़रूर, परन्तु वह वाणी के शब्दों में है। शब्दों के अर्थों में नहीं। मुझको तो अपने एक अँग्रेज़ कर्नल की बात स्मरण हो आई थी। एक दिन जब मैं फ्रांस की खाई में मोर्चे पर बैठा था, तो वह मेरे पास आकर बैठ गया। वह मेरे गुरुओं के विषय में पूछने लगा और जब मैंने उसको गुरु तेग़ बहादुर और गुरु गोविन्दसिंह के विषय में बताया तो वह उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा करने लगा।

"बातों-ही-बातों में वह अपने देश के नेताओं की बातें बताने लगा। उसने नेलसन, किचनर, चर्चिल इत्यादि नेताओं की बात बताई। अन्त में उसने कहा, 'परन्तु तुम्हारे गुरु तो सफल नहीं हुए। उनके त्याग और उत्साह की तो प्रशंसा करनी ही पड़ती है, परन्तु उनकी कार्यपटुता पर तो सन्देह ही करना होगा।'

"कुछ ऐसी ही बात मुझको महात्माजी की प्रतीत हुई थी। महात्माजी में भी कार्यपटुता नहीं है। कम-से-कम मुसलमानों के विषय में तो वे सर्वथा असफल ही रहे हैं। वे मुसलमानों को अपने साथ नहीं मिला सके।"

"तो तुम भी गए ?"

"नहीं। मैं तो प्रार्थना सुनने जा रहा हूँ। अभी मुझको आशा है कि वे अपनी असफलता को अब तो जान गए होंगे। देखो मोतीराम! देश पर युद्ध के बादल घिरते आ रहे हैं। काश्मीर की हालत अच्छी नहीं है।"

"क्या हुआ है वहाँ ?"

"मैंने फ़ौज में नौकरी आँख मूँदकर नहीं की। काश्मीर की स्थिति ऐसी है कि पाकिस्तान उससे लाभ उठाये बिना नहीं रहेगा। काश्मीर में मुसलमानों की संख्या अधिक है। काश्मीर चारों ओर से पाकिस्तान से घिरा हुआ है। पठानकोट की ओर से भारत के साथ सम्पर्क है तो, परन्तु उधर से न तो सड़क है न पुल। जम्मू के हिन्दू लगभग एक सौ वर्ष से राज्य कर रहे हैं। अतएव वहाँ लड़ाई होगी और लाखों काश्मीर और जम्मू के हिन्दू हमारी तरह भागे हुए भारत में आयेंगे। आज भारत को स्वराज्य मिले दो मास होने जा रहे हैं और दिल्ली में कांग्रेस सरकार बने एक वर्ष से ऊपर हो चुका है। इस सरकार ने काश्मीर के विषय में कुछ विचार नहीं किया।

"वहाँ का महाराजा भी कुछ साधारण बुद्धि का आदमी प्रतीत होता है, अन्यथा उसको पन्द्रह अगस्त से पहले ही भारत में सम्मिलित हो जाना चाहिये था।

"राजा का कुछ भी विचार हो। हमारी सेनायें काश्मीर में पहुँच जानी चाहिएँ थीं, जिससे राजा के मन में यह विश्वास बैठ जाता कि भारत उसकी पाकिस्तान से रक्षा कर सकता है।"

मोतीराम को सुन्दरसिंह की बात, एक डरे हुए मन का विचार प्रतीत हुआ। वह चुप कर रहा।

दोनों प्रार्थना आरम्भ होने से कुछ ही पूर्व वहाँ पहुँचे। प्रार्थना विधिवत् आरम्भ हुई। प्रार्थना के पश्चात् महात्माजी ने अपना प्रवचन आरम्भ कर दिया। उसमें उन्होंने आज फिर मुसलमानों की मुसीबतों का

उल्लेख किया। पश्चात वे हिन्दी-उर्दू के विषय में कहने लगे। उन्होंने कहा, "समाचार-पत्रों में यह पढ़कर (दिल्ली डायरी पृ० ८८) कि यू० पी० की सरकारी भाषा हिन्दी होगी और उसकी लिपि देवनागरी होगी, मुझको बहुत दुःख हुआ है।

"भारत की पूर्ण मुसलमान जनता में से एक-चौथाई यू० पी० में रहती है। उसके अतिरिक्त सर तेज बहादुर सप्रू जैसे लोग, जो उर्दू के विद्वान हैं, क्या उर्दू पढ़ना-लिखना भूल जाएँ?

"ठीक बात तो यह होती कि उर्दू और देवनागरी दोनों लिपियाँ चालू रखी जातीं और दोनों लिपियाँ सीखनी अनिवार्य कर दी जातीं।

"हमको मुसलमानों को बराबर का नागरिक समझना चाहिये और इस बराबरी के लिए उर्दू-लिपि का मान रखना आवश्यक है। राज्य में ऐसी अवस्था उत्पन्न नहीं करनी चाहिये, जिससे किसी का मानयुक्त जीवन असम्भव हो जाए। यह कहना कि मुसलमान यहाँ रहें, पर्याप्त नहीं। हमको कोई ऐसी बात नहीं करनी चाहिये, जिससे मुसलमान डरकर यहाँ से भाग जाएँ। हमको अपने व्यवहार में ठीक रहना चाहिये। इस प्रकार ही हम भारत की रक्षा और सेवा कर सकेंगे।"

सुन्दरसिंह को महात्माजी का प्रवचन कुछ समझ नहीं आ रहा था। मोतीराम इससे अति प्रसन्न हो सिर हिला-हिलाकर 'वाह-वाह' कर रहा था। वह इन वचनों को भगवान् की वाणी मानता था। महात्माजी के मन में उर्दू-लिपि के लिए इतनी सहानुभूति देखकर मोतीराम की आँखों में आँसू उतर आये थे।

प्रार्थना के पश्चात दोनों, मोतीराम और सुन्दरसिंह, इकट्ठे कनाट-प्लेस की ओर आते हुए, इसी विषय पर बात करने लगे। मोतीराम ने कहा, "क्यों सरदार साहब! मन का संशय निवारण हुआ है अथवा नहीं?"

"संशय कुछ अधिक ही हुआ है। महात्माजी का आज का कथन एक कूट राजनीतिज्ञ के मुख से तो शोभा पा सकता है, परन्तु एक

महात्मा के मुख से नहीं। मेरे मन में तो गोकुल की बात बार-बार आ रही है, 'यदि ये महात्मा हैं तो हम पागल हैं, जो उनसे उलट बात ही विचार करते हैं।'

"देखो मैं उर्दू पढ़ा हूँ। उर्दू मुसलमानों की भाषा है, मैं नहीं मानता। यह तो मुसलमानों के काल में आधी गँवारू और आधी फ़ौजी भाषा बनी थी।"

मोतीराम को क्रोध चढ़ आया और उसने कहा, "आखिर हो तो सिख ही। उर्दू-भाषा को गँवारू भाषा कहते हो। भला गुरुमुखी को क्या कहोगे?"

सुन्दरसिंह इससे घबराया नहीं। उसने हँसते हुए कहा, "मैं तो केवल यह कह रहा था कि उर्दू-लिपि, लिपि के विचार से बहुत ही घटिया है। उर्दू और गुरुमुखी का मुकाबिला नहीं कर रहा था।"

"तो किससे मुकाबिला कर रहे हो?"

"हिन्दी से।" दोनों के पीछे-पीछे एक व्यक्ति, जो धोती, कुर्ता और टोपी पहने आ रहा था, कहने लगा, "उर्दू का मुकाबिला देवनागरी-लिपि से हो रहा है। यू० पी० सरकार ने यही तो किया है।"

मोतीराम और सुन्दरसिंह घूमकर उसकी ओर देखने लगे। वह कह रहा था, "यह भाषा का प्रश्न राजनीति का विषय नहीं। इसका सम्बन्ध हमारी सन्तानों की शिक्षा से है। राजनीति से तो महात्माजी का यह वक्तव्य न केवल मुसलमानों को भड़काने का काम करेगा, प्रत्युत हमारी सन्तानों के मानसिक विकास में एक भारी बाधा उत्पन्न कर सकता है।"

मोतीराम और सुन्दरसिंह उस दुबले-पतले व्यक्ति की बात का अर्थ समझने के लिए खड़े हो गए। उस आदमी ने कहा, "चलिये, चलिये। खड़े क्यों हो गए? मैं भी उधर ही जा रहा हूँ। आप पाकिस्तान से आये प्रतीत होते हैं?"

"जी।" मोतीराम ने उत्तर देते हुए कहा, "मैं पेशावर का रहने वाला हूँ और ये डेरा इस्माईलखाँ के रहने वाले हैं।"

"आप दोनों उर्दू बहुत अच्छी तरह जानते हैं न ?"

"जी।"

"हिन्दी नहीं पढ़े न ?"

"जी नहीं।"

"आप मुसलमान हैं क्या ?"

सुन्दरसिंह ने हँसते हुए कहा, "मुसलमान होते तो पाकिस्तान से आते ही क्यों ?"

"ठीक, ठीक। यही कह रहा हूँ। मेरे कहने का अभिप्राय यह है कि उर्दू मुसलमानों की भाषा कैसे हो गई और उर्दू के हटा देने से मुसलमानों को दुःख क्यों होगा ? आप जैसे हिन्दुओं को क्यों नहीं ?

"उर्दू महात्मा जी नहीं जानते। वे हिन्दी भी भली-भांति नहीं जानते। उनके लिए तो संसार की प्रत्येक बात राजनीति का अखाड़ा है। गांधी जी का प्रभाव बना रहना चाहिए, चाहे वह हिन्दू-मुसलमान में झगड़ा पैदाकर ही क्यों न हो ?"

"नहीं ! नहीं !! साहब ! आप महात्मा जी के लिए यह नहीं कह सकते। वे तो सरल चित्त, साधु स्वभाव व्यक्ति हैं। उनके मन में कोई शरारत नहीं रहती। वे सत्य ही ऐसा विश्वास रखते होंगे तभी तो कहते हैं।"

"भाई ! मैं उनके अन्तरात्मा में नहीं रहता। इस कारण उनके भीतर की बात तो बता नहीं सकता। अपनी अक्ल से विचार की हुई बात ही तो कह सकता हूँ। सुनो, वे समझते हैं कि हिन्दी से हिन्दू प्रसन्न होंगे और उर्दू से मुसलमान। इस कारण दोनों में सुलह कराने के लिए दोनों भाषाएँ दोनों को सीखनी चाहिएँ, अर्थात् कौन भाषा हमारे बच्चों को पढ़ने में सुविधा होगी और किसके पढ़ने से वे अपने विचारों को भली-भांति व्यक्त कर सकेंगे, यह जानने का विषय नहीं। जानने की बात उनके मस्तिष्क में है कि कौन भाषा पढ़ने से मुसलमान और कौन भाषा पढ़ने से हिन्दू प्रसन्न होंगे ? तभी तो कहता हूँ कि वे भाषा के

प्रश्न को भाषा के विशेषज्ञ के रूप में नहीं विचारते, प्रत्येक बात हिन्दू-मुस्लिम झगड़े के प्रकाश में देखते हैं।

"मैं पूछता हूँ कि यदि मुसलमानों को प्रसन्न करने के लिए उर्दू पढ़ना आवश्यक है तो ईसाईयों को प्रसन्न करने के लिए अँग्रेज़ी का पढ़ना क्यों नहीं ?"

"तो आप ईसाई हैं ?"

"नहीं। मैं तो इन्सान हूँ। मेरे में अक्ल है। मैं जानता हूँ कि दो और दो चार होते हैं। मैं बेदलील बात नहीं कर सकता।

"महात्मा जी ने कहा है कि डॉक्टर तेज बहादुर सप्रू को उर्दू लिपि भूल जानी चाहिए क्या ? खूब दलील है ! यदि यू० पी० की सरकारी भाषा हिन्दी होगी तो क्या सप्रू साहब को उर्दू की किताबें पढ़ने से मना कर दिया जाएगा ? यदि हिन्दी सरकारी भाषा होने से किसी को उर्दू भूल जाना है तो अँग्रेज़ी क्यों नहीं ? इसमें युक्ति कहाँ है ?"

"तो आप भी महात्मा गांधीजी के खिलाफ़ हैं ?"

"अरे भाई ! नहीं। मैं महात्मा जी का परम भक्त हूँ। उनकी कई बातों को बहुत ही आदर और प्रशंसा की दृष्टि से देखता हूँ, परन्तु अपनी अक्ल मैं खो नहीं चुका। मैं तो मुसलमानों से भी कहना चाहता हूँ कि वे भी अपने बच्चों को हिन्दी सिखाया करें।"

"पर वे क्यों सिखायें ?"

"इसलिए कि देवनागरी लिपि उर्दू लिपि से अधिक सुगम, स्पष्ट और बोली हुई बात को ठीक लिखने वाली है। उर्दू में सब शब्द ठीक-ठीक नहीं लिखे जा सकते।"

"पर यह उनकी मज़हबी भाषा है। इसका सम्मान तो करना चाहिए।"

"क्या सम्मान सरकारी भाषा मानने से ही हो सकता है ? किसी भाषा का सम्मान तो तभी होगा, जब उसमें अच्छे-अच्छे ग्रन्थ लिखे जाएँगे। जो इस अधूरी लिपि को सम्मानित करना चाहते हैं, वे इसमें ग्रन्थ लिखें, परन्तु ऐसी अधूरी भाषा प्रान्त की पाँच करोड़ जनता के

गले क्यों उतारी जाए ?

"मैं पूछता हूँ कि किसी की मज़हबी बात को सम्मान देने के लिए क्या उसको कानून के बल से अपने बच्चों के गले बाँध देना चाहिए ?"

"क्या हानि है ?" मोतीराम ने कह दिया।

"हिन्दुओं को उनकी मज़हबी बात माननी ही चाहिए क्या ?"

"इससे दोनों जातियों में प्रेम बढ़ेगा।"

"तो यह भी कानून कर दिया जाए कि हिन्दू और मुसलमान दोनों अपने बच्चों की सुन्नत करवाया करें। इससे तो प्रेम और भी अधिक होगा।"

"वाह ! यह कैसे हो सकता है ?"

"देखो जी ! आपके, मेरा मतलब है कि महात्मा जी के, कहने से उर्दू मज़हबी बात है और मुसलमानों को भारत में सम्मानयुक्त जीवन के लिए हिन्दू और मुसलमान दोनों के बच्चों को दोनों लिपियाँ पढ़नी चाहिएँ। यही महात्मा जी ने कहा है न ?

"इस पर उदाहरण दे, मैं यह कहता हूँ कि सुन्नत कराना मुसलमानों की मज़हबी बात है। अतः उनके सम्मान से भारत में रहने के लिए हिन्दू और मुसलमान बच्चों की सुन्नत करानी चाहिए। बताइए क्यों नहीं ?"

सुन्दरसिंह और मोतीराम दोनों उसका बितर-बितर मुख देखते रह गए। वह व्यक्ति इन दोनों की ओर देखता हुआ मुस्कराता रहा।

एक बात मोतीराम की बुद्धि में आ रही थी कि यदि उर्दू मुसलमानों की मजहबी भाषा है तो भारत की सैक्यूलर स्टेट को तो इसको चिमटे से भी नहीं छूना चाहिए और यदि यह मजहबी बात नहीं तो फिर उसके मान-सम्मान का प्रश्न कहाँ से आ गया ?

साथ ही उसके मन में यह बात बार-बार उठ रही थी कि वे दोनों तो मुसलमान नहीं हैं और दोनों उर्दू पढ़े हैं। तो यह मुसलमानों की भाषा कैसे हो गई ?

दोनों को चुप देख, साथ चल रहे अजनबी ने कहा, "मैं छः भाषाओं को जानता हूँ। इनमें एक फ्रांसीसी भाषा भी है। वह यहाँ की सरकारी भाषा नहीं। पर इसका यह अर्थ कैसे हो गया कि मैं उसको भूल जाऊँ?"

इस पर सुन्दरसिंह ने पूछा, "यदि हमारे बच्चे दोनों भाषाएँ पढ़ें तो क्या हानि है?"

"हानि यह है कि उर्दू एक दोषपूर्ण लिपि है। हमारे बच्चे इसको पढ़ने पर विवश किये गए तो एक व्यर्थ की वस्तु पर उनका मूल्यवान् बाल्यकाल व्यर्थ जाएगा।

"इस समय यू० पी० में साढ़े चार करोड़ से ऊपर हिन्दू हैं। उनके पचास लाख बच्चों को छः वर्ष तक कम-से-कम एक घण्टा नित्य इस व्यर्थ के काम में लगाना होगा। इस प्रकार प्रति वर्ष इस व्यर्थ के काम पर एक अरब, पच्चीस घण्टे ज़ाया जायेंगे। यह कितनी महान् जातीय हानि होगी!"

"तो महात्मा जी ने ग़लत बात कही है क्या?"

"बिलकुल। वे देश को, देशवासियों के और देश में होनेवाले बच्चों के कल्याण को मुसलमानों की प्रसन्नता पर न्योछावर करने जा रहे हैं।"

"देखो जी, आप जो कोई भी हों। आपको विदित होना चाहिए कि पूर्ण देश महात्मा जी की पूजा करता है। ऐसे आदमी को बे-दलील और अकल्याणकारी नहीं कहा जा सकता।"

वह आदमी हँस पड़ा और बोला, "ठीक है भाई! तुम ठीक ही कहते हो। मैं भी इस बात को अनुभव करता हूँ। पर क्या करूँ, भगवान् ने अक्ल दी है। मैं कुछ पढ़ा-लिखा भी हूँ। कई भाषाएँ भी जानता हूँ। इस पर भी लोग महात्मा जी को सिद्ध मानते हैं और मैं एक अविख्यात, निर्धन और सरल चित्त व्यक्ति होने से झूठा और देश-द्रोही हूँ।"

इतना कह उस आदमी ने कदम बढ़ा दिए और मोतीराम व सुन्दर-

सिंह को पीछे छोड़ वह आगे निकल गया। जब वह उनकी आवाज़ सुन सकने से दूर चला गया तो मोतीराम ने कहा, "गोकुल और रामलाल की बातें सुनकर मेरे मन में टीस उठती थी, परन्तु इसकी बातें सुन तो मेरे मन में क्रोध चढ़ आया था। आज जो कोई भी उठता है, महात्मा जी की निन्दा करने लगता है।"

इस पर सुन्दरसिंह ने कहा, "क्रोध करने की बात नहीं मोतीराम! जब कोई आदमी, चाहे वह माहात्मा जी ही क्यों न हों, जनता के विषय में बातें करे, तो जनता को भी तो अधिकार होना चाहिए कि महात्मा जी की बात पर विचार करे। आज जिधर जाओ, महात्मा जी और कांग्रेस की नीति की निन्दा हो रही है।"

मोतीराम को यह बात पसन्द नहीं थी।

: १४ :

मोतीराम का चित्त उद्विग्न हो रहा था। इस कारण रात को खाने में उसे मज़ा नहीं आया। उसने अपनी पत्नी से कहा, "यह खाना किसने बनाया है?"

"क्या नमक कम है?"

"नहीं।"

"तो क्या मिर्चें अधिक हैं?"

"नहीं, ऐसा मालूम होता है कि घास बना है। किसी प्रकार से भी स्वाद नहीं है।"

"देखने में तो बहुत अच्छा मालूम होता है। घी भी बहुत अच्छा लगाया है।"

मोतीराम ने दो-चार ग्रास और खाए, फिर थाली एक ओर कर दी। उसने कहा, "सुन्दरी! तुम खाना बनाना भूलती जा रही हो। जब तक रामलाल की बहू रही, बहुत लज़ीज़ मांस बनाती रही। तुमको तो कुछ नहीं आता।"

"तो चलो न, उनके साथ चल रहें। आखिर यहाँ का खर्चा भी तो वे ही दे रहे हैं। रामलाल कई बार कह भी चुका है कि वहाँ कमरे खाली पड़े हैं और सब-के-सब बहुत खुले हवादार हैं।"

"पर मैं वहाँ नहीं जाऊँगा।"

"क्यों?"

"वह बेईमान है।"

"सच? क्या बेईमानी की है?"

"वह कांग्रेस का विरोधी है और मुझको विश्वास हो रहा है कि उसने यह दुकान लेने में कहीं-न-कहीं चारसौबीसी की है।"

"यह आपका विचार ही तो है न! प्रमाण क्या है?"

"मैंने प्रमाण ढूँढने के लिए पुनर्वास मन्त्रालय में रिपोर्ट कर दी है।"

"क्या रिपोर्ट कर दी है?"

"यह लिख दिया है कि यह रामलाल जब दिल्ली में आया था तो इसके पास दो सौ रुपयों से एक पैसा भी अधिक नहीं था। यह कहता है कि इसने दस हज़ार की यह दुकान खरीदी है। यह सत्य नहीं हो सकता, क्योंकि दस हज़ार इसके पास था ही नहीं।"

"तो आप क्या समझते हैं कि यह दुकान इसने कैसे ली है?"

"मैं तो समझता हूँ कि इसने मालिक की हत्या कर दुकान पर अधिकार कर लिया है।"

"मुझको विश्वास नहीं होता कि रामलाल जैसा कोमल स्वभाव का आदमी किसी की हत्या कर सकता है।"

"तुम्हारे विश्वास को कौन पूछता है! जब सरकार जाँच-पड़ताल कर लेगी तो पता चलेगा। मैं तो समझता हूँ कि वह फाँसी पाने के योग्य व्यक्ति है।"

"सच? तो हमको खाने को कौन देगा?"

"भगवान् कोई प्रबन्ध कर देगा।"

सुन्दरी को इससे सन्तोष नहीं हुआ। प्रथम तो उसको विश्वास ही नहीं होता था कि रामलाल हत्यारा है। इस पर भी वह विचार करती थी कि यदि वह हत्यारा हो तो भी हमको तो खाने-पहनने को देता है। इससे हमको तो उसकी शिकायत नहीं करनी चाहिए थी। हम उसकी कमाई पर पल रहे हैं और हम ही उसको पकड़वाने के लिए यत्न कर रहे हैं। अपने पति के मुख से यह बात सुन कि वह फाँसी पर लटक सकता है, सुन्दरी काँप उठी। उसने भयभीत होकर कहा, "यह आपने क्या कर दिया है ? जिस थाली में खा रहे थे, उसी में छेद करने बैठ गए ?"

"वह बहुत ही खतरनाक आदमी है।"

इस समय सीढ़ियाँ चढ़ते हुए रामलाल ने आवाज़ दी, "दादा ! मैं हूँ रामलाल।"

"लो वह आ गया है।" सुन्दरी ने कहा।

"शैतान तो है ही।"

रामलाल रसोई घर में आया तो मोतीराम ने कहा, "आओ भाई रामलाल ! कैसे आना हुआ है इस तरफ ?"

"मैं कई दिन से मिलने का विचार कर रहा था। आज मध्याह्नोत्तर, दादा ! तुम आये भी और बिना बताये ही चले गये। सुनाओ काम-काज का कुछ प्रबन्ध हुआ है अथवा नहीं ?"

"हुआ तो नहीं, परन्तु अब कुछ आशा प्रतीत हो रही है। किंग्ज़वे पर सरकार, विस्थापितों के लिए एक कैम्प बनवा रही है। वहाँ कुछ इमारतें बन रही हैं। उनके लिए टैण्डर भरने की आज्ञा होने वाली है। मैं भी टैण्डर देने का विचार रखता हूँ। दिल्ली कांग्रेस के प्रधान का कहना था कि उसमें से कुछ काम मुझको मिल जायेगा।"

"तो ठीक है, टैण्डर ज़रूर देना। किसी प्रकार की आवश्यकता हो तो मुझको बताना।"

"हाँ वह तो ठीक है ही। कुछ रुपयों की आवश्यकता पड़ेगी और मैं तुम पर बहुत आशा करता हूँ। वैसे तो सोहनसिंह ने भी सहायता करने

का आश्वासन दिया है।"

"तो सोहनसिंह का होटल चलने लगा है क्या?"

"अब उसका विचार एक अनैक्सी खोलने का हो रहा है। उसको कोई योग्य सहायक नहीं मिल रहा। मिलते ही खोल देगा।"

"तो दादा! तुम वहाँ काम क्यों नहीं करते?"

"वेतन कम देता है। मैं अढ़ाई सौ रुपया मासिक से कम पर काम नहीं कर सकता।"

"वह क्या देता है?"

"पहले पचहत्तर कहता था, अब डेढ़ सौ तक आया है।"

"मुझको तो ठेके की बात बहुत पसन्द आई है। मिल तो जायेगा ही, दादा! तुम जितनी सरकार की सहायता कर रहे हो, उसके बदले में यह ठेका कुछ भी नहीं।"

"मैं क्या सहायता कर रहा हूँ?"

"अपने दोस्तों तक की भी मुख़बरी करने से नहीं हिचकिचाते। तुम्हारा एक छोटा भाई रामलाल है न। उसकी भी जब तुमने मुख़बरी कर दी है, तो सरकार और क्या चाहेगी?"

"तो गोकुल ने तुमको बता दिया है?"

"वैसे तो मुझको मालूम हो गया था कि किसीने मुख़बरी की है। पर मुख़बरी करने वाले तुम हो, नहीं जानता था।

"वास्तव में यह मेरी भूल थी। मैंने तुमको असल बात बताई नहीं थी। बताई होती तो तुम मुख़बरी करने की भूल न करते। ठीक है न दादा!"

"देखो न, तुमने बताया था कि दस हज़ार की दुकान मोल ली है, तो मुझको सन्देह हो गया। तुम्हारे पास दस हज़ार था नहीं और फिर एक लाख का माल दस हज़ार में बेचने वाला कौन था, यह भी तो पता करना था।"

सुन्दरी भी वहीं बैठी अपने पति की बातें सुन रही थी और मन-ही-

मन क्रोध से जल-भुन रही थी। रामलाल ने कहा, "यही तो मैं कह रहा हूँ कि मुझको सब बातें तुमको बता देनी चाहिये थीं। अब देखो न तुमने रिपोर्ट की और रिपोर्ट ग़लत सिद्ध हुई। सब लोग रिपोर्ट करने वाले को मूर्ख समझने लगे हैं।"

"तो रिपोर्ट पर जाँच हो गई है क्या?"

"हाँ दादा! भला तुम जैसा कांग्रेस का नेता रिपोर्ट करे और फिर उस पर जाँच न की जाए, यह कैसे हो सकता था? जाँच हुई है और जहाँ तक मेरा ज्ञान जाता है, मन्त्रालय के लोग सन्तुष्ट हो गए हैं। पर दादा! तुम सन्तुष्ट मालूम नहीं होते?"

"यह बात नहीं। यदि सरकार सन्तुष्ट है तो मैं भी सन्तुष्ट हूँ।"

"मैं एक बात कहने आया हूँ कि मैं तुमको अपना बड़ा भाई मानता हूँ। यदि तुमको मेरे किसी काम पर सन्देह हो तो पहले मुझसे पूछ लिया करो। मैं तुम्हारा संशय निवारण कर दिया करूँगा।"

"अच्छा हुआ कि सरकारी विभाग को सन्तोष हो गया है।"

रामलाल ने बात बदल दी, "भाभी! कभी आती नहीं। तुमको रानी बहुत याद करती है।"

सुन्दरी को अभी भी क्रोध चढ़ रहा था और वह मुख बन्द किये देख रही थी। उसे चुप देख रामलाल ने पूछा, "भाभी! तुम भी नाराज़ हो क्या?"

सुन्दरी की आँखों से आँसू निकल पड़े। इससे उसका मन कुछ हलका हुआ और उसने आँखें पोंछते हुए कहा, "रामलाल भैया! मुझको बहुत शोक है कि इनके कारण तुमको इतना कष्ट हुआ। पर ये किसी से राय तो करते ही नहीं। भला तुम्हारी, जो हमारे खाने-रहने का प्रबन्ध कर रहा है, रिपोर्ट करनी, कहाँ की अक्लमन्दी है। एक बात से चित्त को शान्ति हुई है कि तुमने सरकारी अफसरों को सन्तुष्ट कर दिया है।"

"पर भाभी! दादा कुछ और रिपोर्ट कर दें तो? इसीलिए यह कहने

आया हूँ कि छोटे भाई पर कृपादृष्टि रखें। माना कि इनकी पहुँच बहुत दूर तक है। पर मैं पूछता हूँ कि उस पहुँच का प्रयोग अपनों पर ही करने का क्या लाभ ?"

"खैर छोड़ो इस बात को।" मोतीराम ने कह दिया, "मैंने समझा कि मेरी जानकारी में कोई अन्यायाचरण होता हो तो उसकी सूचना अपनी सरकार को दे दूं।"

इस पर सुन्दरी को फिर क्रोध चढ़ आया। उसने कहा, "कैसी अनर्गल बातें करते हैं आप ? किसने बताया है आपको कि रामलाल ने कोई अन्यायाचरण किया है। अपने ही मन के लड्डू बनाते रहते हो न।

"और फिर मैं पूछती हूँ कि क्या सबके अन्यायाचरण की सूचना सरकार को दे रहे हो ?"

"हाँ, जिन-जिनका पता चल रहा है।"

"सोहनसिंह की भी रिपोर्ट कर दी होगी तुमने ?"

"उसने क्या अन्यायाचरण किया है ?"

"एक मुसलमान की दुकान और मकान पर अधिकार जमा बैठा है।"

"पर उसने तो खाली मकान और दुकान पर कब्ज़ा किया है।"

"और होटल में लगाने को सरमाया उसके बाप ने दिया था उसको ?"

मोतीराम मुख देखता रह गया। इस पर सुन्दरी ने कहा, "बड़े ईमानदार हो न। एक बेईमान, जो हमारा बीस हज़ार खा गया है और तुम्हारा नौकर होता हुआ तुमको नौकर रखना चाहता है, उसको ईमानदार समझते हो और जो हमारी मदद कर रहा है और जिसने हमारा कुछ नहीं बिगाड़ा, उसको बेईमान समझते हो। न जाने मैंने कौन-से पाप किये हैं, जो तुम्हारी पत्नी बनना पड़ा है।"

"भाभी !" रा-लाल ने उसको रोकते हुए कहा, "यह दादा का दोष नहीं है। यह कांग्रेस की नीति का दोष है और हमारे दादा कांग्रेस

के नेता हैं। दादा जानते हैं कि महात्मा गांधी और कांग्रेस को चलाने वाले हिन्दू हैं। वे ही इनका कहना मानते हैं, वे ही कांग्रेस को रुपया देते हैं और ये उनको ही साम्प्रदायिक कह-कहकर गालियाँ देते हैं। मुसलमान गांधीजी से सौदा करते रहे और देश से ऊपर इस्लाम को समझते रहे, परन्तु उनके लिए कांग्रेसियों के मन में अथवा महात्मा जी के मन में प्रशंसा के अतिरिक्त और कुछ नहीं।

"सो भाभी! दादा भी उनमें से एक हैं। मैं भी जानता हूँ कि मैं हिन्दू हूँ। एक हिन्दू कांग्रेसियों से दुत्कारा जाने पर भी, इनको ही नेता मानता है और इनकी सदा जय-जयकार बुलाता है। इसी प्रकार मैं भी दादा की ओर से, मेरे लिए फाँसी का तख्ता गाड़ा जाता देख, इनका छोटा भाई बनकर, मोतीराम दादा की जय-जयकार करता रहूँगा।

"तुम भी तो एक हिन्दू पत्नी हो। एक हिन्दू पत्नी की भाँति पति की लातें खाते-खाते भी पति देवता की जय कहते रहना चाहिए। क्या करें हम हिन्दू हैं। यह हमारे स्वभाव में है।

"अच्छा दादा! टेके के लिए कभी रुपयों की आवश्यकता पड़े तो आ जाना। एक हिन्दू के नाते छोटा भाई बड़े भाई की सेवा करता रहेगा।"

रामलाल सुन्दरी के चरण-स्पर्श कर और मोतीराम को नमस्कार कर सीढ़ियों से नीचे उतर गया।

मोतीराम सिर झुकाये बैठा रहा। सुन्दरी उठकर सोने के कमरे में चली गई और भीतर से दरवाज़ा बन्द कर सो रही।

द्वितीय परिच्छेद

: १ :

मोतीराम का सलाहकार सोहनसिंह और उसके होटल पर इकट्ठे होने वाले दो-चार कांग्रेसी कार्यकर्ता थे। जब से सोहनसिंह ने चौधरी मथुरासिंह इत्यादि को होटल में आकर चाय इत्यादि का निमन्त्रण दिया था और उनके लिए होटल में एक कमरा सुरक्षित कर दिया था, तब से यह कांग्रेस चौकड़ी वहाँ नित्य लग जाया करती थी और वहाँ बैठ, ये लोग कांग्रेस का दबदबा जमाने के लिए योजनाएँ बनाया करते थे। इन योजनाओं में रामलाल की जड़ों में तेल देने की योजना भी बनी थी। चौधरी मथुरासिंह नौ वर्ष से दिल्ली म्युनिसिपल कमेटी का सदस्य था और नगर में भारी परिचय रखता था। वह ही मोतीराम को पुनर्वास मन्त्रालय में परिचय देकर भेजा करता था और भिन्न-भिन्न व्यवस्थापित पंजाबियों की शिकायतें करवाया करता था। जब उन लोगों पर कुछ मुसीबत आ पड़ती थी, तो फिर सोहनसिंह के द्वारा उनकी सहायता भी कर दिया करता था। परिणाम यह हो रहा था कि सोहनसिंह और चौधरी मथुरासिंह की उस इलाके में धूम मच रही थी और चारों ओर उनकी सेवा की वाह-वाह हो रही थी।

जिस रात रामलाल मोतीराम को खरी-खरी सुनाकर गया था और सुन्दरी रूठकर सोने के कमरे में चली गई थी, मोतीराम बाहर भूमि पर ही बिस्तर बिछाकर सोता रहा था। वह प्रातः उठा और बिना सुन्दरी के उठने की प्रतीक्षा किये, चौधरी मथुरासिंह के घर जा पहुँचा। मथुरासिंह

दातुन करता हुआ स्नान करने की तैयारी कर रहा था। आज मोतीराम को इतनी प्रातःकाल आते देख, विस्मय में पूछने लगा, "मोतीराम ! क्या है आज ?"

"तुम्हारी भाभी से झगड़ा हो गया है। वह रामलाल का बच्चा हमारी रिपोर्ट का सन्तोषजनक उत्तर दे आया है और मन्त्रालय को सन्तोष हो गया है। रामलाल यह भी जान गया है कि रिपोर्ट मैंने की थी। इस कारण रात आया था और सुन्दरी के सामने मीठे-मीठे उल्हाने दे गया है। सुन्दरी नाराज़ हो, कमरा बन्द कर सो रही और मैं बाहर बरामदे में भूमि पर करवटें लेता रहा हूँ।"

"क्या कह गया है रामलाल ?"

"कहता था, यह दादा का दोष नहीं। यह कांग्रेस की नीति का दोष है और दादा कांग्रेस का नेता है। कांग्रेस वालों का स्वभाव है कि वे हिन्दुओं को, जिनके आश्रय कांग्रेस पलती है, गालियाँ दिया करते हैं और मुसलमानों को, जो देश का सत्यानाश करने को तैयार हैं, अपना भाई मान प्रशंसा किया करते हैं। वैसे ही दादा हैं।"

मथुरासिंह हँस पड़ा और कहने लगा, "तो इसमें नाराज़ होने की कौन बात है ? बात तो ठीक ही है। रामलाल ने ठीक समझा है, परन्तु वह यह नहीं जानता कि इसमें एक भारी नीति काम कर रही है। नीति यह है कि कांग्रेस हिन्दुओं को तो यह कहती रहती है कि वह एक धर्म-निरपेक्ष संस्था है। कारण स्पष्ट है कि हिन्दू धर्म-निरपेक्ष रहना चाहते हैं। परन्तु मुसलमानों के लिए यह नीति काम नहीं कर सकती। वे धर्म-निरपेक्ष न हैं और न रहना चाहते हैं। उनका समर्थन प्राप्त करने के लिए हमको उनकी हिमायत करनी ही पड़ती है। इससे जहाँ मुसलमान प्रसन्न हो, कांग्रेस का गुणानुवाद गाते हैं, वहाँ दुनिया वाले मुसलमानों को प्रसन्न देख हमारी सरकार की प्रशंसा भी करते हैं। इसी प्रकार जहाँ हम दोनों को प्रसन्न रखते हैं, वहाँ दुनिया में भी नेक बनते हैं।

"इसी प्रकार हम रामलाल के पीछे पुनर्वास मन्त्रालय लगवा देते

और फिर उसकी सिफारिश कर, उसको एहसान के नीचे दबाकर, उससे कई काम कराते।

"यह तो तुम जानते ही हो कि हमने मुहल्ले के प्रायः सब रिफ्यूजियों को सीधा कर दिया है। वे जब यहाँ आये थे, तो कांग्रेस के घोर विरोधी हो रहे थे। अब हम स्वयं ही उनकी रिपोर्ट करते हैं और स्वयं ही उनको बचाते हैं। उनको बचाने का काम हम कांग्रेस के नाम पर करते हैं। परिणाम यह हो रहा है कि ये कांग्रेस के बाग़ी कांग्रेस के भक्त बनते जाते हैं।

"इस बार रामलाल बच गया है। कुछ हानि नहीं। अगली बार ऐसी योजना होगी कि यहाँ आकर नाक रगड़ेगा।

"एक बात करो मोतीराम! तुम रामलाल से मेलजोल बनाये रखो। अपनी पिछली भूल के लिए पश्चात्ताप करो और उसकी बातों का भेद लेते रहो। हम फिर उसका कोई-न-कोई छिद्र ढूँढ लेंगे और समय आने पर रगड़ डालेंगे।"

"पर चौधरी साहब! वह मेरे घर का, खाने-पहनने तक का खर्चा देता है।"

"महीने में कितना खर्चा देता है?"

"पहले महीने पाँच सौ दिया था। इस महीने तीन सौ दिया है। इसके अतिरिक्त पाँच सौ रुपये मोल के कपड़े दे गया होगा।"

"अगले महीने से उससे सब-कुछ लेना बन्द कर दो। मैं समझता हूँ कि तुम सोहनसिंह के होटल में काम कर लो। वह अनैक्सी खोल रहा है। रात को काम हुआ करेगा और दिन-भर सेवा-कार्य के लिए खाली रहा करोगे।"

"क्या काम है?"

"उसने होटल की अनैक्सी खोलने का पक्का विचार कर लिया है। मुझसे कह रहा था कि तुम यदि काम करना स्वीकार करो तो तुम्हें मैनेजर बनायेगा। तीन सौ रुपया मैनेजर का वेतन होगा और पाँच प्रतिशत

आय पर कमीशन।"

"तो वह मुझको वहाँ का मैनेजर बनाएगा?"

"हाँ, हाँ। यही तो वह मुझसे कह रहा था।"

मोतीराम जब घर आया तो सुन्दरी स्नानादि से छुट्टी पा, पूजा पर बैठी हुई थी। पूजा के पश्चात् वह खाना बनाने के लिये रसोई में चली गई और काम में लग गई। उसने एक नौकरानी, जिसका नाम चन्दा था, बाज़ार से सामान खरीदने के लिए रखी हुई थी। वह बाज़ार से सब्ज़ी इत्यादि ले आती थी। आज वह सब्ज़ी लाकर कतर चुकी थी। सुन्दरी ने सब्ज़ी पतीली में डाली तो मोतीराम नहा-धोकर सामने आ खड़ा हुआ। सुन्दरी ने पूछा, "भोजन किस समय होगा?"

"जब तैयार हो जाये। मैं रामलाल की दुकान पर जा रहा हूँ। रात वह नाराज़ होकर गया था। मैं उसको मनाना चाहता हूँ।"

"सच?"

"हाँ सुन्दरी! तुम भी तो नाराज़ हो गई थीं।"

"मैं तो कहने वाली थी कि या तो महात्मा गांधी के चेले बन जाओ और फिर जिस-किसकी मर्ज़ी है चुग़ली खाना; नहीं तो घर में मेरे साथ रहने के लिए इन्सान बनकर रहो। एक इन्सान के भाई-बन्धु सम्बन्धी होंगे और उनके सुख-दुःख का भी विचार करना होगा।"

"तुम ठीक कहती हो। मैंने ग़लती की थी, जो उसकी मुख़बरी की। मुझको क्या ज़रूरत पड़ी है कि व्यर्थ का पाप कमाता फिरूँ! ईश्वर का भला हो कि रामलाल बाल-बाल बच गया है। अब तुम भी साथ चलो। रानी से मिल आना।"

भोजनोपरान्त दोनों नई दिल्ली को चल पड़े। मार्ग में मोतीराम ने सुन्दरी को बताया, "सोहनसिंह ने मुझको तीन सौ रुपया महीना वेतन देना स्वीकार कर लिया है। आज सायंकाल से ही मैं काम करने लगूँगा। मैं समझता हूँ कि अब रामलाल से सहायता की आवश्यकता नहीं रहेगी। उसका धन्यवाद कर आगे से रुपये की आवश्यकता नहीं,

ऐसा कह देना चाहिए ।"

"मुझको सोहनसिंह पर किंचित्-मात्र भी विश्वास नहीं है ।"

"उसने चौधरी मथुरासिंह के द्वारा मुझे कहलवाया है। काम रात के समय होगा और दिन के समय में खाली रहूँगा ।"

सुन्दरी चुप रही। इस सूचना से उसके चित्त को शान्ति नहीं हुई थी। वह विचार कर रही थी कि रामलाल का आश्रय छोड़ देने पर यदि सोहनसिंह ने भी जवाब दे दिया तो फिर क्या होगा ?

वे रामलाल की दुकान पर पहुँचे तो वह भोजन करने ऊपर घर में गया हुआ था। अतएव दोनों ऊपर चढ़ गए। रामलाल उन दोनों को देखकर गद्‌गद् प्रसन्न हो गया। उसने उठकर दादा और भाभी का स्वागत किया और कहा, "दादा! आओ भोजन कर लो ।"

"हम कर आये हैं। बात यह है कि," मोतीराम ने सामने की कुर्सी पर बैठते हुए कहा, "रात जब तुम चले आये तो तुम्हारी भाभी रूठ गई और मुझको बाहर बरामदे में ही करवटें लेते हुए रात गुज़ारनी पड़ी। रात-भर विचार करने पर मैं इस परिणाम पर पहुँचा हूँ कि मैंने तुम्हारे साथ अन्याय किया था, जो तुमको बेईमान समझा। अब मैं क्षमा माँगने आया हूँ और तुम्हारी भाभी को अपनी सिफ़ारिश के लिए साथ ले आया हूँ ।"

"दादा! मैं तो इस विषय में क्षमा माँगने की कोई बात समझता ही नहीं। वास्तव में तुमको अपना दृष्टिकोण बदलना चाहिए। देखो, मैं समझता हूँ कि धर्म वह है, जिससे लोक-कल्याण हो। जो अकल्याण-कारी है, वह धर्म नहीं हो सकता।

"विचार करने की बात यह है कि किसी एक का कल्याण करने में किसी दूसरे का अकल्याण न हो जाए। यह कसौटी है, जिस पर मैं धर्म की परख करता हूँ। इस परख के अनुकूल मैंने दुकान और मकान लेकर अधर्म नहीं किया। इस दुकान के लेने में मेरा कल्याण हुआ है और किसी का अकल्याण नहीं हुआ

"इस दुकान को लेने में मुझको झूठ बोलना पड़ा है, अथवा कोई फरेब करना पड़ा है, यह एक पृथक् बात है। जब तक उद्देश्य ठीक है, तब तक उपायों की ओर ध्यान देना व्यर्थ है।"

"तो तुम उपायों की श्रेष्ठता में विश्वास नहीं रखते ?"

"श्रेष्ठ उद्देश्यों के लिए प्रयोग किये जाने वाले उपाय श्रेष्ट ही होते हैं।"

इस समय रानी भी वहाँ आ गई। उसने हाथ जोड़ मोतीराम को पायलागूँ की और रामलाल के समीप कुर्सी पर बैठ गई। नौकर भोजन, जो रानी परसकर रसोई घर में रख आई थी, उठाकर ले आया और रामलाल तथा रानी के सामने लगाने लगा।

रामलाल ने एक बार फिर मोतीराम को आमन्त्रित किया और उसके न करने पर खाने लगा। सुन्दरी ने पूछा, "बच्चे कहाँ हैं ?"

"वे स्कूल गये हैं। दोनों को स्कूल में भर्ती करवा दिया है। दादा ! हम विस्थापितों के दिल्ली में आ जाने के कारण, स्कूलों में स्थान का अभाव हो गया है और बच्चों को भर्ती करवाने के लिए बड़ी-बड़ी सिफ़ारिशों और खुशामद की आवश्यकता पड़ने लगी है।"

"स्वराज्य अभी दो मास की आयु का ही तो है। इस कारण ये सब कठिनाइयाँ उत्पन्न हो रही हैं।"

"ठीक है, कठिनाई की बात तो समझ में आती है, पर सिफ़ारिश और रिश्वत की बात समझ में नहीं आती।"

"क्या मतलब ?"

"मतलब यह कि श्रेणी में स्थान नहीं था। लड़का और लड़की दोनों बहुत होशियार हैं। अपनी जमायत से ऊँचे दर्जे में भर्ती होने के योग्य हैं, परन्तु बिना सिफ़ारिश के श्रेणी में स्थान नहीं बन सका।"

: २ :

भोजन करते हुए रामलाल ने अपनी बात, जो वह भोजन आने से

पूर्व कह रहा था, आरम्भ कर दी। उसने कहा, "इसी बात में मेरा कांग्रेसियों से मतभेद रहा है। वे उपाय पर इतना बल देते हैं कि सदैव उद्देश्य को भूल जाते रहे हैं। जब पंजाब में हिन्दू-मुसलमानों में झगड़ा चल रहा था, तब इस झगड़े के कारण की ओर ध्यान न देकर, चालू काम के लिए उपाय प्रयोग करने लगे। महात्मा गांधी और जिन्ना साहब का संयुक्त वक्तव्य दिलवाकर कांग्रेस सरकार ने यह समझा कि उन्होंने झगड़ा शान्त करने का उपाय कर दिया है।

"वे भूल गये थे कि झगड़े का मूल कारण मुसलमानों का एक राजनीतिक दल होना है और अल्प संख्या में होते हुए भी उनका, बहुसंख्यक जनता पर शासन करने की इच्छा रखना है। इस सच्चाई को भूलकर और इसका संशोधन करने के स्थान कांग्रेसी नेता मुसलमानों को प्रसन्न करने के उपायों पर विचार और कार्य करने लगे, अर्थात् उपायों की श्रेष्ठता में लक्ष्य को भूल गये।

"मैं इसको धर्म नहीं मानता। देखो दादा! अपने जीवन की एक मजेदार बात बताता हूँ, तब ही तुम मेरे कहने का अर्थ समझ सकोगे।

"मेरे पिताजी, एक छोटे से रेल्वे स्टेशन के स्टेशन मास्टर थे। वे जीवन-भर बहुत ईमानदारी से काम करते रहे। उन्होंने एक पैसा भी कभी रिश्वत न ली और न दी। परिणाम यह हुआ कि न तो वे अपने अफ़सरों को प्रसन्न रख सके और न ही अपने बाल-बच्चों के लिए कुछ जमा कर सके। जो-कुछ उन्होंने कमाया, वह अपनी लड़की के विवाह पर खर्च कर दिया। मेरी शिक्षा के लिए उनके पास कुछ नहीं था और मैं, मैट्रिक फर्स्ट डिविज़न में पास करने पर, भी कॉलेज में भर्ती नहीं हो सका। उन्होंने मुझको रेल्वे में नौकर कराने का यत्न किया, परन्तु उनके अफ़सर, जिनको वे प्रसन्न न रख सके थे, मुझको नौकरी नहीं दे सके।

"जब सब ओर से निराशा-ही-निराशा दिखाई देने लगी तो मुझको रहमान खाँ दर्ज़ी की दुकान पर, उसका शागिर्द बना बैठा दिया गया। उस्ताद की दुकान लाहौर में मालरोड पर थी और वे बहुत ही योग्य कटर

माने जाते थे। बड़े-बड़े अफ़सरों का काम उनकी दुकान पर होता था और बहुत अच्छी आमदनी थी उनको।

"मुझको कटर का काम बहुत रुचिकर लगा और मैं बहुत ही जल्दी-जल्दी उन्नति करने लगा। शीघ्र ही उस्ताद समझ गए कि मैं एक योग्य शागिर्द हूँ और वे मन लगाकर मुझको काम सिखाने लगे। इसके अतिरिक्त मैं अँग्रेज़ी के जर्नल, जो 'टेलरिंग और कटिंग' पर आते थे, पढ़ता था और उस्ताद को समझाता था। मैं उस्ताद की ख़िदमत करने में भी सदा तत्पर रहता था।

"मेरी सेवा का परिणाम यह हुआ कि मैं उस्ताद के घर पर जाने लगा। प्रायः सायंकाल दुकान बन्द कर मैं उस्ताद के साथ-साथ उनके घर तक जाता। मार्ग में कभी-कभी सब्ज़ी आदि घर की अन्य आवश्यक वस्तुएँ उठाकर ले जाता। दिन के समय भी कभी आवश्यकता पड़ने पर मुझको बाईसिकल पर घर भेजा जाता था।

"घर पर उनकी बीवी और लड़की रहती थी। उस्ताद का एक लड़का भी था, जो काम सीखकर कलकत्ता चला गया था। वहाँ उसने एक बंगाली लड़की से विवाह कर लिया था और अपने पिता के घर से सम्बन्ध-विच्छेद कर बैठा था।

"मेरे लिए उस्ताद की लड़की एक आकर्षण बन गई और मैं उस्ताद के घर जाने का अवसर ढूँढता रहता। उस्तानी को मैं एक उचित दामाद नज़र आया और ऐसा प्रतीत हुआ कि मेरे विषय में उनके घर में बात-चीत होने लगी थी।

"उस्ताद लाहौर के पास एक गाँव, 'मज़ंग' में रहता था। गाँव के बाहर उसने एक बहुत ही सुन्दर मकान बनवाया था। मेरे पिता कृष्ण-नगर में रहते थे। अतएव मैं सायंकाल उस्ताद को घर पर छोड़कर सुगमता से अपने घर जा सकता था। ऐसा करने में कुछ अधिक घुमाव नहीं पड़ता था।

"मुझको उस्ताद के यहाँ काम सीखते हुए तीन वर्ष से ऊपर हो चुके

थे और अब मैं उस्ताद की दुकान में मैनेजर के रूप में काम करता था। उस्ताद की अनुपस्थिति में कटर का काम भी मैं करता था और उस्ताद मेरे काम से बहुत प्रसन्न था। वे मुझको डेढ़ सौ रुपया महीना वेतन देने लगे थे।

"एक दिन मैं आमों की टोकरी मार्केट से खरीदकर उनके घर पहुँचाने के लिए गया। फ़ातिमा, यह उस्ताद की लड़की का नाम था, टोकरी लेने मकान की ड्योढ़ी में आई। मैं उसको बहुत ही लालसा-भरी दृष्टि से देखा करता था। वह मुझको बहुत ही सुन्दर और सुशील दिखाई देती थी। उस दिन जब वह टोकरी पकड़ रही थी, मैं उसकी मोटी-मोटी आँखों को देख रहा था। उस दिन उसने भी मेरी ओर देखा, तो मैं चकित रह गया। पहले कभी भी उसने इस तरह नहीं देखा था। मैं मन्त्र-मुग्ध की भाँति उसको देखने लगा, तो उसने टोकरी पकड़, बग़ल में दबाते हुए पूछा, 'आप क्या देख रहे हैं?'

"मेरे मुख से अनायास ही निकल गया, 'तुम्हारी बड़ी-बड़ी आँखों को।'

"वह हँस पड़ी और पूछने लगी, 'मुझसे शादी करोगे?'

'जी तो करता है, पर तुम्हारे माता-पिता मानेंगे नहीं।'

'मान जायेंगे, पर मुसलमान बनना पड़ेगा।'

'यह बात मेरे माता-पिता नहीं मानेंगे। वे कट्टर हिन्दू हैं।'

'तो दोनों की बात रख ली जाए। तुम मुसलमान बन जाना और विवाह के बाद मैं हिन्दू बन जाऊँगी।'

"मैं फ़ातिमा की युक्ति सुन चकित रह गया। उसने मुझको चुप देख कहा, 'देखिए जी! मैं आपसे मुहब्बत करने लगी हूँ। मेरी माँ आपको दामाद बनाने के लिए तैयार है, पर अब्बाजान कहते हैं कि बिना आपके मुसलमान बने वे आपको अपनी लड़की नहीं देंगे। मैं सोचती हूँ कि शादी मेरी और आपकी होनी है, मुसलमान बनने-बनाने की बात मेरे माँ-बाप सोच रहे हैं। अब यह बात सुन कि आपके माँ-बाप

भी वैसे ही हैं, मुझको यह तजवीज़ सूझी है कि आप कुछ दिन के लिए मुसलमान बन जाइए। शादी के बाद हम अलहदा मकान में जाकर रहने लगेंगे। तब आप और मैं हिन्दू हो जायेंगे।'

'तो तुम हिन्दू हो जाओगी?'

'मैं तो जो कुछ हूँ, वही रहूँगी। आप मेरे माँ-बाप को खुश करने के लिए मुसलमान बनेंगे तो मैं आपके वालदैन को खुश करने के लिए हिन्दू नहीं हो सकती क्या?'

'इस धोखाधड़ी से लाभ क्या होगा?'

'मेरी आपसे शादी हो जाएगी। यह फ़ायदे की बात नहीं है क्या? हमारा मकसद नेक है, पर क्या करें? जब पुराने ख़याल के लोगों में रहना है, तो उनकी वजह से अपने नेक ख़याल को छोड़ देना तो अक्लमन्दी नहीं। मैं उनसे झगड़ा करना नहीं चाहती। नेक मकसद को हासिल करने के लिए सब ज़राय जायज़ हैं।''

''मुझको फातिमा सुन्दर और सुशील तो पहले ही लगती थी। अब अक्लमन्द भी प्रतीत होने लगी। मैंने कहा, 'एक-दो दिन में सोचकर बताऊँगा।'

''इस पर उसने कहा, 'परसों दोपहर के वक्त आना और अपना फ़ैसला बता जाना। तब मैं स्कीम बनाऊँगी और उस पर अमल करेंगे।'

''दो दिन और दो रात मैं मन में विचार करता रहा। फ़ातिमा की खूबसूरती और उसका सुलझा हुआ दिमाग़ मेरे मन पर एक गहरी छाप लगा चुका था। अतएव फ़ैसला वही हुआ, जो वह चाहती थी। मैं नियत दिन और समय पर वहाँ पहुँचा। फ़ातिमा खिड़की में खड़ी मेरी प्रतीक्षा कर रही थी। वह मुझको देखते ही बाहर आ गई और मुझको भीतर एक कमरे में ले जाकर पूछने लगी, 'क्या फैसला किया है?'

'मैं तुम्हारी तजवीज़ से मुतफ़िक हूँ।'

'तो ऐसा करो, एक-दो दिन में अब्बाजान आपसे इसके मुताल्लिक बात करेंगे, आप मान जाना। आपकी सुन्नत की जाएगी। उसके

पन्द्रह दिन बाद शादी होगी। इन सब बातों को अपने माता-पिता से नहीं बताना। शादी के बाद हम अपना घर बनाएँगे। तब आपके माता-पिता से मिलकर मैं हिन्दू बन जाने की बात कह दूँगी और उनको प्रसन्न कर लूँगी।'

"दादा! मैं फ़ातिमा की बात मान गया। इसके तीन-चार दिन पीछे उस्ताद ने मुझको पृथक् बुलाकर कहा कि अगर मैं मुसलमान बनना स्वीकार करूँ तो वे फ़ातिमा की शादी मुझसे कर देंगे। मैं मान गया और सुन्नत करने का दिन नियत हो गया।

"मैंने अपने घर वालों को कह दिया कि मैं उस्ताद के काम से बीस दिन के लिए कलकत्ता जा रहा हूँ। एक दिन अपना बिस्तर और सूट-केस लेकर उस घर में चला गया, जहाँ मेरी सुन्नत होनी थी। मुझको क्लोरोफार्म सुँघाकर, मेरा ऑपरेशन कर दिया गया। मुल्ला ने मुझको कलमा पढ़ा दिया और साथ ही मुझको मोटे मांस का शोरबा पिलाया गया।

"इस पर मुझको ग्लानि अवश्य होती थी, परन्तु फ़ातिमा की बात कि हमारा मकसद नेक है, नेक काम के लिए सब काम जायज़ हैं, याद कर, मैं दिल को मज़बूत कर लेता था।

"एक सप्ताह के अन्दर ही घाव ठीक हो गया और उसके पन्द्रह दिन के बाद मेरा नकाह पढ़ा दिया गया। कुछ दिन मैं उस्ताद के घर ही रहा। पीछे मैं दुकान पर जाने लगा।

"शादी के चार-पाँच दिन पीछे मैं अपने घर गया और मैंने अपने माता-पिता को अपनी शादी की बात बता दी। इससे तो उनके क्रोध का पारावार नहीं रहा। जब वे खूब गालियाँ दे चुके और मुझको घर से निकल जाने के लिए कई बार कह चुके, तो मैंने पूछा, 'आप क्या चाहते हैं? क्या इस लड़की के साथ शादी करने से मैं आपका लड़का नहीं रहा?'

'हम चाहते थे कि तुम हिन्दू रहते।'

'तो किसने कहा है कि मैं हिन्दू नहीं हूँ।'

"मेरे इस कहने से वे बितर-बितर मेरा मुख देखते रह गए। लाहौर-जैसे नगर में तो यह बात किसी से गुप्त नहीं थी कि मुसलमान हिन्दू भी हो सकते हैं। आर्यसमाज की कृपा से यह भ्रम निर्मूल हो चुका था कि मुसलमान और हिन्दू गधे-गाय की भाँति भिन्न-भिन्न श्रेणी के जन्तु हैं। इस पर माँ ने अपने आँसू पोंछते हुए कहा, 'तो बहू को हिन्दू बना लिया है?'

'माँ! वह तो विवाह से पहले ही कर लिया था। केवल उसके माँ-बाप को पता नहीं है।'

'किस आर्यसमाज में शुद्धि कराई थी?'

'क्या आर्यसमाजी परमात्मा हैं कि जब तक वे न कहें, कोई हिन्दू हो ही नहीं सकता? फ़ातिमा हिन्दू हो चुकी है और स्वेच्छा से हुई है।'

"इस पर पिताजी ने पूछा, 'पर नकाह तो मुसलमानी तरीके से पढ़ा गया होगा?'

'ठीक है, पर मेरा उससे विवाह तो उस समय हुआ था, जब कोई मुल्ला, पण्डित समीप हो नहीं सकता था। उस वक्त हमने परस्पर वचन दिए थे कि हम दोनों जन्म-पर्यन्त एक ही रहेंगे। मुल्ला क्या बक-झक कर गया है, हमें मालूम नहीं है।'

"माँ हँस पड़ी। पिता अभी भी नाराज़ थे। मैंने कहा, 'पिताजी! आप ब्राह्मण को बुलाकर जो मन्त्र-यन्त्र बुलवाने हैं, बुलवा लीजिए। हमको आपत्ति नहीं होगी।'

"माँ ने कहा, 'जब तुम दोनों मिल चुके हो तो पण्डित को बुलवाने की ज़रूरत रह गई है क्या? हाँ, मेरा जी करता था कि तुम्हारी बरात धूमधाम से चढ़ाऊँ। बाजे बजें, आतिशबाज़ी छूटे और मिठाइयाँ बटें। तुम्हारी बहू को भूषणों से लदी देखूँ। ये सब स्वप्न ही रह गए।'

'माँ! आतिशबाज़ी, बाजे और मिठाइयाँ पोता होने पर कर लेना। भूषण तुम अभी बहू को पहनाकर ले आओ।'

'हम उसको लेने मुसलमान के घर नहीं जायेंगे ।'

"मेरा स्पष्ट उत्तर था, 'माँ ! तुमको जाने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी। वह स्वयं तुमसे आशीर्वाद लेने आयेगी और शीघ्र ही हम एक घर आपके समीप लेकर रहने लगेंगे। मैं तो मुसलमान हुआ नहीं। फ़ातिमा कभी मुसलमान थी नहीं। उसको हिन्दू बनकर रहने में कोई आपत्ति नहीं। तो फिर झगड़ा किस बात का है ?

'रही विवाह की धूमधाम। मैं समझता हूँ कि आपका सब रुपया तो बहन के विवाह पर खर्च हो चुका है। अब जो-कुछ आपके पास है, उसको व्यर्थ में खर्च कर देने से क्या लाभ होगा ? मैं शीघ्र ही कृष्ण नगर में एक बहुत अच्छी दुकान करने का विचार रखता हूँ। उसमें कुछ सहायता दे दीजियेगा।

'पर तुमने सुन्नत तो करवाई होगी ?'

'आधा इंच मांस कट जाने से क्या कोई मुसलमान बन जाता है ?'

"इस पर माँ ने पूछ लिया, 'और गोमांस भी खाया है क्या ?'

'नहीं माँ !' मैंने झूठ बोल दिया।

"इस प्रकार बात तय हो गई। दो मास तक मैं अपने स्वसुर के घर में रहा। पीछे मैंने एक मकान और उसके नीचे एक दुकान स्वसुर से दिये रुपयों से खरीद ली। मेरा नाम उन्होंने रहीम खाँ रख दिया था। मेरा स्वसुर और सास चाहती थी कि लड़की उनके घर पर ही रह जाए, परन्तु फ़ातिमा ने बहुत दृढ़ता से उनकी बात मानने से न कर दी। उसका कहना था कि दामाद स्वसुर के घर इज्ज़त नहीं पाता, हम रोज़ मिलते रहा करेंगे। वह मकान और दुकान उस्ताद ने अपनी लड़की के नाम कर दी।

"जब हम अपने घर में आये तो सबसे पहला काम हमने यह किया कि हम दोनों माता-पिता से मिलने गए। जाने से पूर्व मेरी बीवी ने पूछा, 'क्या नाम होगा मेरा ?'

"यह तो मैंने सोचा ही नहीं था। इस कारण जो नाम सबसे पहले मुख पर आया, कह दिया। उन दिनों बॉम्बे टॉकीज़ की ऐक्ट्रेस देवका-रानी का नाम बहुत विख्यात हो रहा था। वही नाम मैंने अपनी बीवी का रख दिया। 'तुम देवका रानी होवोगी। पर मेरे लिए केवल रानी।'

"हम चल पड़े। मेरी पत्नी की सूरत-शक्ल देख, माताजी तो तुरन्त मान गईं। पिताजी ने यह कहा, 'खैर बहू सुन्दर तो है।'

"मैंने अपनी दुकान का नाम रामा टेलरिंग हाउस रखा। इस पर उस्ताद ने आपत्ति की परन्तु रानी ने उनको समझा दिया कि इस मुहल्ले में सब काफ़िर रहते हैं। इस कारण उनका ध्यान आकर्षित करने के लिए यह नाम ठीक ही है।

"दुर्भाग्य की बात है कि न तो अब मेरे माता-पिता हैं और न ही रानी के। इस कारण कोई नहीं जानता कि हमारा किस्सा क्या है। मेरे स्वसुर के परिचित मुझको रहीम खाँ के नाम से जानते हैं और मेरे पिता के परिचित और सम्बन्धी मुझको रामलाल के नाम से बुलाते हैं। मैं तो, दादा! जो कुछ हूँ सो हूँ।

"दादा! मेरी जीवन मीमांसा तो यह है। मैं, अपना काम निश्चय करते समय तो विचार कर लेता हूँ कि मैं किसी को हानि तो नहीं पहुँचा रहा। जब काम का निश्चय हो गया और मुझको विश्वास हो गया कि उससे किसी का अकल्याण नहीं हो रहा, तो फिर उस काम के करने के लिए उपायों पर मग़ज़पच्ची नहीं करता।"

"पर रामलाल!" मोतीराम ने गम्भीर हो कहा, "तुमने अपने स्वसुर को धोखा दिया। क्या इससे उसका अकल्याण नहीं हुआ?"

"क्या अकल्याण हुआ है?"

"उसकी लड़की को धोखा देकर हिन्दू कर लिया।"

"देखो दादा! मुसलमान से हिन्दू बनाया फातिमा को। उसके बाप को नहीं बनाया। धोखा दिया उसकी इस बात को, जो एक बालिग़ लड़की के कामों में नावाजिब दख़ल दे रहा था। ग़लत विचारों के कारण वह

समझ रहा था कि वह मुझको मुसलमान बनाकर कोई पुण्य कार्य कर रहा है। उसके इस ग़लत विचार को ही तो धोखा दिया था। फिर यदि उससे झूठ न बोलता और फातिमा से विवाह कर लेता तो वह दुःख में मरता। अब तो वह मरने के समय अति प्रसन्न था और वह मुझको और फातिमा को मरते समय दुआएँ देता हुआ मरा था। बताओ कैसे उसका अकल्याण हुआ ?"

: ३ :

एक दिन सायंकाल मीना महल की अनैक्सी का प्रबन्ध करने के लिए मोतीराम वहाँ जा बैठा। होटल से कुछ दूर हटकर सोहनसिंह ने एक बड़ा-सा मकान किराये पर ले लिया था। नीचे की मंज़िल में दुकानें थीं और ऊपर की मंज़िल पर एक सेहन और दस-बारह कमरे थे। प्रत्येक कमरा एक ओर तो सेहन में खुलता था और दूसरी ओर बुख़ारचे में। दो-दो कमरों के पीछे एक बुख़ारचा था और एक बुख़ारचे में से दूसरे बुख़ारचे में जाने के लिए कमरों में से पहले सेहन में आना पड़ता था और पीछे अन्य कमरों में से होकर उनके पीछे वाले बुख़ारचे में जाया जा सकता था। सीढ़ियाँ पिछवारे से थीं और सेहन में खुलती थीं। सीढ़ियों के साथ ही कार्यालय के लिए एक कमरा था। यहाँ मोतीराम के बैठने का प्रबन्ध था। विद्युत की तारों से कार्यालय का सब कमरों से सम्बन्ध था। यहाँ बैठे स्विच दबा देने से सब कमरों में प्रकाश हो सकता था तथा अँधेरा किया जा सकता था। वहाँ से ही सब कमरों में घण्टी बजाई जा सकती थी और साथ ही लाल तथा हरी बत्ती जगाई जा सकती थी।

प्रत्येक दो कमरों के लिए एक-एक बैरा नियुक्त था। होटल का यह विभाग उन लोगों के लिए खोला गया था, जो सपत्नीक वहाँ भोजनादि तथा विश्राम के लिए आवें। कमरे का किराया दस रुपये प्रति रात होता था। भोजन, जो कमरा प्रयोग करने वालों को दिया जाता था, सौ प्रतिशत् अधिक मूल्य पर दिया जाता था।

सोहनसिंह मोतीराम को होटल के इस अंग में ले आया और इसके कार्य करने के विषय में समझाते हुए बोला, "मैंने होटल का यह अंग कुछ भले घर के पति-पत्नियों की सुविधा के लिए खोला है। बड़े-बड़े नगरों में, और दिल्ली अब एक बड़ा नगर हो गया है, पति-पत्नियों के लिए दो घड़ी पृथक् में बैठ, आराम तथा मनोविनोद के लिए उपयुक्त स्थान नहीं मिलता। उनको ऐसी सुविधा पहुँचाने का यत्न यहाँ किया जायगा। कभी बिना पति-पत्नी के सम्बन्ध के भी पुरुष-स्त्री, मित्र एकान्त-वास के लिए स्थान चाहते हैं। उनके लिए भी यह स्थान सुविधाजनक रहेगा।

"यद्यपि यह कार्य किसी प्रकार भी नैतिकता के विपरीत नहीं, तो भी पुलिस वाले इसमें हस्तक्षेप करते ही हैं। उनके हस्तक्षेप से बचने के लिए मैंने यहाँ एक प्रबन्ध किया है। यह तुम्हारी मेज़ है। इसके नीचे ये दो बटन लगे हुए हैं। यह बटन लाल बत्ती का है। इसके दबाने से सब कमरों में लाल बत्ती जल जाती है और कमरों का प्रयोग करने वालों को भय की सूचना मिल जाती है। इससे वे सावधान हो जाते हैं। दूसरा बटन है हरी बत्ती का। इसके दबाने से सब कमरों में हरे रंग की बत्ती जल जाती है और कमरों में ठहरे हुओं को सूचना मिल जाती है कि भय नहीं रहा और वे निश्चिन्त होकर विश्राम कर सकते हैं।"

मोतीराम ने संशित मन से पूछा, "तो यह वेश्यागार है ?"

"नहीं दादा! हमने यह नहीं कहना कि यहाँ औरतें मिलती हैं। हमारा तो यह कहना होगा कि जब कोई पति-पत्नी एकान्तवास के इच्छुक हों, तो वे यहाँ पर आ सकते हैं। जब कोई आये तो हमने उनसे लिखवा लेना है कि वे पति-पत्नी हैं। आगे वे जानें उनका धर्म-ईमान जाने। इतना लिखा लेने से हम कानून का पेट भर सकेंगे।"

मोतीराम को यद्यपि इस सबसे सन्तोष नहीं हुआ था, तो भी वह रामलाल के एहसान से मुक्त होने के लिए यहाँ काम करने के अतिरिक्त और कोई चारा नहीं पाता था। वह मान गया और सब प्रबन्ध ठीक

होने पर, उसी दिन से कार्य आरम्भ हो गया।

सोहनसिंह के होटल के मुख्य अंग में कांग्रेस चौकड़ी नित्य बैठती थी और देश-विदेश तथा मुहल्ले की समस्याओं पर विचार तथा कार्य होता रहता था। चौकड़ी में चौधरी मथुरासिंह, बाबू मुकुट विहारी माथुर, कौमरेड विपिन जोशी और सोहनसिंह प्रायः होते थे। इनमें कभी-कभी बाहर के लोग और मोतीराम भी सम्मिलित हुआ करता था।

मुकुट विहारी माथुर दिल्ली का एक प्रसिद्ध वकील था। वह उस चौकड़ी में कभी-कभी ही उपस्थित हुआ करता था। आज मोतीराम वहाँ पहुँचा तो वह भी वहाँ पहुँचा हुआ था और किसी विषय पर गरमागरम वार्तालाप हो रही थी। मोतीराम इस वार्तालाप के कारण को जानने के लिए ही वहाँ कमरे में जा पहुँचा था। माथुर के हाथ में हिन्दुस्तान टाइम्ज़ का, 'ईविनिंग न्यूज़ शीट' पकड़ा हुआ था और वह कह रहा था, "यह बात निर्विवाद है कि कबायलियों के पास 'फ्लेम-थ्रोअर और टैंक' पाकिस्तान से ही आये हैं। इससे स्पष्ट हो जाता है कि यह आक्रमण पाकिस्तान सरकार द्वारा संचालित है।

"इसका अर्थ यह निकला कि पाकिस्तान सरकार ने काश्मीर पर आक्रमण कर दिया है। काश्मीर सरकार ने हमसे सहायता माँगी है। प्रश्न यह रह जाता है कि हम काश्मीर की सहायता करें अथवा न। मैं समझता हूँ कि यदि समय पर काश्मीर की सहायता न की गई तो भारत के साथ अन्याय हो जायगा। काश्मीर भारत का एक अंग तो है ही, साथ ही वह हमारी सीमा बनाता है। सीमावर्त्ती देश होने से वहाँ कुछ विदेशियों का घुस आना, इस बात का कारण नहीं कि वह देश विदेशियों के हाथ में दे दिया जाए।"

चौधरी मथुरासिंह का कहना था, "चूंकि काश्मीर ने अभी तक हिन्दुस्तान में सम्मिलित होना स्वीकार नहीं किया, इस कारण वह हमारे लिए विदेश ही है। एक दूसरे मुल्क में किसी ने आक्रमण कर दिया है। हम क्यों उसमें हस्तक्षेप करें?"

"महाराजा काश्मीर ने काश्मीर को स्वतन्त्र रखने का विचार किया था। वह समझता था कि काश्मीर के मुसलमान हिन्दुस्तान में सम्मिलित होना पसन्द नहीं करेंगे। इसलिए जब तक महाराजा वहाँ पर सुरक्षा का प्रबन्ध नहीं कर लेता, उसको किसी राज्य में, पाकिस्तान अथवा भारत में, सम्मिलित होना ठीक प्रतीत नहीं हुआ। यह महाराजा का दृष्टिकोण रहा है, परन्तु अब उसको यह पता चल गया है कि वह स्वतन्त्र नहीं रह सकता। इसी कारण उसने भारत से न केवल सहायता माँगी है, प्रत्युत् भारत में सम्मिलित होना स्वीकार भी कर लिया है।"

"परन्तु महाराजा का क्या अधिकार है कि वह इस बात का निश्चय करे कि काश्मीर भारत में सम्मिलित हो अथवा पाकिस्तान में?"

"एक तो वह वहाँ का हाकिम है; दूसरे उसके पूर्वजों ने काश्मीर विजय किया था; तीसरे स्वराज्य मिलने तक वह भारत सरकार के साथ सम्बन्ध रखता था और चौथे; पार्लियामेण्ट के उस कानून के अधीन, जिससे हमको स्वराज्य मिला है। यह अधिकार महाराज को दिया गया है कि काश्मीर के हिन्दुस्तान अथवा पाकिस्तान में सम्मिलित होने का निर्णय वह करे।

"सबसे बड़ा कारण काश्मीर के भारत में शामिल होने को स्वीकार करने में यह है कि भारत की सुरक्षा के लिए यह अत्यावश्यक है कि काश्मीर भारत के साथ रहे।"

इस समय मोतीराम, जो बात समझ गया था, वार्तालाप में दखल देते हुए पूछने लगा, "तो कबायलियों ने काश्मीर पर आक्रमण कर दिया है?"

"हाँ। किस लिए पछ रहे हो मोतीराम?"

"और हमारी सरकार क्या कर रही है?"

"वह परेशान हो रही है।" माथुर ने बताया। "समाचार यह छपा है कि आज से चार दिन पूर्व काश्मीर के मुख्य मन्त्री दिल्ली आये थे और सरकार से काश्मीर के विषय में सहायता चाहते थे। अगले ही दिन

वह लौट गये। ऐसा प्रतीत होता है कि खाली हाथ।

"बाद का समाचार है कि शेख अब्दुल्ला को काश्मीर सरकार ने छोड़ दिया है और वह दिल्ली आया है। अब काश्मीर की गम्भीर स्थिति पर विचार हो रहा है।

"मैं इस समाचार से यह परिणाम निकालता हूँ कि भारत सरकार ने काश्मीर के मुख्य मन्त्री से बातचीत करना उचित नहीं समझा। भारत सरकार ने शेख अब्दुल्ला को छोड़ने की शर्त लगाई होगी और विवश महाराजा को शेख अब्दुल्ला को छोड़ना और यहाँ भेजना पड़ा होगा। इतने काल में आक्रमणकारी सीमा लाँघकर उड़ी तक पहुँच गये हैं।"

इतना कुछ जान, मोतीराम ने अधिकारयुक्त भाव में कहा, "देखिये मिस्टर माथुर! मैं आपको भेद की कुछ बातें बताता हूँ। फ्रन्टीयर में राजनीतिज्ञों के भीतर ये बातें तब ही चली थी, जब वहाँ प्लेबिसाईट होने जा रही थी। प्रश्न यह था कि फ्रन्टीयर भारत के साथ कैसे जा सकता था। हमारा मत था कि फ्रन्टीयर और काश्मीर एक हो जाना चाहिये और इस प्रकार भारत के साथ दोनों क्षेत्रों का सम्बन्ध हो सकता है।

"परन्तु भारत के नेता इस योजना को चला नहीं सके। कारण स्पष्ट है कि इन दोनों क्षेत्रों में मुसलमानों की संख्या अधिक है। हमारे नेता इन इलाकों के लोगों की सम्मति के बिना इनको भारत में लेना नहीं चाहते थे और मुसलमान भारत में शामिल होना नहीं चाहते थे।

"शेख़ अब्दुल्ला को भारत में बुलाने की बात भी इसी विचारधारा की सूचक है। महाराजा ने भारत से माँगे अस्त्र-शस्त्र। भारत ने देने तो स्वीकार किये, परन्तु नेताओं ने देने स्वीकार नहीं किये। केवल इतना ही नहीं, प्रत्युत् उन्होंने काश्मीर के मुख्यमन्त्री को खाली हाथ लौटा दिया। मेरे कहने का अभिप्राय यह है कि क्या केवल मुसलमानों के कहने से देश का कोई भाग देश से पृथक् किया जाना चाहिये। यही प्रश्न फ्रन्टीयर में प्लेबिसाईट के समय उपस्थित था और यही प्रश्न अब काश्मीर

के विषय में उपस्थित है ।"

चौधरी मथुरासिंह का कहना था, "यह विचार ठीक ही है । किसी स्थान की जनता की सम्मति के बिना, कैसे उस स्थान पर राज्य चल सकता है ?"

"मोटी दृष्टि से तो यह बात ठीक ही प्रतीत होती है ।" माथुर का कहना था, "परन्तु व्यावहारिक दृष्टि से तो यह सिद्धान्त किसी भी देश के लिए घातक होगा । देखिये, हमारे नेताओं ने इसी सिद्धान्त के अनुसार पाकिस्तान बनना माना और अब उसी सिद्धान्त को काश्मीर में लागू कर रहे हैं । मुझको तो कुछ ऐसा समझ आता है कि पाकिस्तान बन जाने के पश्चात् पण्डित नेहरू जी को इतना तो समझ आ ही गया होगा कि देश के किसी एक भाग को, देश से पृथक् होने की स्वीकृति नहीं देनी चाहिये । यदि यह बात अभी तक समझ नहीं आई तो शीघ्र आ जानी चाहिये । अन्यथा देश के अन्य भाग भी देश से पृथक् होने की माँग उपस्थित कर देंगे । इस माँग के करने वालों में कदाचित् आसाम और दक्षिण भारत, सबसे आगे होंगे ।

"काश्मीर के विषय में शेख़ अब्दुल्ला को इतना महत्त्व देने में कारण यह प्रतीत होता है कि पण्डितजी के मस्तिष्क में यह घुसा हुआ है कि शेख़ अब्दुल्ला काश्मीर के मुसलमानों का प्रतिनिधि है और उसके भारत के साथ सम्बन्ध बना लेने से काश्मीर के मुसलमान मान जायेंगे । पण्डितजी का यह भ्रम है । काश्मीर के मुसलमान शेख़ साहब के साथ तब तक रहेंगे, जब तक वे हिन्दुओं के विरुद्ध काश्मीरियों का राज्य बनाने के हक में होंगे । जिस समय उनको यह प्रतीत हुआ कि काश्मीर भारत के साथ बँधने जा रहा है, उस समय ही वे शेख़ अब्दुल्ला के भी विरुद्ध हो जायेंगे । यह भी सम्भव है कि मुसलमानों को ऐसा देख, शेख़ साहब स्वयं ही बदल जाएँ ।"

चौधरी मथुरासिंह का कहना था, "१९३१ और १९४६ के आन्दोलनों से तो यही सिद्ध होता है कि शेख़ साहब वहाँ की जनता के

प्रतिनिधि हैं ।"

"ठीक है उस समय शेख़ साहब का आन्दोलन मुसलमानों की रुचि के अनुकूल था। यदि उस समय शेख़ साहब अपने उद्देश्यों में सफल हो जाते तो अब तक काश्मीर पाकिस्तान में सम्मिलित हो चुका होता और मुसलमान इस बात को भलीभाँति समझकर ही उसको अपना नेता बनाये हुए थे। भला हो महाराजा काश्मीर का कि उन्होंने पण्डित जवाहरलालजी की रुचि के विपरीत उस समय के आन्दोलन को दबा दिया था। अन्यथा काश्मीर के उस समय स्वतन्त्र हो जाने की अवस्था में काश्मीर पाकिस्तान में दे दिया गया होता।"

मोतीराम ने कहा, "माथुर साहब! आपका विचार ठीक ही है। यह सम्भव है कि काश्मीर की जनता शेख़ साहब के पिछले कामों के कारण, कुछ काल के लिए उनका समर्थन कर सके, परन्तु यह समर्थन कुछ अधिक काल तक रहने वाला नहीं।"

मोतीराम को सब उपस्थित गण एक अनपढ़ व्यक्ति समझते थे, इस कारण उसकी बात पर हँसने लगे। माथुर ने उसकी बात का समर्थन किया तो सब उसका मुख विस्मय में देखने लगे। माथुर साहब ने कहा, "शेख साहब के आन्दोलनों का उद्देश्य यह था कि काश्मीर के महाराजा को गद्दी से उतारकर, वहाँ पर कौन्सिल बना दी जाये। ऐसा हो जाने की अवस्था में तो बटवारे के समय काश्मीर पाकिस्तान का अंग बन गया होता। उस परिस्थिति में कांग्रेस का सब बल भी काश्मीर को बचा न सकता। पण्डित जवाहरलाल जी तो १९४६ में ही वह कर देते, जो आज पाकिस्तान आक्रमण द्वारा करने का यत्न कर रहा है।"

"कुछ भी हो, जनता की राय के बिना तो राज्य चल नहीं सकता।" जोशी का कहना था।

"मैं तो इस विषय में मतभेद रखता हूँ। यदि यही विचार है तो अब भी हमको काश्मीर के विषय में परेशान होने की आवश्यकता नहीं है। पाकिस्तान ने महाराजा के विरुद्ध जिहाद चलाया है। जनता मुसलमान

है और वह पाकिस्तान में जाना पसन्द करेगी।"

मोतीराम ने इस पर कह दिया, "फ्रन्टीयर में प्लेबिसाईट के समय यह कहा जाता था कि डाक्टर खान और बादशाह खान का वहाँ पर बहुत रसूख है और प्लेबिसाईट में वह प्रान्त हिन्दुस्तान के साथ रहने की राय देगा, परन्तु ऐसा हुआ नहीं। इसी प्रकार अब काश्मीर के विषय में कहा जा रहा है। यह समझा जा रहा है कि शेख़ अब्दुल्ला काश्मीर के मुसलमानों का नेता है और उसके कहने से वहाँ के मुसलमान काश्मीर के भारत में मिलने की राय दे देंगे। यह नहीं होगा।"

"मोतीराम जी तो इस प्रकार बात कर रहे हैं, जैसे वे वहाँ पर प्लेबिसाईट करके देख चुके हैं।"

"हाँ। मैं मुसलमानों के विषय में अपनी सम्मति बना चुका हूँ। पकती दाल में एक दाना देखने से पूर्ण दाल के पकने का अनुमान लगा लिया जाता है। इसी प्रकार मुसलमानों की एक प्लेबिसाईट को देखकर मैं अपना मत बना चुका हूँ। एक बात हम सब भूल जाते हैं कि फ्रन्टीयर और काश्मीर में मुसलमानों की अधिक संख्या तो वहाँ पर एक प्रकार की इनफिल्ट्रेशन (विप्रवेशन) के कारण हुई है। उनको तो देश से बाहर निकालकर ही मत लेना चाहिये।"

चौधरी मथुरासिंह खिलखिलाकर हँस पड़ा। वह मोतीराम की ओर देखकर पूछने लगा, "लाला मोतीराम! इनफिल्ट्रेशन के अर्थ भी समझते हैं आप? इसमें एक देश के लोग चोरी-चोरी दूसरे देश में घुस आते हैं। काश्मीर में कैसे यह हुआ सिद्ध होता है। वहाँ पर यदि कोई इनफिल्ट्रेशन हुई है, तो वह डोगरों की हुई है।"

"देखिये चौधरी साहब! आप मेरी बात को हँसकर ग़लत सिद्ध नहीं कर सकते। फ्रन्टीयर और काश्मीर में जनता को बलपूर्वक मुसलमान बनाया गया है। मैं इसी को इनफिल्ट्रेशन कहता हूँ। यह भौगोलिक सीमाओं में विप्रवेशन तो नहीं है, परन्तु यह एक देश के भक्तों में दूसरे देश की भक्ति घुसेड़ दी गई है। यह एक प्रकार का सांस्कृतिक विप्र-

वेशन है।"

"सो तो पूर्ण देश में हुआ है। कहीं बल से, कहीं धन और काम के लोभ से और कहीं औरत के मोह से हिन्दू मुसलमान बनाये गए हैं। तो सब मुसलमानों को देश से निकाल देना चाहिये।"

अब फिर माथुर साहब ने मोतीराम का समर्थन करते हुए कहा, "यह तो हिन्दू जाति अर्थात् भारतीय जनता में एक बहुत ही निन्दनीय विप्रवेशन हुआ है। इसको तो निकालना ही पड़ेगा। भारत की सीमाओं से बाहर नहीं प्रत्युत् भारतीय समाज से बाहर। मुसलमानों के शरीरों को नहीं, प्रत्युत् उनकी विदेशीय भावनाओं को।"

"माथुर साहब! क्या बातें करते हैं आप? क्या आपका यह अभिप्राय है कि जैसे मुसलमानों ने हिन्दुओं को बल-छल से मुसलमान बनाया है, वैसे ही हिन्दू अब मुसलमानों से करें?"

"नहीं, मेरा यह आशय नहीं। मेरा मतलब यह है कि उनको बलपूर्वक देश के हितों के विपरीत किया गया है। अब उनको बलपूर्वक देश के हितों के अनुकूल बनाया जाए और जब तक यह प्रपंच पूर्ण नहीं हो जाता, तब तक देश के किसी भाग को किसी भी विदेश के साथ मिलाने के विषय में उनको मत देने का अधिकार न दिया जाए।"

"इससे तो मुसलमान इस देश में रहेंगे ही क्यों? वे देश छोड़ जायेंगे।"

"छोड़ना चाहते हैं तो छोड़ जायें। बिना चाहने के भी तो करोड़ों मुसलमान देश छोड़ चुके हैं। यह तो होना ही है कि देश में जो भी रहेगा, वह देश का बनकर ही रह सकेगा। देश छोड़ेंगे तब भी और नहीं छोड़कर, भारतीय बनकर, रहने पर भी विप्रवेशन तो मिटेगा ही।"

"भारतीय वे कैसे हो सकेंगे?"

"अपने मन से एक बार यह भ्रम निकालकर कि उनका इस देश से बाहर कोई नहीं और वे इस देश के रहने वाले हैं। देश उनका है और वे देश के हैं। जो ऐसा नहीं समझते, उनके लिए क्या हम देश के टुकड़े

कर देश से पृथक् कर सकते हैं ?"

इस प्रकार की गोष्ठी इस कांग्रेस चौकड़ी में प्रायः नित्य रात के आठ बजे तक चलती थी। सोहनसिंह इसको प्रोत्साहन देता था और जब तक ये लोग वहाँ बैठे रहते थे, चाय का दौर चलता रहता था। अवध-विहारी माथुर तो इसको 'म्युनिख़' का 'कॉफी हाउस' नाम देने लगा था।

: ४ :

भारत सरकार ने काश्मीर पर पाकिस्तान के अधिकार बनने की अन्तिम घड़ी में यह निर्णय किया कि काश्मीर को अस्थायी रूप में भारत के साथ मिला लिया जाय और इसकी पाकिस्तान से रक्षा के लिए वहाँ सेना भेजी जाए।

जिस दिन हवाई जहाज़ों से भारतीय सेना श्रीनगर के हवाई अड्डे पर उतरने लगी और पाकिस्तानियों का डटकर मुकाबिला होने लगा, उसी सायंकाल भारत के प्रधान मन्त्री पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने एक ऐसा वक्तव्य दिया, जो क्षमायाचनात्मक भाव में प्रतीत होता था। उसमें उन्होंने कहा कि वे काश्मीर को भारत में बलपूर्वक सम्मिलित नहीं कर रहे। काश्मीर की जनता के नेता शेख़ अब्दुल्ला के कहने पर अस्थायी रूप में काश्मीर को भारत में सम्मिलित किया गया है। काश्मीर में शान्ति-स्थापना के पश्चात् जनमत जानकर यह मिलन स्थायी किया जायेगा।

इस नम्र और युक्तिहीन वक्तव्य पर तो सोहनसिंह के होटल की चौकड़ी में बहस और भी उग्र हो उठी। माथुर का विचार था कि पण्डितजी ने यह सब-कुछ कहकर अपने पक्ष को दुर्बल कर लिया है। महाराजा के कहने पर नहीं, प्रत्युत् शेख़ अब्दुल्ला के कहने पर हमने सेनाएँ काश्मीर में भेजी हैं, यह एक अति ढीली युक्ति है। शेख़ अब्दुल्ला कल को कुछ और कहेगा तो क्या हम वह कुछ कर देंगे ?

"शेख़ अब्दुल्ला और कुछ क्यों कहेंगे ?" विपिन जोशी का

कहना था।

"मैं तो समझता हूँ कि वह अवश्य कुछ और कहेगा। इसमें कारण यह है कि शेख साहब के और कुछ सीमा में पण्डित जवाहरलालजी के भी दिमाग़ में यह बात घुसी हुई है कि काश्मीर एक पृथक् जाति है। उसकी अपनी एक पृथक् संस्कृति है। इस समय शेख़ अपनी भलाई भारत से होने की आशा कर सकता है। किसी समय उसको अपनी भलाई पृथक् रहने में भी दिखाई दे सकती है। जब भी उसको पृथक् रहने में कोई सहायक मिल गया तभी से, वह पृथक् रहने में यत्नशील हो जायेगा। उस समय हम क्या करेंगे ?"

"हम उनको स्वतन्त्र हो जाने देंगे।"

"तो अब सेना क्यों भेजी जा रही है ? क्या इसका यह अभिप्राय समझा जाये कि यह पण्डितजी की शेख साहब से मित्रता के कारण है ? यदि यह नहीं और यह सेना देश के हित में देशवासियों की सेवा के लिए भेजनी है, तो पण्डितजी के वक्तव्य में उसका उल्लेख होना चाहिये था। शेख साहब चाहते हैं अथवा नहीं, इसको काश्मीर पर पाकिस्तान के आक्रमण के विरोध में सेना भेजने के समय कहने की आवश्यकता नहीं थी। हमारी घोषणा तो यह होनी चाहिये थी, "काश्मीर भारत का अंग है। 'इन्डिपैंडेंस ऑफ इण्डिया ऐक्ट' के अनुसार महाराजा ने काश्मीर को भारत में सम्मिलित करना मान लिया है। यह ठीक है कि महाराजा अभी ऐसा करना नहीं चाहते थे ? परन्तु पाकिस्तान के काश्मीर पर आक्रमण ने महाराजा को भारत में आ जाने के लिए विवश कर दिया है। ब्रिटिश पार्लियामेण्ट के इसी ऐक्ट के अनुसार हमने काश्मीर का भारत में विलय स्वीकार कर लिया है और हम अपनी सेनाएँ काश्मीर की रक्षा के लिए भेज रहे हैं। आज से पाकिस्तान का काश्मीर के आक्रमण में किसी प्रकार का भी भाग, भारत से युद्ध समझा जायेगा। भारतीय सेना अथवा नागरिकों की एक-एक बूँद रक्त का भी, जो इस आक्रमण में बहेगी, उत्तरदायित्व पाकिस्तान पर होगा।

"काश्मीर में मुसलमानों की संख्या अधिक है अथवा कम, यह हमारे लिए विचार का विषय नहीं। हम तो एक सैक्युलर स्टेट हैं। हमारे राज्य में दीनमुहम्मदी पर किसी प्रकार का प्रतिबन्ध नहीं। हाँ, यदि उनको इस राज्य में रहना पसन्द नहीं, तो वे राज्य को छोड़ सकते हैं।

"काश्मीर भौगोलिक, सांस्कृतिक, सुरक्षा की दृष्टि से और कानून के अनुसार भारत का अंग है। इसकी रक्षा करना हमारा कर्त्तव्य है। हम अपने कर्त्तव्य का पालन करेंगे।

"अब देखो कि दोनों वक्तव्यों में कितना अन्तर है।"

काश्मीर के प्रश्न ने भारत में एक बहुत बड़ी हलचल मचा दी। सरकार के इस कार्य को कि उसने काश्मीर की रक्षा के लिए सेनाएँ भेज दी हैं, सब लोगों ने बहुत प्रसन्नता और सन्तोष से सुना था। मेजर शर्मा और उसके साथियों का आक्रमणकारियों को श्रीनगर की ओर बढ़ने से रोकने में बलिदान, सेना और सेना से बाहर एक महान् स्फूर्तिदायक घटना सिद्ध हुई। धीरे-धीरे समाचार आने लगे कि आक्रमणकारियों का आगे बढ़ना रुक गया है। पश्चात् यह समाचार आया कि आक्रमणकारी पाकिस्तान सीमा की ओर लौट पड़े हैं। कुछ दिन के पीछे वे उड़ी वापिस जा पहुँचे और तदनन्तर वहाँ से भागकर मुज़फ्फ़राबाद की पहाड़ियों की ओर चले गए।

इसके पश्चात् शेख अब्दुल्ला को काश्मीर में अन्तरिम सरकार बनाने की स्वीकृति दे दी गई। प्रायः सबको इस बात की प्रसन्नता थी कि काश्मीर को भारत में रखने के लिए भारत सरकार ने यत्न किया है। रामलाल को भी इससे प्रसन्नता हुई थी। वह समझने लगा था कि कांग्रेस सरकार भी आवश्यकता पड़ने पर महात्माजी की अहिंसा को ताक पर रखने को तैयार है। वह भी अपने परिचित वर्ग में कांग्रेस सरकार की इस नीति की प्रशंसा किया करता था।

दिसम्बर के आरम्भ में वह मोतीराम के घर का खर्चा देने, उसके घर पहुँचा, तो उसको पता चला कि मोतीराम मीना महल होटल में किसी

काम पर गया हुआ है। रामलाल ने सुन्दरी के पास पहुँच, दादा का कुशल-समाचार पूछा और तीन सौ रुपया निकालकर उसके सामने रख दिया। रुपया देते हुए उसने कहा, "भाभी! यह तीन सौ तो है ही। यदि और अधिक चाहिये तो बता देना।"

"रामलाल भैया! अब उनको होटल की मैनेजरी मिल गई है और वे इस महीने अपना वेतन ले आये हैं। अब यह रुपया तुम रखो। कभी आवश्यकता होगी तो तुमसे ले लेंगे।"

"क्या मिला है होटल में से?"

"तीन सौ मासिक तो वेतन है और इसके अतिरिक्त आय में से पाँच प्रतिशत मिल रहा है।"

"यह तो बहुत अच्छा है। इस पर भी अब मैं यह लाया हूँ भाभी! तुम रख लो। यदि खर्च न हुए तो लौटा देना।"

"नहीं, अब तुम ले जाओ। कभी फिर आवश्यकता पड़ी तो ले लेंगे। तुम्हारे पास रखे, हमारे पास ही तो हैं न। शर्म की बात तो है नहीं।"

रामलाल रुपया उठाने का विचार कर ही रहा था कि मोतीराम आ गया और जय हिन्द कहने के पश्चात् सामने बैठ कहने लगा, "अब बताओ रामलाल! गांधीजी की जय हो रही है या नहीं। इन दुष्ट पाकिस्तानियों का मुख ऐसा तोड़ा है कि अब सौ वर्ष तक तो हिन्दुस्तान की ओर मुख नहीं उठाएँगे।"

"काश्मीर की बात कर रहे हो दादा?"

"हाँ, तो और क्या?"

"पर दादा! इसमें महात्मा गांधी की जय कैसे हो गई? मैं तो समझता हूँ कि महात्मा गांधी के सिद्धांत असत्य सिद्ध हुए हैं।"

"वाह। यह कैसे? भारत सरकार कांग्रेसियों के हाथ में है और वे सब-कुछ महात्मा जी की नीति के अनुसार ही तो कर रहे हैं।"

"दादा! तुम कुछ नहीं जानते। तुम तो किसी राजा के उस अनुचर की भाँति हो, जो राजा की रुचि को देखकर बैंगनों की प्रशंसा अथवा,

निन्दा करने लगा था। मोतीराम! यह दासता है। तुम गांधीवाद के दास हो। तुमने तो गांधीजी की प्रशंसा ही करनी है, चाहे तो महात्माजी के करने से कुछ हो अथवा न करने से कुछ हो।

"देखो, मैं तुमको आज के समाचार-पत्र में छपा महात्माजी का, कल की प्रार्थना में दिया गया भाषण सुनाता हूँ। इससे तुम समझ सकोगे कि इस काश्मीर की विजय का क्या हो जाता, यदि महात्माजी का कहा माना जाता।

"महात्माजी ने कहा है, (दिल्ली डायरी, पृ० १४३) 'एक पत्र लिखने वाले ने मुझको डाँटा है। उसने लिखा है कि मैं कैसे विन्सेन्ट चर्चिल, मुसोलिनी, हिटलर और जापान को यह राय देने का साहस कर सका था कि वे मेरी अहिंसा की नीति और उपायों का प्रयोग करें ?

'पत्र लिखने वाले ने यह लिखा है कि जब मेरे अपने मित्र, जो कांग्रेस सरकार में हैं' अहिंसा भूलकर काश्मीर में सेना भेज युद्ध कर रहे हैं, तो मेरी अहिंसावादिता कहाँ गई है। मैं क्यों उनको नहीं बताता कि किस प्रकार काश्मीर पर आक्रमणकारियों को अहिंसात्मक उपायों से रोका जा सकता है।

'इस पत्र लिखने वाले को मेरा उत्तर यह है कि उसको और सबको यह बात समझ लेनी चाहिए और मैंने कई बार यह स्वीकार भी किया है कि इस विषय में मैं अपने मित्रों पर कुछ भी प्रभाव नहीं रखता।

'मेरे मित्र, जो इस समय भारत की सरकार चला रहे हैं, अपने प्रयोग किये जाने वाले उपायों पर विश्वास रखते हैं। मेरा विश्वास अभी भी अहिंसा पर है। परन्तु मैं उनको अपने विश्वास के विपरीत करने के लिए कैसे कह सकता हूँ? मैं यह मानता हूँ कि अब मेरा अपने मित्रों पर पहले सा प्रभाव नहीं रहा।'

"आगे चलकर गांधीजी ने कहा, 'यद्यपि मैं भारत सरकार की ओर से काश्मीर की सहायता के लिए शस्त्र उठाने को ठीक नहीं मानता, न ही मैं शेख अब्दुल्ला के हथियार उठाने को ठीक समझता हूँ, इस

पर भी मैं इन दोनों की बहादुरी की प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकता।

'यदि दोनों, काश्मीर और भारत के सैनिक अहिंसात्मक उपायों से विरोध करते हुए अन्तिम सैनिक तक भी मर जाते तो मैं समझता हूँ कि वे भारत की रूप-रेखा ही बदल सकते थे।

'अहिंसात्मक विरोध का ढंग सेनाएँ भेजकर नहीं चलता। इसमें तो रक्षक आक्रमण करने वालों की शक्ति का आत्मिक बल से विरोध करते हैं। बिना हथियार उठाए, यहाँ तक कि बिना मुक्का भी ताने।

'यदि वे ऐसा कर सकते, तो यह एक ऐसी बहादुरी होती, जिसकी उपमा इतिहास में न मिलती। तब काश्मीर एक पवित्र तीर्थस्थान बन जाता, जिसकी सुगन्धि केवल भारत में ही नहीं, प्रत्युत् संसार भर में फैल जाती।"

रामलाल ने हिन्दुस्तान टाइम्ज़ में से यह रिपोर्ट पढ़कर सुना दी और इसके अर्थ बता दिए। पश्चात् उसने पूछा, "क्यों दादा! आई है पसन्द अपने गुरुदेव की बात?"

मोतीराम विचार कर रहा था कि भारत सरकार ठीक है और गांधीजी ग़लत। यह बात स्पष्ट थी कि यदि गांधीजी की सम्मति मानी जाती तो इस समय तक पूर्ण काश्मीर की घाटी पाकिस्तानियों के बूटों तले रौंद दी गई होती और कोई काश्मीरी औरत बलात्कार किये जाने से न बची होती। मोतीराम को यह समझने में कुछ भी कठिनाई नहीं हुई कि महात्माजी वास्तविक परिस्थिति को समझ नहीं सके। इस पर भी वह चुप था।

मोतीराम को चुप देख रामलाल ने कहा, "दादा! यदि गांधीजी की इच्छानुसार वहाँ सैनिक न भेजकर, जनता को सत्याग्रह करने के लिए कहा जाता, तो कोई भी सत्याग्रह के लिए तैयार न होता। विपरीत इसके काश्मीरी आक्रमण करने वालों का स्वागत करने के लिए फूलों की मालाएँ लेकर पहुँचते। इस विषय में तो यही कहा जा सकता है कि महात्माजी राजनीति नहीं समझते।

"मैं तो यही कहता हूँ कि महात्माजी भले ही अपने काल्पनिक हिंडोले झूलते हों, परन्तु भारत के सब विद्वान् लोग यह मानते हैं कि महात्माजी के सब-के-सब अहिंसात्मक आन्दोलन असफल रहे हैं। उनसे देश के कल्याण के स्थान भारी अकल्याण हुआ है। स्वराज्य इन आन्दोलनों के परिणामस्वरूप नहीं मिला, परन्तु अन्य लोगों के अन्य उपाय हुए हैं, जो भारत को इस स्थिति में ले आये हैं।"

मोतीराम, यद्यपि काश्मीर के विषय में रामलाल की बात में तथ्य मानता था, परन्तु स्वराज्य-प्राप्ति के विषय में तो वह उसके कथन को अनर्गल ही समझता था। उसने बात बदल दी और कहा, "रामलाल! मेरे साथ एक और मज़ाक हुआ है। किंग्ज़्वे कैम्प में बनने वाली इमारतों के लिए टैंडर माँगे गये थे और मैंने टैंडर भर कर दिये। सोहनसिंह से दो हज़ार रुपया लेकर ज़मानत के रूप में जमा भी करा दिया। दिल्ली के विख्यात कांग्रेसी चौधरी मथुरासिंह की सिफ़ारिश भी करवाई।

"टैंडर खुलने के बाद एग्जेक्टिव इञ्जीनियर ने कह दिया कि मेरा टैंडर मंजूर हुआ है और मंजूरी की चिट्ठी मिल जायेगी। मैं बहुत प्रसन्न हो घर चला आया। एक सप्ताह से ऊपर चिट्ठी की प्रतीक्षा करता रहा। जब वह नहीं आई तो पता करने पी० डब्लू० डी० के कार्यालय में गया। वहाँ जाकर पता चला कि ठेका तो रावलपिंडी के एक सरदार दसौंधा-सिंह को मिल गया है। मेरे पूछने पर मुझको बताया गया कि मैं ठेकेदारी के अयोग्य समझा गया हूँ। यद्यपि दसौंधा सिंह भी मेरे जैसा ही था, परन्तु उसकी सिफारिश एक मिनिस्टर साहब की थी। स्वाभाविक रूप में बड़ी सिफारिश को छोटी सिफारिश पर उपमा दी गई।"

रामलाल यह वृत्तान्त सुनकर हँस पड़ा। खूब हँसकर उसने कहा, "दादा! क्यों परछाईं के पीछे भाग रहे हो? कांग्रेस के राज्य में एक बहुत भारी भूल हो रही है। एक राजनीतिक पार्टी को देश के शासन में हस्त-क्षेप करने का अधिकार दिया जा रहा है। पार्टी तो उसकी सिफारिश करेगी, जो पार्टी को सफल बनाने के लिए धन और श्रम दान करेगा।

जो जितने बड़े अधिकारी की सहायता करेगा, वह उतना ही अधिक देश की लूट में भाग ले सकेगा।"

मोतीराम को कांग्रेस के विपरीत ये कटु वचन सुनने रुचिकर नहीं थे, परन्तु उसके अपने साथ जो-कुछ बीती थी, वह उसका मुख बन्द किये हुए थी।

रामलाल ने आगे कहा, "रूस में तो बोलशिविक पार्टी किसी को फाँसी तक दिलवाने की शक्ति रखती है। परमात्मा का धन्यवाद है कि कांग्रेस में अभी इतनी मूर्खता नहीं आई।"

मोतीराम बहुत ही लज्जित हुआ अनुभव कर रहा था। उसने भी रामलाल को फँसाने का यत्न किया था। उसको अपने पूर्ण कार्य पर पश्चात्ताप हो रहा था। उसने रामलाल का रुपया, जो अभी तक भी सुन्दरी के सामने रखा था, वापिस करते हुए कहा, "अब तुम अपना रुपया अपने पास रखो। गांधीजी का भक्त एक वेश्यागार का मैनेजर बन गया है।"

"क्या मतलब ?"

"कभी मीना महल की अनैक्सी में आना। दिखा दूँगा।"

: ५ :

मोतीराम को ठेका न मिलने का भारी शोक था। उसने सायंकाल की कांग्रेस चौकड़ी में पहुँच चौधरी मथुरासिंह को, उसकी सिफारिश के निष्फल जाने की बात बता दी। चौधरी हँस पड़ा और कहने लगा, "आज देश में सैनिक-वर्ग की भारी आवश्यकता है। यही कारण है कि एक सिख को उस पर उपमा दी गई है।"

मोतीराम को यह युक्ति समझ नहीं आई। पर कर ही क्या सकता था। इस पर भी उसने मुख मोड़कर कह दिया, "दसौंधा सिंह ही तो काश्मीर में जाकर लड़ रहा है।"

"मोतीराम ! घबराओ नहीं। इस वर्ष म्युनिसिपल कमेटी में नये

काम निकलेंगे, तब मैं कुछ तो तुमको अवश्य ही दिलवा सकूँगा।"

"वह भी देख लूँगा।"

"परन्तु उसके लिए एक बात करनी होगी। एक कम्पनी बना लो। उस कम्पनी का नाम म्युनिसिपल कमेटी में रजिस्टर करवा लो। शेष मैं कर लूँगा। वहाँ तो किसी के पास सिफारिश की आवश्यकता नहीं है।"

"कब नाम रजिस्टर किये जायेंगे?"

"फरवरी तथा मार्च के मास में।"

"इसके लिए कितना खर्चा करना पड़ेगा?"

"बहुत मामूली। पचास रुपये तो कमेटी के कोष में देने होंगे। पचास रुपये क्लर्क को और एक हज़ार रुपये के लगभग सेक्रेटरी इत्यादि को।"

मोतीराम को एक बात याद आ गई। उसने कहा, "चौधरी साहब! इस विषय में आत्मिक-बल नहीं काम कर सकता?"

"क्या मतलब?" चौधरी ने मोतीराम के मुख पर देखते हुए पूछा।

"मेरा मतलब यह है कि कल महात्माजी ने अपनी प्रार्थना में कहा था कि वे तो काश्मीर पर आक्रमण करने वालों का विरोध आत्मिक बल से करना अधिक उत्तम समझते हैं। मैं पूछता हूँ कि यदि देश पर आक्रमण आत्मिक बल से रोका जा सकता है, तो यह रिश्वत के बाज़ार का विरोध आत्मिक बल से क्यों नहीं किया जा सकता?"

मथुरासिंह और दूसरे लोग हँस पड़े। मिस्टर जोशी, जो कम्युनिस्ट दल से सम्बन्ध रखते थे, कहने लगे, "महात्मा शब्द की दासता न जाने हिन्दुओं के मन से कब निकलेगी? बिना युद्ध मनुष्य की कोई भी समस्या नहीं सुलझती। मनुष्य अभी देवता नहीं बना। महात्मा बुद्ध, हज़रत ईसा और महात्मा गांधी आदि जीवन-भर तक अहिंसा, शान्ति और सत्याचरण पर बल देते रहे, परन्तु सफलता मिली महमूद ग़ज़नवी को, सफलता मिली बाबर और अकबर को। यह अहिंसा की पूजा करने से नहीं, वरन् हाथ में तलवार ले मैदाने-जंग में आ उतरने से।"

चौधरी ने हँसते हुए कहा, "मोतीराम ! जोशी के भुलावे में न आ जाना। ये कम्युनिस्ट हैं और ये विश्वास रखते हैं कि संसार में वर्ग-युद्ध का अवसर आ गया है और ये उस वर्ग-युद्ध के लिए अपनी तलवारें तेज़ कर रहे हैं।"

"तलवारें तो तेज़ हैं ही। युद्ध भी आरम्भ हो गया है। मज़दूर वर्ग को अभी तक रूस, रूमानिया, बलगारिया, हंगरी, पोलैण्ड, जैको-स्लेविया इत्यादि देशों में सफलता मिली है। चीन में भी इस वर्ग का झण्डा ऊँचा कर लिया गया है। इधर हिन्दुस्तान में भी हम जल्द अपना युद्ध आरम्भ करने वाले हैं।"

बात यहाँ ही समाप्त हो गई। मोतीराम के मन में यह बात बैठ गई कि कांग्रेस सरकार और गांधी दो भिन्न-भिन्न बातें हैं। कांग्रेस सरकार का राज्य महात्मा गांधी का रामराज्य नहीं। साथ ही वह यह समझने लगा था कि आत्मिक-बल एक निरर्थक वस्तु है। महात्माजी अपने साथियों तथा विरोधियों को आत्मिक-बल से अपना दृष्टिकोण समझा नहीं सके।

मोतीराम के मन में क्रान्ति उत्पन्न हो रही थी। वह यह समझ रहा था कि उसकी आज तक की बनी धारणाएँ दृढ़ आधार पर नहीं बनीं। या तो वह पूर्ण परिस्थिति से परिचित नहीं है। यह जो कुछ समाचार उसको समाचार-पत्रों से मिलते हैं, वे तो भारत सरकार को एक बन्द गली में ले जाकर खड़ा कर देंगे और वहाँ से उसका निकल सकना अति कठिन हो जायेगा।

इन्हीं विचारों में वह वहाँ बैठा चाय को सरुकियाँ लगाकर पी रहा था। चौधरी जोशी से वाद-विवाद कर रहा था। जोशी का विचार था कि देश का कल्याण समाजवाद से ही हो सकता है। जब तक व्यक्तिगत हानि-लाभ देश के कामों में प्रेरणा देने वाले बने रहेंगे, चोरी, ठगी, रिश्वत, कुनबा-परवरी, इत्यादि सब चलेंगे। इन दुर्गुणों से बचने के लिए एक ही उपाय है कि समाज ही देश की मालिक हो और देश में प्रत्येक कार्य समाज के हित में और समाज द्वारा ही संचालित हो।

"कांग्रेस सरकार सरमायेदारों के बल पर बनी है और यह उनके लाभ में ही कार्य कर रही है। यही कारण है कि कांग्रेस के कुछ नेतागण कांग्रेस से पृथक् हो सोशियलिस्ट पार्टी बना लिये हैं। बाबू जयप्रकाश नारायण ने अपने एक वक्तव्य में यह कहा है कि कांग्रेस को तोड़ देना चाहिये और आर्थिक सिद्धान्तों के अनुसार पार्टियाँ बनाकर राज्य चलाना चाहिये।

"महात्माजी ने भी कुछ ऐसे ही विचार प्रकट किये थे; परन्तु पण्डित जवाहरलाल जी तथा अन्य कांग्रेसी नेता कांग्रेस के नाम से लाभ उठाकर अपनी सत्ता बनाये रखना चाहते हैं।"

इस समय मुकुट विहारी माथुर वहाँ आ गया और जोशी की बात को सुनकर बोला, "जब तक यह अन्तरिम सरकार है, तब तक तो कांग्रेस के नाम पर राज्य चलना ही चाहिये। किसी-न-किसी प्रकार से भी समझो, देश में यही एक सुव्यवस्थित पार्टी है। परन्तु विधान बन जाने के पश्चात् और नये निर्वाचन होने से पूर्व कांग्रेस को तोड़कर आर्थिक अथवा सांस्कृतिक दृष्टि से पार्टियाँ बननी चाहि और उन सबको अपना-अपना प्रोग्राम जनता के सामने रखना चाहिये।"

इस पर चौधरी ने आपत्ति उठाई, "कांग्रेस भी एक पार्टी क्यों न रहे?"

"इस कारण कि कांग्रेस की देश निर्माण के विषय में कोई स्पष्ट नीति नहीं है। अभी तक तो कांग्रेस स्वराज्य प्राप्त करने के लिए एक संस्था विख्यात थी। स्वराज्य प्राप्त हो गया। राष्ट्र का ढाँचा तो बन गया है, परन्तु उस ढाँचे के अन्दर कार्यविधि क्या होगी, यह पार्टियों के निर्माण में आधार होना चाहिये।"

"जब कांग्रेस बनी थी तो यह ब्रटिश सरकार के अधीन नौकरियाँ माँगती थी। पीछे यह उपनिवेश ढंग का स्वराज्य प्राप्त करने का यत्न करने वाली संस्था बन गई और फिर पूर्ण स्वराज्य प्राप्त करने वाली संस्था। कांग्रेस समय-समय पर अपने उद्देश्यों में परिवर्तन करती रही है

और अब भी यह आवश्यकता अनुसार अपने उद्देश्यों को बदलती रहेगी।"

"परन्तु जानते हो इसका परिणाम क्या होगा ? देश में लीडरों का राज्य होगा और निर्वाचन के समय कोई नहीं जान सकेगा कि कांग्रेस देश को किधर ले जायेगी। निर्वाचन होंगे लीडरों का नाम लेकर। सिद्धान्त तो, अस्थिर होने के कारण, कोई बता नहीं सकेगा। उदाहरण के लिए प्रथम निर्वाचन लड़े जायेंगे महात्माजी का नाम लेकर और राज्य चलेगा उनकी इच्छा के विपरीत। इसी प्रकार सिद्धान्तों और उद्देश्यों का विचार छोड़कर नेताओं के नाम पर राज्य निर्माण हुआ करेगा और पश्चात् कोई भी पार्टी का सदस्य नेता के काम पर स्वतन्त्रता से आलोचना नहीं कर सकेगा। नेता पार्लियामेन्ट के मेम्बरों को भेड़-बकरियों की भाँति चलाया करेंगे। किसी को साहस नहीं होगा कि नेता से कही बात का विरोध कर सके अथवा उसके विचारों के विपरीत सोच भी सके। यही तो अधिनायकवाद (डिक्टेटर शिप) होगा। भारत में भी हिटलर पैदा होगा और उस हिटलर के गिरते ही भारत-राज्य टूक-टूक होकर पुनः दासता की श्रृङ्खलाओं में बँध जायेगा।"

"अरे माथुर साहब ! छोड़ो इन बातों को।" विपिन जोशी ने कह दिया, "जब तक पण्डितजी की डिक्टेटरी का अन्त होगा, भारत में कम्युनिज़्म का बोलबाला हो जायगा। मैं आपको एक अति गोपनीय बात बताता हूँ। पण्डितजी हृदय से कम्युनिस्ट हैं। वे कई बार इस बात को सावजनिक रूप में भी मान चुके हैं। इस समय कांग्रेस के अन्य नेताओं को, कुछ पैसे वालों को, जिन्होंने कांग्रेस की ब्रिटिश काल में सहायता की थी, प्रसन्न करने के लिए कभी-कभी भारत के कम्युनिस्टों की निन्दा कर दिया करते हैं। वास्तव में वे देश को कुछ ही वर्षों में कम्युनिस्टों की गोद में ले चलेंगे।

"हम भी तो पण्डितजी और कांग्रेस की निन्दा केवल नीति के विचार से ही करते हैं। वास्तव में वे ही हमारे सबसे बड़े सयाहक हैं। हमारी

निन्दा पण्डितजी को सरमायेदारों का नेतृत्व दिलाती है और वे उनको हमारे ही विचार के अनुसार लाने में सहायक हो जाते हैं।

"देखिये, मैं आपको बताता हूँ। चीन में कम्युनिस्ट राज्य स्थापित होगा। पश्चात् भारत-चीन मैत्री होगी और देश में कम्युनिस्टों का प्रभाव बढ़ जायेगा। एक इस प्रकार की रौ चलेगी कि सरमायेदारों से देश की जनता घृणा करने लगेगी और पण्डितजी का देश को समाजवादी बनाने का प्रोग्राम सुगम हो जायेगा। मैं यह भविष्यवाणी करता हूँ कि पण्डितजी समय पाकर कम्युनिस्ट दुनिया के महान् नेता बनने वाले हैं। इस पर भी हम उनका विरोध करेंगे। कारण यह कि हमारा विरोध उनको इस पदवी पर पहुँचने में सहायक हो रहा है।"

मोतीराम से नहीं रहा गया। उसने कह दिया, "मिस्टर! यह तुम्हारा विरोध नहीं, जो पण्डितजी को नेता बना रहा है प्रत्युत् यह सरमायेदारों की नीचता है, जो पण्डितजी को तुम्हारी ओर धकेल रही है।"

सब हँसने लगे। मोतीराम को उनकी हंसी सुनने का अभ्यास होता जाता था और वह इससे निरुत्साह नहीं होता था। वह समझता था कि उसकी युक्तियुक्त बात पर ये लोग हँसकर अपनी अनभिज्ञता ही प्रकट करते हैं। हँसकर विपिन जोशी ने कहा, "भाई मोतीराम! मैं तुमको अपने मन की बात सत्य-सत्य बताता हूँ। यद्यपि मैं इसको पब्लिक के सामने कभी भी स्वीकार नहीं कर सकता। परन्तु मैं सत्य कहता हूँ कि भारत के सरमायेदार उतने नीच नहीं हैं, जितने कि अन्य देशों के मज़दूर। मैं, युद्ध से पूर्व पाँच वर्ष तक रूस में रहा हूँ और वहाँ पर मज़दूरों की वह दुर्गति मैंने देखी है कि वर्णन नहीं कर सकता।

"वहाँ पर मज़दूरों का राज्य नहीं है। वहाँ बोलशिविक पार्टी का राज्य है और उस पार्टी में कुछ लाख आदमी ही सम्मिलित हैं। वे प्रायः मज़दूर नहीं हैं। उनमें प्रायः लैक्चरबाज़, वकील और अर्ध-शिक्षित विद्यार्थी हैं। कुछ सरकारी नौकर भी उसमें सम्मिलित हैं। शेष करोड़ों की संख्या में मज़दूर तो भेड़-बकरियों की भाँति काम पर हाँके जाते हैं। यदि किसी

कारण से वे पार्टी के नेतागणों से असन्तोष की एक झलक भी मुख पर आने दें, तो उनको पकड़कर साइबेरिया के कन्सेन्ट्रेशन कैम्प्स में भेज दिया जाता है। उन कैम्पों में डॉक्टरों का उचित प्रबन्ध नहीं होता। न ही वहाँ उचित औषधियाँ पहुँच पाती हैं। परिणामस्वरूप वे बेचारे, जो वहाँ भेजे जाते हैं, एक-दो वर्ष में परलोक गमन कर जाते हैं।

"यहाँ के सरमायेदारों ने तो स्वराज्य आन्दोलन में करोड़ों रुपये दिये हैं। मुझको ऐसे जमींदारों का पता है, जो बंगाल के क्रान्तिकारियों को आश्रय देते थे और उनके परिवार वालों की सहायता करते थे। मुझको विदित है कि १९४२ में कांग्रेस के भूम्यान्तर्गत हुए कार्यकर्त्ता दिल्ली के रईस और ठेकेदारों के घरों में छुपकर जान बचाते रहे थे।

"मुझको विश्वास है कि यदि भारत के पैसे वालों से देश और धर्म के नाम पर कुछ माँगा जाये तो वे अभी भी बहुत-कुछ देंगे। वे सदैव देते रहे हैं।"

"इस पर भी आप उनके विरुद्ध कहते और लिखते हैं।"

"यह नीति है। हमारा यह उद्देश्य है कि देश के सब डोरे सरकार के हाथ में रहें। पैसे वाले बनें अथवा बिगड़ें, तो सरकार के करने से। मज़दूर काम करें तो सरकार की रुचि के अनुसार। स्कूल कालेज चलें तो सरकार के कहे अनुसार। अभिप्राय यह कि देश के पूर्ण कामों का संचालन सरकार के अधीन हो। इसमें ही आज कल्याण दिखाई देता है। मैंने जो यहाँ के सरमायेदारों की प्रशंसा की है, वह उनकी मानसिक अवस्था के कारण है न कि सरमायेदारी के प्रपंच के कारण।"

इस पर मोतीराम ने पूछ लिया, "तो यह हमारा होटल भी सरकार चलायेगी?"

"बिलकुल।"

"और स्कूल-कॉलेज, पत्र-पत्रिकाएँ अर्थात् सब विचार-निर्माण की संस्थायें भी?"

"हाँ।"

"तो भाई! सरकार का नेता जो कोई भी होगा, अपने गुणानुवाद ही चलने देगा और कहीं नेता हो गया डालमिया अथवा बिड़ला परिवार का आदमी, तब तो भाई, बहुत बुरी बात होगी।"

"वे कैसे होंगे? हम उसको होने थोड़े ही देंगे।"

"कैसे रोक सकोगे?"

"भाई! तो क्या दूसरों का मुख बन्द है। जानते हो फ्रान्स में क्रान्ति हुई थी और नेता बन बैठा था नेपोलियन। प्रचार का प्रभाव यह हुआ था कि वे लोग, जो 'डाऊन विद दि ऐम्परर' कहते थे, 'ऐम्परर चिरंजीव हो' कहने लगे थे। यह भी सम्भव है कि आज जो स्टालिन को देवता मानते हैं, वे कल उसको गालियाँ देने लगें। यदि सरकार की शक्ति जनता के विचारों पर अधिकार जमा बैठी तो वह अनर्थकारी भी हो सकती है।"

इस पर जोशी ने कहा, "हम प्रति पाँच वर्ष के पश्चात्, लोगों को नेता बदलने का अवसर देंगे।"

मोतीराम खिलखिलाकर हँस पड़ा। उसने कहा, "मैं समझता हूँ कि जोशी साहब के विचारों में अव्यवस्था (कनफ्यूज़न) है।"

मोतीराम पर सदा की भाँति चौधरी हँस पड़ा।

: ६ :

इस चौकड़ी में मोतीराम की प्रायः हँसी ही हुआ करती थी। इसका परिणाम यह हो रहा था कि मोतीराम सरकार की नीति का आलोचक होता जाता था और वह समझने लगा था कि उसको सरकार की ओर से किसी प्रकार की सहायता नहीं मिल सकती। इस पूर्ण चौकड़ी में उसके मन में केवल माथुर साहब के लिए मान और प्रतिष्ठा थी।

माथुर भी समझ रहा था कि इस हृष्ट-पुष्ट पठान के मन में ईमानदारी है और वह अपने विचार निर्भय होकर बताता रहता है। इससे वह उसका प्रशंसक था और कभी उससे मतभेद हो जाता तो उसको धैर्य से

समझाया करता था।

इस प्रकार दोनों में बढ़ रही विचार-समानता को चौधरी मथुरासिंह संशित दृष्टि से देखने लगा। सोहनसिंह को भी मुकुट विहारी माथुर से मोतीराम की घनिष्ठता कुछ पसन्द नहीं थी।

एक दिन चौधरी मथुरासिंह आया और मैदान साफ़ देख, मोतीराम को बुला, माथुर के विषय में बताने लगा, "दादा! मैं देख रहा हूँ कि माथुर तुम पर डोरे डाल रहा है और तुम भी उसके भक्त होते जा रहे हो। इस कारण माथुर का पूर्व-इतिहास तुमको बता देना चाहता हूँ।

"माथुर यहाँ दिल्ली के पुराने रहने वालों में से है। इसके परिवार के प्रायः सब लोग ब्रिटिश काल में ऊँची-ऊँची पदवियों पर नियुक्त थे और बहुत से अब भी हैं। माथुर स्वयं बैरिस्टर है और अपने व्यवसाय में उच्च चोटी का वकील समझा जाता है। १६२६ में यह हिन्दू महा सभा में काम करता था। १६३० में यह म्युनिसिपल कमेटी में मेम्बर था। १६३७ में यह कांग्रेस का विरोधी था और १६३६ में इसने मेरी सहायता की थी और मुझको म्युनिसिपल कमेटी का सदस्य बनने में रुपये की भी मदद दी थी। उन दिनों मैं स्कूल मास्टर था और साठ रुपये मासिक वेतन पाता था। १६४६ में जब कांग्रेस की ओर से केन्द्रीय कौन्सिल के लिए मिस्टर आसफ़ अली खड़े हुए तो माथुर साहब उसकी सहायता करने लगे। हिन्दू महा सभा की ओर से प्रोफेसर रामसिंह खड़े किये गए और माथुर साहब हिन्दू सभा के सदस्य होते हुए भी आसफ़ अली की सहायता करते रहे। उसके निर्वाचन में न केवल इन्होंने समय दिया, प्रत्युत् अपनी जेब से धन भी व्यय किया। क्यों? यह मैं नहीं जानता। कुछ कांग्रेसियों का कहना है कि इनको विश्वास हो गया था कि कांग्रेस का राज्य होगा और कांग्रेस के उम्मीदवार की सहायता करने से वे कांग्रेस के राज्य से लाभ उठा सकेंगे। इस समय ये इस यत्न में हैं कि आगामी निर्वाचन में दिल्ली की ओर से पार्लियामेण्ट में आयें। इस कारण ये कांग्रेस की कार्यकारिणी में पहुँच गए हैं और यत्न कर रहे हैं कि ऑल

इण्डिया कांग्रेस कार्यकारिणी में चले जाएँ। मैं तुमको बता देना चाहता हूँ कि कांग्रेस के नेता इसको सन्देह की दृष्टि से देखते हैं।

"यूँ तो ये कांग्रेस कमेटी में हैं, परन्तु इनके विचार हिन्दू सभाइयों की तरह के हैं। ये पण्डित नेहरूजी की नीति का समर्थन नहीं करते और योग्य होने से ये अपने विपक्षियों का मुख बन्द कर देते हैं।

"मैं तुमको यह सब इसलिए बता रहा हूँ कि होटल में क्या होता है अथवा कांग्रेस के पक्ष में क्या-क्या योजनाएँ चलती हैं, वे माथुर साहब को नहीं बताना। किसी समय भी वे हमारे विरुद्ध खड़े हो सकते हैं।"

मोतीराम को चौधरी की बात पर विश्वास नहीं हुआ। इस कारण वह माथुर से अपने मन का संशय निवारण करने जा पहुँचा। एक दिन उसने माथुर के घर पर जाकर सीधा प्रश्न कर दिया, "माथुर साहब! क्या मैं जान सकता हूँ कि आपने हिन्दू महासभा क्यों छोड़ी थी?"

माथुर को इस प्रश्न से आश्चर्य तो हुआ, परन्तु उसने उत्तर देने से न नहीं की। उसने कहा, "मोतीराम! सत्य बात जानना चाहते हो तो सुनो।

"मैं हिन्दू सभा में सम्मिलित हुआ था, उसको देश की राष्ट्रीय संस्था मान कर। हमारे देश में कई सम्प्रदाय के लोग बसते हैं। मुसलमान, ईसाई, पारसी, सिख, जैनी इत्यादि। इनको कम्यूनिटीज़ कहते हैं। ये सब मज़हब के विचार से बनी हैं। देश के बाहर यहाँ के रहने वाले मुसलमान इत्यादि नामों से नहीं जाने जाते। उन सब को इण्डियन के नाम से अथवा हिन्दू के नाम से पुकारा जाता है। इण्डियन, हिन्दू का पर्याय-वाचक शब्द है। अतएव जब मैं हिन्दू महासभा में सम्मिलित हुआ था, तब इसको यहाँ की राष्ट्रीय संस्था मान ही हुआ था। उस समय कांग्रेस भी अपने को राष्ट्रीय संस्था कहती थी। दोनों में मतभेद राष्ट्रीयता में नहीं था, प्रत्युत् अन्य बातों में था। कांग्रेस राजनीतिक विचार से हिन्दू, मुसलमान और ईसाई की साझी संस्था तो थी, परन्तु वह इनको पृथक्-

पृथक् समझती थी और इनको एक करने के लिए परस्पर समझौता कराती रहती थी। इसके विपरीत हिन्दू महासभा राष्ट्रीयता का एक लक्षण करती थी और कहती थी कि जो भी व्यक्ति उस लक्षण के अनुकूल नहीं, वह हिन्दुस्तान देश का नागरिक नहीं होना चाहिये। उसके लिए राष्ट्र एक था और देश के रहने वाले उस राष्ट्र के अंग बन सकते थे। ऐसा बनने के लिए उनको राष्ट्र के लक्षणों के अनुकूल बनना चाहिये। मुझको हिन्दू महासभा की बात पसन्द थी और मैं हिन्दू महासभा का सदस्य था।

"यह मैं जानता हूँ कि मुसलमान अपने को हिन्दू कहने में आपत्ति करते हैं। हम हिन्दू को कोई मज़हब नहीं मानते। इस पर भी हम मुसलमानों को सदैव कहते रहे हैं कि वे अपने को हिन्दुस्तानी तो मानें। यही कांग्रेस उनको कहती थी और १६४६ में इस बात की परीक्षा हो गई।

"सिमला में वेवल कॉन्फ्रेन्स में महात्मा गांधी ने यह कहा था कि कांग्रेस हिन्दुस्तान की प्रतिनिधि संस्था है। मुसलमान इत्यादि हिन्दुस्तानी होने से कांग्रेस के अन्तर्गत हैं। जिन्ना ने इस बात को अमान्य किया। उसका कहना था कि मुसलमान न हिन्दुस्तानी हैं, न कांग्रेसी। वे कांग्रेस को अपनी प्रतिनिधि संस्था नहीं मानते। वे तो मुसलमान हैं और उनका देश पाकिस्तान है। महात्मा गांधी ने जिन्ना साहब को ग़लत कहा। इस पर वेवल साहब ने कॉन्फ्रेन्स भंग कर दी और मुसलमानों के विषय में वास्तविकता जानने के लिए नये निर्वाचन करा दिए।

"मैं हृदय से चाहता था कि मुसलमान अपने को हिन्दुस्तानी समझें और मुस्लिम लीग को, जो हिन्दुस्तान को छोड़कर अपना एक पृथक् देश बनाना चाहती थी, वोट न दें। इस प्रकार एक सीधे प्रश्न पर वोट पड़ कर बात एक बार निश्चय हो जाये। मैंने हिन्दू महासभा को राय दी कि वह इस बार निर्वाचन न लड़े। कांग्रेस को अपना दावा कि वह मुसलमानों का भी प्रतिनिधित्व करती है और मुसलमान हिन्दुस्तान को

अपना देश समझते हैं, सिद्ध करने का अवसर दे। हिन्दू महासभा मेरी इस बात को नहीं मानी। इस कारण मैंने हिन्दू महासभा के नुमायिन्दे की सहायता नहीं की और कांग्रेस के उम्मीदवार की पूरे मन से सहायता की। यह मुसलमानों की परीक्षा का अवसर था। उन्होंने कांग्रेस को वोट नहीं दिये। ६८ प्रतिशत् मुसलमान वोट मुस्लिम लीग को पड़े, जो हिन्दुस्तान को अपना मुल्क नहीं मानती थी और बहुत शोक से कहना पड़ता है कि हमारी आशाएँ पूर्ण नहीं हुईं।

"मैं अभी तक कांग्रेस में हूँ। यह आशा करता हूँ कि कांग्रेस के नेता १९४६ में निर्वाचन का अर्थ समझने का यत्न करेंगे। इसके अर्थ तो स्पष्ट ये हैं कि मुसलमान, जो अपने को हिन्दू कहना पसन्द नहीं करते थे, वे अपने को हिन्दुस्तानी भी मानने के लिए तैयार नहीं थे। मुझको यह डर लग रहा है कि कांग्रेस अभी भी उन निर्वाचनों का अर्थ नहीं समझ पाई। कांग्रेस ने हिन्दू महा सभा का यह दावा मानने के स्थान कि हिन्दू और हिन्दुस्तानी पर्यायवाचक शब्द हैं, हिन्दुस्तान का नाम ही बदल दिया है। इसका नाम भारत रखा है। यह बात स्पष्ट है कि हिन्दुस्तान नाम न मानने का कारण यह है कि कांग्रेस अभी भी यह आशा लगाये हुए है कि नामों के भुलावे में मुसलमान आ जावेंगे और अपने को इस देश का नागरिक समझने लगेंगे। मेरे जैसे विचार के आदमियों ने कांग्रेस को इस बात की भी परीक्षा करने का अवसर देना पसन्द किया है। भारतीय हो, हिन्दुस्तानी हो अथवा हिन्दू हो, देश के सब रहने वालों को अपने को इस देश का नागरिक बनना पड़ेगा। देखें, यह परीक्षण भी क्या १९४६ के परीक्षण की भाँति और हिन्दुस्तानी नाम की भाँति सफल होता है अथवा नहीं। मुझको कुछ ऐसा प्रतीत हो रहा है कि मुसलमान भारतीय होना भी स्वीकार नहीं करेंगे और अवसर मिलने पर हिन्दुस्तान को पाकिस्तान बनाना चाहेंगे।

"इस पर भी मैं समझता हूँ कि कांग्रेस को अपने यत्न में सफल होने का अवसर मिलना चाहिये। यदि मुसलमानों ने भारतीय बनना भी

स्वीकार नहीं किया तो अपने देश का नाम हिन्दुस्तान और अपना नाम हिन्दू रखने से मना करना भूल होगी।"

मोतीराम माथुर साहब को और रामलाल को एक जैसी बात कहते हुए सुन चकित रह गया। उसने माथुर साहब से कहा, "लगभग यही बात मुझको रामलाल ने कही थी। उसका कहना था कि भारत, इण्डिया और हिन्दुस्तान समान अर्थवाचक शब्द हैं। अतएव उसने कहा था कि भारतीय, इण्डियन और हिन्दू भी समान अर्थ वाले शब्द ही हैं। उसने यह भी कहा था कि जब इसाई हिन्दी पढ़ लेंगे, तब वे अपने आपको इण्डियन क्रिश्चियन कहने के स्थान हिन्दू ईसाई कहने लगेंगे।"

"यह रामलाल कौन है?"

"मेरा एक साथी है। अमृतसर से हम इकट्ठे दिल्ली आये थे और फिर कुछ काल तक हम इकट्ठे ही रहते रहे हैं।"

"रामलाल ने ठीक ही समझा है। परन्तु डर तो यह है कि न तो मुसलमान समझते प्रतीत होते हैं और न ही कांग्रेसी। कांग्रेसियों ने अपने को हिन्दू से हिन्दुस्तानी माना और हिन्दुस्तानी से भारतीय और कदाचित् भविष्य में अपने को इण्डियन मानना अधिक उचित समझेंगे।"

"फिर क्या होगा?"

"तब मेरे जैसे लोग कांग्रेस में नहीं रह सकेंगे। हम तब कांग्रेस का विरोध करेंगे और तब क्या होगा, कहना कठिन है।"

"पर माथुर साहब! आप नाम को क्यों इतना महत्व देते हैं। नाम कुछ भी हो। हम रहेंगे तो वही, जो हैं।"

"यदि तो नाम अर्थरहित वस्तु होती, तब तो कुछ चिन्ता की बात नहीं थी। परन्तु नाम अर्थयुक्त है। इस कारण इसको बदल देने से यहाँ की राष्ट्रीयता बदलने का भय है। मैं एक बात तुमसे पूछता हूँ कि तुम इन्सान हो अथवा नहीं?"

"हूँ।"

"सब दुनिया में इन्सान बसते हैं न?"

"जी हाँ।"

"तो तुम अपने को भारतीय क्यों कहते हो? अपने को चीनी, अंग्रेज़, रूसी अथवा पाकिस्तानी कहने में संकोच क्यों करते हो?"

"इसलिए कि वे हमको, मेरा मतलब है कि चीनी, रूसी इत्यादि हमको वैसा नहीं मानते।"

"ठीक। इसलिए हमको भी अपना कुछ नाम रखना पड़ेगा। प्रश्न यह है कि वह नाम क्या हो और क्या न हो?"

"महात्मा गांधी भी हिन्दू-मुसलमानों को पृथक्-पृथक् फिरकों में मानते हैं, तभी तो उनमें मैत्री कराने का यत्न करते रहते हैं।"

"हाँ। मैं उनसे इस विषय में सहमत नहीं हूँ।"

"आप आने वाले निर्वाचनों में पार्लियामेण्ट के लिए खड़े होंगे अथवा नहीं?"

"इस विषय पर मैंने अभी विचार नहीं किया। निर्वाचन लड़ना केवल विचार-प्रसार के लिए ही नहीं हो सकता। इसमें मुख्य देखने की बात तो यह है कि जनता का कितना समर्थन प्राप्त है। अभी मैं यह नहीं जानता कि मेरे विचारों को जनता कितना पसन्द करती है!"

मोतीराम को यह बात तो स्पष्ट हो गई कि मुकुट विहारी माथुर पूर्ण-रूप से कांग्रेसी नहीं हैं। इस पर भी वह यह निश्चय से नहीं जान सका था कि कांग्रेस में आने से वह कोई स्वार्थ सिद्ध कर रहा है अथवा नहीं।

: ७ :

जनवरी मास में समाचार-पत्रों में यह चर्चा आरम्भ हो गई कि भारत को पाकिस्तान का पचपन करोड़ रुपया देना है। असल बात यह थी कि देश-विभाजन के समय भारत ने पाकिस्तान को वचन दिया था कि वह उसको पचहत्तर करोड़ रुपया अपने कोष में से देगा और उसमें से बीस करोड़ रुपया तुरन्त दे दिया गया था। शेष पचपन करोड़ रुपया पाकिस्तान ने माँगा था।

इस बीच में काश्मीर पर पाकिस्तान का आक्रमण हो गया। इस कारण जब पाकिस्तान सरकार ने अपना पचपन करोड़ रुपया माँगा तो भारत सरकार ने स्पष्ट कह दिया कि जब तक काश्मीर से पाकिस्तानी फ़ौजें वापिस नहीं चली जातीं, तब तक रुपया नहीं दिया जायेगा। इस घोषणा पर महात्मा जी ने आमरण व्रत रखने का निश्चय कर लिया। यह बात अब पता लग चुकी है कि महात्मा जी के व्रत के निश्चय से पूर्व भारत के गवर्नर जनरल लॉर्ड मौण्टबेटन उनसे मिले थे। यह अनुमान लगाया जाता है कि गवर्नर-जनरल ने महात्मा जी को इस रुपया न देने की अवस्था में कोई अत्यन्त भयंकर घटना हो जाने की आशंका बताई होगी। तब ही तो महात्मा जी ने भारत सरकार के सर्वथा युक्ति-संगत निर्णय को बदलने का साहस किया होगा।

रुपया देने से न करने वालों का नेतृत्व सरदार पटेल कर रहे थे और यह कहा जाता है कि महात्मा जी ने सरदार साहब को बुलाकर वह डांट-फटकार बताई कि लोह-पुरुष सरदार पिघलकर मोम हो गये।

भारत सरकार का और सरदार का सार्वजनिक रूप में पहले तो यह कहना कि रुपया तब तक नहीं दिया जायेगा, जब तक काश्मीर से पाकिस्तानी सेना बाहर नहीं हो जाती और महात्मा जी के व्रत के पश्चात् रुपया दे देना, भारत सरकार की एक विशेष मानसिक अवस्था का सूचक सिद्ध हुआ।

सदा की भाँति महात्मा जी ने इस बार भी वास्तविक बात से लोगों का ध्यान हटाने के लिए अपने व्रत के कारणों में बहुत-सी अनावश्यक बातों को सम्मिलित कर लिया। इस पर भी जनता यह भली-भाँति समझती थी कि व्रत रुपया दिलवाने के लिए रखा गया था और वह रुपया दिलवा कर ही टूटा।

व्रत टूटने से सर्वसाधारण को सन्तोष तो हुआ, परन्तु इस बात का एक स्वाभाविक परिणाम यह हुआ कि भारत की जनता व्यक्तियों की दासता में एक पग और आगे बढ़ गई।

जिस दिन व्रत तोड़ा गया, उस दिन मोतीराम रामलाल से मिलने गया हुआ था। सुन्दरी भी उसके साथ थी। दोनों ने भोजन रामलाल के यहाँ ही खाया। रामलाल की दुकान मध्याह्न के समय साढ़े बारह बजे से तीन बजे तक बन्द रहती थी। मोतीराम ने भोजनोपरान्त वहाँ ही आराम किया। एक कमरे में आराम करते हुए मोतीराम ने अपने काम की चर्चा चला दी। उसने कहा, "मैंने सोहनसिंह और चौधरी मथुरा-सिंह से मिलकर एक 'नेशनल कन्स्ट्रक्शन कम्पनी' की स्थापना की है। इसका साईन बोर्ड और फ़ॉर्म बनवा लिया है। इस कम्पनी को मैं दिल्ली म्यूनिसिपल कमेटी की ठेकेदारों की सूची में लिखवाना चाहता हूँ। यह रजिस्ट्री फरवरी के मास में हो जायेगी और पश्चात् मई-जून के महीने में काम मिल जायेगा। चौधरी की सहायता से मुझको आशा है कि काम मिल जाया करेगा। एक बार काम मिलने लगे, तो मैं होटल का काम छोड़ दूँगा।"

रामलाल ने उसकी योजना को पसन्द किया और कहा "दादा! होटल का काम सोहनसिंह-जैसों के लिए ही है। तुमको वह छोड़ देना चाहिए। कभी पुलिस वालों ने पकड़ लिया तो जहाँ तुम बदनाम होगे, वहाँ कांग्रेस की भी निन्दा होगी।"

तीन बजे रामलाल और मोतीराम दुकान पर चले आये। इस समय महात्मा गांधी के व्रत तोड़ने का समाचार प्रसारित हो रहा था। समाचार-पत्रों के विशेषांक निकले थे और एक रामलाल ने ले लिया और पढ़ना आरम्भ कर दिया। इसी समय माथुर साहब, फेडरल कोर्ट में एक मुक-द्दमा कर, लौटते हुए, मोतीराम को एक दुकान पर बैठे देख, भीतर आ गये। माथुर ने आते ही पूछा, "लाला मोतीराम! यहाँ कैसे बैठे हैं?"

"आइये-आइये वकील साहब! आपका अपने एक मित्र से परिचय करवा दूँ। यह हैं मेरे दिल्ली में एक गहरे मित्र रामलाल।"

"ओह, स्मरण आ गया है। आपने उस दिन इनका ही ज़िकर किया था क्या? ये ही थे, जो हिन्दू-हिन्दुस्तानी की व्याख्या बताते थे?"

"जी।"

इसके पश्चात् मोतीराम ने माथुर साहब का परिचय करा दिया। रामलाल ने हाथ जोड़ नमस्ते कही, "कुछ पीने के लिए मँगवाऊँ?"

"चाय का समय तो है।"

रामलाल मोतीराम और माथुर साहब को मकान पर ले गया और रानी को चाय बनाने के लिए कह बातचीत करने लगा। रामलाल ने बताया, "मेरा और लाला मोतीराम का प्रथम परिचय तो रेलगाड़ी में महात्मा गांधीजी की जय बुलाते समय हुआ था, परन्तु हम दोनों में भारी मतभेद है।"

"हाँ, यह तो लालाजी ने बताया है; परन्तु मैं समझता हूँ कि लाला जी के विचारों में भी अब अन्तर आ रहा है। ये कांग्रेस सरकार की नीति के तो अब समर्थक नहीं रहे।

"मैं एक बात बताऊँ मोतीराम! यह जो व्रत और व्रत तोड़ना हुआ है, इसका प्रभाव जनता के मन पर बहुत ही बुरा होगा। लोग यह समझने लगे हैं कि महात्माजी राज्य तथा देश से भी बड़े हैं। वे जब चाहें दोनों का कान मरोड़ सकते हैं। यह विचार देश में राष्ट्रीयता के पनपने के लिए अत्यन्त घातक सिद्ध होगा। लोग महात्माजी को कुछ ऐसा समझने लगेंगे, जिनके सामने देश अपनी बुद्धि का भी प्रयोग करना उचित नहीं समझेगा। यह देश को घोर दासता में ले जायेगा और दासों की भाँति देश के बड़े-से-बड़े व्यक्ति भी अपने पर विश्वास खो बैठेंगे।

"आज कोर्ट के बार-रूम में इस पर चर्चा हो रही थी और सबका यह विचार था कि यह व्रत रखना भूल थी। व्रत रखने का अर्थ ही यह होता है कि महात्माजी युक्ति से मन्त्री-मण्डल को समझा नहीं सके और समझाने में असफल होने पर उन्होंने मर जाने की धमकी दी है।

"आज तो महात्मा गांधीजी के नाम के नशे में भले ही कोई कुछ न कहे, परन्तु इतिहास में यह व्रत काले अक्षरों में लिखा जावेगा। यह युक्ति

और समझ-बूझ की विजय का प्रतीक नहीं रहा, प्रत्युत् सब बुद्धिमान यह समझेंगे कि जहाँ युक्ति असफल हुई, वहाँ गांधीजी व्रत रखकर मरने की धमकी देकर सफल हुए हैं।"

इस समय चाय आ गई थी और तीनों पीने लगे थे। मोतीराम ने कहा, "वकील साहब ! मैं हृदय से चाहता हूँ कि महात्माजी को अब राजनीति से पृथक् हो जाना चाहिये। उनके अपने साथी भी, जो उनके साथ कन्धे-से-कन्धा भिड़ाकर स्वतन्त्रता का युद्ध लड़े हैं, वे भी अब उनसे मतभेद रखने लगे हैं। यदि वे राजनीति से पृथक् हो जायेंगे तो जो-कुछ उनकी ख्याति बन चुकी है, वह बनी रहेगी।"

माथुर तो चाय पीकर चला गया, परन्तु मोतीराम एक घण्टा और रहा। वह छः बजे के लगभग होटल में पहुँचा। आधा घण्टा कांग्रेस चौकड़ी में बैठ, अपने होटल अनैक्सी के कार्यालय में चला गया।

महात्माजी के व्रत-भंग के बाद सरकार के कर्मचारी और मन्त्रीगण तथा अन्य महात्माजी के भक्त, जी-जान से यत्न करने लगे कि हिन्दू-मुसलमान परस्पर मैत्री की भावना रखें। स्थान-स्थान पर जलसे किये जाने लगे और हिन्दुओं के मन में यह भावना उत्पन्न की जाने लगी कि मुसलमानों से अच्छा व्यवहार करना चाहिये। मस्जिदें, जो मुसलमानों के चले जाने के पश्चात् खाली हो गई थीं और जिनमें हिन्दू विस्थापित जाकर रहने लगे थे, खाली करवाई जाने लगीं।

इसका परिणाम यह होने लगा कि सरकार और कांग्रेसी-हिन्दू यह समझने लगे कि पिछले झगड़ों में मुख्य दोषी हिन्दू ही थे। मुसलमान तो बेचारे निरापराध मारे गए हैं।

कहीं-कहीं तो मुसलमानों का पाकिस्तान माँगना और पाकिस्तान का काश्मीर पर आक्रमण करना भी युक्ति-संगत माना जाने लगा। यह सब इस कारण था कि हिन्दू और मुसलमानों में सुलह होनी आवश्यक मानी गई। इस सुलह के लिए यह आवश्यक समझा गया कि हिन्दुओं के दिमाग़ से यह बात निकाल दी जाए कि मुसलमान किसी भी प्रकार

से दोषी हैं।

नेताओं ने लेख लिखे। समाचार-पत्रों ने सम्पादकीय लिखे और इतिहास लिखने वालों ने हिन्दुस्तान की सभ्यता में मुसलमानों के भाग पर किताबें लिख डालीं। इस प्रकार भारतवर्ष का वातावरण एक मुसलमान के रहने के अनुकूल बनाने के लिए यत्न किया गया।

इस समय काल ने करवट ली। ३० जनवरी सायंकाल, जब महात्माजी प्रार्थना से उठकर कोठी को जा रहे थे, एक गौडसे नाम के व्यक्ति ने, तीन गोली मारकर उनकी जीवन-लीला समाप्त कर दी।

थोड़ी देर पीछे पण्डित जवाहरलाल और अन्य नेताओं ने ऑल-इण्डिया रेडियो पर से महात्माजी की हत्या पर भाषण दिये। पण्डितजी ने तो कह दिया, "The light has gone out of our lives and there is darkness everywhere." (हमारे भीतर का प्रकाश बुझ गया है और अब चारों ओर अन्धेरा है।)

महात्माजी के निधन का समाचार विद्युत की भाँति देश-भर में फैल गया। दिल्ली के रहने वाले तो महात्माजी के निवास-स्थान बिड़ला हाउस की ओर उतावले हो भाग उठे। कनॉट प्लेस से बिड़ला हाउस का मार्ग एक विशाल जन समूह की बहती हुई नदी सा बन गया। लाखों की संख्या में लोग बिड़ला हाउस के बाहर पहुँच गए। एक न टूटने वाली लाईन, नर-नारी की, महात्माजी के दर्शनों के लिए उनके शव के समीप से गुज़रने के लिए बन गई।

: ८ :

रामलाल ने जब यह समाचार सुना तो उसने तुरन्त दुकान बन्द करने की आज्ञा दे दी। दिये बुझा दिये गए। माल समेट, दुकान बन्द कर, वह भी बिड़ला हाउस की ओर चल पड़ा। रामलाल का विचार था कि किसी पंजाबी विस्थापित ने महात्माजी के वक्तव्यों से और कामों से क्रोध में पागल होकर यह हत्या कर दी है, परन्तु जब वह

बिड़ला हाउस के बाहर जा, भीड़ में खड़ा हो गया, तो उसने सुना कि हत्यारा एक मरहटा है। वह इस समाचार से चकित रह गया। उसको यह स्मरण नहीं था कि कभी महात्माजी ने मरहठों के विरुद्ध भी कुछ कहा है।

वह उस लाईन में जा खड़ा हुआ, जो महात्माजी के अन्तिम दर्शनों के लिए कोठी में जाने के लिए बनी थी। रात के एक बजे वह दर्शन करने में सफल हो सका। वह वहाँ से यह समझता हुआ लौटा कि उसने कोई कर्तव्य पालन किया है।

रामलाल के मन पर इस घटना का इतना प्रभाव हुआ कि उसको बिलकुल नींद नहीं आई। प्रातः चार बजे तक तो वह बिस्तर पर लेटे-लेटे करवटें लेता रहा। जब लेटे-लेटे ऊब गया तो वह बिस्तर से निकल मकान की छत पर चला गया। वहाँ ठण्डी हवा में उसका मस्तिष्क कार्य करने लगा और उस काल का सबसे जटिल प्रश्न उसके मन में उठ बैठा कि क्या हत्यारे ने यह ठीक किया है?

महात्माजी की आवाज़, जो देश के लोग १६१६ से सुनने के अभ्यस्त हो चुके थे, अब बन्द कर दी गई थी। क्यों कर दी गई थी? एक व्यक्ति ने यह बलपूर्वक किया था। वह इसमें उस व्यक्ति के उद्देश्य को समझ नहीं सका था।

कदाचित् महात्माजी का दिन के पश्चात् दिन प्रार्थना में मुसलमानों पर हो रहे अत्याचार के विषय में कहना, उस आदमी को पसन्द नहीं था; अथवा कदाचित् उन दिनों कांग्रेसियों का मुसलमानों के कार्यों को न्यायोचित बताना उस व्यक्ति को अरुचिकर प्रतीत हुआ था। कदाचित् वह महात्माजी के भावी कार्यक्रम से भयभीत हो यह कृत्य कर बैठा था। इस सब-कुछ के होने पर भी रामलाल को इस हत्या में तथ्य समझ नहीं आ रहा था।

यह बात वह जानता था कि हत्या से महात्मा के कथन और कार्य मिटने के स्थान स्वर्ण अक्षरों में लिखे जायेंगे। महात्मा गांधी की

अयुक्तिसंगत बातें भी जनता के लिए गम्भीर अर्थों वाली बन जायेंगी और महात्माजी के जीवित रहने पर क्या-क्या चमत्कार होने वाले थे, उनके चित्र स्वर्ण-रेखाओं में खींचे जाने लगेंगे।

रामलाल समझता था कि महात्माजी के विचारों के विरोध के लिए यह हत्या तो व्यर्थ सिद्ध हुई है। वह, विचार-भेद का सुझाव हत्या नहीं मानता था। तो इस व्यक्ति ने यह कार्य क्यों किया, वह समझ नहीं सका।

इस घटना का एक और भी पहलू था। कुछ समय से महात्माजी अपनी आवश्यकता और महत्ता इतनी अधिक समझने लगे थे कि वे लोगों को अपनी बात युक्ति से समझाने के स्थान मरने की धमकी देकर अपनी बात मनवाने लग गये थे। एक-आध बार तो उन्होंने एक ऐसी अयुक्तिसंगत बात पर भी व्रत रख लिया था कि पीछे उनको मानना पड़ा था कि उनका व्रत उचित नहीं था।

हिन्दुओं में प्रत्येक व्यक्ति को विचार-स्वतन्त्रता प्राप्त है और दूसरों पर अपने विचार थोपने का अधिकार नहीं। तो महात्माजी का यह कहकर व्रत रखना कि यदि उनकी अमुक बात न मानी गई तो वे भूखे रहकर मर जायेंगे, एक विशेष समस्या बन गई थी क्या ?

रामलाल को इस सम्बन्ध में लाहौर के समीप एक सुथरे साधुओं के मठ की बात स्मरण हो आई। लाहौर के किले की दीवार के साथ, मस्ती दरवाजे के बाहर एक मन्दिर था। वहाँ इन साधुओं का गुरु रहता था। ये साधु सुथरे कहाते थे और पंजाब में घूम-घूमकर सुथरे शाह की धूम मचाया करते थे। ये साधु प्रायः भिक्षा करते और घूम-घूमकर पंजाब के रहने वालों को सुथरे शाह की वाणी सुनाते। पंजाब के हिन्दुओं पर इनका अच्छा-खासा रोब था। जिससे जो-कुछ ये माँगते, पा जाते थे। कभी कोई न कर देता तो ये डटकर उसके मकान के सामने बैठ जाते और अनशन कर देते। अपने इस प्रकार के सत्याग्रह को उग्र रूप देने के लिए कभी-कभी ये अपने सब कपड़ों को उतार, दान न देने

वाले के घर के सामने ढेर कर आग लगा देते और वे तब तक वहाँ से नहीं टलते थे, जब तक भिक्षा न पा जाते। अनशन के अधिक दूर तक जाने से पूर्व ही अन्य हिन्दू लोग, बीच-बचाव कर, चन्दा इकट्ठा कर उस सुथरे साधु की माँग पूरी कर देते थे।

महात्माजी का अनशन रामलाल को इसी ढंग की सुथरेशाही प्रतीत हुई। वह विचार करता था कि एक सुथरे के इस सत्याग्रह और महात्माजी के अनशन में कुछ अन्तर है क्या? प्रत्यक्ष रूप में तो कोई भेद प्रतीत नहीं होता। यह कहा जा सकता है कि महात्माजी के अनशन सार्वजनिक कार्यों के लिए होते थे और एक सुथरे का अनशन दो पैसे की चरस पीने के लिए। इस पर भी सैद्धान्तिक भेद कुछ नहीं था। अपने मन में तो सुथरा भी यही समझता होगा कि वह हिन्दू-समाज का एक अत्यावश्यक अंग है और उसके लिए चरस पीने को पैसा देना, हिन्दू-समाज का कर्त्तव्य है। यह ठीक है कि उसके मन की यह धारणा युक्ति से सिद्ध नहीं हो सकती, इस पर भी वे लोग, जो उसकी जान बचाने चले आते थे, कुछ तो मन में विचार करते ही होंगे। मुख्य बात है धमकी देने की। यह दोनों में एक समान थी।

इतना विचार कर रामलाल के मन में महात्मा जी की हत्या का एक नया रूप प्रकट हुआ। सुथरे के अनशन में साधारण लोग चन्दा कर सुथरे की माँग पूरी कर देते थे। महात्मा जी के व्रत के समय भी सरकार ने महात्मा जी की माँग पूरी कर दी थी; परन्तु माँग स्वीकार करने वालों ने यह अपने पास से चन्दा एकत्रित कर नहीं की, प्रत्युत् उन्होंने राज्य-कोष से ऐसा किया था।

भारत के मन्त्रीमण्डल को जनता का यह धन देने का अधिकार था। उन्होंने दे दिया; परन्तु यहाँ बात में कुछ अन्तर आ गया है। यदि सुथरे की माँग यह होती कि दाता अपने घर में अपने शत्रु को घुसने दे, तो निश्चय ही कोई भी हिन्दू सुथरे की माँग से सहानुभूति न रखता और न ही चन्दा एकत्रित कर उसके जीवन को बचाने का यत्न करता। महात्मा जी

की माँग लगभग ऐसी ही थी। पाकिस्तान अपनी फ़ौजों को लेकर काश्मीर में घुस आया था और घुसते समय उसने अनेकों स्त्रियों का हरण और उनके साथ बलात्कार किया था। साथ ही करोड़ों रुपये की सम्पत्ति लूटी थी। पचपन करोड़ रुपया उन आक्रमणकारी सेनाओं को पुष्ट करने के लिए जा रहा था। महात्मा जी के व्रत का अर्थ उस सुथरे की माँग के समान हो गया था, जो दाता से यह कहता कि उस डाकू को तुम पाँच-सौ रुपया खाने-पीने के लिए दे दो, जो तुम्हारे मकान में बलपूर्वक घुस आया है और जिसने तुम्हारी बहू-बेटियों को अपमानित किया है। ऐसे काम के लिए क्या भारत के मन्त्रीमण्डल को, महात्मा जी का हठ पूर्ण करने के लिए, रुपया देने का अधिकार था? कोई सही दिमाग़ का आदमी मन्त्रीमण्डल को ऐसे काम के लिए रुपया देने के अधिकार नहीं दे सकता।

यह ठीक है कि इस रुपये के पाने के पश्चात् भी पाकिस्तान काश्मीर में विजय प्राप्त न कर सका। इसमें महात्मा जी का कुछ भी हाथ नहीं। इस रुपये के देने से निस्सन्देह पाकिस्तान अपनी सेना पर और अधिक रुपया खर्च कर सका होगा। अर्थात् महात्मा जी ने काश्मीर में पाकिस्तान द्वारा आक्रमण की बात जानते हुए सहायता दी थी। यह देश-द्रोह था। महात्मा जी ने इसके करने की माँग की और भारत के मन्त्रीमण्डल ने यह माँग स्वीकार कर ली। यह रुपये के देने की सामर्थ्य का प्रश्न नहीं था, प्रत्युत् यह उस प्रयोजन की बात है, जिसके लिए दिया हुआ रुपया प्रयोग हुआ था। इतना विचार कर रामलाल काँप उठा। तो क्या, वह विचारता था, महात्मा जी की हत्या, वैसे सुथरे को मरने देने के समान थी? उसका मस्तिष्क कहता था कि नहीं। समानता तो तब होती यदि भारत सरकार रुपया देने से इन्कार कर देती। महात्मा जी जीते अथवा नहीं जीते। हत्या की बात तो दूसरी है।

रामलाल को यह तो समझ आ गया था कि महात्मा जी की हत्या से न तो उनके प्रचार का विरोध हो सका है, न ही उनकी नीति की

हीनता सिद्ध हुई है। जहाँ तक पचपन करोड़ रुपये का प्रश्न था, महात्मा-जी की माँग अयुक्तिसंगत होते हुए भी हत्या में कारण नहीं हो सकती थी। उसके लिए, यदि कोई दोषी है तो वह भारत सरकार है। जहाँ यह आवश्यक था कि महात्मा जी व्रत रखने से पूर्व भारत सरकार से परामर्श करते, वहाँ यह भी आवश्यक था कि भारत सरकार महात्मा जी के साथ परामर्श कर उनको समझाने का यत्न करती। होना यह चाहिए था कि मन्त्रीमण्डल की बैठक महात्मा जी के निवास-स्थान पर होती और मन्त्रीमण्डल के सब सदस्यों को अवसर दिया जाता कि वे अपना दृष्टिकोण महात्मा जी को समझा सकते। जानकार क्षेत्रों में यह विख्यात है कि व्रत के आरम्भ होने के पश्चात् मंत्रीमण्डल की बैठक में सरदार पटेल ने यह प्रस्ताव रखते हुए कि पाकिस्तान को रुपया दिया जाये, रो रहे थे। यदि यह सत्य है, रामलाल का यह मत था, तो यह सिद्ध हो गया कि महात्मा जी की माँग को ठीक न मानते हुए भी, उनकी धमकी के कारण ही रुपया देने का प्रस्ताव पास किया गया था।

ज्यों-ज्यों रामलाल इस घटना के विषय में विचार करता था, वह समझता जाता था कि महात्मा जी की हत्या एक जटिल समस्या है। हत्या भारत के कानून से वर्जित है। कानून का पेट तो हत्यारे को फाँसी देने से भर जायेगा, परन्तु इस हत्या के लिए वातावरण उत्पन्न करने वालों का क्या हुआ और होगा?

प्रातः की शीतल हवा में उसका मस्तिष्क तेज़ी से काम कर रहा था। वह यह समझ पाया था कि इस हत्या में हत्यारा तो दोषी है ही, परन्तु भारत सरकार कम दोषी नहीं और महात्मा गांधी स्वयं सर्वथा दोषमुक्त नहीं माने जा सकते।

हत्यारे को प्राण दण्ड मिलेगा, परन्तु इस हत्या में अन्य दोषियों का क्या होगा? इस सब मनन के पश्चात् वह अपने मन में शान्ति अनुभव करने लगा था। किसी ने अयुक्तिसंगत व्यवहार किया, दूसरे ने उस व्यवहार के कारण देश का धन अनधिकारी को दे दिया और किसी

अव्यवस्थित मन रखने वाले ने अयुक्तिसंगत व्यवहार रखने वाले की हत्या कर दी। अब कानून इस हत्यारे को फाँसी के तख्ते पर लटका देगा।

इस प्रकार विचार करने पर वह स्नानादि से छुट्टी पा, प्रातःकाल का नाश्ता कर जाकर सो रहा। उसके मन में महात्मा जी की अर्थी का जुलूस देखने के लिए वह उत्साह नहीं रहा, जो रात के समय उनके अन्तिम दर्शन के समय वह पाता था।

वह विचार करता था कि एक अयुक्ति-संगत व्यवहार का चक्र चला और उसमें कई पिस गये।

तीसरा परिच्छेद

: १ :

महात्मा गांधी की हत्या के लगभग एक सप्ताह पश्चात्, एक दिन प्रातःकाल मोतीराम के घर के चारों ओर पुलिस खड़ी थी। मुहल्ले के लोगों की नींद खुली तो वे पुलिस का इतना जमघट देख, अपने-अपने घरों में छुपकर देखने लगे कि क्या होता है।

मोतीराम दो बजे के लगभग होटल से आया था और देरी से सोने के कारण अभी तक सोकर नहीं उठा था। सुन्दरी, जो बहुत प्रातःकाल जाग जाया करती थी, पूजा से उठी ही थी कि नीचे दरवाज़ा खटखटाने का शब्द हुआ। उसने खिड़की में से झाँककर देखा तो बीसियों पुलिस वालों को मकान के चारों ओर खड़ा देख, वह १९४२ में अपने पति के पकड़े जाने का दृश्य स्मरण करने लगी। वह समझ गई कि आज फिर उसके पति को जेल में ले जाने आये हैं।

सन् १९४२ में तो उनका होटल चलता था। उसके पास दो बच्चे थे। एक लड़की और एक लड़का। लड़का पन्द्रह वर्ष की आयु का था और होटल का काम देख सकता था। इस कारण उस समय कुछ अधिक चिन्ता की बात प्रतीत नहीं हुई थी।

अब वह परदेश में थी। उसका पति होटल का मालिक नहीं, प्रत्युत् वेतनधारी नौकर था। लड़की तो सन् १९४२ में ही, पिता की अनुपस्थिति में मोतीझारा से बीमार हो मर गई थी और लड़का सन् १९४७ में छुरे का शिकार हो चुका था। अब वह अपने को निराश्रय पाती थी।

वह खिड़की में से झाँक, पुलिस को देख, मूर्तिवत् खड़ी रह गई। नीचे से पुलिस अधिकारी ने आवाज़ दी, "माई! दरवाज़ा खोलो।"

वह पीछे होकर विचार करने लगी कि क्या करे। उसको समझ आया कि मोतीराम को जगा देना चाहिये। वह उसके पास गई और उसको जगाकर बोली, "नीचे पुलिस आई है।"

"क्यों?" मोतीराम ने पूछा।

"मैं क्या जानूँ?"

मोतीराम उठा, कपड़े पहने और नीचे उतर आया। उसने दरवाज़ा खोला तो पुलिस अधिकारी ने पूछा, "क्या नाम है?"

"मोतीराम।"

"पीछे कहाँ से आये हो?"

"पेशावर से।"

"तो चलिये साहब! आपका 'प्रिवेन्टिव डिटेन्शन ऐक्ट' की धारा तीन के अधीन वारन्ट है।"

"क्यों?"

"यह मुझको मालूम नहीं। इसकी सूचना आपको यथासमय मिल जायेगी।"

"तो?"

"तो आप ज़ेर हिरासत हैं।"

मोतीराम ने अपना बिस्तर बँधवाया और उठाकर चल दिया। जाने से पूर्व उसने सुन्दरी से कहा, "सोहनसिंह से मिल लेना। उससे कहना कि चौधरी से बात कर ले।"

पुलिस मोतीराम को ले गई और सुन्दरी वहीं मकान की ड्योढ़ी में जड़वत खड़ी रह गई। पड़ोसी दूर खड़े सहानुभूतिपूर्ण दृष्टि से उसकी ओर देखते रहे। सुन्दरी का मस्तिष्क काम नहीं कर रहा था। वह निश्चय नहीं कर सकी थी कि क्या करे और कितनी ही देर तक ड्योढ़ी में खड़ी रही। इस समय एक पड़ोसी उसके पास आया और उससे पूछने लगा,

"माताजी ! क्यों ले गए हैं लालाजी को ?"

"नहीं जानती बेटा !"

"तो किसी वकील से मिलकर बात करो न ।"

इस पर उसको स्मरण हो आया कि सोहनसिंह अथवा रामलाल से मिलना चाहिये । सोहनसिंह समीप था । इस कारण वह उसके होटल में जा पहुँची । सोहनसिंह को नींद से जगाया गया और उसको मोतीराम के पकड़े जाने की बात बताई गई ।

सोहनसिंह ने कहा, "घर जाकर आराम से बैठो । दादा को छुड़ाना सहज बात नहीं । इसमें समय लगेगा । हम अपनी ओर से कोई कसर उठा नहीं रखेंगे ।"

सुन्दरी इस आश्वासन से घर लौट आई । घर पर उसका चित्त नहीं लगा और वह घर से निकल रामलाल की दुकान पर जा पहुँची ।

उस समय रामलाल दुकान पर था । सुन्दरी ने अपनी बात रानी को बताई तो रानी ने नौकर को भेज रामलाल को बुला भेजा और दादा के पकड़े जाने की बात बता दी । रामलाल ने भाभी को साथ लिया और कांग्रेस के प्रधान के पास जा पहुँचा । रामलाल ने उनको बताया, "लाला मोतीराम पेशावर का रहने वाला है । वह लाल कुर्ता फ़ौज का सालार था और बादशाह खान के साथ काम कर चुका है । वह महात्माजी का अनन्य भक्त था और पेशावर में कांग्रेस कमेटी का सदस्य भी था । वह पुलिस की भूल से पकड़ लिया गया है ।"

"हाँ, मुझको याद है । वह मेरे पास कई बार आ चुका है । महात्मा गांधीजी की हत्या के सम्बन्ध में पकड़-धकड़ मन्त्री कांग्रेस कमेटी की राय से हो रही है । मैं आज पता करूँगा कि वह क्यों पकड़ा गया है । कल आकर मिलो ।"

रामलाल को इतने से सन्तोष नहीं हुआ । वह उसी सायंकाल भाभी को लेकर मुकुट विहारी माथुर के घर जा पहुँचा । माथुर ने भी वही बात बताई, जो कांग्रेस के प्रधान ने बताई थी । उसका कहना था कि दिल्ली

कांग्रेस कमेटी का सेक्रेटरी तो मुहल्ला कांग्रेस कमेटियों की रिपोर्टों पर कार्यवाही करता है। इससे तो यही कहा जा सकता है कि अवश्य फैज़ बाज़ार की कांग्रेस कमेटी के सेक्रेटरी ने रिपोर्ट की होगी। माथुर ने चौधरी मथुरासिंह से बात कर पता करने का वचन दिया। रामलाल को अगले दिन मिलने को कह, माथुर ने उनको विदा किया और वह स्वयं सोहन-सिंह के होटल में जा पहुँचा।

वहाँ चौधरी चाय पीता हुआ सोहनसिंह से मीठी-मीठी बातें कर रहा था। माथुर ने पहुँचते ही पूछा, "बहुत हँसी हो रही है? क्या बात हो गई है आज?"

"आज दादा मोतीराम 'प्रिवेन्टिव डिटेन्शन ऐक्ट' के अधीन पकड़ लिया गया है।"

"तो यह हँसने की बात है क्या?"

सोहनसिंह ने कहा, "कुछ दिनों से मोतीराम कांग्रेस का विरोधी हो रहा था। इस कारण उसको सीधे मार्ग पर लाने के लिए पकड़वाने का नाटक खेला गया है। दो-चार दिन में डिप्टी कमिश्नर को समझाकर कि कहीं भूल हो गई है, हम उसको छुड़ा लायेंगे।"

माथुर को यह मज़ाक पसन्द नहीं आया, परन्तु बिना कुछ भी कहे वह वहाँ से चला आया। रात को रामलाल फिर उससे मिला और माथुर ने बता दिया कि मोतीराम सोहनसिंह के कहने पर पकड़ा गया है।

"तो क्या किया जाये?"

"मेरी राय है कि आप मोतीराम की बीवी को लेकर डिप्टी कमिश्नर बहादुर से मिल लें। वह एक भला आदमी है और यदि आप उसको बात समझा सकेंगे तो मोतीराम छूट जायेगा।"

अगले दिन रामलाल सुन्दरी को लेकर डिप्टी कमिश्नर के पी० ए० से जा मिला। वह दिल्ली का रहने वाला था। रामलाल ने अपना परिचय दिया, "मैं कनॉट प्लेस में कपड़े की दुकान करता हूँ।"

"बताइये मैं आपके लिए क्या कर सकता हूँ?"

"कुछ मिनट के लिए डिप्टी कमिश्नर बहादुर से मुलाकात करवा दीजिये।"

"किस विषय में ?"

"मेरे एक मित्र ग़लती से राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ संस्था से सम्बन्ध रखने के सन्देह में पकड़ लिये गए हैं।"

"इस विषय में साहब कुछ नहीं कर सकते।"

"इस पर भी यदि आप भेंट करवा दें तो आपका बहुत मश्कूर हूँगा।"

"बहुत कठिन समस्या है।"

"यह तो मैं जानता हूँ। इस पर भी मेरा निवेदन है कि हम व्यापारी आदमी हैं। यह हमारा काम है कि हम किसी भी कठिनाई का सुझाव ढूँढें।"

पी० ए० ने कुछ विचारकर कहा, "यदि आप पचास रुपये का प्रबन्ध कर सकें तो मैं मुलाकात कराने का यत्न कर सकता हूँ।"

रामलाल ने जेब में से दस-दस के पाँच नोट निकालकर पी० ए० साहब की मेज़ पर पड़े हुए राईटिंग पैड के नीचे रख दिये और कहा, "कभी दुकान पर तशरीफ़ लाइये। आपकी ख़िदमत कर मुझको बहुत खुशी होगी।"

अगले दिन ठीक दिन के ग्यारह बजे साहब की कोठी पर भेंट का प्रबन्ध हो गया। रामलाल ने सुन्दरी को साथ लिया और डिप्टी कमिश्नर की कोठी पर जा पहुँचा। इस अवसर पर रामलाल ने फर्स्ट क्लास सूट पहना हुआ था।

एक भद्र पुरुष को, जो चार सौ रुपये दाम का सूट पहने था, सामने देख, डिप्टी कमिश्नर ने हाथ मिलाया और अपने सामने बिठाकर पूछा, "क्या बात है ?"

"यह मेरे मित्र लाला मोतीराम की पत्नी हैं। वह भूल से राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का सदस्य समझ पकड़ लिया गया है। वास्तव में उसका

दूर का भी सम्बन्ध उस संस्था से नहीं है।"

"मिस्टर रामलाल !" डिप्टी कमिश्नर ने कहा, "मुझको निहायत अफ़सोस है कि मैं इसमें कुछ भी नहीं कर सकता।"

"पर आपकी आज्ञा ही से तो वारण्ट निकले हैं ?"

"परन्तु ऊपर से आज्ञा आई है कि इस विषय में कांग्रेस कमेटियों की आज्ञा मानूँ।"

"मुझको किसी अन्य स्थान से भी यही पता चला है, परन्तु यह जानकर कि आप इंग्लैण्ड रिटर्न्ड आई० सी० एस० हैं और आप जानते हैं कि एक डेमोक्रैटिक ढाँचे वाले देश में पोलिटिकल पार्टियों को शासन में और विशेष रूप में न्याय-कार्य में हस्तक्षेप करने की स्वीकृति देने से अन्याय हो जाने की सम्भावना अधिक है। मेरा निवेदन है कि मोतीराम के केस की खुफ़िया पुलिस द्वारा जाँच करवाई जाये और यदि वह बेकसूर मालूम हो तो आप उसको पकड़ने की राय देने वालों को लिख सकते हैं कि अन्याय हो गया है।

"देखिए हुजूर ! किसी ने ज़ाती दुश्मनी के कारण एक ग़लत रिपोर्ट कर दी है और आपसे एक ग़लत आज्ञा दिलवा दी है।"

"आपके पास क्या सबूत है कि किसी ने रिपोर्ट की है और क्यों ग़लत रिपोर्ट की है ?"

"कांग्रेस कमेटी के प्रधान ने मुझको बताया है कि एक सोहनसिंह, मालिक मीना महल होटल ने मोतीराम के खिलाफ़ रिपोर्ट की है।

"सोहनसिंह पेशावर में मोतीराम का चालीस रुपये का नौकर था। उसकी बीवी एक लड़कियों के स्कूल में पाँच रुपया महीना पर चपरासी का काम करती थी। मोतीराम ने इनको पिछले वर्ष जून मास में बीस हज़ार रुपया देकर यहाँ भेजा था, जिससे वह उसके कारोबार के लिए कोई स्थान ले सके। सोहनसिंह ने उस बीस हज़ार से नम्बर दस दरियागंज में एक मकान लेकर अपने नाम करा लिया और मोतीराम जब यहाँ आया तो उसको अँगूठा दिखा दिया।

"अब सोहनसिंह ने एक होटल मीना महल के नाम से खोला है। मोतीराम ने अपने बीस हज़ार का भेद लेने के लिए उसके यहाँ नौकरी कर ली। वह इस रुपये के विषय में, मकान के विषय में और सोहनसिंह की अन्य बेईमानियों के विषय में सबूत इकट्ठे कर रहा था। बहुत कुछ सबूत मिल गये हैं। सोहनसिंह को इसका पता मिला और उसने मोतीराम को दूर करने के लिए उसकी शिकायत कर दी है।

"आप जाँच करवा लीजिये। इसके साथ ही जानने योग्य बात यह है कि मोतीराम पेशावर में कांग्रेस कमेटी का मेम्बर था। वह लाल कुर्ती फ़ौज में सालार था। सन् १९४२ में वह नमक आन्दोलन में कैद हुआ था। पेशावर का बच्चा-बच्चा उसको देशभक्त कांग्रेसी के रूप में जानता था। आप महात्मा गांधीजी के प्राईवेट सेक्रेटरी से मोतीराम का परिचय ले सकते हैं। ये वहाँ जाया करते थे।"

डिप्टी कमिश्नर कुछ देर तक सोचता रहा। पश्चात् बोला, "मैं जाँच करूँगा। आप तीन दिन पश्चात् मुझसे मिलियेगा।"

निश्चित दिन रामलाल और सुन्दरी फिर डिप्टी कमिश्नर के बँगले पर जा पहुँचे। उनको देख डिप्टी कमिश्नर के पी० ए० ने कहा, "मोतीराम की पत्नी एक प्रार्थना इस प्रकार की लिख दे कि उसका पति राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का सदस्य नहीं और वह कांग्रेस का कार्यकर्ता है। साथ ही पेशावर का उसका परिचय भी दे दिया जाये।"

"तो क्या हम साहब से नहीं मिल सकते?"

"मैं उनकी आज्ञा से ही आपसे यह कह रहा हूँ। इसका अर्थ यह है कि मोतीराम छूट जायेगा।"

रामलाल ने एक प्रार्थना-पत्र लिखवा, सुन्दरी से हस्ताक्षर करवा कर डिप्टी कमिश्नर के इजलास में पहुँचा दिया। उसी समय डिप्टी कमिश्नर ने उस प्रार्थना-पत्र पर मोतीराम को छोड़ने की आज्ञा लिख दी।

डिप्टी कमिश्नर ने जाँच के लिए मोतीराम के काग़ज़ात मँगवाये थे और खुफिया पुलिस को जाँच करने के लिए आज्ञा दी थी। खुफिया

पुलिस से सोहनसिंह को पता चल गया कि डिप्टी कमिश्नर इस मामले में रुचि ले रहा है। इससे मोतीराम को छूटता देख, वह जेल के दारोग़ा से मिलकर, मोतीराम से एक प्रार्थना-पत्र लिखवा लाया कि वह राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की शाखा में भूल से चला गया था। वास्तव में न तो वह स्वयंसेवक है, न ही उसके विचार उस संस्था के सदस्यों से मिलते हैं।

सोहनसिंह ने मोतीराम को कहा था कि इस प्रकार की प्रार्थना करने से वह छूट सकेगा।

जब रामलाल डिप्टी कमिश्नर की आज्ञा लेकर जेल पर पहुँचा तो जेल के दारोग़ा ने कह दिया कि अब सायंकाल के छः बज गये हैं। इस कारण इस आज्ञा पर अमल कल दस बजे ही हो सकेगा। विवश राम-लाल और सुन्दरी अगले दिन दस बजे जेल के बाहर उपस्थित होने का विचार कर लौट आये। जेलर ने सोहनसिंह को टेलीफोन किया तो वह मोतीराम को लेने के लिए जेल के फाटक पर आ गया। मोतीराम अपने स्वागत के लिए सोहनसिंह को जेल के फाटक पर खड़ा देख बहुत प्रसन्न हुआ और वह सोहनसिंह के कहने को कि उसने ही भाग-दौड़ कर उसको छुड़ाया है, सत्य मान बैठा।

: २ :

एक ही कार्य की प्रतिक्रिया भिन्न-भिन्न व्यक्तियों पर भिन्न-भिन्न होती है। इस भिन्नता में कारण उस व्यक्ति के पूर्व-संस्कार रहते हैं। कांग्रेस के नेताओं के कार्यों की श्रेष्ठता पर अन्धविश्वास रखने वाले मोतीराम पर इस जेल-यात्रा का एक विशेष ही प्रभाव हुआ। वह महात्माजी की हत्या को एक घोर पाप तो पहले ही समझता था। अब वह इस हत्या में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के हाथ के होने पर विश्वास करने लगा था। अतएव जो कोई भी, चाहे कितनी दूर से भी क्यों न हो, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ से सम्बन्ध रखने वाला था, मोतीराम की घृणा का पात्र

हो गया। साथ ही उसको अब पुनः महात्माजी की प्रत्येक बात पर अगाध श्रद्धा हो गई। उसको जब भी कोई कांग्रेस-विरोधी व्यक्ति मिलता, वह उसको राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का समझने लगता। ऐसी मनोवृत्ति लेकर वह जेल से बाहर आया। सोहनसिंह चाँदनी चौक से एक पुष्प-माला ले गया था। उसने उसको पहिनाई और टैक्सी में बिठाकर होटल पर ले आया। मार्ग में उसने बताया, "दादा! यह रामलाल ने अपनी दुकान के विषय में रिपोर्ट का बदला लिया है। मैंने यह मालूम किया है कि उसने ही तुमको पकड़वाया है।"

"परन्तु आजकल तो वह मेरे साथ बहुत ही मित्रता का व्यवहार रखता था।"

"यह सब दिखावा था। खैर छोड़ो इस बात को। मेरा विचार है कि तुमको उससे किसी प्रकार का सम्पर्क नहीं रखना चाहिये।"

मोतीराम के मन में प्रकाश होता प्रतीत हुआ। वास्तव में वह समझ नहीं सका था कि वह क्यों पकड़ा गया है। जेल में उसको राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ वालों के साथ रखा गया था। वहाँ उनकी बातें सुनकर वह अनुभव करता था कि उसमें और उनमें कुछ भी विचार-सामान्यता नहीं है। इससे उसको अपना, उनके साथ पकड़ा जाना विस्मयजनक प्रतीत हुआ था।

होटल से वह घर पहुँचा। घर को ताला लगा हुआ था। वहाँ से वह रामलाल के घर गया। वहाँ वह रात के आठ बजे पहुँचा। रामलाल दुकान बन्द कर ऊपर मकान पर जा रहा था। मोतीराम उसके सामने जा खड़ा हुआ तो रामलाल प्रसन्नता में आपे से बाहर हो उससे गले मिलने के लिए लपका; परन्तु मोतीराम ने इसमें कुछ उत्साह नहीं दिखाया। रामलाल ने कहा, "दादा! जेलर ने तो कहा था कि तुम कल दस बजे छोड़े जाओगे।"

"हूँ। पर देखो, मैं तो अभी छूट आया हूँ।"

"अच्छा चलो ऊपर। भाभी आजकल यहाँ ही हैं।"

"मेरी अनुपस्थिति में गुलछर्रे उड़ा रही है न ?"

"अरे दादा ! नहीं । बेचारी रो-रोकर आँखें खराब कर रही है ।"

मोतीराम मकान पर गया तो सुन्दरी ने उसके चरण-स्पर्श किये और प्रसन्नता से फूलते हुए कहा, "तो आप छूट आये हैं ? हमको तो बताया गया था कि आप कल दस बजे छोड़े जायेंगे ।"

"अब बक-बक बन्द करो और मेरे साथ चलो ।"

"क्या हुआ है आपको ? ज़रा बैठकर आराम तो करो ।"

"नहीं सीधे घर चलो । कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारे लिए यही घर रह जाये और वहाँ जा भी न सको ।"

सुन्दरी बिलकुल नहीं समझी कि उसका पति कह क्या रहा है । वह कुछ क्षण तक तो मोतीराम का मुख देखती रही और पश्चात् बोली, "तो चलो । मैं समझती हूँ कि यहाँ के जेल का खाना-पीना अनुकूल नहीं बैठा ।"

मोतीराम पिछले पाँव लौट गया । सुन्दरी उसके पीछे-पीछे मकान से उतर गई । मोतीराम ने टांगा किया और सुन्दरी को लेकर अपने मकान पर जा पहुँचा । होटल से अपने और सुन्दरी के लिए खाना ले आया और कहने लगा, "अच्छा किया है कि तुम आ गई हो । अन्यथा काम बिगड़ चला था ।"

"पर क्यों ? क्या हुआ है ?"

"रामलाल ने मेरे विरुद्ध रिपोर्ट की थी कि मैं राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का सदस्य हूँ । मैं ऐसे झूठे आदमी के साथ कोई सम्पर्क रखना नहीं चाहता ।"

"यह आपको किसने बताया है ?"

"सबने बताया है । चौधरी मथुरासिंह मिलने गया था । फिर सोहन-सिंह और जोशी भी गये थे । सबने यही बताया है कि रामलाल ने मेरे खिलाफ़ मुखबरी की है ।"

"सब झूठ बोलते हैं । मैं और रामलाल डिप्टी कमिश्नर से मिलने

गये थे और वहाँ से यही पता चला है कि कांग्रेस के मन्त्री ने तुम्हारी शिकायत की है। रामलाल की किसी कांग्रेसी से मित्रता नहीं।"

"इस पर भी शिकायत तो उसने ही की है। मुझको इस बात का विश्वास हो गया है। मैंने तो उससे दुकान-सम्बन्धी रिपोर्ट के लिए क्षमा याचना भी कर ली थी। इस पर भी साँप की भाँति उसने डंक मारने से संकोच नहीं किया।"

"मैं कहती हूँ कि वे लोग, जो आपके शत्रु हैं, आपको अपने मित्रों से लड़ाने का यत्न कर रहे हैं। जब आप पकड़े गये थे तो मैं सोहनसिंह के पास गई थी और उसने कह दिया था कि आपको छुड़ाना सहज काम नहीं।"

"तो ठीक तो कहा था।"

"परन्तु माथुर साहब ने बताया था कि वह स्वयं ही तो शिकायत करने वाला है।"

"माथुर बाबू को क्या मालूम हो सकता है ? सोहनसिंह स्वयं जेल में जाकर मुझको छुड़ाने का यत्न करता रहा है।"

"यह सब झूठ है जी ! रामलाल और मैं भाग-दौड़ करते रहे हैं। हम ही तो डिप्टी कमिश्नर से यह आज्ञा लेकर कि आपको छोड़ दिया जाये, जेल में गए थे और जेलर ने आज्ञा लेकर कहा था कि अब छः बज चुके हैं। आपको कल छोड़ दिया जायेगा।"

"और मेरा अभी छूटकर आ जाना इस बात का प्रमाण है कि तुम सब-कुछ झूठ कह रही हो।"

सुन्दरी समझ गई कि मोतीराम के कान किसी ने बहुत अच्छी तरह से भर दिये हैं। यह समझ कि समय ही उसके विचारों को ठीक कर सकता है, वह चुपकर गई।

मोतीराम अगले दिन अपने काम पर हाज़िर हो गया। वहाँ सोहनसिंह से उसने सुन्दरी से कही बात बताई। उसने हँसकर कहा, "दादा ! यह सब तिरिया चरित्र है। मेरे पास वह आई थी और मैंने उसको कहा

था कि तुमको छुड़ाना सुगम काम नहीं, इसलिए वह एक-दो दिन ठहर कर आये। तब तक मैं पता करूँगा कि किसकी सिफारिश से काम बन सकता है। इस पर वह पुनः मेरे पास पूछने नहीं आई। उसी दिन वह रामलाल के घर चली गई और पश्चात् वह नहीं लौटी।

"इधर मैं भी तुम्हारे लिये भाग-दौड़ करने में लीन था। इस कारण उसका पता नहीं कर सका।"

मोतीराम के मन में अपनी स्त्री के लिए तिरिया चरित्र का शब्द सुन, उसके प्रति ग्लानि उत्पन्न हो गई। सोहनसिंह के सामने तो वह चुप रहा, परन्तु मन में उसने विचारकर लिया था कि वह सुन्दरी को शिक्षा दिये बिना नहीं रहेगा।

उसी सायंकाल कांग्रेस चौकड़ी में भी मोतीराम के पकड़े जाने और छोड़े जाने की बातें होने लगीं। उस समय मुकुट विहारी माथुर वहाँ उपस्थित था। वह अपने घर के विषयों में किसी बात पर चिन्तित था। इस कारण वह इस चौकड़ी की बातों में कुछ विशेष रुचि नहीं ले रहा था। इस पर भी जब मोतीराम के छूट जाने की बात होने लगी, तो उसने उत्सुकता से पूछा, "तो वह छूट गया है?"

"हाँ।" सोहनसिंह ने उत्तर दिया। मैंने तो आपसे कहा था कि मोतीराम को थोड़ा सबक सिखाने की बात थी। देखिये माथुर साहब! आज से दो मास पूर्व यहाँ पर बसे हुए रिफ्यूजी उच्छृङ्खल हो रहे थे। उनको कांग्रेस के झण्डे-तले लाने के लिए मैंने और चौधरी मथुरासिंह ने एक योजना बनाई। हम मोतीराम से किसी एक की रिपोर्ट करा देते थे। पुलिस तहकीकात करनी आरम्भ कर देती तो चौधरी वहाँ पहुँच जाते और कुछ ले-देकर, हाथ-पाँव जोड़कर मुआमला रफा-दफा करवा देते। इस प्रकार वह आदमी चौधरी साहब के ऐहसान के नीचे दब जाता। इस प्रकार हमने सैकड़ों आदमियों के मन में यह बात अंकित कर दी है कि चौधरी मथुरासिंह अपने इलाके के लोगों का संरक्षण बहुत भली-भाँति कर सकते हैं। चौधरी के मन में लोगों के लिए भारी श्रद्धा है।

बीसियों विधवाओं को सरकार से सहायता दिलवाई गई है और अनेकों को कई प्रकार की सुविधाएँ दिलवाई हैं। कई बेकारों को पहले पकड़वा दिया और पीछे छुड़वाकर उनके काम-धन्धे का प्रबन्ध कर दिया।

"कुछ दिनों से मोतीराम महात्माजी की निन्दा करने लगा था। सो ऐसा रगड़ा दिया है कि जीवन-भर याद रखेगा।"

"पर तुम उसको छुड़वा नहीं सके।"

"मेरा विचार था कि छुड़ाने का प्रबन्ध अभी एक सप्ताह पीछे करूँगा, परन्तु कोई हम से पहले वहाँ पहुँच गया और उसने डिप्टी-कमिश्नर को ऐसा प्रभावित किया कि वे मोतीराम के विषय में रुचि लेने लगे। इस कारण मैं जेलर से मिलकर फ़ैसला कर आया कि यदि उसको छोड़ने की आज्ञा आवे, तो वह मुझको बुला ले। जेलर कई बार हमारे होटल में विनोद के लिए आ चुका है।"

माथुर इस योजना को सुन, चकित रह गया। उसने सोहनसिंह के इस काम के विषय में अपनी सम्मति प्रकट नहीं की। वह तो मन-ही-मन यह विचार करने लगा कि सोहनसिंह एक बड़ा दस नम्बरिया है और मुहल्ले के लोगों पर रोब जमाने के लिए अपना कुचक्र चला रहा है। वह यह समझ रहा था कि चौधरी मथुरासिंह को आगामी चुनावों में सफल कराने के लिए यह सब-कुछ किया जा रहा है। इस प्रकार के कुचक्र का वह विरोध करना चाहता था, परन्तु वह एक अत्यन्त व्यस्त व्यक्ति था। उसको अब वकालत का इतना काम मिलने लगा था कि इस प्रकार के सार्वजनिक कामों में समय नहीं दे सकता था।

: ३ :

माथुर दिल्ली के विख्यात वकीलों में था। वकालत के अतिरिक्त वह नगर के सार्वजनिक कामों में भी सक्रिय भाग लेने वाला था। वह जिमखाना क्लब का सदस्य था। कई वर्ष तक म्यूनिसिपल कमेटी में सदस्य रह चुका था। जब म्यूनिसिपल चुनावों में कांग्रेस ने अपने

उम्मीदवार खड़े किये तो उसने अपना नाम वापस ले लिया और पुनः कमेटी के लिए खड़ा नहीं हुआ। उसका विचार था कि म्यूनिसिपल कमेटी के मामलों में राजनीतिक दलों को भाग नहीं लेना चाहिये। जब देश के प्रमुख राजनीतिक दल ने कमेटी में अपने उम्मीदवार खड़े किये, तो उसने पहले तो कांग्रेस के अधिकारियों को समझाया कि इस प्रकार वे नगर की अवस्था को सुधारेंगे नहीं। परन्तु कांग्रेस का विचार था कि ब्रटिश सरकार का प्रत्येक मोर्चे पर विरोध करने के लिए, म्यूनिसिपल कमेटी पर कांग्रेस का अधिकार होना चाहिये। इस पर माथुर ने म्यूनिसिपल कमेटी के सदस्यों के उम्मीदवारों में से अपना नाम बाहर कर लिया।

माथुर १९२६ में हिन्दू महा सभा का मेम्बर बन गया था। उसके मस्तिष्क में यह बैठा हुआ था कि हिन्दू महा सभा के स्थापित किये जाने से देश में शुद्ध राष्ट्रीयता की प्रतिष्ठा बढ़ेगी। कांग्रेस और महात्मा गांधी के कामों पर मौलाना मुहम्मद अली और मौलाना शौकत अली की बहुत गहरी छाप रहती थी। उस छाप की अराष्ट्रीयता को विलीन करने के लिए हिन्दू महा सभा की स्थापना आवश्यक समझ में आई थी। वास्तव में हिन्दू महा सभा कांग्रेस में उपस्थित राष्ट्रीय अंशों का संगठन-मात्र था, परन्तु १९२५ में कांग्रेस ने यह प्रस्ताव पास कर दिया कि हिन्दू महा-सभा का कोई भी सदस्य कांग्रेस में पदाधिकारी नहीं हो सकता। ऐसी कोई बाधा जमीयतुल, उलिमा के सदस्यों के लिए नहीं थी। इसके अतिरिक्त कांग्रेस में काम करने वाले ख़िलाफत और अहरार संस्थाओं के भी सदस्य रह सकते थे। माथुर ने जब कांग्रेस की यह अयुक्तिसंगत बात देखी, तो वह हिन्दू महा सभा का सदस्य हो गया।

कांग्रेस के १९२५ के निर्णय का एक यह भी परिणाम हुआ कि हिन्दू महा सभा हिन्दू-कांग्रेसियों की संस्था बनने के स्थान, कांग्रेस से बाहर के हिन्दुओं की संस्था ही रह गई।

पण्डित मदनमोहन मालवीय कांग्रेस के सदस्य तो रहे, परन्तु १९२५

के प्रस्ताव के पश्चात् उनका नाम कांग्रेस के प्रधान पद के लिए कभी भी उपस्थित नहीं किया गया। १६३१-३२ में मालवीयजी, सरकार द्वारा प्रणिषिद्ध कांग्रेस के अधिवेशन के स्वयमेव प्रधान बने और कैद होने के लिए तैयार हो गये, परन्तु कांग्रेसियों ने कभी भी उनका नाम इस पद के लिए प्रस्तावित नहीं किया।

मिस्टर माथुर कांग्रेस की इस नीति का घोर विरोधी था और वह १६४५ तक हिन्दू महा सभा का सदस्य बना रहा।

उसके विचार में कांग्रेस मुसलमानों की प्रतिनिधि संस्था नहीं थी। वह समझता था कि मुसलमान कभी भी हिन्दुस्तानी बनने को तैयार नहीं थे। जब से वे हिन्दुस्तान में आये, वे यहाँ के राजा और विजेता बन कर रहे। जब उनकी सत्ता हटी तो वे अपने को हिन्दुस्तान के नागरिक हिन्दुओं से अधिक अधिकार पाने के योग्य समझते रहे। कांग्रेस भारत के राष्ट्रीय विचार के लोगों की भी प्रतिनिधि संस्था नहीं थी। यह संस्था सदैव हिन्दुस्तान के नागरिकों से अधिक अधिकार माँगने वाले मुसलमानों को अधिकार देने का यत्न करती रही। यह ठीक है कि कांग्रेस भारत के बहुसंख्यक लोगों की पूज्य रही, परन्तु माथुर के विचार में किसी अशुद्ध बात को बहुसंख्यक लोगों का समर्थन मिल जाने पर भी वह अशुद्ध बात शुद्ध नहीं हो जाती। कांग्रेस न तो मुसलमानों का प्रतिनिधित्व करती थी, न ही यह राष्ट्रीय विचार के लोगों का। हिन्दू महा सभा के लोग यह ही तो कहते थे कि हिन्दुस्तान में रहने वाले सब बराबर हैं। किसी को कोई विशेष अधिकार अथवा प्रातिनिध्य नहीं मिलना चाहिये। पिछड़े हुए लोगों को सबके बराबर लाने के लिए शिक्षा इत्यादि की विशेष सहायता तो दी जा सकती है, परन्तु किसी के लिए विधान सभाओं में अथवा नौकरियों में स्थान सुरक्षित रखने से तो नागरिकता और नागरिकता में भेद आ जायेगा।

परन्तु कांग्रेसी इस बात को समझते ही नहीं थे। महात्मा गांधी ने बेवल कॉन्फ्रेन्स में दावा कर दिया कि कांग्रेस हिन्दू और मुसलमानों की

सांझी प्रतिनिधि संस्था है। मिस्टर जिन्ना ने इसको मानने से इन्कार कर दिया। वेवल साहब ने इस दावे का निर्णय करने के लिए १६४६ के निर्वाचन करा दिये।

इस समय माथुर ने, कांग्रेस को पूरा अवसर देने के लिए कि वह अपना दावा सिद्ध कर सके, हिन्दू महासभा को छोड़, कांग्रेस का समर्थन कर दिया। अन्य अनेक हिन्दुओं ने भी कांग्रेस का समर्थन किया, परन्तु मुसलमानों ने कांग्रेस के इस दावे को झूठा सिद्ध कर दिया।

माथुर का यह विचार था कि अब तो कांग्रेस को सुमति आ जायगी और वह कांग्रेस में सम्मिलित रहा। भगवान् जाने क्यों, कांग्रेस ने १६४६ के निर्वाचनों को अपना पथ-प्रदर्शक नहीं समझा। कांग्रेसी नेतागण कैबिनेट मिशन के सामने और पीछे लॉर्ड माउण्टबेटन के साथ अपने-आपको हिन्दू और मुसलमान, दोनों का प्रतिनिधि मानते रहे। परिणाम यह हुआ कि जहाँ मुसलमानों को पाकिस्तान मिला, जहाँ से हिन्दुओं को निकाल देने का उनको अधिकार था, वहाँ कांग्रेस ने हिन्दुस्तान लिया, जहाँ न केवल मुसलमान रह ही सकते थे, प्रत्युत कांग्रेस से अपने लिए विशेष सुविधाएँ माँगने के लिए अधिकारी भी मानते थे।

कांग्रेस के इस व्यवहार से माथुर असन्तुष्ट तो था ही, अब चौधरी मथुरासिंह के व्यवहार से उसका मन बिलकुल उचाट हो गया। उसने कांग्रेस से अपना सम्बन्ध-विच्छेद कर लिया।

पिछले कई वर्षों से माथुर अपने वकालत के व्यवसाय और घर के काम-काज में कुछ अधिक रुचि नहीं ले रहा था। अब राजनीतिक क्षेत्र से बहुत सीमा तक पृथक् होने के कारण, उसका ध्यान अपने निज के कामों पर जाने लगा।

माथुर के दो सन्तान थीं, एक लड़का और एक लड़की। लड़के का नाम चन्द्रकान्त था। उसने एम० ए० सन् १६४७ में पास किया था और वह किसी कॉलेज में प्रोफ़ेसर लग जाने की आशा करता था। ब्रिटिश काल में तो एक कांग्रेसी के पुत्र होने के कारण, यूनिवर्सिटी उसको

नियुक्त नहीं कर सकी और स्वराज्य मिलने के पश्चात् पंजाब से बहुत-से प्रोफ़ेसर खाली होकर आ गये थे और चन्द्रकान्त को प्रोफ़ेसरी मिलने का अवसर कम हो गया।

वह नौ-दस महीने से खाली होने के कारण कम्युनिस्टों की लपेट में आ गया। यूँ तो मुकुटविहारी माथुर एक स्वतन्त्र विचार का आदमी था और उसके घर में विचार-स्वतन्त्रता की धूम थी। इस पर भी उसको स्वप्न में भी यह विचार नहीं आ सकता था कि उसका लड़का कम्युनिस्ट बन जायेगा। एक वकील, जिसकी आय बीस-तीस हज़ार मासिक की हो, उसका लड़का कम्युनिस्ट हो सकता है, वह समझ नहीं सका।

मुकुटविहारी माथुर की एक लड़की भी थी। वह चन्द्रकान्त से बड़ी थी। उसने एम० ए०, एल०-टी० पास किया था और वह लड़कियों के स्कूलों में इन्स्पेक्ट्रेस नियुक्त हो चुकी थी। वह इस पदवी पर लगभग तीन वर्ष से काम कर रही थी। उसका नाम था नीरा। नीरा के विवाह के लिए कई बार प्रस्ताव आ चुके थे, परन्तु नीरा उनको अस्वीकार करती रही थी।

मोतीराम से घटी दुर्घटना के पश्चात् माथुर ने सोहनसिंह के होटल में जाना छोड़ दिया था। यह समय जो बच जाता था, वह जिम खाना क्लब में व्यतीत करने लगा था। परन्तु अब उसको वहाँ भी बचपने के अतिरिक्त और कुछ प्रतीत नहीं होता था। क्लब के सदस्य शराब पीते, एक-दूसरे की प्रशंसा व निन्दा करते, सिनेमा ऐक्ट्रेसों की कहानियाँ कहते, अथवा किसी की बीवी, बहिन के विषय में लोकापवादों का वमन करते थे। पहिले वह इन कामों में आनन्द अनुभव करता था, परन्तु अब उसको यह सब बातें नौ-दस वर्ष के बच्चों की-सी प्रतीत होने लगी थीं। अतएव उसने क्लब में जाना बहुत कम कर दिया और अपने घर वालों पर ध्यान देना आरम्भ कर दिया। सबसे पहिले उसका ध्यान चन्द्रकान्त की ओर गया। आज वह कचहरी से आया और चाय पीने बैठा, तो चन्द्रकान्त को वहाँ चाय पीते देख पूछने लगा, "चन्द्र-

कान्त ! प्रोफ़ेसरी तो अभी तक मिली नहीं। क्या करने का विचार है अब ?"

"आप कांग्रेस में होते हुए भी किसी के पास सिफारिश नहीं कर सके, तो नौकरी कहाँ मिलेगी ?"

पिता ने गम्भीर भाव धारण कर कहा, "मैंने समझा था कि दासता से हम मुक्त हो गये हैं। तुम युवक हो, योग्य हो और देखने में भले मालूम होते हो। इससे कोई कारण नहीं था कि तुमको अभी तक कोई नौकरी न मिलती।"

"बाबूजी!" चन्द्रकान्त ने चाय समाप्त कर प्याली को सॉसर में रखते हुए कहा, "आप न जाने किस स्वर्ग में घूम रहे हैं। आज तो सिफारिशों की वह धूम है, जो बृटिश काल में भी नहीं थी। अब नौकरी लेनी तो दूर रही, प्राइमरी स्कूलों की पहिली श्रेणी में भी भर्ती बिना सिफारिश के नहीं हो सकती। स्कूलों में दाखिले के दिनों में हैडमास्टरों की चाँदी बनती है। मार्च के महीने में हैडमास्टर तथा प्रिंसिपल अपनी संस्थाओं के लिए किताबें ख़रीदते हैं और नोटों के बण्डल उनकी जेबों में अनायास ही जा पहुँचते हैं।

"परीक्षाओं में परीक्षक नियुक्त होने हों तो सिफारिश की आवश्यकता होती है। किसी को कुछ नम्बर बढ़वाने हों तो सिफारिश काम कर जाती है। कोई पुस्तक पाठ्यक्रम में लगवानी हो तो रुपयों की सिफारिश सबसे अधिक प्रभावयुक्त होती है। अभिप्राय यह कि आज दिल्ली में धन, रिश्वत, सिफारिश और रिश्तेदारी से काम चलते हैं। योग्यता और मेहनत को कोई नहीं पूछता।"

"तब भाई चन्द्र ! तुमको नौकरी नहीं मिल सकती। तुम कोई स्वतन्त्र कार्य करने का विचार करो।"

"क्या स्वतन्त्र कार्य करूँ ?"

"वकालत ही पढ़ लो। कुछ तो सहायता मैं कर ही सकूँगा।"

"मुझको कचहरी का वातावरण घृणास्पद प्रतीत होता है। ज़िला

कचहरी में छोटी-छोटी कोठरियों में वकीलों को दुकानें लगाकर बैठे देख, मेरी आँखों के सामने काठ बाज़ार का चित्र आने लगता है।"

"ओह! तो साहब-ज़ादे क्या करना चाहते हैं? वकालत जैसे मान-युक्त व्यवसाय को वेश्या के व्यवसाय से तुलना देना चाहते हैं तो फिर कौन काम करने के योग्य हैं आप?"

"मैं एक काम करने के योग्य हूँ और मैंने वह काम करना आरम्भ कर दिया है। वर्तमान समाज की जर्जर इमारत को गिराकर, इसकी खुर-खोज मिटा देना चाहता हूँ। देखिये पिताजी! जब ब्रिटिश सरकार थी, तब हमारे यही नेता कहा करते थे कि शासक और न्यायकर्ता भिन्न-भिन्न होने चाहियें। 'ज्युडीशरी' को 'एग्जेक्टिव' से पृथक् करने के लिए ये लोग आन्दोलन किया करते थे, परन्तु आज इन दोनों प्रकार के अधिकारियों का एक होना आवश्यक समझा जाता है।

"एक समय गांधीजी ने 'रोलेट ऐक्ट' के विरुद्ध भारी आन्दोलन चलाया था। वह ऐक्ट यह था कि गवर्नर की आज्ञा से किसी भी व्यक्ति को कैद किया जा सकता था और उसका मुकद्दमा कचहरी में नहीं चल सकता था। इस विधेयक के विरुद्ध इतना आन्दोलन हुआ कि जलियाँ-वाला बाग़ की घटना हो गई। परन्तु वे ही नेता १९४७ में शासनारूढ़ हुए तो बस शासक बन गये। सब सिद्धान्तों को घोलकर पी गये। अभी तक प्रिवेन्टिव डिटेन्शन ऐक्ट तो है ही, साथ ही डिप्टी कमिश्नर और उसके अधीन मैजिस्ट्रेट भी हैं और वे अभियुक्त को पकड़ते भी हैं और उसके दोष का न्याय भी करते हैं।

"न्याय सस्ता करने के लिए धूम मचा करती थी और मैं देख रहा हूँ कि जब शासन को धन की आवश्यकता होती है तो मैजिस्ट्रेटों को बाज़ार में भेज दिया जाता है और हज़ारों रुपये के जुरमाने एक दिन में बटोर लिये जाते हैं।

"नित नये कानून बनाये जा रहे हैं, परन्तु कानून पालन करने के लिए वातावरण बन नहीं रहा। झूठ, फरेब, धोखा, अविचारशीलता,

रिश्वत, सिफारिश, अभिप्राय यह कि मनुष्य के मन की जो बुरी बातें हैं, सब-की-सब खूब फल-फूल रही हैं।"

मुकुटविहारी माथुर अपने लड़के की बातें बहुत ध्यान से सुन रहा था और उसके मन के कार्य करने की विधि को जान, प्रसन्नता अनुभव कर रहा था। जब वह कह चुका तो पिता ने पूछा, "चन्द्रकान्त! मैं तुम्हारे मन के भावों को समझता हूँ, परन्तु तुम इस सबका सुधार करने के लिए करना क्या चाहते हो? इस सबका इलाज क्या है?"

"पिताजी! यह समाज इतनी रुग्ण हो चुकी है कि इसकी चिकित्सा असम्भव है। अब तो यह समाज मरेगी। इस रोगी को शीघ्रातिशीघ्र मरने में सहायता देना ही मानवता का कल्याण करना है।"

"ठीक है, ठीक है। मैं यही तो पूछ रहा हूँ कि किस तरह यह करने जा रहे हो? मारने के लिए इसको संखिया दोगे अथवा गोली मार दोगे? किस उपाय से इसकी हत्या करना चाहते हो? मुझको भय है कि इसकी हत्या करते-करते कहीं अपनी ही हत्या न कर लो। और फिर हत्या करना उद्देश्य तो नहीं न? उद्देश्य तो इसका पुनर्निर्माण है। वह कैसे करोगे और फिर क्या निर्माण करोगे?"

"हम क्रान्ति उत्पन्न करना चाहते हैं। बिना क्रान्ति के ये पुरानी रूढ़ियाँ बदलेंगी नहीं। मैं चाहता हूँ कि सरमायादारी का समूल नाश कर दूँ। इन न्यायालयों को बम रखकर उड़ा दूँ। इस नौकरशाही पुलिस और फ़ौज को छिन्न-भिन्न कर दूँ। इस पार्लियामेण्ट और मन्त्री-मण्डल के सदस्यों को धक्के मार-मारकर खेतों में काम करने पर लगा दूँ। ये चाँदनी चौक के दुकानदार और मोटी-मोटी फीसें लेने वाले डॉक्टर तथा वकीलों को एक गठरी में बाँध यमुना में बहा दूँ।

"इस समाज का ढाँचा ही ग़लत है। इसे समूल उखाड़कर नई समाज की नींव रखूँ।"

"बड़े ख़तरनाक आदमी हो चन्द्रकान्त! ये सब तो जुरम हैं। करोगे तो फाँसी के तख्ते पर लटक जाओगे।"

"पर कौन लटकायेगा फाँसी के तख्ते पर ?"

"जब तुम पुलिस वालों को बताओगे कि वे छुट्टी करें तो वे पहले तुम्हारा ही सिर धड़ से पृथक् करेंगे।"

"पर मैं ऐसा करूँगा ही क्यों ? मैं तो पुलिस वालों के मन में ही यह भावना पैदा कर देना चाहता हूँ कि पुलिस का काम छोड़, जनता में मिल जाएँ। फ़ौजियों के मन में भी यह विचार उत्पन्न कर देना चाहता हूँ कि फ़ौज एक अत्याचार करने वाली संस्था है।"

"ओह ! पर तुमने यह कभी विचार किया है कि तुम्हारे विचार न मानने वाले तुम्हारे साथ कैसा सलूक करेंगे ? कानून तुम उड़ा देना चाहते हो। फ़ौज रहेगी नहीं, तो जानते हो क्या होगा ? लूट मच जायेगी।

"देखो बरख़ुरदार ! मैं समझता हूँ कि तुम वकालत पढ़ो। तब ही तुमको पता लगेगा कि वर्तमान समाज का आधार फ़ौज और पुलिस है। उनके आश्रय ही यह स्थिर है।

"कानून तो वास्तव में शासनकर्ताओं को नियन्त्रण में रखने के लिए होता है। अन्यथा पुलिस और फ़ौज की सहायता से तो शासनकर्ता अनर्थ ही करने लगेंगे। कानून तो पुलिस और फ़ौज के अधिकारियों को सीधे मार्ग पर रखने के लिए होते हैं, नहीं तो वे लोगों का अनिष्ट करने लगेंगे। मैं जानता हूँ कि आज संसार में बहुत खराबी हो रही है; इसमें कारण यह है कि शासक, पुलिस और फ़ौज कानून का पालन नहीं करते। यथार्थ में तो शासकों और पुलिस तथा फ़ौज को ठीक कानून के पालन करने के लिए और दूसरों से कानून का पालन कराने के लिए प्रबन्ध करना है। जो लम्बा-चौड़ा प्रोग्राम तुमने बताया है, वह न केवल अनावश्यक है, प्रत्युत् वह विनाशकारी भी है।"

"पिताजी !" चन्द्रकान्त ने कहा, "वर्तमान समाज का सुधार तो असम्भव प्रतीत होता है। इसको तो एक बार तोड़ ही देना चाहिये। तब ही नये समाज का निर्माण सम्भव हो सकेगा।"

"यही तो प्रश्न है कि तोड़-फोड़ कैसे कर सकोगे ?"

"जनता के बल से ।"

"जनता तोड़-फोड़ तो कर सकती है और उस तोड़-फोड़ में उचित-अनुचित सब समान रूप में नष्ट-भ्रष्ट हो जायेगा । जब योग्य भी अयोग्यों के साथ मार डाले जायेंगे, तो फिर निर्माण कौन करेगा ?"

"जनता में ही से नवीन निर्माणकर्त्ता उत्पन्न होंगे, जैसे रूस में पैदा हुए हैं ।"

"ओह ! अब समझा हूँ । तो बरखुरदार कम्युनिज़्म की बात कर रहे हैं ?"

"हाँ पिताजी ! बिना वर्ग-युद्ध के कुछ बनेगा नहीं और क्रान्ति एक अनिवार्य पग है । इस वर्ग-युद्ध के पश्चात् ही निर्माण होगा ।"

माथुर मुख देखता रह गया । वह स्वयं तो सदैव रचनात्मक कार्य के लिए प्रवृत्त रहता था । उसको आश्चर्य तो इस बात का था कि उसका अपना लड़का रचनात्मक कार्यों से निराश हो, विध्वंसात्मक कार्यों को आवश्यक मानने लगा था ।

"पिताजी ! आज हमारी पार्टी-मीटिंग है । इस कारण अपने विचार समाज के अन्य रूपों के विषय में बताने के लिए मेरे पास समय नहीं । फिर किसी समय बताऊँगा ।"

: ४ :

रामलाल की दुकान के साथ एक मिली ईला-हेयर ड्रेसर की दुकान थी । द्वितीय युद्धकाल में वह कनॉट प्लेस में बहुत ही योग्य बाल काटने वाली और बाल सँवारने वाली मानी जाती थी । अमेरिकन औरतें, जो अमेरिकन अफसरों के साथ एक भारी संख्या में दिल्ली में आ गई थीं, मिली ईला के सैलून की यात्रा करती रहती थीं ।

युद्ध के पश्चात्, जब अमेरिकन, अपने पूर्ण लाम-लश्कर के साथ चले गये तो मिली ईला का काम ढीला पड़ने लगा । शेष काम तो बृटिश

राज्य के जाने पर बन्द हो गया। मिली ईला विचार कर रही थी कि वह अपना काम-धन्धा और दुकान बेचकर, काम बन्द कर फ्रांस वापिस लौट जाये। एक समय उसको अपनी दुकान की पगड़ी तीस हज़ार रुपया मिलती थी और वह चालीस हज़ार माँगती थी। अभी यह बात चल ही रही थी कि सन् १९४९ आ गया और उसका काम फिर चलने लगा। उसने देखा कि दुकान के लिए पगड़ी की कीमत तो कम हो गई है, परन्तु उसका काम पनपने लगा है। युवा लड़कियों का एक नया दल तैयार हो गया था, जो उसकी दुकान में काम लाने लगी थीं।

अब पढ़ी-लिखी लड़कियाँ, जब विवाह हो जाता, तो सबसे पहिले मिली ईला की दुकान की यात्रा करने आतीं। प्रायः उनके पति साथ होते और वे ही हेयर-ड्रेसर को डिज़ाइन बताते, जिसमें उनकी बीवी के बाल काटे जाते। कभी-कभी लड़कियाँ अकेली भी आती थीं। इस अवस्था में वे बालों के बनाने का ढंग मिली की राय से बनवातीं।

मिली ईला ने अनेक प्रकार के कटे और संवारे बालों के चित्र बनवाये हुए थे। ग्राहक लड़कियों को वह चित्र दिखाती और उनसे पसन्द करवा कर बनाती। कभी-कभी पूछे जाने पर वह अपनी सम्मति भी देती थी कि अमुक फैशन उसके मुख पर अधिक सजेगा।

सन् १९४९ का मध्य था। एक बहुत ही भद्दे शरीर की औरत मिली-ईला की दुकान में आई। वह खद्दर की पोशाक पहिने थी। उसने दाखिल हो वेट्रेस से पूछा, "मिली ईला कहाँ है?"

"भीतर एक लड़की के बाल काट रही हैं।"

"उससे कहो कि मुझे उससे जल्दी का काम है।"

"आप काम बता दीजिये और मैं इत्तला कर देती हूँ।"

"कह दो कि भारत सरकार का एक अफसर उससे मिलना चाहता है।"

"आपका शुभ नाम क्या है?"

"यह बताने की ज़रूरत नहीं।"

वेट्रेस एक कैबिन में, जिसमें मिली एक लड़की के बाल काट रही थी, चली गई। एक मिनट पश्चात् उस कैबिन में से दो औरतों के खिलखिलाकर हँसने का शब्द हुआ। इस हँसी को सुनकर बाहर खड़ी भद्दी सूरत वाली औरत के माथे पर त्योरी चढ़ गई। वह बहुत ही बेचैन हो इधर-उधर टहलने लगी। इस समय वेट्रेस कैबिन से निकली और उस औरत से कहने लगी, "मैडम! मिली कहती हैं कि वे एक अन्य सरकारी अफसर के बाल बना रही हैं। आप इधर वेटिंग रूम में बैठिये।"

यद्यपि इससे वह औरत प्रसन्न नहीं थी, तो भी उसके लिए और कोई चारा नहीं था। वह वेटिंग रूम में बैठ गई।

लगभग दस मिनट की प्रतीक्षा के पश्चात् मिली एक लड़की के साथ, जिसके बाल घने बादलों की भाँति फैले हुए कन्धों तक आ रहे थे, निकली। लड़की मुस्करा रही थी। वह भद्दे शरीर की औरत इस सुन्दर लड़की को देखकर, जिसके विषय में कहा गया था कि एक अन्य सरकारी अफसर है, झेंपी। उस लड़की ने मिली से हाथ मिलाया और कहा, "अब मैं जा रही हूँ। फिर कब आऊँ?"

"मैंने इन बालों में एक मसाला लगा दिया है। इससे ये इसी रूप में एक सप्ताह तक रहेंगे। दो-तीन सप्ताह तक यही इलाज करने से ये सदा के लिए ऐसे ही रहने लगेंगे।"

"तो मैं अगले सप्ताह आऊँगी।" यह कह वह लड़की जाने लगी। इस समय उस भद्दी औरत ने आगे बढ़, उस लड़की से पूछा, "मैडम! क्या मैं जान सकती हूँ कि आप किस दफ्तर के साथ सम्बन्ध रखती हैं?"

"एक्सक्यूज़ मी," लड़की ने कहा, "मैं आपको नहीं जानती।"

"मैं विमेस रिकवरी डिपार्टमेण्ट में सुपरवाइज़र हूँ।"

"ओह! बहुत प्रसन्नता हुई आपसे मिलकर। मैं दिल्ली स्कूल्ज़ में हैड-इन्स्पेक्ट्रेस हूँ।"

"वैरी ग्लैड टु सी यू। आप कहाँ रहती हैं?"

"मैं अपने पिता के साथ बेला रोड पर रहती हूँ।"

"तो आपके पति नहीं हैं ?"

"मैंने अभी शादी नहीं की।" लड़की ने हँसते हुए कहा।

"वैरी ग्लैड टु हीयर। मैंने भी शादी नहीं की।"

"तो क्या मैं अब जा सकती हूँ ?" लड़की ने पूछा और हँस पड़ी।

वह लड़की गई तो दूसरी औरत मिली से प्रश्न-पर-प्रश्न पूछने लगी। उसने पहिला ही प्रश्न किया, "क्या मेरे बाल इस लड़की की तरह हो सकते हैं ?"

"नहीं, आपके बाल बहुत मोटे हैं और फिर उनमें कहीं-कहीं सफ़ेद बाल दिखाई देने लगे हैं।"

उस औरत ने लम्बी साँस खींचकर कहा, "तो मैं इस लड़की जितनी खूबसूरत नहीं बन सकती ?"

"दुनिया में एक औरत दूसरी औरत के बराबर तो सुन्दर हो ही नहीं सकती। या तो उससे अधिक, या उससे कम सुन्दर हो सकती है।"

"तो मुझको उससे ज़्यादा सुन्दर बनने के लिए क्या दाम देना होगा ?"

मिली ने हँसते हुए पूछा, "पर यह कौन बतायेगा कि आप कितनी सुन्दर हो गई हैं ?"

इससे उस औरत की आँखें लज्जा से झुक गईं। फिर कुछ विचार कर बोली, "डज़न्ट मैटर, आपको ही यह देखना होगा।"

"पर मैडम ! मुझको तो आप अभी भी बहुत सुन्दर मालूम हो रही हैं।"

"आप मेरी हँसी कर रही हैं।"

"नॉट एट आल।" मिली ने गम्भीर हो कहा, "इस पर भी मेरी राय यह है कि आपको कुछ प्लास्टिक सर्जरी की आवश्यकता है। उसका प्रबन्ध यहाँ दिल्ली में नहीं हो सकता। आप पेरिस चली जायें तो इस विषय में ज़रूर कुछ किया जा सकता है।"

"आल राईट। मेरे बालों को देखिये। इनका क्या किया जा सकता है?"

"तो आइये। इस कैबिन में आ जाइये।"

वह लड़की, जो अभी-अभी बाल ठीक करवा कर गई थी, नीरा थी। नीरा मुकुट विहारी माथुर की लड़की थी। वह मिली ईला के सैलून से निकल ऐम्बेसी रेस्टोरैण्ट में, जो अभी-अभी नया खुला था, चली गई। वहाँ यूरोपियन पोशाक में एक युवक उसकी प्रतीक्षा कर रहा था। वह नीरा के आने पर आँखें फाड़-फाड़ उसको देखने लगा। नीरा उसके सामने एक क्षण तक खड़ी रही और पश्चात् उसके साथ एक सोफा पर बैठ पूछने लगी, "हौ डु यू लाइक मी नौ? (अब आप मुझको कैसा पसन्द करते हैं?)"

"वण्डरफुल (अति सुन्दर)।" उस युवक ने उत्तर में कहा। इस पर नीरा ने बैरा को आवाज़ दी और चाय का आर्डर दे दिया।

चाय पीते हुए युवक ने कहा, "नीरा! हमको परस्पर मिलते हुए अब एक मास से ऊपर हो गया है। आपके पिताजी मुझको भली भाँति जान गये हैं और मैं उम्मीद करता हूँ कि अगर मैं तुम्हारी स्वीकृति से तुमको उनसे माँगूँ, तो वे न नहीं करेंगे।"

"वट डु यू मीन (क्या मतलब है आपका)?"

"मतलब यह है कि अब हमको शादी कर लेनी चाहिये।"

"आपने तो कुछ और कहा है। आप मुझको पिताजी से माँगना चाहते हैं न? क्या मैं कोई वस्तु हूँ और पिताजी की जायदाद हूँ और आप उनसे वह वस्तु पाने के लिए उनके आगे हाथ पसारेंगे?"

युवक विस्मय में नीरा का मुख देखता रह गया। नीरा ने उसको चुप देख कहा, "देखिये जी! मैं इन्सान हूँ और आजकल गुलामी कानून के विरुद्ध है। अभिप्राय यह कि मैं किसी की मिलकियत नहीं हूँ। मुझको न तो कोई देने का और न ही कोई लेने का अधिकार रखता है।"

"तो फिर हमारा विवाह किस भाँति होगा?"

"हो जायेगा। बहुत जल्दी है आपको ?"

"हाँ, जल्दी तो है। जब मैं तुमको इस प्रकार सज-धजकर अपने समीप बैठे देखता हूँ तो मैं व्याकुल हो उठता हूँ। मैं चाहता हूँ कि हम परस्पर मिलें और एक-दूसरे में घुल-मिल जाएँ।"

"यह कैसे हो सकता है ? क्या मैं मिस्री की डली हूँ और आप चाय का प्याला ?"

इस पर दोनों हँसने लगे। नीरा ने चाय का प्याला उठाया और पीना आरम्भ कर दिया। साथी युवक ने भी अपने हाथ में प्याला उठाया हुआ था, परन्तु वह पी नहीं रहा था और विस्मय में नीरा के मुख पर देख रहा था। जब नीरा ने बिना कुछ और कहे सामने रखी पेस्ट्री खानी आरम्भ कर दी तो युवक ने भी एक सरकी लगाई और प्याला अपने सामने रखे सॉसर में रखते हुए कहा, "परसों जब तुम मुझको अपने घर ले गई थीं और मुझको ड्रायंग रूम में बैठा, कपड़े बदलने चली गई थीं, तो तुम्हारे पिता आ गये और हम में बातचीत होने लगी। उन्होंने मुझसे पूछा कि मैं किसलिए वहाँ आया हूँ। मैंने कहा कि मैं नीरा से मुहब्बत करने लगा हूँ और मैं उनसे इजाज़त माँगने लगा कि मैं तुमको प्रोपोज़ कर सकूँ।

"इस पर उन्होंने कहा कि यदि नीरा को कोई आपत्ति न होगी तो वे मान जायेंगे। मैंने उनको अपना पूरा परिचय दे दिया था। अब यदि तुम मानो तो मैं उनसे कह दूँ कि हम विवाह करना चाहते हैं।"

"ओहो ! आप भी खूब हैं। आप मुझसे मुहब्बत करते हैं, मैं आपसे मुहब्बत करती हूँ, क्या इतना पर्याप्त नहीं है ? विवाह के विषय में तो कई बातें विचारणीय हैं।"

"तो उनको अब विचार लें।"

"यदि आप चाहते हैं तो विचार सकते हैं। देखिये, मैं स्कूलों में इन्स्पेक्ट्रेस हूँ। साढ़े पाँच सौ वेतन पाती हूँ और मेरा वेतन ग्यारह सौ तक जा सकता है; परन्तु उससे पूर्व ही मैं किसी अन्य उच्च पदवी पर

पहुँचना चाहती हूँ, जिससे मेरी आय इससे भी कहीं अधिक होने की सम्भावना है। विवाह के पश्चात् यह हो सकेगा क्या ?"

वह युवक नीरा का मुख देख रहा था। इस प्रश्न पर वह गम्भीर विचार में पड़ गया। वास्तव में विवाहित जीवन का चित्र, जो-कुछ उसके मन में था, वह यह नहीं था। वह समझता था कि उसकी पत्नी दो-तीन बच्चों की माँ हो और वह उनके पालन-पोषण में अपनी योग्यता और शक्ति लगा दे। वह उसके घर को सुखप्रद और सुन्दर बनाये। नीरा का पढ़ा-लिखा होना, सुन्दर होना और पढ़ाई में अनुभव रखना, उसको इसी अर्थ में गुण प्रतीत हुआ था और वह उससे विवाह के लिए तैयार हो गया था।

अब वह, अपनी पत्नी को ऑफिस जाने वाली और घर नौकरों के हाथ में छोड़ने वाली समझ, कुछ अनिश्चित मन से नीरा का मुख देखता रह गया। इस पर भी, नीरा के सौन्दर्य और बातचीत में सतर्कता को देख, वह उसको किसी भी कीमत पर अपनी पत्नी बनाने के लिए अपने मनको तैयार करने लगा। उसने कहा, "देखो नीरा! मैं फ़ौज में डॉक्टर हूँ। ब्रिगेडियर की मेरी उपाधि है। पन्द्रह सौ रुपया महीना वेतन पाता हूँ। मैं समझता हूँ कि मैं अपने लिए, तुम्हारे लिए और बच्चों के लिए अकेला ही काफी कमा सकता हूँ। ऐसी अवस्था में मैं यह पसन्द करूँगा कि तुम व्यर्थ की नौकरी न कर, घर और बच्चों पर अपनी शक्ति व्यय करो। दफ्तर की फाइलों में तो कोई मज़ा नहीं होना चाहिये।"

ऊँ··हूँ। "ऊँ-हूँ। यह नहीं। मैं इसी कारण विवाह पसन्द नहीं करती। इससे व्यर्थ में औरत को पति के अधीन होना पड़ता है।

"प्राचीन काल में जब पुत्र पैदा करना एक राष्ट्रीय कर्तव्य होता था और उनकी, होने वाले युद्धों में, लड़ने के लिए तथा वहाँ अपना रक्त बहाने के लिए आवश्यकता होती थी, तब तो दस-ग्यारह लड़के उत्पन्न करना धर्म समझा जाता था। आज तो ऐटम-बम्ब का युग है। इसकी उपस्थिति में युद्ध हो नहीं सकता और फिर महात्मा गांधी के

प्रनुयाई पण्डित जवाहरलाल शान्ति के अग्रदूत बन कर दुनिया के ामने आ रहे हैं। इस काल में अधिक बच्चे उत्पन्न करने से कोई भी ार्य सिद्ध नहीं हो सकता। जो कुछ पुरुष राष्ट्र को चाहियें, उनको ैदा करने के लिए देश में अन्य करोड़ों औरतें मौजूद हैं। इस कारण ोचती हूँ कि मैं इस कीचड़ में न फँसूँ।"

"परन्तु नीरा देवी! एक बात तो तुम भूल ही रही हो। पुरुष और ़त्री में यौन-सम्बन्ध के लिए स्वाभाविक इच्छा का क्या होगा?"

"जो कुछ स्वाभाविक है, वह होगा ही। उसके लिए किसी को चिन्ता करने की आवश्यकता ही क्या है? रहे बच्चे, जिनको आप यौन-सम्बन्ध का स्वाभाविक परिणाम समझते हैं, मैं समझती हूँ कि आज हमने उस पर अधिकार पा लिया है। हम पढ़े-लिखे मानवों के लिए बच्चे पैदा करने से बचना न तो अस्वाभाविक है, न ही असम्भव।"

"क्या तुम्हारे कहने का यह अभिप्राय समझूँ कि हम मैन ऐण्ड वाइफ (पति-पत्नी) बिना विवाह के बन सकते हैं?"

"क्या हानि है?"

"कोर्ट में मैरिज रजिस्टर कराने की भी आवश्यकता नहीं समझतीं तुम?"

"यही तो कह रही हूँ। आप फ़ौज में डॉक्टर हैं। मैं स्कूल इन्स्पैक्ट्रेस हूँ। हम परस्पर प्रेम करने लगे हैं, तो किसी को क्या? यदि हमारी इच्छा यौन-सम्बन्ध पैदा करने की होगी तो संसार के अन्य प्राणियों की जायदाद छिनती है क्या?

"मैं जीवन भर अपने-आप कमाने वाली बनकर रहना चाहती हूँ। आप यदि मुझको कुछ प्रेज़ेन्ट करेंगे, तो मैं भी आपको कुछ तो दे ही सकती हूँ। हम बराबर-बराबर बन कर रहना चाहते हैं। क्या इसमें कोई हानि है?"

"पर मैं तो चाहूँगा कि तुम मुझको अपने जैसे सुन्दर बच्चों का उपहार दो।"

"देखूँगी कि मैं क्या दे सकती हूँ। यह तो आप जानते ही हैं कि बच्चे पैदा करना कितनी कठिन और कष्टप्रद बात है। सबसे बड़ी बात यह है कि बच्चे पैदा करने में माँ का सौन्दर्य समाप्त हो जाता है। मैं अभी यह नहीं चाहती।"

"मैं अभी भी यही चाहता हूँ कि हमारा विवाह हो जाये। इससे कई प्रकार की पेचीदगियों से बचा जा सकता है।"

"अभी तो मन नहीं चाहता।"

: ५ :

"देश की विधान सभा ने धड़ल्ले से कार्य किया है। यह बनी तो सन् १९४६ में थी, परन्तु ठीक रूप में काम करने लगी थी, स्वराज्य मिलने के पश्चात्। सन् १९४५ से लेकर १९५० के मध्य तक यह सभा कार्य करती रही और इसने एक विधान बनाकर स्वीकार कर लिया है।

"विधान बनाने के साथ-साथ यह सभा संसद् का कार्य भी करती रही। इसने कई कानून बनाये। कानूनों में कई संशोधन किये और कई रद्द किये।

"विधान में एक बात विशेष निश्चित् की गई है। यह विधान में परिवर्तन करने की बात है। यह निश्चय किया गया है कि संसद् ही, इस विधान में, एक विशेष बहुमत के साथ संशोधन भी कर सकती है। इस अधिकार का प्रयोग संसद् ने विधान बनाने के तुरन्त ही पीछे करना आरम्भ कर दिया।

"देश का विधान तो एक प्रकार का करारनामा है, जो शासन करने वाले दल और जनता के भीतर माना जाता है। इस करारनामे को कोई शासक दल, बिना जनता से, उस विषय पर सम्मति लिये, बदल नहीं सकता। ऐसा करना एक प्रकार से वचन-भंग होगा। निर्वाचनों के समय तो विधान-संशोधन का प्रश्न जनता के सामने नहीं होता, परन्तु शासक दल कहीं विशाल बहुमत पा जाये, तो वह विधान में परिवर्तन

करना आरम्भ कर देगा। यह एक प्रकार से करार को तोड़ने के सदृश होगा।

"होना यह चाहिए था कि देश का विधान बहुत संक्षेप में, सत्तारूढ़ दल और जनता के भीतर एक करारनामा के रूप में होता। इसमें कुछ थोड़ी-सी सिद्धान्त की बातें होतीं, जिनमें जनता के अधिकार और कर्तव्यों का उल्लेख होता और शासन की ओर से जनता की सुरक्षा का वचन होता। इसके अतिरिक्त, जो कुछ विधान में लिखा गया है, वह देश के साधारण कानून का विषय था।

"साधारण कानून को बदलने का अधिकार संसद् को साधारण रूप में हो जाता, परन्तु विधान के सिद्धान्तों को बदलने के लिए कोई ऐसी विधि होती, जिससे पूर्ण जनता का मत लिया जा सकता।

"हुआ यह कि भारत विधान एक पोथा बना दिया गया है। उसमें अनेकों ऐसी बातें, जो साधारण कानून के अन्दर आनी चाहिए थीं, सम्मिलित कर दी गई हैं। इनको बदलने का अधिकार संसद् को देते हुए, पक्के करार की बातों को बदलने का अधिकार भी दे दिया गया है। परिणाम यह हुआ है कि कांग्रेस-दल, जिसका इस समय संसद् में बहुमत है, विधान की आधारभूत बातों को बदलने का अधिकार भी संसद् को दे बैठा है। कदाचित् उसका यह विचार था कि संसद् में सदा के लिए कांग्रेस का ही अधिकार बना रहेगा।

चन्द्रकान्त यह सब कुछ बता रहा था एक लड़की को, जो उसके साथ-साथ कनॉट प्लेस से इण्डिया गेट की ओर जा रही थी। वह कह रहा था, "कांग्रेस में बहुत कम लोग हैं, जिनको अपनी नाक से दूर कुछ भी दिखाई देता हो। जैसा एक-दो नेताओं ने यह कह दिया, वैसा उन सब ने कर दिया।"

लड़की का कहना था, "जो कुछ कांग्रेस के नेताओं ने किया, वह हमारे विचार करने की बात नहीं है। हमको तो यह विचार करना है कि यदि हमारी पार्टी के आदमी सत्ता सम्पन्न हो जाएँगे, तो क्या वे

विधान को ऐसा ही रहने देंगे ?"

"बिल्कुल नहीं। इन कांग्रेसियों की मूर्खता से हम इतना लाभ उठायेंगे कि विधान को ऐसे ढंग से बदलेंगे कि पुनः इसको कोई बदल न सके। हम तो इस प्रकार के प्रजातन्त्रात्मक राज्य को नहीं चलने देंगे। हम विधान को ऐसा बदलेंगे कि जिससे डिक्टेटर-शिप ऑफ दि प्रोलिटेरिएट (जनता का अधिनायकपन) स्थापित हो सके।"

"तो क्या अब जनता का राज्य नहीं है ?"

"नहीं, यह तो धनी आदमियों का राज्य है। निर्वाचनों का ऐसा ढंग बनाया है कि निर्वाचनों पर लाखों व्यय हो जाते हैं। ग़रीब आदमी किसी भी चुनाव में खड़ा नहीं हो सकता।"

"तो आप किस प्रकार के निर्वाचन चाहते हैं ?"

"जैसे रूस में होते हैं।"

"वहाँ कैसे होते हैं ?"

"रूस में केवल एक ही राजनीतिक दल है। हम चाहते हैं कि यहाँ भी केवल एक ही दल काम कर सके। निर्वाचन के समय केवल वह दल ही उम्मीदवार खड़े कर सके। यदि कोई पार्टी से खड़े उम्मीदवार को पसन्द न करे, तो वह स्वयं स्वतन्त्र रूप से खड़ा हो सकता है।"

"मान लीजिये यहाँ कांग्रेस ही एक पार्टी हो और केवल वह ही उम्मीदवार खड़े कर सके तो फिर निर्वाचन क्या होंगे ?"

"निर्वाचन तब होंगे, जब कोई व्यक्ति सरकारी पार्टी से खड़े किये गये उम्मीदवार को पसन्द न करे।"

"आपका मतलब यह है कि कांग्रेस को तो अधिकार हो कि वह पार्टी की ओर से निर्वाचनों में उम्मीदवार खड़े करे और उसका मुकाबिला यदि किसी ने करना हो तो व्यक्तिगत रूप से करे। यह कैसे सम्भव है ? एक ओर तो संगठित पार्टी होगी और दूसरी ओर वह व्यक्ति अकेला होगा। निस्सन्देह पार्टी जीत जायेगी और व्यक्ति हार जायेगा। कभी कहीं किसी कारण से कोई व्यक्ति जीत भी गया तो वह कैसे पार्टी के कामों को

सुधारने में सफल हो सकेगा ?"

"हमारा तो यह विश्वास है कि इस प्रकार ही हम उन्नति कर सकते हैं।"

"और इस प्रकार के निर्वाचनों के लिए आप विधान को बदलेंगे ?"

"हाँ। साथ ही हमारा यह विचार है कि विधान में ऐसे परिवर्तन कर दें, जिससे उसके पश्चात् विधान इतनी जल्दी बदला न जा सके।"

"मिस्टर चन्द्र ! यह आपका विचार ठीक है अथवा ग़लत, इस पर मैं बहस करना नहीं चाहती। इस पर भी यह तो कहने का अधिकार रखती ही हूँ कि यह ग़लत है। मैं इसको पसन्द नहीं करती। कांग्रेस ने तो यह कर दिया कि देश के विधान को एक खिलौना बना दिया और आप चाहते हैं कि जनता के प्राण पाँच-दस नेताओं के हाथ में देकर, उसको जनता का राज्य घोषित कर दिया जाये।"

चन्द्रकान्त के साथ बातें करने वाली लड़की का नाम प्रमिला था। वह उन्नीस-बीस वर्ष की आयु की थी और इस समय सलवार, कुरता और कन्धों पर दुपट्टा डाले तथा दो चोटियां पीठ पीछे लटकाये, कर्जन रोड पर चली जा रही थी। वह शैल कम्पनी में क्लर्क का काम करती थी। पाँच बजे छुट्टी हुई तो चन्द्रकान्त उसको घूमाने ले जाने के लिए कम्पनी के दरवाज़े पर आया था और दोनों घुमने चल पड़े थे।

प्रमिला ने जब बी० ए० पास किया था, तो उसके पिता का, जो सेन्ट्रल सेक्रेटेरिएट में काम करता था, देहान्त हो गया। प्रमिला का एक छोटा भाई था, जो मैट्रिक में पढ़ता था। उसके पिता ने दस हज़ार का बीमा करवाया हुआ था। वह बीमा कई कारणों से मिल नहीं रहा था। अतएव यह आवश्यक हो गया कि प्रमिला कहीं नौकरी कर ले। प्रमिला का पिता और कोई सम्पत्ति नहीं रखता था।

प्रमिला की माँ का एक सम्बन्धी शैल कम्पनी में क्लर्क का काम करता था। वहाँ एक क्लर्क का स्थान रिक्त होने पर, उसने कह-सुनकर वह

स्थान प्रमिला को दिलवा दिया।

प्रमिला ने चन्द्रकान्त के कॉलेज से ही बी० ए० किया था। चन्द्रकान्त विद्यार्थियों में नेता माना जाता था। इस कारण सब विद्यार्थी उसको जानते थे। प्रमिला भी उसको जानती थी। चन्द्रकान्त ने भी एक-आध बार उसको देखा था।

एक दिन चन्द्रकान्त कांस्टिच्यूशन हाउस से लौट रहा था कि उसे प्रमिला शैल कम्पनी से निकल, घर को जाती दिखाई दी। दोनों का साक्षात्कार हुआ तो नमस्ते हुई और चन्द्रकान्त ने उसको पहचानकर पूछा, "यहाँ किधर घूम रही हो?"

"शैल कम्पनी में काम करने लगी हूँ।"

"बहुत खूब। क्या वेतन मिलता है?"

"एक सौ बीस पर नौकर हुई थी। अब प्रोबेशन पीरियड (परीक्षा का काल) समाप्त हो गया है और डेढ़ सौ रुपया मिलने वाला है।"

"तो देर हो गई है यहाँ काम करते हुए?"

"इस महीने की पहली तारीख को एक साल पूरा हुआ है।"

"बहुत अच्छा है। किसी काम पर तो लगी हो।"

प्रमिला ने मुस्कराकर पूछा, "आप अब क्या करते हैं?"

"मुझको तो काम मिला नहीं। मैं बेकार हूँ।"

"आपने एम० ए० फर्स्ट डिविज़न में किया था न? विस्मय करने की बात है कि आप अभी तक काम नहीं पा सके।"

दोनों कनॉट प्लेस से क्वींस्वे की ओर जा रहे थे। चन्द्रकान्त ने पूछा, "आप किधर जा रही हैं?"

"क्वीन्स्वे पर कुछ सामान खरीदना है।"

"तो चलो। मुझको भी वहाँ से एक राईटिंग पैड लेना है।"

वे बिसाती की एक दुकान पर गये तो प्रमिला ने पौण्ड की फेस क्रीम खरीदी और चन्द्रकान्त ने राईटिंग पैड खरीदा। दाम देते समय दोनों का मूल्य चन्द्रकान्त ने दिया। प्रमिला ने कहा भी, "आप तो बेकार हैं और

मैं कमाती हूँ। ये दाम मुझको देने दीजिये।"

"पर मेरे पिता तो बेकार नहीं हैं। वे तो हज़ार-बारह सौ नित्य पैदा करते हैं।"

"ओह ! पर पिता के आश्रय रहने में तो कोई आनन्द नहीं।"

"पिता-माता का प्रश्न नहीं। जब तक सोशियलिस्टिक सोसायटी की स्थापना नहीं हो जाती, तब तक धनियों के धन पर जीवन व्यतीत करना किसी प्रकार भी अनुचित नहीं।"

"अपने पिता के धन से तो ठीक है, पर किसी अन्य के धन को हाथ लगाइयेगा तो जेल की हवा खानी पड़ेगी।"

"प्रमिला ! नहीं। मैं एक वकील का समझदार पुत्र हूँ। मैं जेल से बचकर ही कार्य करूँगा। पर अभी तो मेरे पिता मुझको देते हैं। इस कारण कहीं बाहर छापा डालने की आवश्यकता अनुभव नहीं होती।"

"कुछ काम करिये चन्द्रजी !"

"वह तो कर रहा हूँ।"

"आप तो कहते थे कि आप बेकार हैं ?"

"मैं तुम्हारे मुकाबिले में बेकार हूँ। इस पर भी कार्य तो करता ही हूँ। मैं देश में क्रान्ति उत्पन्न करने में संलग्न हूँ।"

"उससे क्या होगा ?"

"तो तुम 'रेवोल्यूशन' के अर्थ नहीं समझतीं ?"

"समझती हूँ, परन्तु उससे लाभ क्या होगा ? विशेष रूप में आपको ?"

"मुझको वही लाभ होगा, जो अन्य कोटि-कोटि बेकारों को होगा। क्रान्ति के पश्चात् समाज का यह कर्त्तव्य हो जायेगा कि सबको काम दे और काम का वेतन दे। वेतन खाने-पहिनने और मकान के रहने के लिए पर्याप्त होना चाहिये।"

प्रमिला चुपचाप सुनती रही और चन्द्रकान्त सोशियलाईज़ेशन के गुणों का बखान करता रहा। दोनों कर्नॉट प्लेस से चाँदनी चौक की

ओर चल पड़े। प्रमिला का घर चाँदनी चौक में कूचा घासीराम में था।

यह भेंट प्रमिला और चन्द्रकान्त में मित्रता का श्रीगणेश बन गया। प्रायः नित्य दोनों में सायं पाँच बजे भेंट हो जाती। शनिवार को शैल-कम्पनी का कार्यालय मध्याह्न दो बजे बन्द होता था और चन्द्रकान्त दो बजे ही वहाँ पहुँच जाता था।

प्रमिला कम्युनिस्ट पार्टी में सम्मिलित हो गई और उसने शैल कम्पनी में क्लर्कों की तथा कर्मचारियों की, जिनका वेतन दो सौ रुपये से कम था, एक यूनियन बना ली।

: ६ :

इस दिन चन्द्रकान्त प्रमिला को, भारत के विधान की त्रुटियां और समाज की पतित अवस्था बता रहा था। वह कह रहा था कि भारत की दुर्गति का एकमात्र कारण डालमिया इत्यादि का धनी-वर्ग ही है।

प्रमिला की यूनियन में प्रायः पढ़े-लिखे आदमी सम्मिलित थे। वे आर्थिक दृष्टि से मध्यम वर्ग से सम्बन्ध रखते थे। इस कारण वह उनसे बातचीत करते समय मज़दूरों की भाँति धींगामस्ती नहीं कर सकती थी। उनको समझाने के लिए उसे युक्तियाँ देनी पड़ती थीं और इसीलिए वह चन्द्रकान्त से बाल की खाल उतार रही थी।

प्रमिला का कहना था, "माना कि भारत के विधान में बहुत त्रुटियाँ हैं और उसमें सुधार की आवश्यकता है, परन्तु इससे यह कैसे सिद्ध हो गया कि सब पार्टियों को समाप्त कर दिया जाये और सोशियलिस्टिक समाज का निर्माण किया जावे।

"आपने अभी कहा है कि सोशियलाईजेशन के लिए डेमोक्रेटिक समाज उपयुक्त नहीं है। उसके लिए अनेक अथवा एक से अधिक पार्टियाँ रखना हानिकर होगा। तो मैं पूछती हूँ कि क्या सोशियलाईजेशन इतना आवश्यक है कि उसके लिए विचार-स्वतन्त्रता छीन लेने में हानि नहीं?"

"अनेक पार्टियाँ रखने की क्या आवश्यकता है ! कानून बना दिया जाये कि सब लोगों की एक ही पार्टी हो और वह पार्टी जनता की पार्टी कहाये।"

"जब किसी के विचार उस पार्टी के आधारभूत सिद्धान्तों से न मिलें तो वह क्या करे ?"

"वह पार्टी को छोड़ दे।"

"जब पार्टी छोड़े हुए परस्पर एकमत हों, तब वे अपने को एक नवीन पार्टी में संगठित क्यों न कर लें ?"

"नहीं, यह नहीं होना चाहिये।"

"यही तो पूछती हूँ कि क्यों ? पार्टी के साथ मतभेद होने पर, पार्टी से बाहर होकर, दूसरे बाहर हुओं से मतैक्य होने पर नवीन पार्टी का निर्माण क्यों न हो ?"

"यह नहीं चल सकेगा। इससे सब समय परस्पर बकझक में व्यतीत होगा।"

"यह कोई युक्ति नहीं। मान लीजिये आज कांग्रेस पंचवर्षीय योजना बना रही है। मुझको उस योजना के सफल होने में सन्देह है। मैं कांग्रेस से बाहर तो आ सकती हूँ, परन्तु अपने विचार वालों के साथ संगठन नहीं बना सकती। यह तो मेरे और जनता के मस्तिष्क पर ताला लगाने के तुल्य है।"

"देखो प्रमिला ! जब सत्ताधारी पार्टी से असन्तुष्ट जनों की संख्या बहुत हो जायेगी, तब वे क्रान्ति उत्पन्न कर सकते हैं।"

"क्रान्ति तो कभी भी हितकारक नहीं हो सकती। यह तो एक हथोड़े की चोट से पत्थर फोड़ने के समान है। जैसे हथोड़े की चोट से कितने-कितने बड़े और किस-किस रूप-रेखा के टुकड़े होंगे, कहा नहीं जा सकता, उसी भाँति क्रान्ति के प्रभाव से समाज का क्या कुछ बन जायेगा, कहना कठिन है। यह कुशल नीतिज्ञों का ढंग नहीं। क्रान्ति तो अनपढ़, मूर्ख और अयोग्य लोगों का हथियार है। मैं अपने देश में तो इसका

प्रयोग नहीं चाहती। मैं चाहती हूँ कि कोई कुशल शिल्पकार बहुत ही बारीक छैनी से छील-छीलकर देश का भविष्य निर्माण करे, जिससे कम-से-कम हानि होकर एक सुन्दर समाज का निर्माण हो सके।"

"पर हम इतने लम्बे काल तक प्रतीक्षा नहीं कर सकते। जब तक एक कुशल शिल्पकार आये और फिर नज़ाकत के साथ एक वर्ष का कार्य सदियों में समाप्त करे।"

"विनाश तो कोई भी कर सकता है पर निर्माण-कार्य कोई विरला ही कर सकेगा और हमको ऐसे कुशल व्यक्ति की प्रतीक्षा करनी ही होगी।"

इस प्रकार की युक्तियों से चन्द्रकान्त खीझ गया था। उसने कुछ उद्विग्न होकर कहा, "प्रमिला! क्या हो गया है, तुमको आज? एकदम क्रान्तिकारी से विकासवादी बन गई हो।"

"देखिये चन्द्रजी! मेरी यूनियन में सब पढ़े-लिखे लोग हैं। अस्सी रुपये महीने से कोई कम वेतनधारी नहीं है। सब मध्यम श्रेणी में उत्पन्न हुए हैं। वे युक्ति करते हैं तो मुझको उनकी युक्ति का उत्तर युक्ति से देना पड़ता है। 'स्लोगन' से उनको सन्तुष्ट नहीं किया जा सकता।"

"पर उदाहरण से तो सिद्ध किया जा सकता है। रूस में १९१७ में क्रान्ति हुई और पश्चात् द्रुत गति से चमत्कारिक उन्नति हुई। यह उदाहरण देकर उनका मुख बन्द किया जा सकता है।"

"आपके मस्तिष्क में यह उदाहरण बहुत मूल्य रखता है न? परन्तु एक दूसरा पक्ष भी है। उसको आप हवा में उड़ा नहीं सकते। उनका कहना है कि प्रथम तो रूस के विषय में जो भी ज्ञान हम को है, वह वहाँ की सरकार से दिया हुआ है। अतएव जो भी सर्टिफिकेट रूस की सरकार अपने को देती है, वह प्रमाण नहीं हो सकता। दूसरे, रूस में स्टालिन जैसे नेता हैं, जिसने हिटलर से संधि कर और उस सन्धि से आधा पोलैण्ड अपने अधिकार में कर, संसार की सभ्य समाज को अपना शत्रु बना लिया था। इस समाज का यह मत है कि यदि स्टालिन हिटलर से सन्धि न करता तो दूसरा महायुद्ध होता ही नहीं। पचास लाख मनुष्यों

की हत्या और खरबों रुपयों की हानि, अनेक देशों का सर्वनाश, सबका-सब स्टालिन के मत्थे है।

"लोग यह कहते हैं कि रूस की यह ग़लत नीति इस कारण बनी कि रूस में क्रान्ति हुई और सब बुद्धिमान आदमी या तो मार दिये गए, या वे वहाँ से भाग गये। पीछे रह गये स्टालिन। स्टालिन ने हिटलर का साथ दिया और संसार में यह तबाही मचाई। यह नहीं कि इस सन्धि से रूस को कोई लाभ हुआ हो। अन्त में रूस भी इस युद्ध की लपेट में आ गया और जो तबाही वहाँ हुई, वह वर्णनातीत है।

"रूस यदि इंग्लैण्ड से मित्रता रखता, जैसी कि उसको पीछे करनी पड़ी थी, तो यह महान् संकट यूरोप पर कदाचित् आता ही नहीं। इसके अतिरिक्त स्टालिन एक अयोग्य शासक सिद्ध हुआ है। बीस-बाईस वर्ष के शासन के पश्चात् भी रूस संसार के सब सभ्य देशों का शत्रु बना हुआ है। अपने देश में भी वह लाखों को गोली का शिकार बना और कन्सेन्ट्रेशन कैम्पों में भेजकर, काम चला सका है।"

"पर वहाँ की वैज्ञानिक उन्नति की ओर भी तो ध्यान देना चाहिये।"

"होगी। कौन जानता है? एक बात का पता लगा है कि युद्ध-सामग्री तो रूस ने बहुत बना ली है, परन्तु क्या इतना मात्र उन्नति का सूचक है?

"देखिये, जब मेरी यूनियन के सदस्य मुझसे पूछते हैं कि उन्नति मानसिक विकास का नाश कर, युद्ध-सामग्री की उपज को कहते हैं क्या, तो मैं यह कहने के लिए विवश हो जाती हूँ कि वास्तविक उन्नति तो मानवता की उन्नति को ही कहते हैं। तब वे पूछते हैं कि जहाँ लिखने, बोलने और विचार करने की स्वतन्त्रता नहीं, वहाँ मानवता क्या पनपेगी? अठारह करोड़ रूसी दासता की दृढ़ शृङ्खलाओं में बँधे पड़े हैं। उनको सोचना होता है तो बोलशिविक पार्टी के अनुकूल, उनको बोलना पड़ता है तो वहाँ की सरकार की नीति के अनुकूल और उनको लिखना होता है तो स्टालिन की आज्ञानुसार। एक पिंजड़े में बन्द तोते को चूरमा

खिलाया जा सकता है, पर वह तोते की स्वतन्त्रता का सूचक नहीं हो सकता।

"इसी प्रकार यदि तोते का पिंजड़ा अति सुखप्रद और सुन्दर बना हो तो वह तोते की उन्नति का सूचक नहीं माना जायेगा।"

"पर यदि तुम उनका उत्तर नहीं दे सकतीं, तो काम चल नहीं सकता।"

"काम तो चल रहा है। यूनियन का उद्देश्य है छोटे वेतन वाले कर्मचारियों की दशा सुधारना और यह पूरा हो रहा है। कम्पनी वाले हमारे वेतन में उन्नति करने का विचार कर रहे हैं। वे हमें बोनस देने लगे हैं और हमारे तथा हमारे परिवार वालों के लिए डॉक्टर तथा दवाइयों का खर्चा मंजूर हो चुका है।"

"पर इतने मात्र से कार्य नहीं चलेगा। हमको तो क्रान्ति उत्पन्न करनी है और उसके लिए वातावरण बनाना है। इस डेमोक्रेसी का ढोंग जनता पर खोलना है और यहाँ पर 'डिक्टेटरशिप ऑफ दि प्रोलि-टेरिएट' अर्थात् श्रमिक वर्ग का राज्य स्थापित करना है।"

"राज्य अथवा तानाशाही?"

"श्रमिक वर्ग की तानाशाही ही वास्तविक प्रजातन्त्रात्मक वस्तु होगी।"

"अर्थात् देश में श्रमिक वर्ग के अतिरिक्त कोई अन्य वर्ग नहीं होगा?"

"नहीं।"

"तो मैं और आप भी नहीं होंगे क्या? आप तो कुछ भी नहीं हैं, बेकार हैं और मैं श्रमिक कही नहीं जा सकती। दो माशे की कलम चलाने वाला तो श्रमिक नहीं हो सकता।"

"कौन कहता है कि तुम श्रमिक नहीं हो?"

"मैं नहीं हूँ। क्योंकि मेरी मनोवृत्ति श्रमिकों की भाँति दासता की नहीं है।"

"तो तुम यूनियन को छोड़ दो। तुम्हारे स्थान पर और कोई, जिसका श्रमिक वर्ग के कल्याण में तुमसे अधिक विश्वास है, कार्य करेगा।"

"मेरे मन में श्रमिक वर्ग के कल्याण की भावना और विश्वास तो है, परन्तु उस ढंग से नहीं, जिससे आप चाहते हैं।"

"तुम्हारे ढंग ग़लत और चिरकाल में फलीभूत होने वाले हैं।"

"पर वह सुन्दर है, सुखकारक है और कम-से-कम हानि करने वाला है।"

"ऐसी अवस्था में हमारी डिक्शनरी में तुम जैसों का नाम बूर्जुआ है, रक्त चूसने वाले।"

प्रमिला हँस पड़ी। इस समय वे इण्डिया गेट के बाहर पहुँच गये थे। प्रमिला को चन्द्र से इस प्रकार के तीक्ष्ण शब्द सुनने का अभ्यास हो चुका था। इस कारण वह हँसकर कहने लगी, "अच्छा छोड़िये इस बात को। बताइये हमारा विवाह कब होगा?"

"ऐसी अवस्था में विवाह न हो तो अच्छा है, अन्यथा हम घर पर भी सदा लड़ते रहेंगे।"

"परन्तु चन्द्र जी! अब तक जो-कुछ हो चुका है, उसकी उपस्थिति में विवाह हुए बिना रह नहीं सकता।"

"क्यों, क्या दिन चढ़ गये हैं?"

"नहीं, यह बात नहीं। परन्तु वचन तो हो चुके हैं।"

"वचन कुछ अर्थ नहीं रखते। उनका प्रमाण क्या है?"

"भगवान् प्रमाण है।"

चन्द्र हँसने लगा। प्रमिला इस विकराल हँसी से रुँआसी-सी हो गई। वह कुछ विचार करने के लिए खड़ी हो गई। चन्द्रकान्त ने, जो हँसता हुआ कुछ आगे निकल गया था, घूमकर देखा तो लौट आया और प्रमिला की आँखों में आँसू देखकर बोला, "तुम तो रो रही हो! तभी तो मैं कहता हूँ कि तुम बूर्जुआ मनोवृत्ति रखती हो। यह रोना-धोना सरमायेदारों के हथकण्डे हैं। चलो मेरे साथ।" उसने उसकी बाँह पकड़कर साथ घसीटते हुए कहा, "अगर हमारे दोनों का जीवन-कार्य समान है, तब तो विवाह होगा और अगर तुम समझती हो कि तुम क्रान्ति

के मेरे कार्य में सहयोग नहीं दे सकतीं, तब तो विवाह नहीं हो सकेगा।"

"पर यह बात तो तुमको पहिले विचार करनी चाहिए थी। मैंने जैसा समझा, वैसा किया और जो बात समझ में नहीं आती, वह मैं तो कर नहीं सकती। हम हिन्दुओं में तो विवाह बिना एक-दूसरे के विचार जाने भी हो जाते हैं। घर के प्रबन्ध में हमको एकमत होना चाहिए। राजनीतिक झगड़े में और अन्य सार्वजनिक कामों में पति-पत्नी का मतैक्य होना आवश्यक नहीं होता।"

"मैं ऐसा हिन्दू नहीं हूँ।"

"तो फिर आप जाइये। मुझको पकड़कर किधर लिये जा रहे हैं?"

"मैं समझता हूँ कि तुमको मार्ग दिखाना मेरा काम है, इसीलिए साथ लिए जा रहा हूँ। परन्तु विवाह तो तब ही होगा जब मतैक्य हो जायेगा।"

"मतैक्य तो हो सकता है। आपकी भी नौकरी लग जाये और बेकार रहने से उत्पन्न मस्तिष्क की बोखलाहट दूर हो जाये, तब आप भी वैसा ही सोचने लगेंगे, जैसा मैं विचार करती हूँ।"

"यह तुम युक्तिसंगत बात कर रही हो क्या?"

"मैं समझती हूँ कि जब आप किसी कार्यालय में, दिन में आठ घण्टे काम करेंगे और काम से थक कर घर जा कर सो जायेंगे, तब ही आपके और मेरे विचारों में समानता उत्पन्न हो सकती है। इस समय तो आप बेकार की बातें करते हैं।"

: ७ :

चन्द्रकान्त, नियमानुसार रात के साढ़े आठ बजे खाने के समय घर पर पहुँचा तो नीरा उससे पहले पहुँची हुई थी और खाने की मेज पर बैठी थी। वह भोजन की प्रतीक्षा कर रही थी। भोजन परसने वाला माथुर साहब और उनकी पत्नी की प्रतीक्षा कर रहा था।

चन्द्रकान्त नीरा के सामने बैठ गया। नीरा ने ध्यान से चन्द्र की

ओर देखा और पूछ लिया, "वह कौन लड़की थी, जिसकी बाँह पकड़कर इण्डिया गेट की ओर ले जा रहे थे ?"

"और वह कौन सिख युवक था, जिसके साथ बाल कटवाने के पहिले ही दिन घूम रही थीं ?"

"बहुत बद्‌तमीज़ हो गये हो तुम ? लड़कियों को इस प्रकार बाँह से पकड़कर पब्लिक जगहों पर घसीटना तो असभ्यता का लक्षण है ।"

"मैं इस सभ्य संसार की गतिविधि से ऊब गया हूँ । कितने रुपये दिये हैं बाल कटवाने के ?"

"बहुत चालाक हो गये मालूम होते हो, चन्द्र ?"

"एम० ए० पास किये दो वर्ष हो गये हैं और इस काल में बहुत ठोकरें खाई हैं । अब समझ गया हूँ कि यह समाज रहने योग्य नहीं है । इसको विध्वंस कर एक नवीन वस्तु निर्माण करना चाहता हूँ । पर छोड़ो इस बात को । वह युवक अच्छा सुन्दर प्रतीत होता था । यदि विवाह करने का विचार हो तो मैं उसकी सिफारिश करूँगा ।"

"तुम्हारी सिफारिश पर ही तो मेरा विवाह होगा, ठीक है न चन्द्र ?"

इस समय उनके माता-पिता आ गये और दोनों ने बातें बन्द कर दीं । नीरा के माता-पिता का ध्यान उनकी बातों की ओर नहीं गया । कारण यह कि उन्होंने डाइनिंग हॉल में दाखिल होते ही नीरा के कटे बाल देखे थे । वे इस विषय में ही विचार कर रहे थे । नीरा की मां ने कुछ उत्तेजित हो पूछा, "यह क्या किया है तुमने ?"

"बाल कटवाये हैं मां ! नित्य कंघी करने में बड़ी कठिनाई अनुभव कर रही थी ।"

"तो क्या अब कंघी नहीं करनी पड़ेगी ?" मिस्टर माथुर ने पूछा ।

"पर पिताजी ! क्या यह सुन्दर दिखाई नहीं देते ?" नीरा ने मुस्कराते हुए पूछा ।

"सुन्दर तो पहिले भी थे । हाँ, तब तुम चोटी बाँध कर, इनके सौन्दर्य

को छुपाकर रखती थीं। अब तुमने इनके सौन्दर्य को खोलकर जने-खने के देखने के लिए कर दिया है।"

"जब है तो दिखाने में हानि क्या है?"

"मुझको भय है कि तुम्हारे आफिस में इस पर आपत्ति न की जाये।"

"नहीं की जायेगी। वहाँ एक लड़की तो पहिले ही बाल कटवा कर आती है। केवल वह मेरे जितनी सुन्दर नहीं है। न ही उसके बाल इतने गुप्फेदार हैं।"

माथुर चुप कर रहा, परन्तु नीरा की मां को इससे सन्तोष नहीं हुआ। उसने कहा, "मैं समझती हूँ कि जब तक विवाह न हो जाये, यह शृंगार इत्यादि नहीं करना चाहिए। इससे बदनामी हो सकती है।"

"माँ! बदनामी करने वालों से डरना था तो इतना पढ़ाया क्यों था? साथ ही शृंगार की जितनी आवश्यकता विवाह के पहले होती है, पीछे नहीं होती। पति ढूँढने के लिए यही तो एक साधन है।"

"न जाने क्या होता जाता है तुमको! तुम अपने सौन्दर्य का प्रदर्शन कर पति को ढूँढ रही हो क्या?"

"मैं तो विवाह नहीं करूँगी।"

"तो यह सिर किस लिए मुंडाया है?"

"सर्वसाधारण में सुन्दर दीखने के लिए। यह पाप नहीं है। प्रकृति ने सौन्दर्य दिया है तो उसको कपड़ों में लपेट कर रखने के लिए नहीं।"

माथुर ने बात बढ़ती देखी तो मेज़ पर रखी घण्टी बजा दी। यह बैरा को भोजन लाने की सूचना थी। बैरे के आने पर सब चुप कर गये। बैरा के सामने घर की बातें न करने की प्रथा थी।

भोजन होने लगा और सब चुपचाप खाने लगे। इस पर भी चारों के दिमाग़ में विचार उछल-कूद मचा रहे थे। भोजन समाप्त हुआ और बैरे ने बर्तन उठा लिये। पश्चात् कॉफी सामने रख दी गई। चन्द्र सबके लिए कॉफी बनाने लगा तो माथुर ने उठकर डाइनिंग हॉल का दरवाज़ा बन्द कर दिया। पश्चात् अपने स्थान पर बैठकर नीरा से पूछने लगा,

"उस दिन तुम्हारे साथ डॉक्टर बलवन्तसिंह आया था। वह तुमसे विवाह करने की मेरी स्वीकृति चाहता था। मैंने उससे कहा था कि वह तुमसे पूछ ले। तो तुम दोनों में बात हुई है क्या?"

"हुई है और हमनें निर्णय किया है कि हमारा विवाह नहीं होगा।"

"क्यों?" नीरा की माँ ने माथे पर त्योरी चढ़ाकर पूछा, "उसमें क्या खराबी है?"

"खराबी कुछ नहीं माँ! मैंने विवाह नहीं करना। मैं किसी पुरुष के अधीन होकर नहीं रह सकती।"

"पर उसके साथ मोटर में घूम सकती हो।" चन्द्र ने कॉफी का प्याला नीरा के सामने रखते हुए कहा।

"चन्द्र!" नीरा ने डाँटते हुए कहा, "तो मैं तुम्हारी बात भी बता दूँगी।"

"क्या बता दोगी? यही न कि एक लड़की को, जो पथ-भ्रष्ट होने जा रही थी, बाँह से पकड़ कर मार्ग पर ला रहा था।"

"पर तुम दोनों लॉन में घूम रहे थे न? वहाँ पथ-भ्रष्ट होने की और मार्ग पर लाने की बात कहाँ से आ गई थी?"

"नीरा! तुम नहीं समझ सकतीं। वह लड़की शैल कम्पनी के कर्मचारियों की यूनियन की सेक्रेटरी है। वह यूनियन के सदस्यों को ग़लत मार्ग पर ले जा रही थी और मैं उसको समझा रहा था।"

"ओह!" माथुर ने विस्मय प्रकट करते हुए कहा, "तो तुम लड़कियों से विचार-विमर्श बाँहों से पकड़ घसीटते हुए किया करते हो?"

"औरतों से ऐसे ही वाद-विवाद होता है, पिताजी! वह युक्ति तो कर नहीं सकतीं। उन पर सम्मोहन मन्त्र डालकर, उनको समझाया जाता है। इस समय दिल्ली में कई लड़कियाँ हैं, जो पार्टी का कार्य करती हैं और उनको ठीक विचार की रखने के लिए, हम लड़के उन पर प्रेम प्रकट कर, अथवा अपने को उनसे अधिक बलवान सिद्ध कर अपना प्रभाव जमा कर रखते हैं। वे हमारे सम्मोहन में फँसी हुई, हमसे भी

अधिक काम करती हैं।"

माथुर कॉफी पीता हुआ गम्भीर विचार में पड़ गया। उसे चुप देख नीरा ने कहा, "पिताजी! चन्द्र फ्रायड की फिलौसोफी पर का ि कर रहा प्रतीत होता है।"

"मैं यह विचार कर रहा हूँ कि भारत में दासता नये-नये रूपों में प्रकट हो रही है। तुम लोगों के मन दास हो चुके हैं। कुछ अंशों में विदेशी फ़ैशन के, कुछ अंशों में विदेशी विचारधारा के और बहुत अंशों में अपनी इच्छाओं के।"

नीरा खिलखिलाकर हँस पड़ी और कॉफी समाप्त कर कहने लगी, "कल फिर इस पर बहस करेंगे। ऐसे मसले तो एक दिन की पेशी में समाप्त नहीं हो सकते।"

"देखो नीरा!" माथुर ने उसको बैठ जाने का संकेत कर कहा, "मैं अदालत लगाकर नहीं बैठा, जो पेशियों-पर-पेशियाँ लेता जाऊँगा और न ही मेरे सामने कोई मुकद्दमा है। अपने कर्मों के विधान से अथवा किसी घटना विशेष के कारण, तुम दोनों मेरे घर में पैदा हो गये हो। मैंने तुम दोनों को उच्च-से-उच्च शिक्षा, जो तुम ले सके, देने का प्रबन्ध कर दिया। अब इस सबका बदला मैं यह चाहता हूँ कि हमको बदनाम न करो।

"बदनाम करना भी एक कानूनी शब्द है। सर्व साधारण में मेरे प्रति घृणा उत्पन्न करने से मुझको बदनाम करना कहा जायेगा। यदि तुमने कुछ ऐसा किया, जिससे लोगों के मन में मेरे लिए घृणा अथवा तिरस्कार की भावना उत्पन्न हुई, तो तुम मेरे प्रति अपना कर्त्तव्य-पालन नहीं करोगे।

"अब तुम जा सकते हो। जो तुम्हारे मन में आये करो। हाँ, यदि किसी बात में मेरी सम्मति लेना चाहो तो ले सकते हो।"

इतना कह माथुर डाईनिंग हॉल से निकल गया। नीरा की माँ अभी भी बैठी थी। चन्द्र और नीरा अवाक् पिताजी को जाते देखते रह गये।

नीरा की माँ ने नीरा को कहा, "मैं समझती हूँ कि तुमको विवाह के लिए राज़ी हो जाना चाहिये।"

"माँ!" नीरा ने माँ की ओर घूमकर कहा, "मैं समझती हूँ कि मुझको आपका घर छोड़ देना चाहिये। मेरा यहाँ रहना आपको ठीक प्रतीत नहीं हो रहा।"

"नीरा! कुछ होश की बात करो। किसने कहा है तुमको यहाँ से चले जाने के लिये?"

"पिताजी ने कहा कि हमारे कारण उनकी बदनामी हो सकती है।"

"इस कारण तुम हमारी बदनामी करने पर तुल गई हो? तुम्हारे बिना विवाह किये, अपना पृथक् घर बनाकर रहना तो भारी बदनामी का कारण हो जायेगा।"

इस पर चन्द्र ने कहा, "दीदी! मुझको भी साथ रखोगी अथवा नहीं?"

"तुम में क्या गुण है? सब लोग तुम्हें उस लड़की को बाँह से पकड़ कर घसीटते देख हँस रहे थे।"

"मैं किसी की कुछ भी परवाह नहीं करता। मैं जो-कुछ कर रहा था, किसी उद्देश्य से कर रहा था और वह उद्देश्य ठीक ही था।"

कुछ निश्चय नहीं हुआ और चन्द्र तथा नीरा अपने माता-पिता के साथ ही रहते रहे!

: ८ :

मोतीराम जेल से छूटने के पश्चात् रामलाल से सम्बन्ध-विच्छेद कर बैठा। इस पर भी दोनों की पत्नियाँ परस्पर मिलती रहती थीं। वे एक-दूसरे के घर आती-जाती थीं। दोनों जानती थीं कि मोतीराम ही नाराज़ है। रामलाल तो रुष्ट नहीं था।

रविवार का दिन था। रानी सुन्दरी से मिलने उसके घर आई हुई थी। मोतीराम होटल में रात-भर ड्यूटी देकर आया था। इस कारण

अपने कमरे में सो रहा था। शोभा और मानिक, रानी के बच्चे भी आये हुए थे और मकान के आँगन में खेल रहे थे। रानी और सुन्दरी एक दूसरे कमरे में बैठी बातें कर रही थीं।

मोतीराम की जाग खुली तो वह आँखें मलता हुआ, अपने कमरे से निकला और उस कमरे में आ गया, जहाँ रानी और सुन्दरी बातें कर रही थीं। मोतीराम को आया देख, रानी ने पायलागूँ की। मोतीराम ने प्रसन्न होकर कहा, "तो रानी है। अच्छा रानी! कैसी हो?"

"आपके आशीर्वाद से सब ठीक है।"

"रामलाल का काम-धन्धा कैसा है?"

"अच्छा ही होगा। मैंने कभी पूछा नहीं।"

"घर का खर्चा ठीक देता है?"

"मुझको जो माँगती हूँ, मिल जाता है।"

"हाँ, तुम जैसी स्त्री को तो कोई भी पुरुष मुख माँगी वस्तु दे देगा। रानी! तुम अपना मूल्य नहीं जानतीं। तभी तुम रामलाल जैसे आदमी के पास रहती हो।"

"क्यों, क्या है उनमें?"

"जानना चाहती हो, तो इधर आओ। मैं बताता हूँ। मुझको तो तुम्हारी दशा देखकर बहुत दुःख होता है।"

"यहीं भाभी के सामने बता दीजिये। इनसे कुछ चोरी थोड़े ही है।"

"यह भी आ जाये, परन्तु यहाँ नहीं।"

रानी ने सुन्दरी का मुख देखा। वह कुछ नहीं समझ सकी थी। उसे विस्मय में चुप देख रानी ने कहा, "आओ भाभी! दादा की बात सुन लेनी चाहिये। ये बड़े हैं, अवश्य कोई तत्त्व की बात कहेंगे।"

रानी उठी तो सुन्दरी भी अन्यमनस्क भाव में उठ साथ चल पड़ी। जब दोनों मोतीराम के कमरे में पहुँचीं, तो मोतीराम ने सुन्दरी को कहा, "यह लो चाबी और उस अलमारी में से भूषणों का डिब्बा निकालो।"

उसी कमरे में एक लोहे की अलमारी रखी थी। सुन्दरी ने चाबी लेकर अलमारी खोली और उसमें से एक बक्स निकालकर ले आई। दो वर्ष की होटल की कमाई, जो मोतीराम ने बैंक में नहीं भेजी थी, सब भूषणों के रूप में, इस डिब्बे में जमा कर रखी हुई थी।

अब तो होटल के अतिरिक्त नैशनल कन्स्ट्रक्शन कम्पनी की आय भी हो रही थी। दोनों में बहुत-सी आय ऐसी थी, जो इन्कम टैक्स वालों को दिखाई नहीं जाती थी। यह सब धन, सोने और भूषणों के रूप में जमा रखा हुआ, इस बक्स में पड़ा था। जब सुन्दरी वह बक्स लाई तो मोतीराम ने उसको खोलकर रानी को दिखाते हुए कहा, "देखे हैं ये?"

रानी ने प्रसन्न हो कहा, "दादा! ये सब भाभी को ले दिये हैं आपने?"

"हाँ।" मोतीराम ने पलंग पर बैठते हुए कहा, "ये मैंने केवल दो वर्ष में पैदा किये हैं। लगभग पचास हज़ार के होंगे। मैं तुमको कहता हूँ कि इसमें से जो चाहो और जितना चाहो ले लो। मैं चाहता हूँ कि तुम सुन्दरी से बाँटकर इसका प्रयोग करो।"

रानी अभी भी इसका अर्थ ठीक-ठीक नहीं समझी। सुन्दरी को इस पूर्ण वार्तालाप से मोतीराम की नीयत पर सन्देह होने लगा था। इससे उसके माथे पर त्योरी चढ़ गई थी। रानी ने समझा कि सुन्दरी को अपने भूषण किसी अन्य से बाँट जाने पसन्द नहीं, इसी कारण वह नाराज़ प्रतीत हो रही है। इस विचार के आते ही उसने कह दिया, "दादा! तुम बड़े भाई होकर यह छोटी बहिन को दे सकते हो, परन्तु ये भाभी के हैं और इनके पास ही रहने चाहियें। इससे भी तो ये मेरे पास ही हैं। इसमें कुछ अन्तर थोड़े ही पड़ता है।"

"अन्तर तो पड़ता ही है। यह अकेली इनका भार सहन नहीं कर सकती। मैं चाहता हूँ कि तुम भी इनमें से लो। मैं तुम दोनों को और भी लाकर दूँगा।"

"नहीं दादा!" रानी ने कमरे से बाहर जाने के लिए घूमते

हुए कहा, "भाभी और ननद में झगड़ा मत कराओ। यह इनका ही हक है।"

परन्तु मोतीराम ने रानी की बाँह पकड़ ली और कहा, "इस प्रकार तुम नहीं जा सकतीं। मैंने जब से तुमको देखा है, तुमको अपने पास रखने की इच्छा रखता हूँ। मान जाओ।"

इससे आगे वह कुछ भी कह नहीं सका। रानी ने एक चपत, उस हाथ से, जो खाली था, मोतीराम के मुख पर लगाई। मोतीराम एक बलिष्ठ और लम्बे-चौड़े कद का आदमी था। उसको रानी की चपत का कुछ पता भी नहीं चला। उसने उसको अपनी ओर खींचकर, अपनी गोदी में बैठा लिया। रानी उसकी पकड़ से छूटने के लिए छटपटाने लगी। वह शोर नहीं मचा रही थी। वह चाहती थी कि मोतीराम की इस मनोवृत्ति का पता उसके पड़ोसियों को न लगे।

सुन्दरी ने मोतीराम को, रानी को पकड़ कर आलिंगन करते देखा, तो वह उसको छुड़ाने का यत्न करने लगी। वह मोतीराम के मुख, आँखों को नाखूनों से नोचने लगी। मोतीराम ने एक हाथ से तो रानी को पकड़ा हुआ था और दूसरे से वह सुन्दरी को दूर हटाने का यत्न कर रहा था। मोतीराम का हाथ सुन्दरी के मुख पर पड़ा तो उसने ज़ोर से उसकी एक उँगली को दाँतों में चबा डाला। इससे तो मोतीराम चिचला उठा और उसकी, रानी पर दूसरे हाथ की पकड़ छूट गई। रानी छूटते ही कमरे से बाहर भागी और शोभा और मानिक को लेकर मकान से नीचे उतर कर चल दी।

जब वे गली के बाहर पहुँचे तो शोभा ने कहा, "माँ! तुम्हारे मुख से रक्त बह रहा है।"

छटपटाने में उसके दाँत को चोट लग गई थी और उसमें से रक्त बह रहा था। रानी ने दुपट्टे से मुख पूँछा और कहा, "जल्दी चलो। हमें घर पहुँचना है।" फ़ैज बाज़ार में पहुँच उसने टांगा किया और घर जा पहुँची।

मोतीराम ने जब रानी को जाते देखा तो उँगली के चबाये जाने से चिल्लाते हुए कहा, "अरे बाबा ! अब तो छोड़ो। वह चली गई।"

सुन्दरी ने मोतीराम की उँगली छोड़ी तो मोतीराम, उसमें से बह रहे रक्त को देख क्रोध से पागल हो उसको पीटने लगा। उसने मुक्कों और लातों से मार-मार कर सुन्दरी को अधमरा कर दिया। जब वह भूमि पर अर्ध-चेतन अवस्था में लेट गई, तो वह उसको वैसे ही पड़ा छोड़, होटल को चला गया।

सुन्दरी की नौकरानी चन्दा घर का काम करने आई तो मालकिन को लहू-लुहान कमरे में भूमि पर पड़े देख विस्मय करने लगी। उसके भय का ठिकाना नहीं रहा, जब उसने पलंग पर भूषणों की सन्दूकची खुली देखी। वह समझी कि घर में डाका पड़ा है और भगवान् की कृपा से ही सुन्दरी और भूषण बच गये हैं। चन्दा ने सुन्दरी के घावों को धोया और उन पर टिंक्चर लगा दी। बीसियों स्थानों पर सूजन आ गई थी। चन्दा उन स्थानों पर सेंक करने लगी। उसने मालकिन को दूध पिलाकर पलंग पर लिटा दिया। उस रात भोजन नहीं बना और रात बहुत देर तक चन्दा बैठकर चली गई।

अगले दिन जब चन्दा आई तो सुन्दरी उठकर पलंग पर बैठी हुई थी। वह शौचादि के लिए जा तो सकी थी, परन्तु उसकी कमर और पीठ में पीड़ा हो रही थी। चन्दा के आने पर उसने कपड़े पहिने और घर से जाने को तैयार हो गई। घर से निकल, घर को ताला लगा, उसने चाबी चन्दा को देकर कहा, "चाबी लालाजी को होटल में दे आओ और कहना कि मैं रानी के घर जा रही हूँ। उनको यह भी कह देना कि अब वे मुझको लेने न आयें। मैं आऊँगी नहीं।"

अब चन्दा को समझ आई कि सुन्दरी को मोतीराम ने पीटा है। यद्यपि वह इस पीटने का कारण नहीं समझ सकी थी, तो भी जो दुर्दशा उसने सुन्दरी की पिछले दिन देखी थी, वह उसको मोतीराम से घृणा करने के लिए पर्याप्त थी। वह चाबी हाथ में लेकर सुन्दरी का मुख

देखती रह गई। इस पर सुन्दरी ने कहा, "चाबी देकर रानी के घर आ जाना। तुम्हारी वहाँ नौकरी लगवा दूँगी।"

चन्दा गई तो सुन्दरी ने टैक्सी कर ली और कर्नॉट प्लेस को चल पड़ी। रामलाल अभी दुकान पर नहीं आया था। गोकुल दुकान के बाहर बरामदे में भंगी से सफाई करवा रहा था। अन्य नौकर दुकान के बाहर खड़े हो, दुकान खुलने की प्रतीक्षा कर रहे थे।

सुन्दरी के मुख पर, घावों पर टिंक्चर-आयोडिन लगने के निशान बने थे। इससे जब वह टैक्सी से उतर कर लँगड़ाती हुई मकान पर चढ़ने लगी तो गोकुल और अन्य कर्मचारी देखने लगे। गोकुल ने आगे बढ़ कर पूछ लिया, "भाभी! क्या हुआ है?"

"बैल ने मारा है, गोकुल भैया!"

गोकुल ने आश्रय देकर उसको सीढ़ियों पर चढ़ाया। रामलाल बाहर बरामदे में बैठा प्रातः का नाश्ता ले रहा था। उसने गोकुल के कन्धे पर हाथ रखे सुन्दरी को आते देखा तो एक क्षण तो भौंचक्का हो देखता रह गया। पश्चात् तुरन्त ही अपने को सम्हाल कर, उसने भाग कर सुन्दरी का हाथ पकड़ा और अपने समीप रखी कुर्सी पर बैठाकर पूछने लगा, "भाभी! कैसे आई हो? बहुत...।" वह कहते-कहते रुक गया। गोकुल से बोला, "गोकुल! चलो दुकान खोलो।"

गोकुल गया तो रामलाल ने कहा, "रानी भीतर लेटी है। उसको कुछ विशेष चोट तो नहीं आई। इस पर भी वह इतनी दुःखी है कि उसके शरीर की पूर्ण शक्ति क्षीण हो गई प्रतीत होती है।"

"मैं उसको देखने आई हूँ और...।" इससे आगे वह कह नहीं सकी। उसकी आँखों से आँसू बहने लगे।

"भाभी! रो रही हो?"

"भैया रामलाल! और कर ही क्या सकती हूँ? मैं तुम्हारे दादा का घर छोड़ आई हूँ, सदा के लिए।"

"भाभी! यह क्या कह रही हो?"

"रामलाल भैया ! इसमें तुम कुछ मत कहो। यह मेरे आत्मा की बात है। यदि तुमको मेरे यहाँ रहने में असुविधा होती हो तो कहीं दूसरी जगह चली जाऊँगी। रामलाल ! मैं तुम पर बोझा नहीं बनूँगी। तुम्हारा काम-धन्धा कर दिया करूँगी।"

"राम-राम भाभी ! क्या कहती हो ? तुम यहाँ रहो। जब तक मन करे और रह सको, रहो। चलो, तुमको रानी के पास ले चलूँ।"

वह सुन्दरी को आश्रय दे कर उस कमरे में ले गया, जहाँ रानी लेटी हुई थी। रानी सुन्दरी को देखकर पलंग पर बैठ गई और बोली, "तो भाभी ! तुम आ गई हो। मैं तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही थी। तुमने मेरी जान बचाई और मैं उस पिशाच के हाथों तुमको छोड़कर चली आई थी। मुझको तुम्हें छुड़ाने का यत्न करना चाहिए था। पर मुझको भय लग गया था कि वह तुमको मार डालेगा। भगवान् का धन्यवाद है कि तुम आ गई हो।"

"मैं उसको छोड़ आई हूँ। रानी ! मैं तुम्हारे यहाँ नौकरी करने आई हूँ। रामलाल ने कहा है कि घर की मालकिन से पूछ लूँ।"

रानी हँस पड़ी। उसने कहा, "ये हँसी करते हैं। भाभी ! तुम रहो। जब तक मन करे, अथवा जब तक तुमको कोई यहाँ रहने दे। नौकर बनकर नहीं, घर में सब रहने वालों की माँ बनकर।"

सुन्दरी ने कृतज्ञता से रानी की ओर देखा तो रानी ने उसे गले लगा लिया।

: ६ :

मोतीराम सुन्दरी को अधमरी कर मकान से निकल, सीधा डॉक्टर की दुकान पर पहुँचा और वहाँ पर अपनी उँगली की मरहम पट्टी करा कर होटल चला गया। उसका विचार था कि यदि सुन्दरी मरी नहीं तो चन्दा नौकरानी उसकी मरहम पट्टी कर और सेंक-मालिश कर उसको ठीक कर लेगी। अब उसको घर जाने में रुचि नहीं रही थी। अब वह

होटल में पहुँचा तो उसके विभाग के खुलने का अभी समय नहीं था। इस कारण वह मुख्य होटल में जा पहुँचा। वहाँ कांग्रेस चौकड़ी बैठी थी। सोहनसिंह भी उसमें था। चौधरी मथुरासिंह बता रहा था, "सोहन-सिंह! सरकार ने प्रथम पंचवर्षीय योजना बनाई है। उसमें छः हज़ार करोड़ रुपया खर्च होने वाला है। अब तुम्हारी इस नेशनल कन्स्ट्रक्शन कम्पनी की पाँचों घी में हैं। मैं यह समझता हूँ कि तुम यह होटल बन्द कर दो। इसमें क्या बनता है?"

"यह ठीक है, चौधरी साहब! दो-अढ़ाई सौ रुपया नित्य मिलता है, परन्तु मैं यह काम रुपये के लिए नहीं करता। यह काम तो बड़े-बड़े अफ़सरों से मुलाकात के लिए खोल रखा है। अभी उस दिन श्री मन्मथदास आये थे। जाते समय कह गये, 'सोहनसिंह! कुछ काम मेरे लायक हो तो बताना।' वास्तव में यह धन्धा तो उन लोगों के लिए ही है।

"इस प्रकार सैकड़ों मित्रों और मुहल्ले वालों के काम करता हूँ और निर्वाचन के समय चौधरी साहब की सेवा करने का अवसर मिलेगा।"

इस समय उँगली पर पट्टी बाँधे और हाथ गले में लटकाये हुए मोतीराम वहाँ आ पहुँचा। सब उसका मुख देखने लगे। सोहनसिंह ने पूछा, "क्या हुआ है दादा? किसी से लड़ आये हो?"

"तुम्हारी भाभी से। लड़ते-लड़ते कहीं यह उँगली उसके मुख में चली गई और उसने इसका मलीदा कर दिया।"

सब उपस्थितगण हँसने लगे। इस पर चौधरी ने पूछा, "पर भाभी को तो नर-मांस खाने की आदत नहीं। वे उँगली क्यों चबाने लगी थीं?"

मोतीराम एक क्षण तक विचार करता रहा कि घटना का वृत्तान्त सुनाये अथवा न। इस समय उसकी उँगली में दर्द उठा और वह क्रोध में सब सुना गया, "बात यह है कि वह दर्ज़ी की बीवी, आज हमारे घर आई थी। वह सुन्दर तो है ही। साथ ही शृंगार किये हुए

थी। मैं अपने को काबू में नहीं रख सका। जब मैं पकड़कर उससे आलिंगन करने लगा तो तुम्हारी भाभी भूखी बाघिन की भाँति मुझ पर टूट पड़ी। उसको दूर हटाते हुए मेरा हाथ उसके मुख पर पड़ा, तो उसने उँगली मुख में चबा डाली। मेरा हाथ उस मुसलमान की बच्ची की कमर से हटा तो वह भाग गई और मैं बुद्धू मियाँ की भाँति मुख देखता रह गया।"

"मुसलमान की बच्ची? कौन मुसलमान की बच्ची है?"

"वही रामलाल की बीवी। रामलाल उसके बाप को धोखा देकर विवाह कर ले आया था। भाई चौधरी! बहुत ही भोली-भाली और सुन्दर मालूम होती है। वास्तव में पहिले ही दिन, जब मैंने उसको अमृतसर के स्टेशन पर देखा था, उसकी मोटी-मोटी आँखों पर मैं मोहित हो गया था।"

"रामलाल की बीवी का मुसलमानी नाम क्या है?" चौधरी ने माथे पर त्योरी चढ़ाकर पूछा।

मोतीराम ने कह दिया, "फातिमा।"

"यह भी मज़ा रहेगा।"

मोतीराम रात-भर होटल में रहा। प्रातःकाल उसने वहाँ ही स्नान किया और विश्राम करने लगा। लगभग आठ बजे उसको नौकर ने जगाया और बताया कि उसके घर की नौकरानी घर की चाबी देने आई है।

"क्यों?" मोतीराम ने घबड़ाकर पूछा।

"मुझको नहीं मालूम।"

"तो बुलाओ उसको। कहाँ है वह?"

"नीचे खड़ी है और ऊपर आने में डरती है।"

"क्यों?"

"नहीं बताती। कहती है कि चाबी ले जाइये, नहीं तो वह ड्योढ़ी में फेंक चली जायेगी।"

"बहुत बदमिजाज़ हो गई है।"

नौकर चुप रहा। कुछ समय तक मोतीराम सोचता रहा। फिर उठ, कपड़े पहिन नीचे उतर आया। आते ही उसने कहा, "क्यों बे चन्दा की बच्ची! ऊपर कोई काटता था तुमको?"

"लाला! कोई भली औरत इन सीढ़ियों पर नहीं चढ़ सकती।"

"क्यों?"

"अपने मन से पूछो। मैंने आपकी नौकरी छोड़ दी है। यह चाबी भी बीबीजी के कहने पर देने चली आई हूँ।" इतना कह, उसने चाबी हाथ ऊँचा कर मोतीराम के हाथ में ऐसे डाल दी, मानो मोतीराम को कोई छूत की बीमारी लगी हो।

मोतीराम के हाथ में चाबी गिरी तो वह हँस पड़ा। हँसते हुए उसने पूछा, "तुम्हारी मालकिन रामलाल के यहाँ गई है क्या?"

"हाँ लालाजी!"

"तो तुम मेरी नौकरी नहीं करोगी?"

"नहीं।"

"तो जाओ। हम तुमको पिछला वेतन नहीं देंगे।"

"अच्छी बात है। वह रख छोड़ो। किसी बुरे दिन काम आयगा।"

"क्या हो गया है, तुमको?"

चन्दा ने उत्तर नहीं दिया और चली गई।

मोतीराम इस सबका अर्थ समझ नहीं सका। उसका विचार था कि वह रानी से क्षमा माँगने गई होगी। रानी सुन्दरी को तो क्षमा कर देगी, परन्तु उसको क्षमा नहीं कर सकती और उसके घर अब नहीं आयेगी। इतना विचार कर वह मन-ही-मन कहने लगा, "इस विषय में फिर सोचेंगे।"

दोपहर के दो बजे वह घर गया और ताला खोल ऊपर चढ़ गया। घर में सब सामान वैसे ही रखा था, जैसे पहले दिन लगा था। केवल सुन्दरी के पूजा के कमरे में सेंक करने का सामान रखा था। वहाँ

अँगीठी भी रखी थी, जिसमें आग बुझ चुकी थी। अँगीटी के ऊपर तवा था और तवे के ऊपर रुई के गुफ्फे रखे थे, जो गरम करते-करते कहीं-कहीं से जल गये थे। समीप ही एक लाल से रंग का तेल रखा था। बिस्तर पर तेल के निशान लगे थे। वह समझ गया कि सुन्दरी रात-भर तेल मलवाती रही है।

मोतीराम सुन्दरी के लौटने की पाँच बजे तक प्रतीक्षा करता रहा। वह नहीं लौटी तो गम्भीरतापूर्वक विचार करने लगा कि अब उसको क्या करना चाहिये। वह चाहता था कि रामलाल के घर जाये और सुन्दरी को चोटी से पकड़कर घसीट लाये, परन्तु वह नहीं जानता था कि इसका क्या परिणाम होगा?

इस विषय में वह चौधरी से राय करने के लिए होटल में जा पहुँचा। चौधरी लगभग छः बजे आया तो मोतीराम ने अपनी समस्या उसके सम्मुख रख दी। इस पर चौधरी ने पूछा, "पता किया है कि वह वहाँ ही गई है?"

"हाँ। नौकरानी ने सवेरे ही बताया था कि वह रामलाल के यहाँ गई है।"

"पर तुमने स्वयं पता किया है अथवा नहीं? मेरी राय मानो टैक्सी लेकर उसको लेने चले जाओ। यदि वह आ जाये तो ठीक है। न आये तो फिर वकील से राय कर मार्ग निश्चय करना चाहिये।"

मोतीराम टैक्सी लेकर रामलाल के घर जा पहुँचा। वहाँ एक खाट पर रानी लेटी थी और दूसरी पर सुन्दरी। एक डॉक्टर दोनों को देख रहा था। रामलाल समीप ही खड़ा था।

जब डॉक्टर देख चुका तो मोतीराम ने पूछा, "क्या है इसको?"

"यह ननद भाभी हैं। परस्पर लड़ पड़ी हैं। दोनों को चोटें आई मालूम होती हैं। इसको", उसने सुन्दरी की ओर संकेत कर कहा, "सख्त चोट आई है। मैं तो पुलिस में रिपोर्ट कर देता, परन्तु मि० रामलाल मेरा मित्र है। मैं सो जाने की दवाई देकर जा रहा हूँ।"

मोतीराम भौंचक्का हो देखता रह गया। रामलाल ने दस रुपये फीस दी और डॉक्टर के हाथ से नुसखा ले, डॉक्टर को छोड़ने चला गया।

जब डॉक्टर और रामलाल चले गये तो मोतीराम ने सुन्दरी से कहा, "अब छोड़ो इस ढोंग को। मैं तुमको लेने आया हूँ। चलो मेरे साथ।"

"अब तो चला ही नहीं जाता। जा सकती तो भी नहीं जाती।"

"क्या है तुमको, जो चला नहीं जाता?"

"दो पसलियाँ टूट गई हैं। मैं यहाँ तो आ गई, पर डॉक्टर ने देख कर कहा कि पसलियाँ तिरक गई हैं। बहुत तीव्र वेदना हो रही थी। अभी तो बैला डोना प्लास्टर लगाने को दिया है और नींद लाने की दवाई देकर जा रहे हैं। कल ऐक्सरे होगा और फिर प्लास्टर लगाया जायेगा।"

"मैं नहीं चाहता कि तुम यहाँ एक क्षण भी रहो और रामलाल की कमाई में से एक पाई भी खर्च करो।"

इस समय रामलाल डॉक्टर को विदा कर आ गया। वह चुपचाप खड़ा हो गया। सुन्दरी ने मोतीराम के कहने का उत्तर दे दिया, "अब तो इस घर से मेरी अर्थी ही निकलेगी। मैं न तुम्हारी बीवी हूँ, न तुम मेरे पति हो।"

"खूब! तलाक का रिवाज अभी हिन्दुओं में नहीं चला।"

"पर एक भली औरत को लातों और मुक्कों से मारने का रिवाज भी हिन्दुओं में नहीं है।"

"तो तुम नहीं चलोगी?"

"नहीं! नहीं!!"

"तो यहाँ पुलिस बुलानी पड़ेगी।"

"बुला लो। पर मैं कहती हूँ कि मैं आप के घर नहीं जाऊँगी।"

मोतीराम को क्रोध चढ़ आया। इस समय रामलाल ने बात में

दख़ल देते हुए कहा, "दादा ! चलो नीचे टेलीफोन है। उससे थाने में रिपोर्ट कर पुलिस बुला लो और साथ ही ऐम्बुलैन्स कार के लिए भी टेलीफोन कर दो। भाभी से तो जाया नहीं जायेगा।"

"पुलिस बुला लूँ ?"

"हाँ ! हाँ !! अगर आती है तो।"

"क्यों नहीं आयेगी ?"

"आयेगी दादा ! ज़रूर आयेगी। चलो न नीचे। टेलीफोन यह साथ की ही दुकान पर तो है।"

मोतीराम को स्मरण हो आया कि चौधरी ने कहा था कि वकील से राय करनी पड़ेगी। अतएव वह बिना कुछ और अधिक कहे नीचे उतर गया। रामलाल उसके पीछे-पीछे था। मकान के नीचे उतर रामलाल ने बताया, "यह मिली ईला, हेयर ड्रेसर की दुकान में टेली-फोन है। आओ, पुलिस को बुला लो।"

मोतीराम इस मज़ाक को समझ नहीं सका था। वे दोनों मिली की दुकान के बाहर खड़े अभी विचार ही कर रहे थे कि दुकान से एक युवक और एक अति सुन्दर लड़की निकली। युवक लड़की को कह रहा था, "नीरा ! यू लुक वण्डरफुल।"

"सौफ़्टली डीयर !"

यह नीरा थी और उसके साथ डॉक्टर ब्रिगेडियर बलवंतसिंह था। नीरा मोतीराम को कई बार पिताजी से मिलने आते देख चुकी थी। इस कारण उसने कह दिया, "धीरे-धीरे बात करें।"

मोतीराम ने भी नीरा को देखा और उसके सौन्दर्य को देख चका-चौंध रह गया। वह मिली ईला की दुकान से बाल बनवा कर निकली थी।

मोतीराम को माथुर की याद आ गई। उसने रामलाल से कहा, "नहीं जी ! टेलीफोन नहीं करूँगा। मैं खुद थाने जा रहा हूँ।" इतना कहकर वह टैक्सी में जा बैठा। थाना जाने के स्थान वह होटल में पहुँच

चौधरी से राय करने लगा। जब उसने रामलाल के कहने को कि पुलिस में रिपोर्ट करे, सुना तो बोला, "इसमें कुछ षड्यन्त्र प्रतीत होता है। अच्छा किया है कि तुमने टेलीफोन नहीं किया। हमको वकील से राय करने के लिए तुरन्त जाना चाहिये।"

"किस वकील के पास चलें।"

"मैं समझता हूँ कि माथुर साहब के पास चलना चाहिये।"

"पर वह तो हमारी बातों को पसन्द नहीं करता।"

"तो क्या हुआ ? मैं तो पिछले सप्ताह भी उससे एक जायदाद के विषय में राय करने गया था और उसने ठीक ही राय दी थी।"

"क्या फीस लेते हैं ?"

"ले चलो दो सौ रुपया। कदाचित् वे नहीं लेंगे।"

: १० :

मोतीराम और मथुरासिंह माथुर साहब के पास पहुँचे तो वहाँ दो मुवक्किल बैठे थे। माथुर साहब उनकी 'प्लेंट' लिखवा रहे थे। स्टेनो बैठा लिख रहा था। माथुर ने इनको बैठ जाने का संकेत कर कहा, "सुप्रीम कोर्ट में यह कल पेश होनी है। तनिक बैठिये। फिर आपसे बात करूँगा।"

माथुर लिखाता गया और स्टेनो शॉर्ट हैण्ड में लिखता गया। दो घण्टे भर लिखाने में प्लेंट समाप्त हुई। उसे समाप्त कर माथुर ने स्टेनो से कहा, "इसको टाईप कर प्रातः सात बजे मिलनी चाहिये।

"तीन-चार घण्टे का काम है और अब नौ बज रहे हैं। खाना खा कर बैठ जाओ।"

जब स्टेनो साथ के कमरे में चला गया तो मुवक्किलों में से एक ने सौ-सौ रुपये के दस नोट माथुर साहब के सामने रख कहा, "वकील साहब ! यह केस जीतना है। आप रुपये की चिन्ता न करें।"

"उम्मीद तो बहुत है। हमारा पक्ष बहुत प्रबल है। साथ ही हमारी

प्रथम प्रार्थना का उत्तर मैंने पढ़ लिया है और उसकी सब युक्तियाँ मैंने काट दी हैं। कल पेश होने की फीस यहाँ नौ बजे से पूर्व आ जानी चाहिये।"

"आ जायेगी। मैं स्वयं आऊँगा।"

जब ये लोग चले गये तो मोतीराम ने अपनी कहानी संक्षेप में सुना दी। उसने बताया, "कल किसी कारण से पत्नी से झगड़ा हो गया था। क्रोध में मैंने दो-चार मुक्के और लातें चला दीं। इस पर वह रूठ कर रामलाल के घर चली गई है। मैं अभी उसको लेने गया था। उसने आने से इन्कार कर दिया है।"

"क्या कहती है?"

"कहती है कि वह खाट से हिल नहीं सकती। यदि हिल भी सकती, तो भी नहीं आती।"

"हिल क्यों नहीं सकती?"

"किसी बेवकूफ डॉक्टर के बच्चे ने कह दिया है कि उसकी दो पसलियाँ तिड़क गई हैं और कल ऐक्सरे कराने के पीछे प्लास्टर लगेगा।"

"तो वह बहुत कष्ट में है क्या?"

"मैंने इतना तो नहीं पीटा था और फिर वह दरियागंज से चलकर नई दिल्ली कैसे पहुँच गई?"

"मोतीराम! मेरी राय तो यह है कि घर जाकर आराम से रहो। उसके पीछे-पीछे मत जाओ। रामलाल को उस पर रुपये खर्च करने दो। समाचार मँगाते रहना। जब वह ठीक हो जाये, तो उसको लाने का यत्न करना। समय व्यतीत होने पर बड़े-से-बड़ा दुःख भी विस्मरण हो जाता है।"

"तो कुछ चाराजोई नहीं हो सकती?"

"नालिश करने के अतिरिक्त और कोई चारा नहीं। परन्तु पति-पत्नी का झगड़ा कचहरी में जाने से दोनों की हँसी होती है। इस विषय में तो मोतीराम! तुम्हारी हँसी अधिक होगी। तुमने उसको पीटा है और

उस बेवकूफ के बच्चे डॉक्टर की गवाही हो जायेगी कि उसकी पसलियाँ तिड़क गई हैं। इस पर कचहरी और सब सुनने वाले तुम्हारी निन्दा करेंगे और कोर्ट सुन्दरी की रक्षा करेगा। उसकी इच्छा के बिना वह तुम्हारे घर भेजी नहीं जायेगी।"

"पर मेरी इस उँगली का कोई विचार नहीं करेगा?"

"यह भी यही बात सिद्ध करेगी कि तुम दोनों में झगड़ा हुआ है और झगड़े में स्त्री की रक्षा के लिए अदालत तुमको आज्ञा दे देगी कि उसका खर्चा दो और साथ ही उसको विवश कर तुम घर नहीं ले जा सकोगे।"

"तो क्या करूँ?"

"एक सप्ताह तक प्रतीक्षा करो। आशा करो कि वह स्वयं ही लौट आयेगी।"

माथुर साहब की युक्तियाँ सुन मोतीराम का जोश ठण्डा पड़ गया और वकील साहब का धन्यवाद कर दोनों वहाँ से चल दिये। जब ये माथुर साहब की कोठी से निकल रहे थे तो नीरा और बलवन्तसिंह मोटर में कोठी के बाहर पहुँचे और नीरा मोटर में से उतर, 'बाई-बाई' कर, मोतीराम के समीप से गुज़र, भीतर चली गई।

माथुर मोतीराम को विदा कर भोजन के लिए डाइनिंग हॉल में चला गया। वहाँ नीरा खड़ी थी। वह अपनी माँ को कह रही थी, "भोजन कर आई हूँ।"

माँ ने पूछा, "कहाँ?"

"ऐल्प्स में। डॉक्टर साहब के साथ।"

माथुर ने इतना सुना तो स्वयं कुर्सी पर बैठते हुए, नीरा को बैठने का संकेत कर कहा, "बैठो नीरा! डॉक्टर साहब की बात हुए तो अब छः महीने हो चुके। क्या उसने अब तक 'प्रोपोज़' नहीं किया?"

"किया है और मैंने विवाह करने से इन्कार कर दिया है।"

"तो फिर उसके साथ घूमती क्यों हो? यह तो ठीक बात नहीं।"

"पिताजी ! क्या कोई स्त्री और पुरुष बिना विवाह किये, मित्र नहीं हो सकते ?"

"हो सकते हैं, यदि उनमें इतनी अक्ल हो कि वे मित्रता की सीमा के भीतर रह सकें।"

"आप क्या मुझको बेअक्ल समझते हैं ?"

माथुर लड़की के इस दो टूक उत्तर से चुप कर गया और आँखें झुकाकर बैठा रहा। आज चन्द्रकान्त खाने के लिए नहीं आया था। इस कारण माता-पिता चुपचाप भोजन करने लगे। नीरा अपने कमरे में चली गई। भोजन के पश्चात् माथुर ने अपनी पत्नी से कहा, "मुझको भय लग रहा है कि हमारे दोनों बच्चे कुपथ पर जा रहे हैं और परिणाम भयंकर निकलने वाला है।"

"पर यह कैसे हो गया ?"

"घर का वातावरण तो खराब नहीं है। हाँ, मैं बच्चों के पीछे-पीछे भागता नहीं रहा। दोनों अपने-अपने कॉलेजों की पैदावार हैं और वहाँ उनके मन में समाज तथा समाज के नियमों के लिए आदर उत्पन्न नहीं किया गया। वे स्वतन्त्रता के ग़लत अर्थ लगाकर, उच्छृङ्खल हो गये हैं।"

"आज चन्द्र कह गया है कि वह गांधी ग्राऊंड में एक जलसे की सदारत (अध्यक्षता) करने जा रहा है और रात के साढ़े दस बजे आयेगा।"

"ओह !"

इतना कह माथुर खाने की मेज़ से उठ, धोती और कुर्ता पहिन, कोठी से निकल, ताँगा कर गांधी ग्राऊंड जा पहुँचा।

कोई दो हज़ार के लगभग जनता एकत्रित थी। एक ऊँचे मंच पर चन्द्रकान्त एक कुर्सी पर बैठा था। उसके आगे मेज़ पर लाल रंग का कपड़ा बिछा था, जिस पर सफेद रंग में हथोड़े और दांती के चित्र बने थे। कुर्सी, जिस पर चन्द्र बैठा था, के पीछे एक बांस के साथ लाल झण्डा, उसी हथौड़े और दांती के निशान वाला लहरा रहा था। एक

लड़की सभा में व्याख्यान दे रही थी।

माथुर एक कोने में खड़ा हो सुनने लगा। यह प्रथम मई थी और संसार भर के मज़दूरों का दिन था।

लड़की कह रही थी, "आज का दिन रूस में क्रान्ति का दिन है। इस दिन संसार में पहली बार मज़दूरों ने मिलकर, अपने अधिकार के लिए बग़ावत का झण्डा बुलन्द किया था। उस सफल क्रान्ति की याद में दुनिया-भर के मज़दूर आज खुशियाँ मनाते हैं और अपने-अपने मन में दृढ़ संकल्प करते हैं कि उन्होंने अपने देश में वैसी ही क्रान्ति उत्पन्न करनी है। हमने तिलंगाना में क्रान्ति का श्रीगणेश कर दिया था। कुछ नौजवान साथियों ने क्रान्ति का झण्डा खड़ा किया। परन्तु भारत सरकार ने, जो पैसे वालों अर्थात् ग़रीबों का खून चूसने वालों की सदा सहायता करती रही है, वहाँ अपनी फ़ौज भेज, उन नौजवानों को गोली का निशाना बना दिया।"

इस समय भूमि पर बैठे श्रोतागणों में से एक ने नारा लगा दिया, "तिलंगाना के शहीद।"

"ज़िन्दाबाद।" सारी जनता ने उत्तर दिया।

नारा तीन बार दुहराया गया। 'तिलंगाना के शहीद' और उत्तर आता रहा, 'ज़िन्दाबाद।'

पश्चात् जलसे के प्रधान ने हाथ के संकेत से लोगों को चुप कराया तो वह लड़की आगे कहने लगी, "इस मुल्क में हिन्दुओं का साम्प्रदायिक राज्य स्थापित किया जा रहा है। यही कारण है कि एक ही मुसलमान रियासत, जो यहाँ रह गई थी, पुलिस ऐक्शन का नाम लेकर कुचल डाली गई है। निज़ाम साहब को मजबूर कर दिया गया है कि वे भारत में सम्मिलित होने वाले वचन-पत्र पर हस्ताक्षर कर दें।

"हमारे होम मेम्बर साहब, मेरा मतलब है सरदार पटेल, इस पुलिस कार्यवाई को चलाने वाले हैं और वे, जहाँ कट्टर हिन्दू हैं, वहाँ पैसे वालों के सहायक भी हैं। बम्बई की मिलों वाले, लाखों रुपयों की थैलियाँ इनको

देते हैं। स्वाभाविक रूप में वे उनसे रियायत करते रहते हैं।

"सरदार साहब राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के पृष्ठपोषक हैं और वे मज़दूर वर्ग के तथा मुसलमान कौम के, जिसमें प्रायः मज़दूर ही हैं, के जानी दुश्मन हैं।"

'शर्म-शर्म' के नारे लगाये गए।

जब जनता कुछ शान्त हुई तो वक्ता ने अपनी वक्तृता जारी कर दी। उसने कहा, "हमको देश में स्टालिन जैसे लोह पुरुष की आवश्यकता है। ऐसे व्यक्ति को कांग्रेस आगे आने नहीं देगी। इसी कारण मैं कहती हूँ कि हमको यहाँ पर भी मई की क्रान्ति का नमूना उत्पन्न करना ही पड़ेगा। तब ही देश का और देश की कोटि-कोटि मज़दूर जनता का उद्धार हो सकेगा।"

लड़की ने अपना भाषण समाप्त किया तो तालियों और नारों से वक्ता का अभिनन्दन किया गया। माथुर ने अपने समीप खड़े एक आदमी से पूछा, "इस लड़की का क्या नाम है? बहुत अच्छा बोलती है।"

सुनने वाले ने कह दिया, "प्रमिला देवी।"

जब जोश का पर्याप्त प्रदर्शन किया जा चुका तो चन्द्रकान्त उठा और सभा को समाप्त करने के लिए अन्तिम वचन कहने लगा। उसने कहा, "साथियो! अब देर बहुत हो गई है। मज़दूरों को प्रातः मज़दूरी करने जाना है। इस कारण मैं आपका अधिक काल तक यहाँ ठहरे रहना उचित नहीं समझता। मैंने अपने विचार तो सभा के आरम्भ में ही बता दिये थे। इस पर भी मैं एक बात और कहना चाहता हूँ। हमारा नारा है, 'मज़दूर राज्य स्थापित करना, खून चूसने वाले सरमायेदारों के हाथों से जनता को मुक्ति दिलानी, हमने हिन्दुस्तान को रूस की तरह का मुल्क बना कर दम लेना है।'

"अब जलसा समाप्त होता है।"

इतना कह चन्द्र ने मुक्का बाँध कर सबको दिखाते हुए जलसा

समाप्त कर दिया। श्रोतागणों में भी सहस्रों मुक्के बँधे दिखाये गये और इस प्रकार प्रधान को नमस्कार-सूचक मुक्के दिखाकर सब चल पड़े।

: ११ :

माथुर एक पेड़ के नीचे, गांधी-ग्राउण्ड के द्वार के समीप, अँधेरे में खड़ा चन्द्र के आने की प्रतीक्षा करता रहा। चन्द्र प्रमिला के साथ-साथ निकला और उसको कूचा घासीराम तक छोड़ने, फतेहपुरी की ओर चल दिया। माथुर थोड़ी दूर पर उनके पीछे-पीछे चलता गया। वह उनकी बातें तो नहीं सुन सकता था। इस पर भी उनके हाव-भाव से वह समझ रहा था कि प्रमिला के शानदार व्याख्यान पर चन्द्र उसको बधाई दे रहा है। लड़की गली में गई तो चन्द्र लौटा। अब माथुर उसके साथ-साथ हो लिया। उसने साथ चलते हुए कहा, "बहुत थक गये होगे। टाँगा कर लो तो क्या ठीक नहीं होगा?"

चन्द्र पिता की आवाज़ सुनकर चौंका। उसने तुरन्त ही अपने को सम्हाल कर कहा, "नहीं पिताजी! मैं तो नहीं थका। आप कहीं दूर से आ रहे मालूम होते हैं। आपके लिए टाँगा कर लेता हूँ।"

फतेहपुरी से टाँगा कर लिया गया और माथुर ने चन्द्रकान्त से कहा, "एक पैसे वाले के टाँगे पर तुम भी सवार हो सकते हो।"

चन्द्र ने ताँगे में बैठते हुए कहा, "पर पिताजी! हम तो सरमायेदारी के विरुद्ध हैं। पैसे के नहीं। हमारे रूस में भी बड़ी-बड़ी आमदनी वाले लोग मौजूद हैं।"

"तुम्हारे रूस में, जब पैसे वाले मरते हैं, तो उनके पैसे का सरकार क्या करती है?"

"ज़ब्त कर लेती है।"

"तब तो भाई! तुम्हारे रूस में पैसा कमा कर खर्च कर देना ठीक ही रहता है।"

"जी, हाँ।"

"अब मेरी आय तीस हज़ार रुपया महीने की है। उसमें टैक्स इत्यादि देकर सवा-डेढ़ लाख वर्ष में बच ही जाता है। इतना तो न मैं खा सकता हूँ न पहिन सकता हूँ। हाँ, जूए और शराब में, वह भी मूर्खों की भाँति खेलने और पीने लगूँ अथवा इसी प्रकार की उच्छृङ्खलताएँ करूँ, तो शायद यह सब खर्च कर सकूँ। अन्यथा यह सब कमाई, तुम्हारे रूस में होती तो व्यर्थ ही जाती।"

"व्यर्थ तो तब जाती है, जब नालायक बच्चों के हाथ में यह चली जावे।"

"ओह! तो तुम्हारे रूस में सब धनियों के बच्चे नालायक ही होते हैं?"

"नहीं, यह बात नहीं। वास्तव में बच्चों के लायक-नालायक की बात नहीं है। बात यह है कि जाति एक परिवार है। बहुत बड़ा परिवार और परिवार की सम्पत्ति सांझी होनी चाहिये। इस प्रकार जो परिवार के एक सदस्य के पास खाने-पीने से बच जाता है, वह परिवार के सांझे खाते में चला जाता है।"

"हाँ, यह बात तो समझ में आती है। परन्तु चन्द्र! पहले अपनी बहिन को समझाओ न। वह सात सौ रुपया महीने से अधिक कमाती है। खाने-पीने के पश्चात्, जो कुछ उसके पास बचे, वह परिवार के सांझे-खाते में जमा करा दिया करे।"

"वह तो सरमायेदार-मनोवृत्ति रखती है। वह मेरी बात नहीं मानती। ऐसे ही हठियों के लिए तो क्रान्ति की आवश्यकता होती है।"

"इस तरह नहीं। यदि नीरा को पता चल गया कि उसका भाई, उसकी कमाई छीनने के लिए बल-प्रयोग करना चाहता है, तो वह भी अपनी रक्षा का प्रबन्ध करने लगेगी। वह अपने विचार के लोगों को, जिनको तुम सरमायादार कहते हो, संगठित करने का यत्न करेगी। इससे युद्ध होगा। जीत उसकी होगी, जिसके पास साधन अधिक होंगे। यदि यह युद्ध इस घर की चारदीवारी के अन्दर ही सीमित रहा, तो तुम अकेले

हो और नीरा के पक्ष में अधिक लोग हैं। इस कारण तुम हार जाओगे और तुम्हारी क्रान्ति धरी-की-धरी रह जायेगी।

"मैं चाहता हूँ कि घर में शान्ति बनी रहे। इससे क्रान्ति के स्थान समझाना-बुझाना ठीक नहीं रहेगा क्या? मैं समझता हूँ कि पहिले तुम एक उदाहरण बन जाओ और फिर स्वयं वह कुछ करके दिखाओ, जो तुम नीरा से अथवा किसी और पैसे वाले से चाहते हो।"

"मैं उदाहरण कैसे बन सकता हूँ?"

"तुम भी कहीं नौकरी करने लगो। जो कमाओ, उसमें अपना खर्चा चलाओ और जब उसमें से कुछ बच जाये, तो परिवार के सांझे खाते में जमा करा दो। तुम्हारा उदाहरण देखकर नीरा भी ऐसा करने लगेगी।"

"यह तो व्यर्थ है पिताजी! मैं तो अपने छोटे से परिवार की बात छोड़कर, भारत के पूर्ण श्रमिक-परिवार की समस्या में उलझा हुआ हूँ। अपने परिवार के एक-दो सदस्यों की बात छोड़, पूर्ण देश को परिवार मान, उसकी भलाई का विचार करना, मैं अपनी शक्ति का सदुपयोग करना मानता हूँ।"

"देखो चन्द्र! एक बात तुम समझ लो। अपने परिवार में तुम अल्पमत में हो। इसी प्रकार तुम्हारा प्रत्येक साथी अपने-अपने परिवार में अल्पमत में ही होगा। तुम यदि पचास साथी एकत्रित हो एक पार्टी निर्माण कर लो, तो यह निश्चय ही है कि तुम अपने पचास परिवारों के समूह में अल्पमत में ही रहोगे। यह सम्भव है कि तुम अपने साथियों के संगठन के बल पर अपने परिवारों के सामूहिक बहुमत पर अपना प्रभुत्व जमा लो, परन्तु यह स्मरण रखो, ऐसा सदैव नहीं हो सकेगा। यदि तुम अल्पमत की धींगा-मस्ती जारी रखोगे तो एक समय आयेगा, जब बहुमत सिंह रूप धारण कर तुम सबको विध्वंस कर देगा।"

"यह सब व्यर्थ का वितंडावाद है। हम सफल होंगे ही नहीं, जब तक हम बहुमत में नहीं हो जाते।"

"यदि तुम बहुमत में होने के पश्चात् ही सफलता चाहते हो, तो

फिर क्रान्ति और बल-प्रयोग की आवश्यकता क्या है ? इस अवस्था में नीरा को दबाने के लिए क्रान्ति की आवश्यकता नहीं होगी।

"जानते हो रूस की जन-संख्या कितनी है ? वह अठारह करोड़ के लगभग है। बोलशिविक पार्टी के सदस्यों की संख्या तीन-चार लाख के भीतर है। यह पार्टी अठारह करोड़ पर राज्य करती है। यह केवल इसलिए कि वे संगठित हैं और अन्य बिखरे हुए; परन्तु कामरेड महोदय ! ज्यों ही पार्टी से बाहर के लोगों को पता चला कि पार्टी के लोग तानाशाही चला रहे हैं, तो वे बिगड़ जायेंगे और फिर जनता-जनार्दन का वह रूप बनेगा कि पार्टी तो पार्टी रही, प्रत्युत् रूसी धरती काँप उठेगी।"

"यह सब कल्पना मात्र है, पिताजी !"

"इतिहास में इसका प्रमाण चाहते हो ? तो सुनो। हिरण्यकश्यप स्टालिन की कोटि का राक्षस था। वह एक समय भारत में सार्वभौमिक राज्य कर चुका है। उसके भी साथी थे और वे भले सरल-चित्त लोगों की हँसी उड़ाया करते थे। जानते हो फिर क्या हुआ ? नरसिंह का अवतार हुआ। अर्थात् वही भोली-भाली सरल-चित्त जनता सिंह का रूप धारण कर भूमि में से ही उत्पन्न हो गई और उस राक्षस का नाश करने में सफल हो गई।"

"यह इतिहास की बात कर रहे हैं, पिताजी ? यह इतिहास है क्या ? यह है माईथोलौजी अर्थात् गपोड़ शंख।"

"हाँ, तुम इसको इतिहास क्यों मानोगे ? फ्रांस की क्रान्ति को तो इतिहास मानोगे ? फ्रांस की मलिका भूखे लोगों को कहती थी कि रोटी नहीं मिलती तो मिठाई खा लो। जानते हो वह मलिका कहाँ गई ? यह तुम्हारे रूस के देवता स्टालिन की भी तो वैसी ही दुर्गति होने वाली है।"

इस समय ताँगा उनकी कोठी के बाहर जा पहुँचा था। माथुर ने ताँगे वाले को किराया दिया और घर में जाते हुए कहा, "मैं तुम्हारे जलसे में कुछ देरी से पहुँचा था। इस कारण तुम्हारा प्रारम्भिक भाषण नहीं सुन सका। कह नहीं सकता कि तुम भी अपने भाषण में उतने ही

अयुक्तिसंगत रहे हो, जितने तुम बातें करने में हो। हाँ, क्या नाम था उस लड़की का? ठीक, प्रमिला। उसका भाषण सुना है। वह बेचारी अभी बहुत ही कम आयु की और बहुत ही कम अनुभव रखने वाली लड़की है। मालूम होता है कि पार्टी ने जो स्वर उसके मुख में भर दिए थे, वही वह ग्रामोफोन के रिकॉर्ड की भाँति कह गई।

"उसने कहा, 'हमने तिलंगाना में क्रान्ति का श्रीगणेश किया था।' वह बेचारी नहीं जानती कि वह क्या कह गई है। यदि तिलंगाना में जो कुछ हुआ, वह उस लड़की की राय से हुआ है, तो देश के कानून के अनुसार उस बेचारी को फाँसी की आज्ञा होनी चाहिये। परमात्मा का धन्यवाद करो कि राज्य नेहरूजी का है, सरदार पटेल का नहीं। अन्यथा इन विद्रोह के शब्दों को कहने का साहस न करती। पण्डितजी, आप लोगों के लिए और आपके सिद्धान्तों के लिए हृदय में बहुत सहानुभूति रखते हैं।

"दो सहस्र श्रोतागणों में कहना कि तिलंगाना का विद्रोह हमने किया है, यह नेहरूजी के राज्य में ही क्षमा हो सकता है।

"तुमने उसके मुख से यह भी कहला दिया कि हैदराबाद पर पुलिस ऐक्शन एक अन्याय हुआ है। क्या पिछले छः महीने से चल रहे रज़ाकार आन्दोलन को दबाना अन्याय है? मैं समझता हूँ कि तुम लोग युक्ति-अयुक्ति का तथा सत्य-झूठ का विचार छोड़कर देश की सरकार की निन्दा करना अपना कर्त्तव्य बना बैठे हो। कहीं तुम लोग अपने उद्देश्यों में सफल हो गये तो इस देश का सर्वनाश हुए बिना नहीं रहेगा।

"चन्द्र! अब जाओ, सो जाओ। मां तुम्हारे लिए दूध लिये बैठी है। मैंने जो-कुछ कहा है, तुम्हारे विचार के लिए है। सत्य हृदय से विचार करो और फिर आगे बढ़ो।"

इतना कह माथुर उसको वहीं छोड़, अपने कमरे में चला गया। चन्द्र के मस्तिष्क को एक बहुत ही प्रबल धक्का लगा था। उसको अपने

पिता की एक भी बात का युक्तियुक्त उत्तर सूझ नहीं रहा था।

प्रमिला को व्याख्यान का विषय और उसमें कहने की बातें उसने ही बताई थीं। वह जानता था कि तिलंगाना में कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्यों ने कई हत्याएँ कर दी हैं और देश के कानून से उन हत्याओं के करने वालों को फाँसी का दण्ड मिलना चाहिए और उन हत्यारों को प्रोत्साहन देने वाले कम-से-कम आजन्म कैद के भागी तो हैं ही।

वह विचार करने लगा था कि स्टालिन ने इससे सैकड़ों गुना कम कहने वालों अथवा करने वालों को गोली का निशाना बनवा दिया है। यदि रूस में स्टालिन यह करवा सकता है तो हमारे देश में पण्डित नेहरू क्यों नहीं करवा सकता? यदि पण्डितजी ने नहीं किया तो यह उनकी कृपा क्यों नहीं है?

सबसे अधिक अयुक्तिसंगत बात उसको हैदराबाद में पुलिस ऐक्शन की निन्दा वाली प्रतीत हुई थी। जब निज़ाम भारत सरकार से झगड़ा कर रहा था और हैदराबाद रियासत में रज़ाकारों का बोल-बाला था, तब वह कुछ दिनों के लिए वहाँ गया था और नगरों और बाज़ार-गलियों में रज़ाकारों को फ़ौजी कवायद करते देख आया था। उनके कारनामों के कारण पूर्ण रियासत के हिन्दू त्राहिमाम्-त्राहिमाम् कर रहे थे। निज़ाम इस आशा में कि रज़ाकारों की सहायता से वह अपनी रियासतको भारत से स्वतन्त्र रख सकेगा, उनको अपने कामों में प्रोत्साहन दे रहा था। ऐसे निज़ाम की रियासत में और ऐसे रज़ाकारों को निःशेष करने के लिए पुलिस ऐक्शन को अन्याय कैसे कहा जा सकता था?

वह दूध पी और कपड़े बदल कर पलंग पर लेटा हुआ करवटें लेता रहा। उसको कुछ झपकी-सी आई और वह स्वप्न देखने लगा कि उसके पिता की पचास लाख की सम्पत्ति उसके हाथ में है और एक लम्बी-लम्बी मूँछों वाला व्यक्ति उससे छीनकर लिये जाता है। वह धन को छाती से लगाकर कह रहा है, 'मैं इसको अच्छे कामों में व्यय करूँगा। तुम क्या

करोगे इससे ? देश में कोई योजना चलाओगे, जो अरबों रुपये व्यय हो जाने पर भी, बिजली-पानी प्रचुर मात्रा में बना सकने पर भी, वास्तविक सुख नहीं दे सकेगी। मैं जनता के मानसिक स्तर को ऊँचा करने के लिए एक विद्यालय खोलूँगा। मैं इससे अध्ययन के केन्द्र खोलूँगा।'

वह अभी स्वप्न में ऐसे प्रलाप कर ही रहा था कि उसका रुपया छीनने वाले व्यक्ति ने कसकर एक लात उसकी कमर में जमाई और रुपया लेकर लोप हो गया। इस समय उसकी नींद खुल गई। वह उठकर बैठ गया। कमरे में अँधेरा था, परन्तु उसकी कमर में पीड़ा हो रही थी, मानो सत्य ही उसकी कमर में कोई लात जमा गया हो। उसने हाथ लम्बा कर, स्विच दबा रोशनी की। कमरे में कोई नहीं था। वहाँ कूलर लगा था और उसकी कमर पर पसीना आया था, जिस पर कूलर की ठण्डी हवा लग रही थी। वह कमर में दर्द का कारण जान और स्वप्न को स्मरण कर हँस पड़ा। उसको समझ आया कि मनुष्य के मन में स्वाभाविक लोभ उसको तंग कर रहा है।

वह पुनः लेट गया, परन्तु उसके सोते ही उसको पुनः स्वप्न आने लगे। उसने देखा कि जेलखाने में, फाँसी के कटहरे पर प्रमिला मुख पर टोपी ओढ़े खड़ी है और जल्लाद फाँसी का रस्सा उसके गले में डाल रहा है। प्रमिला शान्त भाव में है, परन्तु उसका अपना मन भीतर-ही-भीतर कह रहा है कि दोषी वह लड़की नहीं, प्रत्युत् वह स्वयं है। उसने ही उसको व्याख्यान बनाकर दिया था। प्रमिला ने तो कहा था कि वह इन बातों से सहमत नहीं, परन्तु उसके प्रेम-पाश में फँसी हुई वह फाँसी पर भी चढ़ने को तैयार है। इतना झूठ तो साधारण-सी बात है, कहकर उसने उसको सन्तोष करा दिया था। यह सब स्मरण कर वह काँप उठा था और जब जल्लाद ने फाँसी की रस्सी प्रमिला के गले में डाली, तो चन्द्र चिल्ला उठा और उसकी नींद खुल गई। वह पुनः उठकर खाट पर बैठ गया।

उसके मन में यह विचार आया कि उसके पिता के वाक्यों से उसका

अन्तरात्मा डर गया है। इस पर भी, जो-कुछ उसने स्वयं कहा था और जो-कुछ उसने प्रमिला से कहाया था, सर्वथा अयुक्तिसंगत ह प्रतीत हुआ था।

: १२ :

अगले दिन चन्द्र नियमानुसार शैल कम्पनी के दरवाज़े पर प्रमिला की प्रतीक्षा में जा खड़ा हुआ, परन्तु वह दिखाई नहीं दी। उसने समझा कि कार्यालय में वह किसी कारणवश नहीं आई और उससे पार्टी के कार्यालय में मिला जा सकेगा। वह वहाँ से पार्टी कार्यालय में चला गया। प्रमिला वहाँ भी नहीं थी। रात के नौ बजे तक वह वहाँ उसकी प्रतीक्षा करता रहा और वह नहीं आई। इससे तो उसको चिन्ता लग गई। वह चाहता था कि उसका पता करे, परन्तु वह कभी भी प्रमिला की माँ के सामने नहीं हुआ था। प्रमिला ने उसको कभी भी अपने घर नहीं बुलाया था। इससे वह वहाँ जाकर उसका समाचार जानने का साहस नहीं कर सका।

इसके पश्चात् जब कई दिन तक प्रमिला से भेंट नहीं हो सकी तो वह प्रमिला के कार्यालय में लंच के समय पहुँच गया। प्रमिला अपनी मेज़ पर बैठी कुछ टाईप कर रही थी। वह उसके समीप जाकर पूछने लगा, "कहाँ रही हो इतने दिन प्रमिला?"

"ओह! तो आप आ गये हैं। मैं एक विचार में पड़ी थी और आपसे उस विचार करने के पश्चात् ही मिलना चाहती थी। यही कारण है कि मैं आपको जब कार्यालय के बाहर अपनी प्रतीक्षा करते देखती थी, तो आपसे बचकर, पिछले दरवाज़े से बाराखम्भा रोड पर चली जाया करती थी।"

"बहुत अन्याय करती थीं तुम मुझसे?"

"मैं समझती थी कि अपने से न्याय कर रही थी। मैं किसी विषय में अपने स्वतन्त्र मन से विचार करना चाहती थी। यह मैं जानती हूँ कि

आप मुझको तुरन्त उस विचार से बाहर खींच लाने की शक्ति रखते हैं, परन्तु आपकी सहायता से जिधर जाती हूँ, वह मेरा ढूँढा मार्ग न होता और उस मार्ग में किसी दुर्घटना होने पर आपको कोसती। अब मैं अपनी बुद्धि से मार्ग ढूँढ रही हूँ और यदि उसमें कोई कठिनाई उत्पन्न हुई तो किसी दूसरे पर दोष नहीं लगा सकूँगी। उसका उत्तरदायित्व मेरे अपने पर ही होगा।"

"तो कब तक तुम इन विचारों के जंगल में से निकल सकोगी ?"

"मैं अभी तक तो किसी अन्तिम निर्णय पर नहीं पहुँच सकी। पर मैं अब अधिक आँख-मिचौनी नहीं खेलना चाहती। आप से पाँच बजे कार्यालय के फाटक पर मिलूँगी और आपको अपनी समस्या बताकर, कम-से-कम एक मास की अवधि अपने मन में निश्चय करने के लिए माँगूँगी। अब आप जाइये। मुझको यह काम बहुत शीघ्र समाप्त कर कार्याध्यक्ष को देना है।"

प्रमिला की बात सुन चन्द्र के मन में एक अज्ञात भय-सा समा गया; परन्तु प्रतीक्षा करने के अतिरिक्त और कोई चारा ही नहीं था। वह कुछ नहीं जानता था कि क्या हुआ है। उसको सन्देह था कि प्रमिला की माँ ने अपनी लड़की के जीवन में कोई समस्या उत्पन्न की है। कदाचित् प्रमिला के विवाह की बात होगी।

इसी प्रकार के विचारों में वह कनॉट प्लेस पार्क में पहुँच एक खाली बैंच पर बैठ गया और पाँच बजने की प्रतीक्षा करने लगा।

समय पर वह शैल कम्पनी के फाटक पर जा पहुँचा। प्रमिला उसकी प्रतीक्षा में वहाँ खड़ी थी। वह उसके समीप पहुँच कर पूछने लगा, "किधर चलें ?"

"किसी ऐसे स्थान पर, जहाँ कुछ समय तक बिना सुने जाने के बात कर सकें।"

"मैं समझता हूँ कि पार्टी-कार्यालय में चलें। वहाँ एकान्त स्थान मिल जायेगा।"

"नहीं। किसी बन्द कमरे अथवा स्थान पर नहीं। वहाँ मेरा मस्तिष्क ठीक काम नहीं करता। वहाँ मैं आपके वश में हो जाती हूँ। आपका सम्मोहन इतना प्रबल होता है कि मैं स्वतन्त्र रूप में विचार भी नहीं कर सकती। मेरे मस्तिष्क में वही स्वर बजने लगता है, जो आप बजाना चाहते हैं।"

"ओह! बहुत दुर्बलात्मा हो तुम?"

"चलिए, कर्नॉट प्लेस के पार्क में कहीं बैठ जायेंगे और बात कर लेंगे।"

"कहीं किसी रेस्टोराँ में चाय तो पी लें।"

"नहीं, जब तक आप अपनी कमाई कर चाय नहीं पिलाते, तब तक नहीं पिऊँगी।"

"तो यह किसकी है?" उसने जेब में से एक दस रुपये का नोट निकालकर दिखाया।

"आपके पताजी की, जिनको हम गाली देते रहते हैं।"

चन्द्र जानता था कि प्रमिला बहुत ही स्पष्ट बात कहने वाली है; प्रायः वह उस पर अपना वासनामय प्रभाव डालकर, उसके मुख को बन्द कर दिया करता था। आज भी उसने उसके हाथ को पकड़ कर कहा, "मुझको कुछ ऐसा प्रतीत हो रहा है कि कोई तुम और मुझ में बाधा बन रहा है। बताओ वह कौन है?"

"बताती हूँ। इसी बताने के लिए तो आपको साथ लाई हूँ। पर मेरा हाथ छोड़ दीजिये। आपके हाथ के स्पर्श-मात्र से मेरे मस्तिष्क में उन्माद चढ़ने लगता है।"

प्रमिला ने हाथ छुड़ा लिया और दोनों कर्नॉट प्लेस के पार्क में एक बैंच पर बैठ बातें करने लगे। बैठते ही उसने पूछा, "बताइये, ईमानदारी क्या होती है?"

चन्द्र कुछ काल तक तो इस प्रश्न को सुनकर प्रमिला का मुख देखता रहा। वह इस प्रश्न का प्रयोजन नहीं समझ सका था। जब वह

उसके मुख पर किसी भी प्रकार का भाव भाँप नहीं सका, तो उसने पूछा, "इस प्रश्न का आशय क्या है ?"

"आशय तो स्पष्ट ही है। मैं ईमानदार, जिसको अँग्रेज़ी के 'औनेस्ट' शब्द से सम्बोधन किया जाता है, बनना चाहती हूँ। आप बताइये 'औनेस्ट' शब्द की व्याख्या क्या है ?"

"मैं समझता हूँ कि किसी अच्छे उद्देश्य से अपनाया हुआ व्यवहार ईमानदारी कहाता है।"

"उद्देश्य अच्छा होगा, इसको जानने के लिए भी तो पहिले विचार करना होगा। मान लीजिये, मेरा आपका यौन-सम्बन्ध है। यह अच्छी बात है अथवा बुरी, इसका विचार छोड़ भी दें, तो भी इसको छुपाकर रखना ईमानदारी है क्या ? इस सम्बन्ध को छुपाकर रखना भी तो एक उद्देश्य बन गया है और उसके लिए मैं नित्य झूठ बोलती हूँ। बताओ इसको क्या कहेंगे ?"

"यौन-सम्बन्ध एक स्वाभाविक कृत्य है। इसको छुपाने की आवश्यकता नहीं है। परन्तु समाज अभी इतना पिछड़ा हुआ है कि उसको हम सब बातें बता नहीं सकते। जैसे एक बच्चे को सब-कुछ बताया नहीं जाता और उससे कोई बात छुपाकर रखनी बेईमानी नहीं कही जा सकती, इसी प्रकार यह यौन-सम्बन्ध छुपाकर रखना ईमानदारी के विपरीत नहीं।"

प्रमिला हँस पड़ी। उसने कहा, "एक सरल-सी बात के लिए आपने दो वाग्जाल बिछा दिये। एक यह कि समाज, जो यौन-सम्बन्ध को सामाजिक नियमों से मुक्त करना नहीं चाहता, पिछड़ा हुआ है और बालक के तुल्य है। यह बात प्रमाण से सिद्ध नहीं होती। दूसरा वाग्जाल यह है कि ईमानदारी के विपरीत न होना ईमानदारी ही है। यह भी एक अयुक्तिसंगत कथन है।"

"अपनी बात की तनिक और व्याख्या करो तो पता चले कि तुम क्या कहना चाहती हो ?"

"मैं यह कहना चाहती हूँ कि पशु-पक्षी निःसन्देह मनुष्य के समान उन्नत प्राणी नहीं हैं। उनमें यौन-सम्बन्ध एक छुपाने का विषय नहीं है। मनुष्य, जो पशुओं से अधिक बुद्धि और स्मरण-शक्ति रखता है, इसको एक गोपनीय बात समझता है। तो क्या आप मनुष्य को पशुओं से भी पिछड़ा हुआ प्राणी कहेंगे? और फिर मैं तो यौन-कर्म की बात नहीं कर रही, यौन-सम्बन्ध की कर रही हूँ। मनुष्य समाज ने इस सम्बन्ध को नियमाधीन कर रखा है। आप उन नियमों को, पिछड़े होने का लक्षण समझते हैं अथवा उन्नत होने के?"

"बायोलौजिकली (प्राणी-शास्त्र के सिद्धान्त से) तो मनुष्य पशु से उन्नत है, परन्तु साईकोलौजिकली (मनोविज्ञान से) पशु से पिछड़ा हुआ है।"

"एक असत्य को सिद्ध करने के लिए आप एक दूसरा असत्य बोल रहे हैं। बात इससे सर्वथा उलट है। शरीर के विषय में तो मनुष्य पशुओं से पिछड़ा हुआ ही है। हाँ, मनुष्य की उन्नति तो मन के विषय में है। इसको 'साईकोलौजिकल' ही कहेंगे। 'सोशियोलोजी (समाजवाद) तो केवल मनुष्य का अपना आविष्कार है। यह पशुओं में पाई ही नहीं जाती।"

चन्द्र विचार कर रहा था कि वह किसी से भली-भाँति सबक सीख कर आई है। इस कारण उसकी बात का उत्तर न दे सकने पर कहने लगा, "मान लेता हूँ कि तुम ठीक कहती हो, परन्तु क्या मतलब है इस वाद-विवाद का?"

"बताती हूँ। मुझको यह समझ आया है कि मैं, न तो आपके साथ ईमानदारी का व्यवहार रख रही हूँ, न ही अपने साथ। सम्बन्धियों के साथ भी, जिनमें मेरी मां सबसे मुख्य हैं, मेरा व्यवहार ईमानदारी का नहीं कहा जा सकता।

"मैं आपके साथ यौन-सम्बन्ध रखकर और फिर उसको अपनी मां से, आपके पिता से और अन्य सम्बन्धियों से छुपाकर, अपने को धोखा दे रही हूँ और आपको भी। बताओ, यह बेईमानी नहीं है क्या?"

"बेईमानी और ईमानदारी का निर्णय करने के लिए उद्देश्य की अच्छाई और बुराई जानना अत्यावश्यक है।"

"देखिये जी ! यौन-सम्बन्ध एक अच्छी बात है अथवा बुरी, इस पर विचार नहीं कर रहे। मैं तो यह विचार कर रही हूँ कि इसको छुपाकर रखने में क्या उद्देश्य हो सकता है। हमको अपने पति-पत्नी होने की तुरन्त घोषणा कर देनी चाहिए। सर्वप्रथम इस घोषणा को मेरी मां और अपने पिता के सम्मुख कर दीजिये।"

"तो पशुओं की भाँति इसकी घोषणा कर दें ?"

"पशु घोषणा नहीं करते, परन्तु यौन-क्रिया को सबके सामने करते हैं। हम, मेरा अभिप्राय है मनुष्य, इस क्रिया को सबके सम्मुख करने को ठीक नहीं समझते, परन्तु परस्पर सम्बन्ध की घोषणा कर देना चाहते हैं।"

"मैं इसकी आवश्यकता नहीं समझता।"

"मैं आवश्यकता समझती हूँ। यह इस कारण कि मैं अपनी मां से ईमानदारी का व्यवहार रखना चाहती हूँ।"

"तो उसने पूछा है क्या ?"

"उसने तो आपको देखा भी नहीं। इस पर भी मेरी आत्मा कहती है कि मां से यह बात चोरी रखनी, उससे अनुचित व्यवहार करना है।"

"तो अपनी मां से कह दो।"

"मैं अपनी मां को आपके पिता के पास ले जाकर यह कहूँगी और आपके सम्मुख।"

"पिताजी के सम्मुख क्यों ?"

"जैसा मेरी मां का मुझ पर अधिकार है, वैसा ही आपके पिता का आप पर। मैं समझती हूँ कि कुछ अधिक ही है।"

"अधिक क्यों है ?"

"मैं अब कमाती हूँ और आप अभी भी पिता से माँगकर निर्वाह करते हैं।"

"मैं समझता हूँ कि मैं बालिग़ हो गया हूँ और इस बात में पिता

के अधीन नहीं रहा ।"

"पर आप पिता के अधीन तो हैं । देखिये, मेरे गर्भ ठहर जाये तो मैं नौकरी कर नहीं सकूँगी । आप कमाते कुछ हैं नहीं । मुझे तो आपके पिता का दरवाज़ा खट-खटाना पड़ेगा । इस समय उनसे पूछें भी नहीं और पीछे उनसे सहायता माँगें । यही तो बेईमानी है ।"

"बच्चा होगा ही क्यों ?"

"ये व्यर्थ की युक्तियाँ हैं । यदि हो गया तो क्या होगा ?"

"यह मेरे पिता की बात तुम्हारे मस्तिष्क में कैसे आ गई है ?"

"आपके कहने से कि आपका अपना गुजर अपने पिता से खर्चा लेकर होता है । मैं विचार करती थी कि बच्चा होने के कारण अथवा किसी अन्य कारण से यदि मैं बेकार हो गई तो मुझको भी उनके आश्रय रहना होगा । आप तो कुछ काम करते नहीं ।"

"मैं अपने पिता से, अपने तथा तुम्हारे सम्बन्ध में कुछ बताना नहीं चाहता ।"

"क्यों ?"

"बस नहीं चाहता ।"

"मैं इसका अर्थ यह समझती हूँ कि आप न केवल अपने को तथा अपने पिता को धोखा दे रहे हैं, प्रत्युत् मुझको भी धोखे में रखना चाहते हैं । मैं सोचती हूँ कि वे ठीक ही कहते थे । मैं······।"

प्रमिला कहती-कहती रुक गई । चन्द्र को उसका अन्तिम वाक्य खटक गया और उसने पूछ लिया, "किसने ठीक कहा था ?"

"किसी ने समझ लो । चलो अब चलें । मैं समझ गई हूँ । मैं भविष्य में ईमानदारी का व्यवहार रखना चाहती हूँ, अपने से, अपनी माँ से और आप से भी । यदि आप मुझसे विवाह के लिए तैयार नहीं होते, तो मुझसे मेल-जोल बन्द कर दें ।"

इतना कह वह उठ पड़ी । परन्तु चन्द्र ने उसकी बाँह पकड़कर, उसको पुनः बैंच पर बैठा लिया और कहा, "इस प्रकार नहीं । मैं एक-दो बातें

तुमसे पूछना चाहता हूँ। देखना चाहता हूँ कि तुम कितनी ईमानदार हो। वह कौन है, जिसने ये बातें तुम्हारे मस्तिष्क में भर दी हैं ?"

"क्या करेंगे सुनकर ?"

"मैं उसको अपना शत्रु समझता हूँ।"

"चन्द्र ! तुम बेईमान होने के साथ-साथ मूर्ख भी हो।"

"क्यों ? क्या उसको, जो तुम्हारे हृदय में मेरा स्थान ले रहा है, अपना मित्र समझूँ ? मैं महात्मा गांधी नहीं हूँ, जो अपने अनिष्ट करने वाले को भी मित्र मानूं।"

"यही तो कह रही हूँ। बिना जाने कि वह कौन है, जिसने तुम्हारे विषय में मुझे कुछ कहा है, उसको अपने स्थानापन्न मान लेना, कहाँ की अक्लमन्दी है। सुनो, वे तुम्हारे पिता हैं।"

चन्द्र अवाक् उसका मुख देखता रह गया।

: १३ :

प्रमिला ने उसको अन्यमनस्क देख, अपना चन्द्र के पिता से सम्बन्ध का इतिहास बता दिया। उसने बताया, "जिस दिन गांधी ग्राऊंड में प्रथम मई की 'रैली' थी, उससे अगले दिन, जब मैं अपनी गली से दफ्तर जाने के लिए निकली तो एक आदमी, मोटर ड्राईवर की पोशाक पहिने मेरा मार्ग रोककर पूछने लगा, "आप प्रमिला देवी हैं क्या ?"

"मैंने माथे पर त्योरी चढ़ाकर कहा, 'हाँ, क्या है ?'

"इस पर एक बन्द लिफाफा मेरे सामने करते हुए उसने कहा, 'यह आपके नाम है।'

"मैंने चिट्ठी पकड़ी तो वह बिना कुछ और कहे एक ओर चला गया। एक मुझको दफ्तर जाने की जल्दी थी, दूसरे वह कहीं आने-जाने वालों में गुम हो गया था, इस कारण मैंने लिफाफे को अपने बैग में रखा और दफ्तर को चल दी। वहाँ पहुँचते ही काम में लग गई। लंच के समय अवकाश मिला तो मुझको चिट्ठी स्मरण हो गई। मैंने चिट्ठी

निकाल पढ़ी। आप जानना चाहते हैं कि क्या लिखा था उसमें ? मैं चाहती हूँ कि सुन लीजिये।"

इतना कह प्रमिला ने अपने बैग में से एक खुला लिफाफा निकाला और लिफाफे में से एक पत्र निकाल कर दिखाया। चन्द्र ने अपने पिता की चिट्ठी का फार्म पहिचान लिया। प्रमिला ने वह पत्र पढ़ कर सुनाना आरम्भ कर दिया,

" 'प्रिय बेटी प्रमिला !

'तुम मुझको नहीं जानतीं, पर मैं रात तुम्हारा व्याख्यान सुन चुका हूँ और अपने पुत्र चन्द्रकान्त से उस व्याख्यान के विषय में बातचीत कर चुका हूँ।

'मेरा अनुमान है कि तुम में और चन्द्र में कुछ साधारण से अधिक सम्बन्ध है। यदि मेरा अनुमान सत्य है अथवा सत्य होने वाला है तो मैं तुमको अपनी लड़की ही कह सकता हूँ। कुछ भी हो। इस समय एक बात तुमको कहना चाहता हूँ और आशा करता हूँ कि उस बात पर तुम गम्भीरतापूर्वक विचार करोगी।

'मैं चाहता हूँ कि इस संसार में प्रत्येक युवक अथवा युवती अपने कार्यों में ईमानदारी का व्यवहार रखे। इसमें उसका अपना कल्याण सर्वोपरि है।

'ईमानदारी क्या है, यह प्रश्न अति विकट है। इस पर भी मोटे रूप में तो यह समझी जा सकती है। अपने मन, वचन और कर्म में समान भाव रखना ईमानदारी है।

'जब किसी कार्य के विषय में सन्देह हो कि वह ईमानदारी का कार्य है अथवा नहीं, तो देखो कि जो-कुछ उस कार्य के विषय में तुम्हारे मन में है, आवश्यकता पड़ने पर अपने प्रिय-जनों को कह सकोगी अथवा नहीं और प्रियजन की जानकारी में वह कर सकोगी अथवा नहीं ?

'मन, वचन, कर्म में समानता ही ईमानदारी का लक्षण है। क्या तुम्हारा व्यवहार इस कसौटी पर सत्य उतरता है ? नहीं तो वह व्यवहार

धोखा है ।

'मैं चाहता हूँ कि तुम अपने साथ, चन्द्र के साथ और अपने सम्बन्धियों और मित्रों के साथ ईमानदारी का व्यवहार रखो ।

'मैं अभी इससे अधिक लिखना नहीं चाहता । तुम विचार करो और यदि कहीं विचार में रुकावट प्रतीत हो तो ऐसे ही निःसंकोच भाव से, जैसे अपने माता-पिता से राय की जाती है, आकर राय कर सकती हो ।'

"बस यही है ।" प्रमिला ने चिट्ठी लपेटते हुए कहा ।

"तो तुम मेरे पिताजी से मिली हो ?"

"नहीं, अभी नहीं । मैं तब से मन में मनन ही करती रही हूँ कि क्या मैं ईमानदार हूँ । आज आप आ गये और आप मुझको सन्तोषजनक उत्तर नहीं दे सके । एक बात मैं अपने मन में निश्चय कर चुकी हूँ । वह है आपके और अपने सम्बन्ध के विषय में । यदि यह सम्बन्ध रहना है तो घोषणा करनी होगी कि हम पति-पत्नी हैं ।"

"देखो प्रमिला ! यदि विवाह होना है तो इकट्ठे रहना भी होगा । उसके लिए मकान चाहिये । खाने-पीने का सामान चाहिये । कपड़े चाहियें और फिर बाल-बच्चों के पालन-पोषण का भी प्रबन्ध करना होगा । मुझको पैसा पैदा करने के लिए नौकरी करनी होगी और मैं पार्टी का कार्य कर नहीं सकूँगा ।"

"तो अब मेरा दूसरा प्रश्न सुन लो । क्या पार्टी में ईमानदार बन रहा जा सकेगा ?"

"क्यों नहीं ?"

"मैं जानती हूँ और आप भी जानते हैं कि तिलंगाना में कम्युनिस्ट निज़ाम के रुपये और शस्त्रों से हिन्दू पैसे वालों को तंग कर रहे थे । वहाँ के कम्युनिस्ट प्रायः मुसलमान थे । वे एक ओर तो रज़ाकारों को यह विश्वास दिला रहे थे कि उनका जिहाद हिन्दुओं के विरुद्ध है और दूसरी ओर अपनी पार्टी वालों को वही लोग बता रहे थे कि वे ग़रीब किसानों के लिए लड़ रहे हैं । यह ईमानदारी थी क्या ?

"जब आप मुझको व्याख्यान के लिए नोट्स दे रहे थे, मैंने कहा भी था कि तिलंगाना में कम्युनिस्ट आन्दोलन नहीं था। इस पर आपने एक बात कही थी। वह मेरे मस्तिष्क में अभी तक खटक रही है। आपने कहा था कि अब मुर्दों को कुरेदने की क्या आवश्यकता है। बात समाप्त हो गई है। न तो निज़ाम रहा है और न ही वे कम्युनिस्ट, जो उस ऐक्शन के करने वाले थे। मैंने उस दिन, उन कहे जाने वाले कम्युनिस्टों की प्रशंसा की थी। मैं समझती हूँ कि मैंने ईमानदारी की बात नहीं की थी।"

"ऐसा प्रतीत होता है कि पिताजी ने तुम्हें और भी पत्र लिखे हैं। वे भी कुछ ऐसा ही समझते हैं?"

"जी नहीं। मैंने आपके पिताजी के न तो दर्शन किये हैं और न ही मुझे उनका कोई अन्य पत्र मिला है। यह तो मैं अपनी बुद्धि से विचारी बात ही कर रही हूँ।"

"यही तो अन्तर है एक बूर्जुआ मनोवृत्ति वाले आदमी में और एक प्रोलिटेरिएट मनोवृत्ति वाले व्यक्ति में। हम नीति के अनुसार कार्य करते हैं और वे स्वार्थ के लिये।"

"बहुत खूब! जब एक सरमायादार झूठ बोलता है तो वह बेईमान है और जब एक श्रमिक झूठ बोलता है तो यह नीति है। पर मैं कहती हूँ कि बुद्धि तो सब में समान है। हाँ, मूर्खता सब में समान नहीं। बेईमानी बुद्धि का काम है। इसलिए दोनों वर्गों में यह एक समान निन्दनीय क्यों नहीं?"

चन्द्र का उत्तर था, "राजनीति में सत्य-झूठ दोनों चलते हैं। सब पार्टियाँ इसी प्रकार का करती हैं। नीति के अर्थ ही यह हैं कि किसी श्रेष्ठ उद्देश्य के लिए मिथ्याचार का भी प्रयोग कर लेना।"

"राजनीति तो एक राज्य के कार्य में, दूसरे राज्य के कार्य के सम्बन्ध में चलती है। एक ही देश के वासी परस्पर जब कुटिलता करने लगें तो वह राजनीति के अनुरूप नहीं हो सकता। देखिये, हमने उस दिन जलसे

में अपनी पार्टी के सदस्यों को कहकर ये नारे लगवाये थे, 'तिलंगाना के शहीद, ज़िन्दाबाद।' इस प्रकार जनता पर यह प्रभाव जमाने का यत्न किया था कि तिलंगाना में पकड़े गये उपद्रवी बहुत ही भले और कम्यु-निस्ट विचार के लोग थे। यह धोखा था और इससे कल्याण की आशा नहीं हो सकती।"

"तुम हमारी पार्टी में कार्य नहीं कर सकोगी। मैं समझता हूँ कि तुम्हारे मस्तिष्क की वर्तमान दशा इतनी विकृत हो चुकी है कि तुम उचित-अनुचित में, नीति-अनीति में और कल्याण-अकल्याण में भेद-भाव करने की शक्ति खो बैठी हो। मैं समझता हूँ कि हमको आज अपना मार्ग पृथक्-पृथक् कर लेना चाहिये।"

"अच्छी बात है।" प्रमिला ने बैंच पर से उठते हुए कहा, "आज से आपको मेरी 'गुड-बाई' ही समझिये। एक बात स्मरण रखिये कि कहीं हम बाज़ार अथवा किसी अन्य स्थान पर एक-दूसरे के सामने आ जायें, तो हम परस्पर सर्वथा अपरिचित होंगे।"

इतना कह प्रमिला पार्क से बाहर निकल गई। चन्द्र कुछ देर तक तो उसको जाते देखता रहा। जब वह कुछ दूर चली गई तो उसके मुख से निकल गया, "सूम जाये।"

वह वहाँ से उठा और पार्टी के कार्यालय को चला गया। उसके मन में इस बात का किंचित् मात्र भी शोक नहीं था कि उसका प्रमिला से सम्बन्ध टूट गया है। वह बिना किसी प्रकार के दुःख-क्लेश के अपने कार्य में लीन हो गया।

रात वह घर पहुँचा तो परिवार के लोग भोजन पर बैठे थे। वह वहाँ बैठा तो बैरा ने उसके सामने भी भोजन लगा दिया। भोजन करते समय बैरा सम्मुख होने के कारण कोई गम्भीर बात नहीं हो सकी। इधर-उधर की बातें चलती रहीं।

कॉफी पीते समय, बैरा के चले जाने पर नीरा ने घोषणा कर दी, "पिताजी! मैं छुट्टियों में काश्मीर जा रही हूँ।"

"कब ?"

"छुट्टियाँ तो आज से ही हो गई हैं, परन्तु डॉक्टर सिंह को बीस तारीख से अवकाश मिला है। सो हम बीस की सायंकाल को काश्मीर मेल से जाने का विचार रखते हैं।"

"तो तुम डॉक्टर बलवंतसिंह के साथ जा रही हो ?"

"जी।"

सब नीरा का मुख देख रहे थे। नीरा आराम से कॉफी का मज़ा ले रही थी। कितनी ही देर तक माथुर लड़की का मुख देखता रहा, परन्तु उसको अपनी कॉफी में लीन देख कहने लगा, "नीरा! तुमको बहुत सोच-समझ कर चलना चाहिये।"

"सो तो कर रही हूँ।" नीरा ने वैसे ही असावधानी से उत्तर दे दिया, "डॉक्टर साहब से मित्रता हो गई है। वे बहुत ही अच्छे हैं। मैं समझती हूँ कि दस मूर्ख लड़कियों से मित्रता करने के स्थान, एक समझदार पुरुष से मित्रता अधिक हितकर हो सकती है।"

इस समय नीरा की माँ ने कह दिया, "मैं इसको पसन्द नहीं करती।"

"मैं पसन्द करता हूँ, यदि नीरा बहिन मुझको भी साथ ले चलें तो ?"

"तुम्हारी वह लड़की, जिसकी बाँह पकड़कर घसीटा करते हो, किधर गई है ? उसको भी साथ ले चलो न।"

चन्द्र को उत्तर नहीं सूझा और चुप रहा। आगे बात माथुर ने चलाई। उसने कहा, "नीरा! तुम तो कमाती हो और ये महाशय लैक्चरबाज़ी करते हैं। इसके जाने का खर्चा दोगी क्या ?"

"आपके पास रुपये कम पड़ गये हैं क्या ?"

"पर ये महाशय तो हमको गाली देते हैं। अभी परसों चन्द्रकान्त साहब का वक्तव्य 'स्पार्क' में छपा था कि हैदराबाद में पूर्ण साम्प्रदायिक झगड़ा हिन्दू दुकानदारों का चलाया हुआ है। रज़ाकार आन्दोलन तो केवल हिन्दुओं की मूढ़ नीति की प्रतिक्रिया मात्र ही था।"

चन्द्र ने मुस्कराते हुए पूछा, "आप हिन्दू सभाईट कब से हुए हैं ?"

"तब से, जब तुम अभी पैदा भी नहीं हुए थे। हिन्दू होना तो मेरे कर्मफल से हुआ है। रही हिन्दू सभा। यह १६२४ में स्थापित हुई थी और मैं इसका सदस्य १६२६ में हुआ था। साहबज़ादे का जन्म १६२६ में हुआ था।"

"पर आप तो कांग्रेस कमेटी के सदस्य हैं न?"

"कांग्रेस कमेटी में होने से मैं मुसलमान नहीं हुआ। पीछे कुछ वर्षों से मैंने हिन्दू सभा छोड़ दी थी। अब कांग्रेस भी छोड़ दी है।"

"कब से?"

"महात्मा गांधी के निधन के पश्चात् से। जब मैंने देखा कि कांग्रेस एक राजनीतिक पार्टी होते हुए देश के शासन-कार्य में हस्तक्षेप करने लगी है, तो मैंने इसे छोड़ दिया। इस वर्ष मैं इसकी कमेटी का मेम्बर नहीं चुना गया।"

"तो अब किस पार्टी में शामिल हो रहे हैं?"

"क्या किसी पार्टी में जाये बिना खाना हज़म नहीं होता? तुम अपनी बताओ चन्द्र! कब तक यह चलेगा?"

"विचार तो था कि जीवन-भर कम्युनिस्ट पार्टी का कार्य करूँगा, परन्तु आपने विरोध आरम्भ कर दिया है। इससे समस्या विचारणीय हो गई है।"

"क्या पहिले सहयोग था, जो अब विरोध हो गया है?"

"जी नहीं। पहिले आप मेरे कामों से अलिप्त थे। अब आपको वे बुरे प्रतीत होने लगे हैं। इस कारण जीवन का आधार तो बनाना पड़ेगा। कब तक आपसे खर्चा ले सकता हूँ?"

"बहुत समझदार हो गये हो। तुमने ही तो कहा था कि मेरी लाखों की सम्पत्ति नालायक सन्तान के हाथ में जाने से व्यर्थ जायेगी। तो तुम अब लायक बनने जा रहे हो?"

"केवल यही नहीं, पिताजी! आपने हमारी पार्टी के सदस्यों को भी सीख देनी आरम्भ कर दी है। आप उनको ईमानदारी का सबक

सिखाने लगे हैं।"

"ओह ! समझा। तो प्रमिला से तुम्हारी बात हो गई है ? अच्छा हुआ है। किसी को यह कहने को स्थान तो न रहेगा कि उसको धोखा हुआ है।"

"धन्यवाद है पिताजी ! परन्तु आप कभी-कभी भूल जाते हैं कि यह संसार ही धोखा है। इसमें धोखा करने वाले ही पनपते हैं। सरमायेदार भी तो एक धोखा हैं। उनसे निपटने के लिए धोखा देना ही पड़ता है।"

"ठीक है। यदि तो तुम किसी सरमायेदार की लड़की को ठगते तो मैं समझता कि तुम उक्त सिद्धान्त की पालना कर रहे हो। एक विधवा ब्राह्मणी की लड़की को तो पता चल ही जाना चाहिये कि उसे धोखा दिया जा रहा है।"

"पर मैं उसको तो धोखा देने का विचार नहीं रखता था।"

"तब तो ठीक है। मैं आशा करता हूँ कि तुमने उसको समझा दिया होगा।"

"वह नहीं समझ सकी।"

"मुझको बहुत अफ़सोस है। तुमने ईमानदार आदमियों की भाँति बात नहीं की होगी, खैर। छोड़ो इस बात को। हाँ, नीरा ! बताओ, चन्द्र को साथ ले जा रही हो ?"

"यदि वह अपनी, क्या नाम लिया है आपने ? हाँ, प्रमिला को साथ ले चले और उन दोनों का खर्चा आप दें, तो वह मेरे साथ चल सकता है।"

"मैं खर्चा क्यों दूँ ? यह प्रमिला मेरी क्या होती है ?"

"तो मैं नहीं ले जाऊँगी। मैं अकेली, मेरा मतलब है डॉक्टर सिंह के साथ ही जाऊँगी।"

: १४ :

अगले दिन, जब माथुर सुप्रीम कोर्ट से लौटा, तो उसकी मेज़ पर

एक बन्द लिफ़ाफ़ा रखा था। उसने उसको खोला तो अवाक् रह गया। पत्र में लिखा था—

"पूज्य पिताजी !

"आपने मुझको अपनी चिट्ठी में बेटी लिखा है, अतएव मेरा आपको पिताजी कहकर सम्बोधन करना अनुचित नहीं है।

"मैंने आपका वह पत्र पढ़ा है और इतने दिन तक उस पर मनन किया है। मैं इस परिणाम पर पहुँची हूँ कि मैं आपका बहुत ही धन्यवाद करूँ। उस पत्र ने मेरे जीवन का काँटा बदल दिया है। अब मैं अपने प्रत्येक कार्य को आप द्वारा बताई ईमानदारी की कसौटी पर कसकर देखती हूँ। इस प्रकार मैं अनुभव करती हूँ कि मैं एक नये मार्ग पर ही चल पड़ी हूँ।

"मुझको यह बताते हुए दुःख और हर्ष अनुभव होता है कि आपके सुपुत्र आपकी कसौटी पर कसने से सोना सिद्ध नहीं हुए और मैंने उनको अपने मन से निकाल दिया है। इससे भी बड़ी बात यह हुई है कि जिस संस्था में मैं काम कर रही थी, वह भी इस कसौटी पर पूरी नहीं उतरी। मुझको उससे भी पृथक् होना पड़ा है।

"आगे क्या होगा, मैं कह नहीं सकती। इस पर भी आपकी कृतज्ञ हूँ और आपके स्नेह की पात्र बनने का यत्न करती रहूँगी। आपकी आज्ञानुसार कभी किसी काम में बाधा आ खड़ी हुई तो आपसे सहायता की आशा करती हूँ।"

माथुर कितनी ही देर तक इस पत्र पर विचार करता रहा। अब उसने घण्टी बजाई। चपरासी भीतर आया तो उसने पूछा, "यह पत्र कौन दे गया है?"

"एक लड़का आया था और कहता था कि आपके नाम का पत्र है।"

"कितना बड़ा था? क्या आयु मालूम होती थी उसकी?"

"पन्द्रह-सोलह वर्ष का प्रतीत होता था।"

माथुर ने चिट्ठी को अपनी मेज़ के उस दराज़ में रख लिया, जिसको

ताला लगा रहता था। वह चन्द्र की पिछली रात की बातों का मतलब समझ गया था। उस रात जब चन्द्र खाना खाने आया तो उसने पूछा, "प्रमिला कहाँ नौकरी करती है?"

चन्द्र इस प्रश्न से सतर्क हो गया और प्रश्न-भरी दृष्टि में अपने पिता का मुख देखने लगा। माथुर ने उसके मन की बात समझकर कहा, "तुम जानना चाहते हो कि मैं क्यों पूछ रहा हूँ? लो सुनो। मेरे पत्र का उत्तर उसने आज दिया है। उसके पत्र को पढ़कर मैं उस लड़की की सूझ और उसके मस्तिष्क के सुलझे होने से प्रभावित हुआ हूँ। मेरा विचार था कि वह इतनी बुद्धू नहीं, जितने तुम हो। इस कारण उसको एक 'फीलर' (अभिमर्श) के रूप में कुछ लिखा था। उस अभिमर्श का जो परिणाम हुआ है, वह आश्चर्यजनक है। वह लिखती है कि मेरी लिखी कसौटी पर वह अपने जीवन-कार्यों को कसने लगी है और वह अनुभव करती है कि इस प्रकार उसका जीवन-मार्ग ही बदल गया है।

"जानते हो वह क्या कसौटी थी? वह थी ईमानदारी की। मैंने ईमानदारी की व्याख्या की थी और उस व्याख्या के अनुसार उसको तुम ईमानदार प्रतीत नहीं हुए।

"चन्द्र! मुझको दुःख हुआ, जब मैंने यह पढ़ा कि तुम्हारे परिचित तुमको और तुम्हारी पार्टी को ईमानदार नहीं समझते।"

"वे मूर्ख हैं। वे संसार को वास्तविक रूप में नहीं जानते। इस कारण उनका दृष्टिकोण मेरे समान नहीं है।"

"यही तो देखना है। इसीलिए उसका पता पूछ रहा हूँ।"

"वह शैल कम्पनी में टाइपिस्ट का काम करती है।"

"क्या वेतन लेती होगी?"

"मेरा विचार है कि डेढ़ सौ रुपया महीना पाती होगी।"

माथुर यह सुन गम्भीर विचार में डूब गया। वह इतना ही चन्द्र को पॉकेट-खर्चे के लिए देता था। भोजन, कपड़ा इत्यादि पृथक् थे।

सब भोजन से उठने ही वाले थे, जब नीरा आ गई। उसने आते

ही बैरा को कहा, "भोजन लगा दो।"

"बहुत भागी हुई आई हो?" माथुर साहब ने पूछा।

"जी नहीं। भागी हुई जा रही हूँ। डॉक्टर सिंह अपने एक सम्बन्धी के यहाँ भोजन करने गये हैं। भोजनोपरान्त हमने पिक्चर देखने जाना है। उन्होंने कहा है कि पाँच मिनट में वे यहाँ आयेंगे। मुझको भोजन कर तैयार रहना चाहिए।"

"तो तुमको वे अपने सम्बन्धियों के यहाँ नहीं ले जाते?"

"नहीं।"

नीरा की माँ ने पिछले दिन की बात आरम्भ कर दी, "तो तुम काश्मीर जा रही हो?"

बैरा भोजन ले आया था और नीरा ने खाना आरम्भ कर दिया था। नीरा को उत्तर न देते हुए, खाने में लीन देख मां ने कह दिया, "मुझको यह ठीक प्रतीत नहीं हो रहा। जाना ही है तो अपने पिताजी को साथ ले जाओ।"

"अच्छा-बुरा तो अपने मन की भावना है। वैसे पिताजी चलते हों तो चलें।"

"मैं तो अभी नहीं जा सकता। मुझको पंजाब हाईकोर्ट में काम है।"

डॉक्टर बलवन्तसिंह की मोटर का हॉर्न सुनाई दिया तो नीरा खाना छोड़ भाग गई।

अगले दिन से माथुर साहब ने शैल कम्पनी में किसी से परिचय प्राप्त करने का यत्न करना आरम्भ कर दिया। यह कोई कठिन काम नहीं था। उस कार्यालय में डेढ़ सौ के लगभग कर्मचारी काम करते थे और उनमें से कोई ऐसा ढूँढ निकालना, जिसके द्वारा प्रमिला के विषय में पता किया जा सके, असम्भव नहीं था। कार्यालय के उसी विभाग में, जिसमें प्रमिला काम करती थी, एक मिस्टर रघुनन्दन सुपरवाईज़र का काम करते थे। रघुनन्दन के एक मित्र थे मिस्टर चिन्तामणी, जो 'फ्रीमेसन' थे और

मुकुट विहारी भी फ्रीमेसन था। जब माथुर को उन दोनों की मित्रता का पता चला तो वह उससे मिलकर कहने लगा कि वह रघुनन्दन से परिचय करना चाहता है।

चिन्तामणी ने विस्मय में पूछा, "माथुर साहब ! क्या काम पड़ गया है शैल कम्पनी में ?"

"वहाँ कुछ नौकरियाँ खाली हैं और मिस्टर रघुनन्दन इसमें सहायता कर सकते हैं।"

अगले सप्ताह रिसैप्शन के दिन चिन्तामणी अपने मित्र रघुनन्दन को साथ लेकर क्लब में आ गया और उसने रघुनन्दन का माथुर से परिचय करा दिया। मिस्टर माथुर ने समय निकालकर उसके कार्यालय की बात आरम्भ कर दी, "सुना है कि आपके कार्यालय में कम्युनिस्टों का ज़ोर बढ़ रहा है ?"

"हमने तो उनकी कमर तोड़ दी है, परन्तु उनमें एक लड़की है, जो उनकी नेता है। वह क्लर्कों, चपरासियों और मोटर ड्राइवरों पर बहुत प्रभाव रखती है। वह रिश्वत और प्रलोभनों से ऊपर है। इसी कारण उनकी यूनियन अभी तक टूटी नहीं।"

"क्या कहती है वह ?"

"यह तो मुझको मालूम नहीं। मैं उनकी यूनियन का सदस्य नहीं हूँ। उनकी यूनियन में दो सौ रुपया मासिक से अधिक लेने वाला कोई नहीं। एक सौ के लगभग ऐसे लोग हैं और उनमें मोटर ड्राइवर, मिस्त्री, मकैनिक, जो आवश्यक कामों पर हैं, सम्मिलित हैं। मजेदार बात यह है कि वह इन अनपढ़ों पर ऐसे शासन करती है, जैसे उनकी मलिका हो।

"पीछे हमने मिस्त्रियों के वेतन में विशेष वृद्धि की तो उन्होंने बिना प्रमिला की स्वीकृति के वृद्धि लेने से इन्कार कर दिया। उनका कहना था कि यह वृद्धि की सूचना यूनियन के मन्त्री द्वारा आनी चाहिये।

"हमने प्रमिला से पूछा कि वह क्या समझती है तो कहने लगी, यूनियन की ओर से मालिकों और अधिकारियों को धन्यवाद भेज

दीजिये, परन्तु हम तो रियायतन उन्नति नहीं चाहते, प्रत्युत् हम ग्रेड में ही उन्नति माँग रहे हैं।"

"तो इस लड़की का नाम प्रमिला है?"

"हाँ, माथुर साहब! ग़जब की बोलने वाली है। सब उसका आदर करते हैं और प्रमिला बहन, प्रमिला बहन होती रहती है।"

"तो वह कम्युनिस्ट मालूम नहीं होती?"

"है तो कम्युनिस्ट, परन्तु वह कहती है कि साथी और साथिन शब्द से बहन-भाई अधिक स्नेह-सूचक है। एक क्लर्क ने मुझको बताया है कि यूनियन की मीटिंग में यह प्रश्न उपस्थित हुआ था। कुछ सदस्य चाहते थे कि वे परस्पर एक-दूसरे को साथी कहकर पुकारा करें। इस पर उसने यह कह दिया कि जो उसे बहन कहकर नहीं पुकारना चाहते, वे बताएँ कि क्यों?

"इस पर आपत्ति उठाने वालों ने कहा, 'हम सबको बहिन नहीं कह सकते और हम एक समान सम्बोधन चाहते हैं।'

"उसका उत्तर था, 'ठीक है पर यहाँ तो न आपकी कोई बीवी है, न बेटी। फिर यह आपत्ति कैसे आ गई? मैं तो बहिन बनकर ही रहने में अपना मान समझती हूँ। कम्युनिस्ट पार्टी में आप जिसको जैसा उचित समझें बुलायें, परन्तु यहाँ यूनियन में तो हम सब बहिन-भाई ही हैं।'

"आपत्ति उठाने वालों को कोई युक्ति नहीं मिली और बात तय हो गई।"

"बहुत ही विचित्र लड़की है।" माथुर साहब ने कुछ आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा, "देखने और सुनने योग्य है। कहाँ रहती है वह?"

"मकान नम्बर ३४१२, कूचा घासीराम में।"

माथुर ने पता नोट कर लिया और फिर मिस्टर रघुनन्दन को अपने घर एक दिन भोजन पर निमन्त्रण दिया और उसको बताया, "मैं इस लड़की में रुचि रखता हूँ। यह मेरे मित्र की लड़की है और इसकी उन्नति के लिए मैं इच्छा करता हूँ।"

रघुनन्दन ने एक बात बताई, "मुझको कुछ ऐसा प्रतीत हुआ है कि कम्युनिस्ट पार्टी उससे नाराज़ हो गई है। मुझको सूचना मिली है कि पिछले सप्ताह यूनियन के सैक्रेटरी का चुनाव होना था और एक यूनियन के उग्र कार्यकर्ता ने उसके निर्वाचन का विरोध किया था। इस पर भी वह चुन ली गई है। लोग उसको मन्त्री इसलिए नहीं बनाये हुए कि वह कम्युनिस्ट पार्टी की सदस्या है प्रत्युत् इस कारण कि वह योग्य और मिलनसार है।"

"मुझको ऐसा प्रतीत हो रहा है कि वह शीघ्र ही यूनियन के मन्त्री पद से हटा दी जायेगी।"

"उसके विरुद्ध एक अविश्वास का प्रस्ताव भी हो चुका है, परन्तु पास नहीं हो सका। वास्तव में कम्पनी के अधिकारी भी चाहते हैं कि वह मन्त्री बनी रहे। इस कारण उन्होंने भी ज़ोर लगाया और अविश्वास का प्रस्ताव पास नहीं हो सका।"

"तो बहुत ही पसन्द की जाती है वह?"

"हाँ, हमारे अधिकारी, यूनियन को उसके हाथों में सुरक्षित समझते हैं।"

"ऐसा व्यक्ति कम्युनिस्टों में सम्मानित नहीं रह सकता। उसका पतन निश्चय ही है।"

उक्त वार्तालाप के लगभग एक सप्ताह पश्चात् मिस्टर माथुर को रघुनन्दन का टेलीफ़ोन आया, "माथुर साहब! वह लड़की, जिसके विषय में आप रुचि प्रकट कर रहे थे, कम्पनी से निकाल दी गई है।"

"क्यों?"

"यूनियन ने उसके विरुद्ध प्रस्ताव पास कर, उसको मन्त्रीपद से हटा दिया था और नये मन्त्री के कहने पर कम्पनी के जनरल मैनेजर ने प्रमिला को एक मास के नोटिस के स्थान पर वेतन देकर आज छुट्टी दे दी है।"

"नया मन्त्री कौन बना है?"

"चौधरी सन्तोषराम है। वह हमारी मोटर फैक्टरी में हैड-मिस्त्री है। सुना है कि दिल्ली कम्युनिस्ट पार्टी ने यूनियन के सदस्यों को डाँट-धमका कर प्रमिला देवी के विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव पास करा दिया है और चौधरी सन्तोषराम को मन्त्री बनवा दिया है। चौधरी ने जनरल मैनेजर के सामने जाकर यह कहा है कि प्रमिला मज़दूरों में हड़ताल कराने का यत्न कर रही है और इससे कम्पनी को भारी हानि होने वाली है। मैनेजर ने यह आज्ञा भेज दी कि प्रमिला को एक महीने का वेतन देकर छुट्टी दे दी जाये।"

"यह तो सर्वथा अन्याय हो गया है।"

"पैसे वाले अपनी आय की रक्षा करना सबसे बड़ा न्याय समझते हैं। सो वह प्रमिला को निकालकर कर रहे हैं।"

"प्रमिला को तो बहुत दुःख हुआ होगा ?"

"हाँ। वह आज्ञा लेकर कई मिनट तक बितर-बितर मेरा मुख देखती रही। जब मैंने उसको कहा कि उसको अपना चार्ज मिस्टर सहगल को दे देना चाहिये, तो चौंककर बोली, 'मुझको विश्वास नहीं आता कि यह आज्ञा सत्य हो सकती है। खैर आप मिस्टर सहगल को भेज दीजिये। मैं अभी चार्ज दे देती हूँ।'

"दस मिनट में उसने चार्ज दे दिया और अपना बकाया वेतन ले चली गई।"

"भाई रघुनन्दन ! यह तो कोई अच्छा समाचार नहीं।"

"मुझको भी इसका बहुत शोक है।" इतना कह उसने टेलीफ़ोन बन्द कर दिया।

: १५ :

रात माथुर प्रमिला के विषय में और अधिक जानने की योजनाएँ बनाता रहा। प्रातः उठ उसने प्रमिला को एक पत्र लिखा। उसमें माथुर ने लिखा, "मुझको विश्वस्त सूत्र से ज्ञात हुआ है कि तुम्हारी नौकरी छूट

गई है। इस कारण एक पिता का अधिकार है कि लड़की की सहायता करे। मैं चाहता हूँ कि तुम मेरे कार्यालय में, यह पत्र दिखाकर डेढ़ सौ रुपया महीना, जब तक तुम्हारा काम न लग जाये, ले जाया करो। अपने भाई द्वारा भी, जिसके हाथ तुमने पहिले पत्र भेजा था, यह रुपया मँगवा सकती हो।"

यह पत्र लिखकर माथुर ने चपरासी के हाथ उस पते पर भेज दिया, जो रघुनन्दन ने प्रमिला को बताया था।

सायंकाल प्रमिला स्वयं मिलने आई। उस समय माथुर चाय पी कर क्लब जाने की तैयारी कर रहा था। प्रमिला ने हाथ जोड़ नमस्कार कर कहा, "मैं प्रमिला हूँ।"

"ओह! आओ बैठो। तुम्हारे स्वयं आने की आवश्यकता नहीं थी।"

"मैं अभी कुछ लेने नहीं आई। कुछ लेने की कदाचित् आवश्यकता भी नहीं पड़ेगी। मैं तो अभी दो कारणों से आई हूँ। जब आप मेरे विषय में इतना कुछ जानने का यत्न करते रहते हैं, तो आपके दर्शन करने की लालसा जाग पड़ी थी। मैं अपने को अति सौभाग्यवान समझती हूँ, जो आपके मन में मेरे लिए इतनी सहानुभूति उत्पन्न हो गई है। सो अपनी कृतज्ञता प्रकट करने चली आई हूँ।

"एक दूसरा कारण भी है। मैं आपको बताना चाहती थी कि मेरा काम टूटा नहीं, प्रत्युत् मेरी तरक्की हुई है। कल रघुनन्दन साहब ने मुझको अपने टाइपिस्ट के पद से एक मास का अतिरिक्त वेतन देकर पृथक् कर दिया था। मुझको दुःख और चिन्ता तो हुई थी। वह मेरी परिस्थिति में किसी को भी हो सकती है। परन्तु घर पहुँची तो शैल कम्पनी के जनरल मैनेजर साहब का एक लिफ़ाफ़ा मेरी प्रतीक्षा कर रहा था। मैं मां को बताने ही लगी थी कि मेरी नौकरी छूट गई है कि मां ने वह लिफ़ाफ़ा मुझको दे दिया। लिफ़ाफ़े पर कम्पनी की मुहर और जनरल मैनेजर के हस्ताक्षर देख मैं विस्मय में उसको खोलकर पढ़ने लगी। पढ़कर

मेरी हँसी निकल गई। उस पत्र में लिखा था,

'प्रमिला देवी को जनरल मैनेजर की टाइपिस्ट की नौकरी पर दो-सौ बीस रुपये मासिक पर नियुक्त किया जाता है। उसको पन्द्रह जून को काम पर हाज़िर होकर चार्ज ले लेना चाहिए।"

"सो पिताजी ! मैं एक-डेढ़ सौ रुपये महीने की नौकरी से निकाली जा कर दो-सौ बीस रुपये महीने की नौकरी पर नियुक्त कर दी गई हूँ।"

माथुर इस वृत्तान्त को सुनकर हँस पड़ा। हँसकर उसने कहा, "मालूम होता है कि यह मिस्टर जॉनसन बहुत ही विट्टी (हास्य-प्रवृत्ति वाला) आदमी है।"

"बात यह हुई है कि चौधरी सन्तोषराम, जो यूनियन का मन्त्री नियुक्त हुआ है, मैनेजर के पास पहुँच कर मेरे विरुद्ध बहुत-कुछ कहकर, मुझको निकालने की माँग कर आया था। न निकाले जाने पर हड़ताल करने की धमकी भी दे आया था। मैनेजर ने यह मज़ाक उससे किया प्रतीत होता है और मुझको भारी लाभ हो गया है।

"मैं आज ड्यूटी पर पहुँची तो चौधरी, जो मुझको फाटक पर मिल गया था, सहानुभूति प्रकट कर कहने लगा, 'प्रमिला देवी ! एम्प्लौयमेण्ट ऐक्स्चेन्ज में नाम लिखा आओ।'

"पहले तो मेरे मन में आया कि उसे अपनी तरक्की की बात बता दूँ, परन्तु पीछे विचार कर कि बताने की आवश्यकता नहीं, चुपचाप चली गई।

"मैं मैनेजर के कमरे में गई तो उन्होंने बताया कि वह मेरे काम से बहुत सन्तुष्ट हैं। इस कारण मेरी इस नये काम पर नियुक्ति कर दी गई है।"

"मुझको सन्देह है कि," माथुर साहब ने कहा, "कम्युनिस्ट पार्टी को तुम्हारे विरुद्ध भड़काने का श्रेय मेरे साहबज़ादे चन्द्रकान्त को है। वह समझता था कि तुमको तुम्हारी गुस्ताखी के लिए दण्ड दिलवाना चाहिए।"

"यह तो मैं जानती नहीं। मैं तो केवल इतना जानती हूँ कि चूँकि मैंने कम्युनिस्ट पार्टी से त्यागपत्र दे दिया है, इस कारण पार्टी सहन नहीं कर सकती कि एक नौन-कम्युनिस्ट किसी यूनियन का मन्त्री बना रहे। मेरा रसूख़ अपनी यूनियन में काफ़ी था। इस कारण कम्युनिस्ट पार्टी का पहिला प्रयास, मेरे विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव कराने का, असफल हुआ था। पीछे पार्टी मन्त्री ने यूनियन के सदस्यों को एक-एक कर बुलाकर डाँटा, जिससे दूसरी बार अविश्वास का प्रस्ताव पास हो गया।

"अब तो मुझको तरक्की मिल गई है। इस कारण मुझको पार्टी का, यद्यपि मैंने उसको छोड़ा हुआ है, धन्यवाद ही करना चाहिए।"

"अच्छी बात है, कभी-कभी मिलती रहा करो, जिससे मेरी रुचि तुम में बनी रह सके। मैं तुम्हारा परिचय चन्द्र की माँ से भी करा देना चाहता हूँ। कभी अपनी माँ को ला कर उससे मिला देना। मैं समझता हूँ कि तुम जीवन में सफल होवोगी।"

उसी रात चन्द्र से बहुत रुचिकर वार्तालाप हो गई। नीरा काश्मीर जा चुकी थी और पहल-गाँव से उसका पत्र आया था कि वह वहाँ बहुत ही आनन्द से है। चन्द्र अपने जीवन से असन्तुष्ट था। माथुर इस बात को जानता था और हृदय से अपने पुत्र को किसी जीवनोपयोगी काम में लगाना चाहता था। इस कारण जब भी अवसर मिलता, वह उससे नोक-झोंक कर उसका पथ-प्रदर्शन करने का यत्न किया करता था। आज भी जब चन्द्र भोजन कर चुका और बैरा बर्तन उठाकर कॉफ़ी लगा गया तो माथुर ने मुस्कराते हुए पूछा, "कामरेड चन्द्र! कैसा काम चल रहा है?"

"जीवन तो संघर्ष है पिताजी! बूर्जुआ मनोवृत्ति समाज के प्रत्येक घटक में घर कर चुकी है। इससे उद्देश्य की अन्तिम मंज़िल तक पहुँचने में देर हो रही है।"

"ओह! तो तुम मेरे जीवनकाल में ही क्रान्ति लाने को उत्सुक हो क्या?"

"जी हाँ। आप तो अभी बहुत काल तक जियेंगे और देखेंगे कि हिन्दुस्तान में समाजवाद के आधार पर राज्य-कार्य चलेगा। बात यह है कि नेहरू जी तो एक दिन में यह बात कर देते, परन्तु लोग तैयार नहीं। इस कारण उनको तैयार करने का कार्य हमको सौंपा हुआ है।

"हम धीरे-धीरे अपना प्रचार-कार्य कर रहे हैं। भारत जैसे विशाल देश में लाखों कार्यकर्ताओं की आवश्यकता है। हमारे पास उन लाखों कार्यकर्ताओं को देने के लिए सूखी रोटी और मोटा कपड़ा भी नहीं है। यह कार्य पण्डित नेहरू जी कर रहे हैं। उन्होंने एक भारत सेवक समाज बना दी है। इस समाज का कार्य ही है कि जनता के मन पर समाजवाद की धूम मचा दी जाये। सरकार कम्युनिटि प्रोजैक्ट भी इसी मतलब से चला रही है।

"पिताजी! समय आने वाला है, जब पण्डितजी चुपचाप यह घोषणा कर देंगे कि भारत में समाजवादी समाज बनाना सरकार का उद्देश्य है। इस प्रकार केवल घोषणामात्र से विधान बदल जायेगा और फिर धीरे-धीरे, एक-एक कर कानून बदल दिये जायेंगे। निजी विभाग की दस्त-कारियों पर प्रतिबन्ध और नियन्त्रण लगा दिये जायेंगे। इसी प्रकार कम्युनिज़्म सार-रूप में प्रचलित हो जायेगा।"

"तो यह तुम्हारी पार्टी का समझौता प्रधान मन्त्रीजी से हो गया है?"

"जी नहीं। हमारे विद्वान् साथियों ने भारत में चल रही हवा का रुख देखकर यह अनुमान लगाया है। सोशियलिज़्म, अर्थात् राज्य पूर्ण देश की और जाति के कारोबार की मालिक हो, को चलाने के लिए, 'डेमोक्रेसी', जैसी भारत में चल रही है, उपयुक्त प्रपंच नहीं है। इसके लिए श्रमिक वर्ग का अधिनायकवाद (डिक्टेटरशिप ऑफ़ दि प्रोलिटेरिएट) आवश्यक है और पण्डितजी यही कह रहे हैं। पार्लियामेण्ट की प्रत्येक बैठक में देश उसी ओर धकेला जा रहा है। कभी-कभी कोई कांग्रेस पार्टी का सदस्य देश की इस ओर प्रगति को देखकर डर जाता है और कांग्रेस

की नीति की आलोचना कर देता है और पण्डितजी उसको ऐसी फटकार बता देते हैं कि बेचारा मुख छुपाकर बैठ जाता है। पग-पग पर देश अधिनायकवाद की ओर जा रहा है।"

"अभिप्राय यह कि देश में चन्द्र और उसके साथियों का राज्य होगा और वे देश की अतुल सम्पत्ति तथा श्रम के मालिक होंगे। देश का प्रत्येक व्यक्ति शासन की बूट की नोक से चलाया जायेगा।"

"ऐसा होगा ही।"

"अच्छी बात है। हम भी सरकारी काम करने लगेंगे।"

"वकीलों की तो आवश्यकता ही नहीं रहेगी। कचहरियाँ बन्द कर दी जायेंगी। उनका स्थान पंचायतें ले लेंगी। पंचायतों में पंच जनता द्वारा निर्वाचित होंगे और वे ही न्याय किया करेंगे।"

"तब तो साहबज़ादे! प्रमिला जैसी बाग़ी लड़की के लिए फाँसी का तख्ता ही होगा।"

प्रमिला का नाम सुन चन्द्र चौंक उठा और प्रश्न-भरी दृष्टि से पिता के मुख पर देखने लगा। माथुर ने मुस्कराते हुए कहा, "देखो न, शैल कम्पनी का जनरल मैनेजर प्रोलिटेरिएट डिक्टेटरशिप को मानता ही नहीं। तभी तो श्रमिक वर्ग की आज्ञा की अवहेलना कर प्रमिला की उन्नति कर दी है। सो, जब सोशियलिज़्म होगा, तब मज़दूरों की पंचायत मैनेजरों को आज्ञा दिया करेगी कि अमुक व्यक्ति को नौकर रखा जाये और अमुक को न रखा जाये। मज़दूर-पंचायत की आज्ञा न मानने पर मैनेजर को भी पृथक् किया जा सकेगा। यही मतलब है न तुम्हारा?"

"बिलकुल। पर मैनेजर, जो मज़दूर-पंचायत द्वारा नियुक्त किया गया होगा, वह पंचायत की आज्ञा की अवहेलना करेगा ही क्यों?"

"सम्भव तो है न? कदाचित् कोई मैनेजर ईमानदार पैदा हो सकता है अथवा उसमें कभी ईमानदारी का खुमार उठ सकता है। तब तो उसको फाँसी का दण्ड ही भोगना होगा। भगवान् ईमानदारों पर दया करे।"

चन्द्र हँसता हुआ उठ बैठा और कहने लगा, "पिताजी ! प्रमिला के विषय में हम असफल रहे हैं। परन्तु शीघ्र ही हम इस असफलता को सफलता में बदल देंगे। हमारी योजना बन चुकी है और इस बार हम ऐसा प्रबन्ध कर रहे हैं कि असफल नहीं होंगे। हमारी पार्टी से दग़ा करने वाला इस संसार में पनप नहीं सकता।"

माथुर विस्मय में चन्द्र का मुख देखता रह गया और चन्द्र अपने कमरे में जाकर एक लेख लिखने में लग गया।

चतुर्थ परिच्छेद

: १ :

सुन्दरी मोतीराम के घर नहीं लौटी। उसको रामलाल के घर रहते हुए कई मास व्यतीत हो गये थे। चन्दा भी वहाँ ही नौकरी करने लगी थी। मोतीराम कई बार रामलाल से आकर कह गया था कि वह सुन्दरी को भेज दे। प्रत्येक बार रामलाल कहता था, "दादा! तुम्हारी वस्तु है। जब चाहो ले जाओ। मैं उसको जाने से मना नहीं करता, परन्तु मैं उसको घर से निकालूँगा नहीं।"

मोतीराम ने पुलिस से और वकीलों से भी राय की। किसी ने भी ज़बरदस्ती करने की राय नहीं दी। पुलिस ने तो यहाँ तक कह दिया, "हमारे पास तुम्हारी बीवी की रिपोर्ट लिखी रखी है। उसमें उसने लिखाया है कि तुमने उसको बुरी तरह पीटा था। उसकी दो पसलियाँ टूट गई थीं। डॉक्टर के सर्टिफिकेट की नकल भी साथ लगी है। वह अपनी इच्छा से तुम्हारा मकान छोड़कर आई है।"

पुलिस अफसर कहते थे कि इस अवस्था में मोतीराम अदालत में दावा ही कर सकता है और पुलिस इसमें कुछ नहीं कर सकती।

कई कारणों से मोतीराम कचहरी में नहीं गया।

रविवार का दिन था। रामलाल की दुकान बन्द थी और वह दोपहर का भोजन कर विश्राम करने का विचार कर रहा था कि किसी ने दरवाज़ा खटखटाया। रामलाल ने चन्दा से कहा, "देखो कौन है?"

चन्दा ने दरवाज़ा खोला और मोतीराम को आया देख, उसको

ड्रायंग रूम में बैठा दिया। पश्चात् उसने रामलाल को बता दिया।

रामलाल अपने कमरे से निकल ड्रायंग रूम में चला आया और मोतीराम को बैठा देख पूछने लगा, "कैसे आये हो दादा ?"

"तुमको मुझ पर दया नहीं आती न ?"

"दादा ! भाभी को यहाँ बुला दूँ ? तुम उससे स्वयं बात क्यों नहीं कर लेते ? वह तुम्हारी पत्नी है। तुम उसको नहीं मना सकते तो मेरा कहना कैसे मानेगी ?"

"तुम उसको घर से निकाल दो। तब वह अपने-आप मेरे घर आ जायेगी।"

"नहीं दादा ! मैं माँ को घर से नहीं निकाल सकता। तुम स्वयं मना लो। हाँ, यदि मेरे मकान पर ज़बरदस्ती की तो पुलिस को बुला लूँगा।"

"तुम पुलिस को क्यों बुलाओगे ? मैं ही बुला लेता हूँ।" इतना कह मोतीराम ने आवाज़ दी, "इन्स्पेक्टर साहब ! आ जाइये।"

रामलाल इस नई परिस्थिति पर चकित रह गया। एक इन्स्पेक्टर, दो कॉन्स्टेबल कमरे में चले आये। उनके साथ एक सिख युवक सफेद-पोश भी था। उस सिख युवक के हाथ में एक फाईल थी, जिसमें कुछ काग़ज़ात थे। उसने पहुँचते ही पूछा, "रामलाल कौन है ?"

"मैं हूँ, क्या बात है ?" इस समय मोतीराम और रामलाल दोनों खड़े हो गये थे।

"आपकी बीवी, फातिमा उर्फ रानी कहाँ है ?"

"है, क्या बात है ?"

"उसके नाम के वारंट हैं।"

"क्यों ? उसने क्या किया है ?"

"वह मुसलमान औरत है और तुमने ज़बरदस्ती घर में रखी हुई है।"

"यह बात ग़लत है।"

"तो कचहरी में चाराजोई करना। अभी तो उसको हमारे साथ कर दो।"

रानी बाहर हल्ला सुन, वहाँ चली आई थी। सुन्दरी भी उसके साथ थी। रानी को देख मोतीराम ने कहा, "यही है फातिमा बीवी।"

एक पुलिस कॉन्स्टेबल ने रानी का हाथ पकड़ लिया। रानी ने ज़ोर से उसके मुख पर चपत लगा दी। इस पर इन्स्पेक्टर पुलिस ने सीटी बजा दी। नीचे से आधी दर्जन पुलिस कॉन्स्टेबल ऊपर चढ़ आये और रानी को घसीट कर नीचे ले जाने लगे। रामलाल ने, न आओ देखा न ताओ, पुलिस कॉन्स्टेबलों से रानी को छुड़ाने लगा। इसमें हाथापाई हो गई। वह अकेला था और शीघ्र ही काबू में कर लिया गया। पुलिस ने उसको भी हथकड़ी लगा दी और दोनों को नीचे खड़ी पुलिसवैन में बिठाकर ले गई।

इस समय गोकुल, सुन्दरी, चन्दा और शोभा-मानिक भी शोर सुन वहाँ आ गये थे। रामलाल ने गोकुल को जाते-जाते कह दिया, "गोकुल भैया! घर का ध्यान रखना। मैं शीघ्र ही लौटूँगा।"

जब पुलिस रानी और रामलाल को ले गई तो मोतीराम ने सुन्दरी को कहा, "बताओ। अब भी तुम चलोगी या नहीं?"

"तो यह तुमने किया है? बहुत ही कृतघ्न हो। चले जाओ यहाँ से नहीं तो पुलिस को बुला लूँगी।"

मोतीराम हँसकर कहने लगा, "जिसके बलबूते पर नाचती थी, वह तो चला गया है। अपने-आप भलमनसाहत से चली चलो। नहीं तो उठाकर ले जाऊँगा।"

"दादा!" इस समय गोकुल ने बात में दखल देते हुए कहा, "अब तुम नीचे उतर जाओ। वरना अच्छा नहीं होगा।"

"क्या हो जायेगा?"

गोकुल ने अपनी जेब में से चाकू, जिसका फल छः इंच से अधिक लम्बा था, निकाला और खोलकर दिखाया और कहा, "जान हलाक कर

दूँगा।"

मोतीराम डर गया और चुपचाप यह कहते हुए नीचे उतर गया, "अब पुलिस लेकर ही आऊँगा।"

"जाओ, ले आना।" सुन्दरी ने कहा, "मैं तुम्हारा बन्दोबस्त कर छोड़ूँगी।"

जब मोतीराम चला गया तो गोकुल को माथुर साहब की सूझी। उसने सुन्दरी से कहा, "भाभी! तुम इन बच्चों के पास ठहरो। मैं वकील से राय करने जा रहा हूँ।"

गोकुल मुकुट विहारी की कोठी पर लगभग तीन बजे दोपहर बाद पहुँचा। माथुर दोपहर का विश्राम कर, कार्यालय में पहुँच एक पुस्तक पढ़ रहा था।

गोकुल ने नमस्ते की और अपना परिचय दिया, "मैं रामलाल की दुकान पर मुन्शी का काम करता हूँ। रामलाल ने मुझको आपके पास भेजा है और आपसे सहायता माँगी है।"

"किस बात में सहायता माँगी है?"

गोकुल ने मोतीराम और पुलिस के आने और उनके रानी तथा रामलाल को ले जाने की पूर्ण कहानी सुना दी।

यह कथा सुन माथुर ने पूछा, "क्या सत्य ही रामलाल की बीवी मुसलमानिन है?"

"जी हाँ; परन्तु उनका विवाह हुए आज ग्यारह वर्ष हो चुके हैं। उसकी बड़ी लड़की इस समय दस वर्ष की है।"

"रामलाल ने यह बात कही नहीं?"

"कही थी, मगर पुलिस ने कहा है कि वह अदालत में चाराजोई करे।"

"अदालत की चाराजोई बहुत कठिन है। इस पर भी गोकुल! तुम कल आना। मैं ज़िला कचहरी में मिलूँगा। सबसे पहिले तो रामलाल को छुड़ाना आवश्यक है। वह ही फिर अपनी बीवी को छुड़ाने का यत्न

कर सकता है। हमारे किये से कुछ नहीं होगा। कल अदालत में आ जाना।"

गोकुल भारी आशा बाँध कर लौटा। सुन्दरी बच्चों के साथ उसकी प्रतीक्षा कर रही थी। उसने उनको सान्त्वना देते हुए कहा, "कल दोनों छूट जायेंगे। एक बहुत बड़े वकील से बात कर आया हूँ।"

माथुर मोतीराम की नीचता का विचार कर क्रोध से भर गया। वह इसी क्रोध में सोहनसिंह के होटल में जा पहुँचा। वहाँ चौधरी मथुरासिंह मोतीराम से हिसाब ले रहा था। नैशनल कन्स्ट्रक्शन कार्पोरेशन के हिसाब में मोतीराम दस हज़ार चौधरी को दे रहा था। रुपया गिनकर चौधरी ने एक रजिस्टर पर हस्ताक्षर कर दिये। मोतीराम रजिस्टर कार्पोरेशन के कार्यालय में रख आया। इस सब समय माथुर चुपचाप बैठा रहा। जब मोतीराम लौट आया तो माथुर ने पूछा, "कारोबार कैसा है मोतीराम?"

"चौधरी साहब की कृपा से गाड़ी चल पड़ी है। सुनाइए, आप आज कैसे यहाँ आ गये? यदि मेरी स्मरण-शक्ति ठीक काम करती है तो मैं कह सकता हूँ कि आपको यहाँ आये एक वर्ष से ऊपर हो गया है।"

माथुर ने अपने क्रोध को काबू में करते हुए कहा, "आज एक विशेष घटना हो गई है। तभी आना पड़ा है। मोतीराम! तुमने आज जो कुछ रामलाल के घर पर किया है, वह बहुत ही बुरी बात है। मैं चाहता हूँ कि अब जो कुछ हो गया, सो हो गया; परन्तु जिस किसी ने भी रिपोर्ट की है, वह उस रिपोर्ट के ग़लत होने की सूचना औरतों के निकासी-विभाग में दे दे। यह फ़ातिमा तो रामलाल की विवाहिता है और उसका विवाह हुए ग्यारह वर्ष हो चुके हैं।"

"आप यह हमको आज्ञा दे रहे हैं?" चौधरी ने सतर्क हो पूछा।

"नहीं चौधरी साहब! यह आज्ञा नहीं। यह मानवता के नाम पर प्रार्थना है।"

"मानवता हम नहीं जानते। कुछ हिन्दुओं ने बहुत दुष्टता का व्यवहार किया है, जो मुसलमान औरतों को घरों में रख छोड़ा है।"

"पर तुम यह जानते हो कि रामलाल की बहू इस प्रकार की औरतों में नहीं है। रामलाल के साथ उसका विवाह हुए ग्यारह वर्ष हो चुके हैं। रामलाल की बड़ी लड़की दस वर्ष की हो चुकी है।"

"न जाने किसकी लड़की है वह। देखिए माथुर साहब! हमने ईमानदारी से जो ठीक समझा, उसकी सरकार के पास रिपोर्ट भेज दी। यह काम सरकार का है कि वह जाँच कर ले। यदि रामलाल को कुछ आपत्ति है तो वह कचहरी में जाकर प्रार्थना कर सकता है।"

"तो तुम सत्य बात सरकार को बताना नहीं चाहते?"

"जो हमको मालूम है बता दिया है।"

"अच्छा एक बात करो। रामलाल कल रिमाण्ड के लिए मजिस्ट्रेट के सामने उपस्थित किया जायेगा। तुम या सोहनसिंह उसकी ज़मानत कर दो, जिससे वह स्वतन्त्र होकर अपनी बीवी को छुड़ाने का यत्न कर सके।"

"हम जमानत क्यों दें?" मोतीराम ने माथे पर त्योरी चढ़ाकर कहा।

"इसलिए कि जब तुम पकड़े गये थे, तो तुमको छुड़ाने का उसने यत्न किया था।"

"यह ग़लत है। मुझको छुड़ाया था सोहनसिंह ने।"

"सोहनसिंह ने तो तुमको पकड़वाया था।"

"वकील साहब! आप कुछ नहीं जानते।"

"तो अपनी बीवी से पूछ लो।"

"वह तो मुझको छोड़ कर चली गई है। उस पर मुझको एतबार नहीं रहा।"

"कहाँ है वह?"

"अभी भी रामलाल के घर में है। मैं उसकी यहाँ आने के लिए मिन्नत कर चुका हूँ। वह नहीं मानी। अब मुझको पेशावरियों वाला तरीका प्रयोग करना पड़ेगा।"

"वह क्या है?"

"किसी दिन कनॉट प्लेस में घूमते हुए पकड़ लूँगा और बालों से घसीटता हुआ घर ले आऊँगा।"

"नई दिल्ली में ऐसा कर सकोगे?"

"क्यों? वहाँ क्या है?"

"वह पेशावर नहीं है।"

"देख लूँगा।"

माथुर अपने प्रयत्न में असफल रहा। इससे वह अब कचहरी की बात विचार करने लगा। रामलाल का कोई ज़ामन चाहिये था। वह सोहनसिंह के होटल से रामलाल के घर गया। वहाँ उसने सुन्दरी, शोभा, मानिक को भयभीत, एक कोने में बैठे देखा तो उसका मन पसीज उठा। सुन्दरी ने वकील साहब को देखा तो उनकी मिन्नत करने लगी कि रामलाल और रानी को छुड़ा दें।

गोकुल ने माथुर साहब से कहा, "बाबूजी! जिस प्रकार भी हो सके इनको छुड़ाना है। जो भी खर्चा होगा, दूँगा।"

"बहुत रुपये की आवश्यकता नहीं पड़ेगी। रामलाल की ज़मानत देने वाले की ज़रूरत है।"

गोकुल ज़मानत का नाम सुनकर अवाक् रह गया। माथुर समझ गया कि वह किसी प्रकार का प्रबन्ध नहीं कर सकता। साथ ही कितनी ज़मानत माँगी जायेगी, कहा नहीं जा सकता था। इस कारण माथुर गम्भीर विचार में डूबा हुआ घर लौट गया।

अगले दिन गोकुल ज़िला कचहरी में पहुँचा तो माथुर ने एक वकील से उसका परिचय करा दिया। उसने बताया, "रामलाल का ज़ामन मैं बनूँगा और यह वकील साहब उसकी पैरवी करेंगे। मैंने इनको सब बात बता दी है। इनको एक सौ रुपया मेहनताना दे दो।"

गोकुल ने सौ रुपये का नोट वकील के हाथ में देकर कहा, "आप सारा मुकद्दमा करिये। जो फीस मांगेंगे दूँगा।"

ग्यारह बजे के लगभग रामलाल को मजिस्ट्रेट के सामने उपस्थित

किया गया। मजिस्ट्रेट एक पंजाबी आई० सी० एस० ऑफिसर था। उसने रामलाल को हथकड़ियों और बेड़ियों में अदालत में लाये जाते देखा तो माथे पर त्योरी चढ़ाकर पूछा, "यह क्या है?

"मैंने कई बार आपसे कहा है कि मुलज़िम मुजरिम नहीं होता। इसका जुर्म तो अभी साबित होना है और तुम उसको अदालत में ऐसे उपस्थित कर रहे हो, जैसे वह कातिल साबित हो चुका है।"

"हजूर!" कोर्ट इन्स्पेक्टर ने कहा, "यह बहुत ही खतरनाक मुलजिम है। इसने पुलिस अफसर पर हमला किया है।"

"किस पुलिस अफसर पर आक्रमण किया है? क्या वह इससे भी दुर्बल है?"

इस समय रामलाल के वकील ने कहा, "जनाब! मैं यह प्रार्थना करने के लिए आया हूँ कि मुलज़िम की जमानत हो जानी चाहिये। यह कनॉट प्लेस का एक दुकानदार है। कल अकस्मात पुलिस 'विमेन-रिकवरी' कानून के अधीन इसकी बीवी को पकड़ने चली गई। इससे मुलज़िम को कुदरती तौर पर क्रोध आ गया और उसने अपनी औरत के पकड़ कर ले जाने के खिलाफ़ प्रोटेस्ट किया।

"कल रविवार था। कोई अदालत खुली नहीं थी। न ही 'विमेन-रिकवरी' विभाग खुला था। पुलिस एक दिन पहिले, मेरा मतलब है, शनिवार के दिन अथवा एक दिन बाद में अर्थात् सोमवार के दिन आ सकती थी, जिससे औरत के खाविन्द को चाराजोई करने का अवसर मिल जाता, और उसे क्रोध न आता। पुलिस ऐसे दिन मुलज़िम की बीवी को पकड़ने आई, जिस दिन वह कोई चाराजोई नहीं कर सकता था। यह तो माना नहीं जा सकता कि पुलिस को रविवार को ही एक मुसलमान औरत के मुलजिम के पास होने की सूचना मिली होगी। सूचना जरूर कई दिन पहिले आई होगी। यह तो माना ही नहीं जा सकता कि वे सूचना मिलते ही बिना जाँच-पड़ताल किये, एक सरकारी विभाग के आदमी के साथ इसकी बीवी को पकड़ने उठ दौड़े होंगे।

"पुलिस का इस प्रकार के काम के लिए, किसी ऐसे दिन, जिस दिन कचहरी खुली हो, न आना, मुलज़िम के मन में सन्देह पैदा करने वाला हो गया। वह पुलिस को अपना दुश्मन समझने लगा और उसने अपनी बीवी को ले जाते देख रुकावट डाली। मगर यह रुकावट बहुत ही मामूली थी। न तो कोई जख्मी हुआ, न किसी के कपड़े फटे अथवा न ही मुलजिम ने कोई हथियार इस्तेमाल किया। ऐसी कोई बात नहीं हुई। इसलिए इस प्रकार की मामूली बात के लिए जमानत हो जानी चाहिये।

"साथ ही अगर मुलजिम को आज जमानत पर रिहा न किया गया तो वह अपनी बीवी को छुड़ाने की कोशिश करने के अयोग्य हो जायेगा।"

मजिस्ट्रेट को बात समझ आ गई। उसने कोर्ट इन्स्पेक्टर से पूछा, "झगड़ा किस जगह पर हुआ?"

"मुलज़िम के मकान पर।"

"वहाँ ये लोग किस काम से गये थे?"

"मुलज़िम के घर में एक मुसलमान औरत थी, उसको पकड़ने।"

"एक दिन पहिले क्यों नहीं गये अथवा जाने के लिए एक दिन रुक क्यों नहीं गये?"

"यह हम नहीं जानते। 'रिकवरी-विभाग' से जैसा हुक्म आया, वैसा किया गया।"

"कितने कॉन्स्टेबल वहाँ पर थे?"

"छः-सात रहे होंगे।"

"कितनों को चोट आई है?"

"एक को मामूली-सी।"

"उसकी डॉक्टरी रिपोर्ट लाये हो?"

"वह मुकद्दमा के समय पेश की जायेगी।"

"इसको ज़मानत पर छोड़ने में कोई आपत्ति है?"

"इसने एक सरकारी अफ़सर को अपनी ड्यूटी करने से रोका है।"

"यह ज़मानत लेने में बाधा नहीं है।"

"हुज़ूर ! इसने सरकारी अफ़सर पर हमला किया है।"

"मैं समझता हूँ कि पाँच सौ रुपये की जमानत और पाँच सौ के मुचलके से काम चल जायेगा।"

इस समय कोर्ट इन्स्पेक्टर ने एक पत्र मजिस्ट्रेट के हाथ में देते हुए कहा, "ज़रा इसको भी पढ़ लीजिये।"

मजिस्ट्रेट ने पत्र पढ़ा और कुछ गम्भीर होकर कहा, "पाँच हज़ार की ज़मानत और पाँच हज़ार का मुचलका।"

रामलाल कटहरे में खड़ा यह सब नाटक देख रहा था। पाँच हजार की जमानत की बात सुन उसने कहा, "हुजूर ! मैं रिफ्यूजी हूँ और यहाँ कोई साहबे जायदाद मेरा परिचित नहीं है और अगर मुझको छोड़ा न गया तो मैं अपनी बीवी को छुड़ाने के लिए यत्न भी नहीं कर सकूँगा।"

"मैं मजबूर हूँ। पाँच हज़ार की ज़मानत लानी होगी।"

इस समय मुकुट विहारी माथुर अदालत के सामने उपस्थित होकर बोला, "मैं रामलाल का जामन हूँ। यह मेरी जायदाद के काग़ज़ हैं।"

मजिस्ट्रेट माथुर को जानता था। उसने जमानत के कागज़ात तैयार कर उपस्थित करने को कह दिया।

: २ :

रामलाल छूटा तो आँखों में आँसू भरकर माथुर साहब के पाँव पकड़ने लगा। माथुर ने उसको उठाकर कहा, "घबराओ नहीं रामलाल ! तुम्हारे लिए मैंने एक चिट्ठी 'विमेन-रिकवरी' विभाग के नाम लिखकर तैयार कर रखी है। उसको लेकर तुरन्त सेन्ट्रल सेक्रेटेरिएट चले जाओ और वह चिट्ठी दे आओ। देरी मत करो। मुझको सन्देह है कि रविवार को कार्यवाही करने में यही कारण हो सकता है कि उस महकमे में तुम्हारा कोई दुश्मन मौजूद है। मुझको सन्देह है कि वे तुम्हारी बीवी को तुम्हारे किसी उपाय करने से पहिले ही कहीं पाकिस्तान न भेज दें। एक

बार वह वहाँ गई तो फिर परमात्मा भी उसको वापिस नहीं ला सकेगा।"

रामलाल के पाँव तले से मिट्टी खिसक गई। उसने पूछा, "क्या हम अदालत से उसको न भेजे जाने का हुक्म नहीं ले सकते?"

"नहीं। कानून इसकी स्वीकृति नहीं देता। केवल शिमला हाईकोर्ट इसमें हस्तक्षेप कर सकता है और वह भी जब तक औरत भारतवर्ष में है। यहाँ से चली गई तो वहाँ भी कुछ नहीं हो सकेगा।"

रामलाल वह चिट्ठी लेकर और गोकुल को साथ लेकर विमेन-रिकवरी विभाग जा पहुँचा। वहाँ चिट्ठी दे और इसकी पहुँच की रसीद लेकर वह अपने घर बच्चों से मिलने चला आया।

बच्चों ने पिता को अकेला देखा तो उसके गले से लिपट रोने लगे। रामलाल ने उनको प्यार देते हुए कहा, "देखो शोभा! होशियार होकर रहो। मैंने अभी तुम्हारी मम्मी को छुड़ाना है।"

रामलाल चन्दा को सफर के लिए कपड़े तैयार करने को कह, सुन्दरी से बच्चों के पास रहने को कह, माथुर के घर जा पहुँचा। माथुर उसके लिए, उसकी बीवी को छुड़ाने के लिए पेटिशन तैयार कर चुका था और वह टाईप हो रही थी। माथुर ने रामलाल को आया देख कहा, "आज रात शिमला जाने के लिए दो बर्थ रिज़र्व करा आओ और देखो, साथ एक हजार रुपये के लगभग ले चलना। मालूम नहीं किस प्रकार की आवश्यकता पड़ जाये।"

उसी रात रामलाल माथुर को लेकर शिमला के लिए चल पड़ा। अगले दिन बम्बई के हाईकोर्ट के एक प्रसिद्ध जज के देहान्त होने के कारण बन्द रहा। इस कारण पेटिशन करने में एक दिन की और देरी हो गई। इससे माथुर की चिन्ता और बढ़ गई। वह समझता था कि जितनी देरी हो रही है, उतनी ही छुड़ाने में कठिनाई बढ़ रही है।

रामलाल ने पूछा, "क्या मेरा दिया हुआ नोटिस रानी के भेजे जाने में रुकावट उत्पन्न नहीं करेगा?"

"वह नोटिस ही तो है। कोर्ट की ओर से इन्जन्क्शन नहीं था।

उसको मानना-न-मानना सरकारी अधिकारियों की इच्छा के अधीन है।"

"तब ?"

"तब भगवान् के भरोसे ही समझो।"

अगले दिन कोर्ट खुले तो माथुर ने प्रार्थना-पत्र जस्टिस महोदय के सामने उपस्थित कर दिया। प्रार्थना-पत्र पढ़कर माननीय जज ने अस्थायी इन्जन्क्शन जारी कर दिया। यह इन्जन्क्शन भारत सरकार, रिकवरी विभाग नई दिल्ली तथा जालन्धर के नाम जारी किया गया था।

परन्तु हुआ वही, जिसका माथुर साहब को भय था। अगले दिन हाईकोर्ट के प्यादे को साथ लेकर रामलाल जालन्धर पहुँचा और माथुर वही आज्ञा लेकर नई दिल्ली में उचित स्थान पर पहुँचा। सब प्रकार की सावधानी करने पर भी, रामलाल के जालन्धर पहुँचने से पूर्व ही फ़ातिमा उर्फ़ देवकी रानी लाहौर पहुँच चुकी थी। इन्जन्क्शन व्यर्थ हो गया।

इस पूर्ण घटना की जाँच की गई, परन्तु परिणाम कुछ नहीं निकला।

रामलाल निराश दिल्ली लौट आया। उसको जीवन नीरस प्रतीत होने लगा। जब वह बच्चों को देखता था तो उसके आँसू निकल आते थे। बच्चे उसको रोता देखते तो वे भी विह्वल हो रोने लगते। रामलाल बहुत विचार करता था कि किस प्रकार वह रानी को वापस लाये, पर उसको कोई मार्ग नहीं सूझता था। एक आशा उसके मन में थी कि ज्यों ही रानी स्वतन्त्र हुई, वह अपना समाचार अवश्य भेजेगी। ८! मास व्यतीत हो गये, पर कोई समाचार नहीं आया।

एक बात वह समझ नहीं सका था कि सरकार ने उससे शत्रुता क्यों की। यह ठीक है कि सुन्दरी के अपने घर न जाने के कारण मोतीराम ने मुखबरी की है, परन्तु सरकार ने बिना जाँच-पड़ताल किये और बिना हाई कोर्ट की जाँच की प्रतीक्षा किये, रानी को क्यों पाकिस्तान भेज दिया। साथ ही वह यह नहीं समझ सका था कि इतनी जल्दी करने की क्या आवश्यकता थी। कभी उसको यह सन्देह होने लगता था कि पाकिस्तान में से किसी ने उसकी रिपोर्ट की होगी। कुछ भी हो, रह-रह

कर उसके मन में आ रहा था कि रानी के पीछे-पीछे पाकिस्तान में जाकर उसकी खोज करनी चाहिये और यदि वह मिल जाये तो उसको वहाँ से निकालकर लाना चाहिये। पाकिस्तान जाने का विचार उसके मन में आया तो उसको अपने सुन्नत कराये होने की याद आ गई। इससे उसको मुसलमान बनकर पाकिस्तान जाना सम्भव प्रतीत होने लगा।

पाकिस्तान जाने के विचार ने उसके मन में आशा और उत्साह भर दिया। उसने मन-ही-मन पाकिस्तान जाने की योजना बनानी आरम्भ कर दी।

एक दिन वह मुकुटविहारी माथुर के घर जा पहुँचा और उससे एकान्त में अपनी योजना बताने लगा। उसने कहा, "वकील साहब! मैं हूँ तो हिन्दू, परन्तु ग़ैरतमन्द हूँ। दूसरे पढ़े-लिखे हिन्दुओं की भाँति अपनी स्त्रियों को चुपचाप पाकिस्तान वालों को दे देने में विश्वास नहीं रखता। स्त्रियाँ जाति की निधि हैं। मैं इस नीति को, कि चलो दो-चार औरतें चली गई तो देश की क्या हानि होती है, ठीक नहीं मानता। देश की नीति तो आप जैसे पढ़े-लिखे विद्वान् ही सुधार सकते हैं, पर अपनी स्त्री की रक्षा करना तो मेरा ही कर्तव्य है। मैं रानी को छुड़ाने जा रहा हूँ।"

"पाकिस्तान में?"

"जी हाँ।"

"बहुत जोखम का काम करने जा रहे हो?"

"मैं अपनी पत्नी की रक्षा करने में अपने को अशक्त देख लज्जा में गड़ता जाता हूँ। मैं आँखें ऊँची कर किसी के मुख पर देख नहीं सकता। मुझको चलते-फिरते, दुकान पर बैठे और घर पर रहते हुए सब यही कहते लगते हैं, 'यही है, जिसकी पत्नी को पकड़ कर पाकिस्तान भेज दिया गया है और यह यहाँ गुलछर्रें उड़ा रहा है।' माथुर साहब! मैं अपने बच्चों के सामने आँखें ऊँची नहीं कर सकता। मुझको ऐसा अनुभव होता है कि वे मुझको कह रहे हैं कि उनका बाप कैसा हीजड़ा

है, जो उनकी माँ की रक्षा नहीं कर सका।

"मेरे लिए यहाँ रहना असम्भव हो रहा है। यदि मैं यहाँ से जाता नहीं तो इस लज्जा में ही घुल-घुलकर मर जाऊँगा। इसलिए मैं जा रहा हूँ। आऊँगा तो रानी को साथ लेकर आऊँगा। इसमें आपसे एक सहायता चाहता हूँ। मेरे पास कुछ रुपया है। दुकान चलती है। आप उसके प्रबन्धक बन जाइये और मेरे बच्चों के संरक्षक हो जाइये। दो वर्ष तक आप मेरी प्रतीक्षा करें और अगर तब तक मेरी कोई सूचना न मिले तो मेरे रुपये और बच्चों से जो चाहें कर दें। दुकान बेच दें। रुपया इकट्ठा कर उनको पढ़ाकर किसी काम-धन्धे में लगा दें।"

माथुर रामलाल के इस निर्णय पर चकित रह गया। इस पर भी वह उसको इस काम से मना नहीं कर सका। उसने केवल यह कहा, "एक बहुत ही कठिन काम करने के लिए तुम मुझको कह रहे हो; परन्तु जब इस जान-जोखम के काम पर तुम्हारे जाने की बात पर विचार करता हूँ तो तुम्हारी सहायता करने से ना नहीं कर सकता। तुम मुझको जैसा करने को कह जाओगे, वैसा करने का यत्न करूँगा।"

अगले दिन रामलाल ने गोकुल को माथुर साहब के सामने ले जाकर सब-कुछ लिखकर दे दिया। तीस हज़ार के लगभग उसने अपने पास रख लिया। शेष सब-कुछ उसने माथुर साहब के नाम लिख दिया। सबसे कठिन समस्या थी, बच्चों को समझाने की। एक रात उसने बच्चों को बताया, "देखो शोभा! मैं तुम्हारी माँ के पास जा रहा हूँ। उसको वापिस लाना चाहता हूँ। इसमें कई महीने लगेंगे। तब तक वकील साहब तुम्हारी देखभाल करेंगे। जैसा वे कहें, वैसा ही करना और भाभी सुन्दरी का कहना मानना। रोना नहीं और पढ़ाई में चित्त लगाना।"

बच्चे पिता के जाने की बात सुन रोने लगे, परन्तु इस आशा में कि उनकी माँ आयेगी, वे मान गये। एक दिन मोतीराम ग़ायब हो हो गया।

: ३ :

रानी को 'विमेन-रिकवरी' विभाग के लोग 'रैस्क्यू-हाउस', जो इस कार्य के लिए लिटन रोड पर लिया गया था, ले गये। रामलाल को पार्लियामेण्ट स्ट्रीट के थाने पर पहुँचा दिया गया था।

रानी को दो कॉन्स्टेबलों ने बाँह से पकड़कर घसीटते हुए कोठी के एक बड़े कमरे में पहुँचा दिया। वहाँ एक औरत के सामने उसको उपस्थित किया गया। वह औरत एक बड़ी-सी मेज़ के पीछे, घूमने वाली कुर्सी पर बैठी हुई थी। मेज़ के एक ओर एक क्लर्क मेज़ पर कुछ फाइलें और काग़ज़ रखे हुए बैटा था। रानी पूरे मार्ग-भर पुलिस कॉन्स्टेबलों से छूटने का यत्न करती रही थी और ऐसे यत्न में उसके कपड़े कई स्थानों से फट गये थे। उसके बाल बिखर कर उसके मुख के आगे और चारों ओर फैल रहे थे। जब वह उस औरत के सामने लाकर खड़ी की गई तो वह चिल्लाकर बोली, "मुझको छोड़ दो, मैं बेकसूर हूँ।"

"हाँ, हाँ! तुम बेकसूर हो। किसने कहा है कि तुमने कोई कसूर किया है?" कुर्सी पर बैटी औरत ने कहा। वह क्लर्क, जो-कुछ रानी कह रही थी, लिख रहा था।

रानी ने कहा, "बेकसूर हूँ तो मुझको छोड़ा क्यों नहीं जाता? किसलिए पकड़ा हुआ है?"

"इसलिए कि तुमको एक हिन्दू ने जबरदस्ती अपने घर में रखा हुआ था।"

"यह ग़लत है।"

"तुम्हारा नाम फ़ातिमा नहीं है क्या?"

"था, अब नहीं।"

"तो साबित हो गया कि तुम मुसलमानिन हो और वह तुमको जबरदस्ती रखे हुए था।"

"कैसे साबित हो गया? मैं तो अपनी मर्ज़ी से उसके साथ शादी कर रहती हूँ।"

"यह सब झूठ है। अक्सर औरतें अपने जालिम खाविन्दों के खिलाफ़ कुछ नहीं कहना चाहतीं।"

"मैं सत्य कहती हूँ कि वह मेरा खाविन्द है। मेरे बाप ने मेरी शादी की थी।"

"कहाँ है तुम्हारा बाप?"

"मर चुका है।"

"तुम बिलकुल झूठ बोलती हो।" अब उस औरत ने सामने खड़े और रानी को बाँहों से पकड़े हुए कॉन्स्टेबलों को कहा, "इसको सौलिटरी कोठी में बन्द कर दो।" इतना कह उस औरत ने अपनी घूमने वाली कुर्सी का मुख घुमा दिया और दूसरी ओर देखते हुए बोली, "दो दिन में यह अपने खाविन्द का नशा भूल जायेगी। तब इसका बयान लेंगे।"

"तो तुम मुझको नहीं छोड़ोगी?"

"तुमको तुम्हारे सम्बन्धियों के पास भेज रही हूँ।"

"बहुत बदमाश औरत हो तुम।"

"मैं? तुम पागल हो।"

"मैं पागल नहीं। तुम्हारे इतने बड़े शरीर में पत्थर का दिल है।"

"ले जाओ, इसको बन्द कर दो।"

रानी फिर कॉन्स्टेबलों के हाथों से छूटने के लिए छटपटाने लगी और कॉन्स्टेबल उसकी कमर में हाथ डाल उठाने लगे। इस पर रानी ने एक कॉन्स्टेबल के मुख पर थूक दिया, परन्तु छीना-झपटी में थूक कॉन्स्टेबल के मुख पर पड़ने के स्थान, उस मोटी औरत के मुख पर जा पड़ी। वह कॉन्स्टेबलों की सहायता के लिए आगे आ गई थी।

रानी की यह अशिष्टता वह सहन नहीं कर सकी और उसने जोर की एक चपत रानी के मुख पर दे मारी। रानी गालियाँ देने लगी, "बदकार, बदमाश, हरामी......।"

जब वह औरत मुख पूँछ रही थी, कॉन्स्टेबल रानी को उठाकर कोठी के पिछवाड़े, एक कमरे में ले गये। इस कमरे की खिड़कियों में सींखचे

लगे थे। रानी को उसमें धकेलकर बाहर से ताला लगा दिया।

वह औरत, जिसके मुख पर रानी की थूक पड़ी थी, लेवेटरी में चली गई। वहाँ उसने अपना मुख धोया। पश्चात् वहाँ रखी क्रीम और पाऊडर लगाकर बाहर चली आई। वहाँ अपनी कुर्सी पर बैठते हुए उसने पुलिस अधिकारी को कहा, "एक और रिपोर्ट आई है। उसको बाहर कार्यालय से ले लो और उस औरत को भी निकाल लाओ।"

जब कॉन्स्टेबल और इन्स्पेक्टर पुलिस चले गये तो उसने क्लर्क को कहा, "फ़ातिमा के पर्चे पर लिख दो, अपने मर्द से जुदा किये जाने पर गालियाँ देती है और वायलेन्ट हो गई है। इस कारण उसको दूसरी औरतों से पृथक् एकान्तवास में रखा गया है।"

क्लर्क ने अक्षर-अक्षर यह सब-कुछ लिख लिया। उस औरत ने नीचे हस्ताक्षर कर कहा, "अब मैं जा रही हूँ। तुम यहाँ की देख-भाल बहुत अच्छी तरह रखना।"

इतना कह वह कोठी की ड्योढ़ी में खड़ी मोटर में बैठ, स्वयं चलाती हुई कॉन्सटिच्यूशन हाऊस में अपने कमरे में जा पहुँची।

कपड़े बदल वह पलंग पर लेट गई और वहाँ लेटी हुई वह गम्भीर विचार में लीन हो गई। इस समय उसके कमरे में टेलीफ़ोन खड़का। वह उठकर सुनने लगी। उत्तर में उसने टेलीफ़ोन में कहा, "चौधरी साहब! फ़ातिमा पकड़ तो ली गई है, परन्तु वह बहुत ही तेज स्वभाव की औरत मालूम होती है। मुझसे तकरार करने लगी और फिर मुख पर थूक दिया। इस कारण मैंने उसको सौलिटरी कैद की आज्ञा दे दी है। दो दिन में उसका क्रोध शान्त हो जायेगा। तब ही उसके साथ आगे कार्यवाही की जा सकेगी।"

"पर मुझको यह विदित हुआ है कि दिल्ली के बड़े-बड़े वकील इस लड़की को छुड़ाने के लिए आ रहे हैं।"

"हो सकता है। परन्तु इस औरत को रखने वाला हिन्दू भी तो पकड़ लिया गया है।"

"यह ठीक है, परन्तु उस आदमी को ज़मानत पर छुड़ाने का प्रबन्ध हो रहा है।"

"अच्छी बात है। मैं यत्न करती हूँ कि पुलिस को रिमाण्ड मिल जाये और उसकी ज़मानत न हो सके।"

"हाँ। इसीलिए तो मैंने आपको सूचना दी है।"

"पर आप यहाँ नहीं आ रहे क्या? मैं आपकी प्रतीक्षा कर रही हूँ।"

"मुझको आज एक बहुत ज़रूरी काम है। फिर किसी दिन दर्शन करूँगा।"

चौधरी मथुरासिंह के इस इन्कार पर वह क्रोध से भरी हुई पलंग पर आकर धम से लेट गई।

अगले दिन वह औरत लिटन रोड वाली कोठी पर दो बजे के पश्चात् पहुँची। उस समय तक वहाँ पर पाँच नई औरतें लाई जा चुकी थीं। पाँचों-की-पाँचों ने पाकिस्तान जाने से इन्कार कर दिया।

एक तो अधेड़ आयु की चालीस वर्ष की प्रतीत होती थी। नजफ़गढ़ से एक सिक्ख के घर से लाई गई थी। उसने बयान दिया, "मेरे तीन बच्चे हैं। एक लड़की चौदह वर्ष की है।"

उस सुपरवाईज़र औरत ने पूछा, "तुमको पाकिस्तान भेजने का प्रबन्ध सरकार ने किया है।"

"देखो मेम साहब! मेरा पाकिस्तान में कोई वाकिफ़ नहीं। वहाँ जाकर मैं क्या करूँगी? मेरा खाविन्द, दो वर्ष से ऊपर हुए मार डाला गया था और मेरे लिए कहीं जाने को स्थान नहीं रहा था। कुछ पंजाबियों ने मुझको बच्चों सहित घर से निकाल दिया और शायद वे मुझको गाँव से दूर ले जाकर मार डालते। एक सरदार ने, जिसके पास अब मैं रहती हूँ, मुझको देखा और छुड़ा लिया। वे मुझको अपने घर ले गये। यह सरदार ज़िला रावलपिण्डी गूजरखां का रहने वाला है। उसके सब घर वाले, बच्चे, औरतें वहाँ मार डाले गये थे। उसने नजफ़गढ़ में

एक मुसलमान के मकान पर अधिकार कर लिया था।

"उसने मुझको अपनी बीवी बनाकर रखना मंजूर कर लिया। मैंने इसको ग़नीमत समझा और राजी हो गई। उसने मुझको और मेरे बच्चों को बहुत ही प्यार से रखा हुआ है। मेरा बड़ा लड़का उसके कारोबार में मदद देता है और हम बहुत सुख-चैन की ज़िन्दगी गुज़ार रहे हैं। मैं यहाँ से जाना नहीं चाहती।"

"तो ठीक है। तुम को दो-तीन दिन में लाहौर भेजने का बन्दोबस्त कर दिया जायेगा। तुम्हारी लड़की को भी तुम्हारे साथ कर देंगे।"

"पर मैंने हिन्दुस्तान का क्या बिगाड़ा है कि मुझको पाकिस्तान भेजा जायेगा?"

"तुम मुसलमान हो इसलिए।"

"नहीं, मैं अब मुसलमान नहीं हूँ। मेरा नाम अब सोहनी है और मैंने अमृत छका हुआ है।"

"हम इस बात को नहीं जानते। तुम को जाना होगा।"

"ज़बरदस्ती?"

"हाँ।"

"पर और मुसलमान तो यहाँ रह रहे हैं?"

"तुम्हारा कोई मुसलमान रिश्तेदार यहाँ पर हो तो रह सकती हो।"

"पर मेरा पाकिस्तान में भी तो कोई रिश्तेदार नहीं है। क्या मैं अपना मज़हब तब्दील नहीं कर सकती?"

"नहीं। जिन हालात में तुम्हारा मज़हब तब्दील किया गया है, वह कानून से जायज़ नहीं है।"

"मैं कानून नहीं जानती। इतना मैं कहना चाहती हूँ कि मैं यहाँ खुश हूँ।"

"यह सब वहम है। तुमको जाना होगा।"

"तो मेरे लड़के को भी साथ भेज दो, नहीं तो मेरे लिए वहाँ गुज़र करना मुश्किल हो जायेगा।"

"लड़के नहीं भेजे जा सकते। कम-से-कम वे, जो ग्यारह वर्ष से ऊपर की उमर के हैं। हमारा विभाग औरतों को छुड़ाने के लिए है, लड़कों को छुड़ाने के लिए नहीं।"

इस प्रकार एक-एक कर पाँचों की बात निश्चय कर दी गई। पश्चात् रानी को सामने लाने की आज्ञा हुई। रानी के हाथ-पाँव हथकड़ियों और बेड़ियों से जकड़े हुए थे। उसको पिछले दिन से खाने को कुछ नहीं दिया गया था। इस सबका परिणाम यह हुआ था कि उसका मुख पीला पड़ रहा था, गालें पिचक गई थीं और वह अति दुर्बल अनुभव कर रही थी। रानी की यह दशा देखकर उस विभाग की अध्यक्षा खिल-खिलाकर हँस पड़ी। उसने हँसने के पश्चात् कहा, "देखा है मज़ा मुख पर थूकने का!"

रानी दुर्बलता और विवशता के कारण हतोत्साह हो रही थी। अध्यक्षा ने रानी से कहा, "बीबी! मान जाओ और अपने असली बयान दे दो।"

"मैंने कल जो बयान दिये थे, वे सच्च थे।"

"इस पर भी यह लिख दो कि तुम पाकिस्तान जाना चाहती हो।"

"पर मैं जाना नहीं चाहती।"

"देखो, अगर अपनी मर्ज़ी से जाओगी तो वहाँ तुमको इज़्ज़त से रखा जायेगा। तुम्हारी अच्छी जगह शादी कर दी जायेगी। नहीं तो यहाँ से तो भेजी ही जाओगी और वहाँ भी अच्छी नहीं समझी जाओगी।"

"मैं वहाँ नहीं जाना चाहती, न ही वहाँ कोई रिश्ता करना चाहती हूँ। मुझको छोड़ दिया जाये। मैं अपने खाविन्द और बच्चों के पास जाना चाहती हूँ।"

इस पर भी अध्यक्षा ने आज्ञा दे दी, "इस औरत को अभी एक दिन और इस प्रकार रखो।"

यह कह वह चली गई और रानी को पुनः उसी कोठरी में, जिसमें अभी तक कैद थी, डाल कर बन्द कर दिया गया।

एकाएक उसी सायंकाल उसको कोठरी से निकाला गया। उसकी हथकड़ियाँ और बेड़ियाँ खोल दी गईं। उसको गुसलखाने में लेजाकर शौचादि करा, स्नान कराया गया और नये सूती कपड़े पहिना कर रसोई-घर में ले जा कर खाना खिलाया गया।

इस सब कार्यवाही को देख, रानी के मन में आशा बँध गई। वह समझने लगी कि उसके पति ने कुछ कार्यवाही की है, जिससे वह छोड़ी जाने वाली है।

उसका अनुमान यहाँ तक तो ठीक था कि उसके साथ व्यवहार में परिवर्तन, रामलाल के नोटिस के कारण ही हुआ था; परन्तु उसको छोड़ने के लिए नहीं।

जब वह भोजन कर चुकी तो उसको एक जीप में बैठा कर दिल्ली से उत्तर की ओर ले जाया जाने लगा। सायं सात बजे दिल्ली से चलकर प्रातः चार बजे उसको जालन्धर पहुँचा दिया गया। वहाँ उसको एक कोठी में रखा गया। रानी बहुत थकी हुई थी, इस कारण वहाँ जाते ही सो गई। प्रातः दस बजे उसको जगाया गया और भोजनादि कराकर उसको पुनः जीप पर चढ़ाकर अमृतसर और वहाँ से 'वागा' ले जा कर, भारत सीमा पर, पाकिस्तान अधिकारियों के हाथ सौंप दिया गया।

रानी इस पूर्ण यात्रा में ऐसे बैठी रही, मानो वह एक लम्बा स्वप्न ले रही है। उसको भारत में इस प्रकार के व्यवहार की आशा नहीं थी।

पाकिस्तान अधिकारी उसको अपने साथ एक मोटर में बैठाकर लाहौर की ओर ले गये। अब रानी को चेतनता हुई और वह विचार करने लगी कि क्या करे। उसने झूठ बोलने का निश्चय कर लिया। वह सबसे पहिले आज़ाद होना और फिर दूसरी बात के विषय में विचार करना चाहती थी।

: ४ :

पाकिस्तान के अधिकारियों को इतनी जल्दी नहीं थी, जितनी भारत

सरकार को थी। वे उसको लाहौर ले गये और उसको एक होटल में ले जा कर भली भाँति खिलाया-पिलाया। पश्चात् वे उसको 'माल' पर एक बड़े से मकान में ले गये।

यह मकान पूर्ण रूप से औरतों के अधिकार में था। केवल बाहर फ़ौजी पहरा था। उस मकान में औरतों ने उसको बहुत ही आदर-सत्कार से बैठाया और पूछा, "आपके पास कपड़े-भूषण हैं क्या?"

"कुछ नहीं।" रानी का उत्तर था, "मेरे हाथों में सोने की चूड़ियाँ थीं, वे दिल्ली में जमा करा ली गई थीं।"

"अच्छी बात है। तुमको अभी कमरा नम्बर बीस में रखा जाता है। हमारे इस महकमे की सुपरिण्टेण्डेण्ट कल आयेंगी और तुमसे बातचीत करेंगी। किसी चीज़ की ज़रूरत हो तो बताना। यहाँ तुमको किसी किस्म का डर नहीं लगना चाहिए। इस मकान में कोई आदमी नहीं आ सकता। हाँ, मकान के बाहर जाओगी तो ज़रूर पकड़ ली जाओगी।"

रानी इस सब समय और रात-भर यह योजना बनाती रही कि वह अपने को मुसलमान मान स्वतंत्र होने की इच्छा कर दे। एक बार वह स्वतंत्र हो गई तो फिर वह अपने पति को लिखकर रुपया मँगवा लेगी और या तो उसका पति और बच्चे यहाँ आ जायेंगे, या वह वहाँ जाने का कोई प्रबन्ध कर लेगी।

अगले दिन उसको एक नौकरानी बुलाने आई और उसे वहाँ की मुन्तज़िमा के पास ले गई। मुन्तज़िमा पैंतालीस-पचास वर्ष की आयु की एक सुन्दर और प्रभाव रखने वाली स्त्री थी। उसको देख रानी की आशाएँ बढ़ गईं और वह अपनी योजना पर कार्य करने की मन में ठान बैठी।

वह औरत रानी से बहुत ही इज्ज़त और तहज़ीब से पेश आई, "तुम तो बहुत ही खूबसूरत औरत हो।" मुन्तज़िमा ने कहा, "कैसे फँस गई थी काफिरस्तान में?"

"मैं शादीशुदा औरत थी। मेरे खाविन्द एक दिन सब्जी-भाजी खरीदने गये और फिर नहीं लौटे। खुदा जाने उनका क्या हुआ ? इसके बाद कुछ लड़के आये और मुझको मकान खाली करने के लिए कहने लगे। मैं अपने दो बच्चों को लेकर सड़क पर आ खड़ी हुई। वहाँ से मैं कनॉट प्लेस की तरफ चल दी। अभी वहाँ पहुँच नहीं पाई थी कि मेरे साथ-साथ एक युवक चलने लगा। मैं सहम गई। मेरे दिल में डर लग गया कि वह मुझको मार डालेगा। मैं खड़ी हुई तो वह भी खड़ा हो गया। मैं चलने लगी तो वह भी चलने लगा। आखिर मैंने हौंसला कर पूछा, 'भराजी ! किधर जा रहे हो ?'

'तो तुम पंजाबन हो। किधर जाना है ?'

'नई जानदी। एनां दे बापदे नाल चली सां। पर ओ पता नई किधर चले गये ने। मैं सवेर दी भटकदी पई हां।'

'तो हमारे घर चलो। मैं उसको ढूँढ़ने की कोशिश करूँगा।'

"मैं चुप रही और वह साथ-साथ चलता रहा। जब हम कनॉट प्लेस पहुँचे, तो उसने कहा, 'आओ न इधर। मेरे घर में ठहरना।'

"मैं उधर ही चल पड़ी। वह मुझको एक दुमंजिले मकान पर ले गया। मकान बहुत सजा हुआ था। उस आदमी ने मुझको एक सोफा पर बैठाकर कहा, 'तुम यहाँ रहो। अपने घर वाले का नाम और पीछे कहाँ से आई हो बता देना। मैं ढूँढने का यत्न करूँगा।'

"मैं कोई हिन्दू नाम सोचने लगी। मुझको फौरन याद नहीं आया। इस पर वह आदमी हँस पड़ा और कहने लगा, 'कोई बात नहीं। तुम अपने पति का नाम नहीं लेना चाहतीं न ? मैं इन बच्चों से पूछ लूँगा।'

"मैं घबरा गई। इस पर उसने कहा, 'तुम डरो नहीं। मैं जानता हूँ कि तुम मुसलमानिन हो। यकीन रखो कि तुम्हारे साथ किसी किस्म की खराबी नहीं की जायेगी।'

"मैं वहाँ रह गई। कुछ दिन के बाद मैं उसकी बीवी बन गई।

खुदा का शुक्र है कि मैं तो उससे बचकर यहाँ आ गई हूँ, मगर मेरे बच्चे अभी वहाँ ही हैं।"

"क्या नाम है तुम्हारे असली खाविन्द का?"

"रहीम खाँ।"

"और हिन्दू खाविन्द का?"

"रामलाल।"

"दोनों का पता लिखाओ।"

रानी ने लिखाया। पहिले का पता था—पहाड़ गंज, चान्दी वाली गली और दूसरे का पता था—टेलर्ज़ ड्रैपर्ज़, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली।

"अच्छी बात है। अभी तुम यहाँ रहो। हमको तहकीकात कर लेने दो। पीछे तुम्हारे बच्चों के लिए कोशिश करेंगे।"

यह औरत, जो यहाँ की मुन्तज़िमा थी, 'बी जी' कहकर पुकारी जाती थी। वह एक अच्छे परिवार की औरत मालूम होती थी। रानी को विश्वास-सा हो रहा था कि वह ज़रूर उसकी सहायता करेगी।

रानी उसी मकान में रहती रही। दूसरे-तीसरे दिन 'बी जी' आतीं और रानी का हाल-चाल पूछ जातीं। जब रानी अपने मुताल्लिक पूछती तो वह कह देती, "हमने भारत में पाकिस्तान के हाई कमिश्नर से तुम्हारे मुताल्लिक पता करने के लिए लिखा है। वहाँ से पता आने पर ही किसी फैसले पर पहुँचा जा सकता है।"

इस प्रकार दो मास व्यतीत हो गए। न तो रानी को उस मकान के बाहर जाने दिया गया, न ही उसको भारत में किसी को चिट्ठी लिखने दी गई। जहाँ तक उसके रहन-सहन का सम्बन्ध था, उसको किसी प्रकार का कष्ट नहीं था। खाने को बहुत अच्छा मिलता था। नित धुली पोशाक मिल जाती थी। मनोरंजन के लिए वह उस मकान की दूसरी औरतों से मिल सकती थी और उनके साथ ताश, शतरंज खेल सकती थी। कुछ औरतें गाना जानती थीं। वे गाया करती थीं। कुछ हारमोनियम वग़ैरह बजाती थीं।

वहाँ रहने वाली औरतें प्रायः हिन्दुस्तान से लाई गई थीं। वे पाकिस्तान में आकर बहुत प्रसन्न थीं और किसी अच्छे घर में शादी किये जाने की प्रतीक्षा कर रही थीं।

एक औरत ऐसी भी थी, जो अपने वहाँ लाये जाने पर नाराज़ थी। एक दिन वह रानी के कमरे में चली आई और बातों-ही-बातों में कह बैठी, "मैं यहाँ बहुत दुःखी हूँ।"

"क्यों?"

"मैं जिससे मुहब्बत करती हूँ, उससे जुदा कर दी गई हूँ।"

रानी के दिल में एक टीस उठी। उसको अपनी मुहब्बत की बात याद हो आई; परन्तु यह स्मरण कर कि वह पाकिस्तान में है और उसने एक काल्पनिक कहानी बनाकर बताई हुई है, अपने दिल की बात को छुपाकर पूछने लगी, "किससे मुहब्बत करती हो?"

"हमारे पड़ोस में एक हिन्दू परिवार रहता था। लालाजी का नाम रामशरण था। उनका सबसे छोटा लड़का सुदर्शनलाल मेरे साथ खेला करता था। मैं बड़ी हुई तो हमारा मेलजोल बन्द हो गया। मेरी शादी अपनी बिरादरी के एक अधेड़ उमर के सुलेमान से कर दी गई। उसकी तीन बीवियाँ पहिले थीं। मैं बार-बार अपने मन में सुदर्शन को याद किया करती थी।

"जब दिल्ली में फ़साद शुरू हुए तो मैं अपने बाप के घर पर थी। जब हमारे घरों में घुस-घुसकर कत्ल होने लगे तो मैं भागकर लाला रामशरण के मकान में जा घुसी। रात के वक्त सुदर्शन घर आया तो मैं छुपने की जगह से निकल कर उसके सामने आ गई। हम दोनों की मुहब्बत जाग पड़ी और सुदर्शन ने अपने पिता से कहकर मुझको उस घर में पनाह दिलवाई।

"दिल्ली में अमन हुआ, तो मेरे मुताल्लिक सोचा जाने लगा। सुदर्शन ने अपने बाप से कह दिया कि मैं उसकी बीवी बन चुकी हूँ, इसलिए मैं उनके घर में ही रहूँगी। बहुत तकरार हुई, झगड़ा भी हुआ।

सुदर्शन ने भूख हड़ताल कर दी। पाँच दिन में ही सुदर्शन की हालत बिगड़ने लगी। सब से पहिले माँ मानी। फिर बहिनें मानीं। उनके पीछे बाप माना और तब भाई भी राज़ी हो गये। मगर हमारे लिये एक अलहदा मकान ले दिया गया और हम वहाँ रहने लगे।

"अढ़ाई साल बहुत लुत्फ़ के गुज़रे। मेरे एक लड़का भी है। पिछले महीने किसी ने रिपोर्ट कर दी और औरतों की निकासी करने वालों ने मुझको पकड़ कर यहाँ भेज दिया। मैंने अपनी असली हकीकत बता दी है और बी जी रोज़ मुझको ईमान पर कायम रहने की तम्बीह करती हैं। मेरा मुसलमान खाविन्द अपनी बकाया बीवियों के साथ लाहौर आया हुआ है और उसको तैयार किया जा रहा है कि मुझको अपने घर ले जाये। जहाँ तक मेरा कयास है, उसकी दूसरी बीवियाँ मुझको घर में लाने के हक में नहीं हैं, इसीलिए देरी हो रही है। पर मेरे लिए हिन्दुस्तान में कोई चाराजोई नहीं हो रही। इसकी वजह मैं नहीं समझी।"

रानी ने गम्भीर हो उससे कह दिया, "मैं समझती हूँ कि बी जी ठीक कहती हैं। वे बहुत ही नेक औरत हैं। उनका कहना मानना चाहिये।"

"मैं तो खुदकशी करने की सोच रही थी। मैं बूढ़े के घर जाकर मरूँगी, जिससे उसे मुझको अपने घर ले जाने का मज़ा मिल जाये।"

"पर मर कर क्या करोगी? अभी तो तुम जवान हो। अभी तुमने ज़िन्दगी का लुत्फ़ क्या लिया होगा?"

वह औरत रानी से सहानुभूति की आशा रखती थी। रानी उसकी कथा सुनकर दिल से तो पसीज उठी थी, परन्तु वह एक योजना पर काम कर रही थी। इस कारण वह अपने मन की बात मुख से निकाल नहीं सकी। वह नहीं चाहती थी कि किसी प्रकार से भी, उस पर किसी को सन्देह करने का अवसर मिले।

अन्त में रानी का समाचार, जैसा पाकिस्तान हाई कमिश्नर ने मालूम किया था, आ गया। उनकी जाँच का परिणाम भी ठीक नहीं था। इस

पर भी वह रानी के बयान का सर्वथा विरोध करता था। सफारत का कहना था, "रानी एक रामलाल हिन्दू की बीवी है। रामलाल हिन्दू सभाईट है और उसकी बीवी भी वैसी ही होगी। हमारा खयाल है कि भारत सरकार और रामलाल में एक गहरी साज़िश है, जिससे यह औरत पाकिस्तान में भेजी गई है। यह जासूसी करने के लिए पाकिस्तान में ऐसे ढंग से भेजी गई है, जिससे पाकिस्तान सरकार ही उसकी मदद करने को तैयार हो जाय।"

इस रिपोर्ट से औरतों के निकासी विभाग का रवैया एकदम बदल गया। 'बी जी' आईं और रानी को अपने सामने बुलाकर कहने लगीं, "पता लगा है कि तुम्हारी बात बिलकुल ठीक है। तुम्हारे बच्चों के मुताल्लिक बातचीत हो रही है। तुम्हारे पहिले खाविन्द का पता नहीं चला। इसलिए यह तजवीज़ की जा रही है कि तुम यहाँ शादी कर लो। जब तुम्हारे बच्चे आ जायेंगे तो वे तुमको दे दिये जायेंगे।"

"क्या मैं बिना शादी के यहाँ नहीं रह सकती?"

"नहीं। कोई जवान औरत बिना शादी के यहाँ नहीं रह सकती। हमको मर्दों की बहुत ज़रूरत है और यह मुल्की ख़िदमत होगी अगर तुम चार-पाँच लड़के और पैदा कर सको।"

"पर मैं शादी से थक गई हूँ।"

"थक क्यों गई हो? खाविन्द से जुदा हुए दो महीने से ज़्यादा हो चुके हैं। क्या तुम्हारी तबीयत मर्द के पास जाने को नहीं करती?"

"नहीं। मैं बहुत थकी हुई हूँ।"

"खाविन्द के प्यार से थकावट दूर हो जायेगी। देखो फ़ातिमा! तुमको शादी करनी पड़ेगी। नहीं तो तुमको पेशा करना पड़ेगा। आज शाम के वक्त तीन आदमी बुलाये गए हैं। जिसको तुम पसन्द करोगी, उसके साथ कर दी जाओगी। तुमको जाना होगा। नहीं तो कल तुम्हारी नीलामी होगी। जो दलाल तुम्हारी सबसे ज़्यादा कीमत देगा, उसके पास बेच दी जाओगी।"

रानी अवाक् रह गई। वह इस व्यवहार की आशा नहीं करती थी; परन्तु उसको कोई मार्ग भी नहीं सूझता था। बी जी ने उसको चुप देख कह दिया, "ठीक है। मैं उन आदमियों के साथ आऊँगी।"

इतना कह, बी-जी कमरे से बाहर चली गई। रानी ने वहाँ से भाग जाने की चेष्टा की, मगर वह उस मकान के फाटक पर दो फ़ौजियों द्वारा पकड़कर भीतर ले जाई गई।

: ५ :

रानी रो-रोकर बेहाल हो रही थी। वह मन में विचार कर रही थी कि खुदकशी कर ले, परन्तु इसके लिए उसके पास साधन नहीं थे। उसकी देखभाल के लिए नियुक्त औरतें उसको ढाढ़स बँधा रही थीं। एक ने यहाँ तक कहा, "बीबी! घबराओ नहीं। यहाँ पिछले एक वर्ष में हज़ारों औरतें हिन्दुस्तान से आई हैं और सबका ठीक-ठीक इन्तज़ाम कर दिया गया है। सब खुश हैं। तुमको भी कुछ ही दिनों में पता चल जायेगा कि यहाँ हिन्दुस्तान से ज़्यादा आराम और सुख है।"

उन औरतों ने कई हिन्दुस्तान से निकालकर लाई हुई औरतों की कहानी सुनाई और फिर कहा, "तुम जैसी खूबसूरत औरत के लिए किसी प्रकार की कमी नहीं रहेगी?"

रानी को कुछ सूझ नहीं रहा था। उसके मस्तिष्क में कई उपाय उठते थे, परन्तु किसी को भी कार्य रूप में लाने को, वह अपने को योग्य नहीं पाती थी। इसी प्रकार की उधेड़-बुन में सायंकाल हो गई और उसे बी जी के पास ले जाया गया। वहाँ तीन आदमी बैठे थे। बी जी एक ओर खड़ी रानी की प्रतीक्षा कर रही थीं। जब रानी आई तो उसने उसकी ओर मुस्कराकर कहा, "फ़ातिमा! अपने लिए खाविन्द चुन लो। अगर तुम इनमें से किसी को पसन्द नहीं करोगी तो कल दस बजे तुम्हारी नीलामी कर दी जायेगी। पाकिस्तान सरकार अब और ज़्यादा तुम्हारे ऊपर खर्च नहीं कर सकती।"

रानी ने विचार किया कि बिकने से बीवी बनना अच्छा है। वह अपने मन में पक्का निश्चय कर चुकी थी कि वह अपनी ज़िन्दगी का ख़ात्मा कर देगी। इस कारण उसने कहा, "बीजी! मैं इनमें से किसी को नहीं जानती। जिसके साथ आप कर देंगी, चली जाऊँगी।"

"मैंने तो अपनी मर्ज़ी के ये तीन आदमी बुलाये हैं। तुम किसके साथ जाना चाहती हो?"

रानी ने मन में विचार किया कि किसी बड़ी उमर वाले के साथ जाना ठीक रहेगा। शायद उसकी पहिले भी कोई बीवी हो। इतना विचार कर, उसने तीनों में से एक को, जो चालीस वर्ष से ऊँची आयु का प्रतीत होता था और जिसके सिर पर बाल पक रहे थे, चुन लिया। इस चुनाव पर दूसरे दोनों हँसने लगे।

बीजी ने उस आदमी को कहा, "मियां मोहसिन! दफ्तर में इसके दो महीना भर यहाँ रहने का खर्चा जमा करा दो और इसको ले जाओ।"

मोहसिन बाहर दफ्तर में गया और पाँच सौ रुपया जमा कर, उसकी रसीद ले आया। रसीद दिखाई तो बी-जी ने एक बुर्का रानी के सिर पर डाल, उसको ढाँप दिया। पश्चात् रानी का हाथ मोहसिन के हाथ में देकर कहा, "इसको ले जाओ।"

मोहसिन रानी का हाथ पकड़े हुए बाहर को चल पड़ा। चलते हुए उसने रानी के कान के समीप मुख ले जाकर कहा, "तुम तो काँप रही हो। डरो नहीं। मैं ख़ुदा की क़सम उठाकर कहता हूँ कि तुमको अपनी लड़की की तरह रखूँगा।"

रानी ने उसके मुख की तरफ़ देखा और पूछा, "लड़की?"

"हाँ। मगर तुमको किसी क़िस्म की तकलीफ़ नहीं होगी?"

रानी के मन में एक बार फिर आशा बँध गई। वह परमात्मा का नाम लेकर मोहसिन के साथ चल पड़ी।

माल रोड वाले मकान के बाहर टैक्सी खड़ी थी। मोहसिन ने

उसको टैक्सी में बिठाया और रावी रोड पर एक नये बने खूबसूरत मकान में जा पहुँचा। मकान बाहर से बहुत सुन्दर और भव्य प्रतीत होता था। रानी के मन में विचार आया कि मोहसिन कोई रईस आदमी है।

मोहसिन के वहाँ पहुँचते ही एक औरत, जो बुर्का नहीं पहिने थी, मकान की ड्योढ़ी में रानी का स्वागत करने आ गई। वह उसको भीतर के एक कमरे में ले गई।

मकान में कई कमरे थे और वे बहुत ही अच्छे ढंग से सजाये हुए थे। सबमें बहुत बढ़िया फर्नीचर लगा हुआ था। जिस कमरे में रानी को ले जाया गया, उसमें कालीन बिछा था। सोफ़ा, कुर्सियाँ, तिपाई और दीवार पर कई ऑयल पेंटिड चित्र टँगे थे। एक कोने में, एक स्टूल पर एक गमला रखा था, जिसमें फूलदार कोई पौदा लगा था।

कमरे में पहुँच मोहसिन ने रानी को बुर्का उतार देने के लिए और एक सोफ़ा पर बैठने के लिए कहा। रानी बैठी तो वह औरत, जो उसके साथ-साथ मकान की ड्योढ़ी से आई थी, उसके पास बैठ पूछने लगी, "क्या नाम है तुम्हारा?"

"फ़ातिमा।" रानी का उत्तर था।

"देखो बेटी! यहाँ बहुत आराम से रहो और फ़जूल शोर न मचाओ। इस मकान के मालिक बहुत हल्ला-गुल्ला पसन्द नहीं करते। जितनी चुप और खुश रहोगी, उतनी ही यहाँ ज़्यादा इज्ज़त और ख़ातिर होगी।"

रात के खाने का समय हो गया था और तीनों के लिए खाना आ गया। वह सामने रखी तिपाई पर लगा दिया गया। मोहसिन खाने पर बैठा तो उस औरत ने रानी को भी खाने की दावत दे दी।

फ़ातिमा का ख्याल था कि वह औरत मोहसिन की बीवी है। इस कारण उसने पूछा, "अम्मी! आप इनकी घरवाली हैं क्या?"

वह औरत हँस पड़ी और खाना शुरू करते हुए बोली, "मैं इनकी घरवाली नहीं हूँ। हाँ, मैं इस घर की मालकिन ज़रूर हूँ।"

रानी कुछ समझी नहीं। वह पूछना चाहती थी कि मोहसिन साहब इस घर के क्या हैं, परन्तु इस समय एक और हृष्ट-पुष्ट युवक, जो पतलून और बुशशर्ट पहिने था, वहाँ आ गया। उसको देखकर मोहसिन ने कहा, "लो ग़नी आ गया है।"

मोहसिन ने बैरा को आवाज़ दी, "अरे भाई! इनके लिए भी खाना लाओ।"

खाना आया और सब चुपचाप खाते रहे। ग़नी ने खाना ख़तम कर पूछा, "मोहसिन मियां! क्या समझते हो?"

"यह तो बेचारी गऊ मालूम होती है।"

"नहीं मियां! मैं समझता हूँ कि बहुत मेहनत करनी पड़ेगी।"

"तो मेहनत का मुआवज़ा मिल जायेगा।"

"अच्छी बात है।"

मोहसिन ने रानी को कहा, "देखो फ़ातिमा! यह है ग़नी, चाबुक-सवार। चाबुक-सवार के मायने जानती हो न? नये घोड़ों को तांगे, टमटम में जोतने के काबिल बनाने के लिए उनको सिधाने की ज़रूरत रहती है। और उसके लिए चाबुक सवार रखे जाते हैं। यहाँ इस घर में नई औरतों को सिधाने के लिए यह ग़नी चाबुक सवार का काम करता है। मेरा तो खयाल है कि तुमको बहुत सिधाने की ज़रूरत नहीं पड़ेगी। खैर देखा जायेगा। तुम समझदार हो।"

"बाबा!" रानी ने कुछ भी न समझते हुए कहा, "मैं कुछ नहीं समझी।"

"यह ग़नी सब समझा देगा।"

इतना कह मोहसिन और दूसरी औरत कमरे से बाहर चले गये। ग़नी ने उनके जाते ही दरवाज़ा भीतर से बन्द कर ताला लगा दिया।

दरवाज़ा बन्द होते देख रानी उधर को भागी और ग़नी से चाबी छीनने का यत्न करने लगी। ग़नी ने चाबी जेब में डाल ली और जेब में से लकड़ी के दस्ते वाली एक चाबुक निकाल ली। ग़नी ने रानी का

हाथ पकड़ कर, उसको सोफा पर बैठाते हुए कहा, "सुनो, बाहर से भी ताला लगा दिया गया है। यह कमरा मकान के बिलकुल दरम्यान में है और यहाँ की चीख़-पुकार बाहर सुनने वाला कोई नहीं। इसलिए जो मैं कहूँ, करती जाओ, नहीं तो," उसने चाबुक चटकाते हुए कहा, "इससे बदन छलनी कर दूँगा।"

रानी सहमी हुई बैठी रही। जब एक-दो मिनट तक वह हिली नहीं तो ग़नी ने उसको कहा, "कपड़े उतार दो।"

रानी बितर-बितर मुख देखती रही। ग़नी ने कहा, "उतारो।"

"नहीं उतारूँगी। तुम कौन हो?"

ग़नी ने शट कर हण्टर से एक वार उसकी पीठ पर किया। रानी चिल्ला उठी। ग़नी ने दूसरा हाथ उठाया तो रानी उसको गालियाँ देने लगी। इस पर उसे चाबुक-पर-चाबुक पड़ने लगी।

रानी अचेत हो भूमि पर गिर पड़ी। ग़नी ने कमरे की दीवार में लगी अलमारी खोली और उसमें से ह्विस्की की बोतल निकाली, एक गिलास में थोड़ी डाल, उसके मुख में उड़ेलने लगा। इस समय वह रानी के पास भूमि पर बैठ, उसके सिर को अपनी गोदी में लिये हुए था। जब कुछ शराब रानी के पेट में गई तो रानी को चेतनता हुई और वह अपने को ग़नी की गोद में लेटे हुए देख, चीख़ मार कर उठी और भागकर कमरे के एक कोने में जा खड़ी हुई।

ग़नी ने गिलास मेज़ पर रख दिया और अपनी चाबुक लेकर तैयार हो गया। उसने फिर उसको कहा, "सब कपड़े उतार दो।"

रानी दीवार का आश्रय ले एक कोने में खड़ी थी! वह ग़नी का मुख देख रही थी। ग़नी ने फिर चाबुक के तीन-चार वार उस पर किये। इस पर वह मिट्टी के ढेर की भाँति भूमि पर गिर पड़ी। अब ग़नी फिर उसके पास आया और उसको शराब पिलाने लगा।

लगभग आधा गिलास शराब का पिला दिया गया। रानी को अब फिर चेतनता तो हुई, परन्तु उसमें ग़नी का विरोध करने की शक्ति नहीं

रही। शराब से उसका मस्तिष्क तो काम करता था और वह विचार करती थी कि उसके साथ ज़बरदस्ती की जा रही है, परन्तु शरीर में शक्ति नहीं थी कि वह विरोध करे। वह उसको गाली तो देती थी, परन्तु उसको अपने से दूर धकेल नहीं सकती थी।

: ६ :

अगले दिन रानी की जाग खुली तो उसका पूर्ण शरीर चाबुक की मार से चुनचुना रहा था। उसने देखा कि वही औरत, जिसने उसके साथ रात खाना खाया था, उसके जिस्म पर, चाबुक के निशानों पर वैसेलीन लगा रही है। रानी बिलकुल नग्न बिस्तर पर लेटी हुई थी और अनुभव कर रही थी कि उसके साथ बलात्कार किया गया है।

ज्यों-ज्यों उसको चेतनता होती गई, वह मानसिक ग्लानि और शारीरिक वेदना में गलती हुई अनुभव करने लगी। वह उठकर पलंग पर बैठ गई। उसके पूर्ण शरीर में दर्द हो रहा था। उसने उस औरत से कहा, "मेरे कपड़े ले आओ।"

उस औरत ने, समीप ही सोफा पर रखे हुए कपड़े रानी को देते हुए कहा, "पहिले गर्म पानी से गुसल कर लो। यह दर्द रफा हो जायेगा।"

रानी ने कुछ उत्तर नहीं दिया और कपड़े पहिनने लगी। कपड़े पहिन, पलंग से नीचे उतर, वह चलने लगी तो पीड़ाओं के कारण वह लँगड़ाकर ही चल सकी।

वह औरत उठ, कमरे में एक दरवाज़ा खोलकर बोली, "गुसलखाना इधर है। मेरा कहा मानो। पानी गरम है। गुसल करोगी तो ठीक हो जाओगी।"

रानी नहीं जानती थी कि क्या करे। इस कारण वह गुसलखाने में चली गई। उसमें टट्टी, पेशाब के लिए भी जगह बनी थी। उसने आराम से बैठ, विचार करने के लिए गुसलखाने में जाना ही ठीक समझा।

जब रानी स्नान करने लगी, तो वह औरत वहाँ आ गई और उसके

शरीर पर गरम पानी की टकोर करने लगी। इससे रानी के शरीर को आराम मिला। उसकी पीड़ा कम हो गई और वह बहुत तरोताज़ा अनुभव करने लगी। अब उसका दिमाग़ काम करने लगा और उसको समझ आ गया कि वह किसी वेश्यागार में पहुँच गई है। उसने उस औरत से कहा, "मुझको बीजी ने कहा था कि मेरी मोहसिन मियाँ से शादी हो गई है। पर यहाँ तो बात दूसरी ही निकली।"

"मोहसिन इस वर्ष में उस महकमे से पचास औरतें खरीद चुका है। वह पचास को बीवी कैसे बना सकता है?"

"तो वह झूठ और फरेब था?"

"यह तो मैं नहीं जानती। जिन औरतों के लवाहक यहाँ नहीं मिलते, उनको यही कुछ करना पड़ता है।"

"इससे तो मैं हिन्दुस्तान में अच्छी थी।"

"तुमको हम यहाँ नहीं लाये।"

रानी चुप रही। उसको धुले हुए सफेद कपड़े दिये गए। पश्चात् नाश्ते के लिए चाय, बादाम, पिस्ता इत्यादि दिया गया। रानी दिन-भर विचार करती रही कि किस प्रकार इस नरक से छूटे। उसको कोई उपाय नहीं सूझ रहा था। वह दोपहर के वक्त भोजन कर लेटी तो रात की मार फिर स्मरण हो आई।

इस समय मोहसिन आया और रानी को समझाने लगा कि अब उसको पिछली बातों को भूल जाना चाहिये। न तो वह यहाँ से बचकर हिन्दुस्तान जा सकती है और न ही हिन्दुस्तान से कोई उसको छुड़ाने यहाँ आ सकता है।

रानी वहाँ से भागने की योजना बना रही थी। रात को ग़नी फिर आया। आज वह अपनी चाबुक पहिले ही निकाले हुए था। उसकी चाबुक देख, रानी के सिर में बहुत तीव्र टीस उठी और वह अपने को अचेत होता हुआ अनुभव करने लगी। आज फिर खाना आया। आज मोहसिन और वह औरत साथ नहीं थीं। रानी की तबीयत खाने को नहीं

करती थी, परन्तु वह ग़नी की चाबुक से डरने लगी थी। जब ग़नी ने डाँटकर कहा, "खाओ।" तो वह खाने लगी।

खाने में मुर्ग़ा था, अण्डे थे और नान थे। कुछ थोड़ा रानी ने खाया। खाने के पश्चात् ग़नी ने शराब निकाली। रानी उसको पीती नहीं थी। इससे चाबुक के दो वारों के पश्चात् वह गिलास में भर कर ग़नी को पिलाने लगी और खुद पीने लगी। आज केवल एक बार और चाबुक का प्रयोग करना पड़ा और रानी ने काँपते हाथों से कपड़े उतार दिये।

कई दिन तक इसी प्रकार चलता रहा। रानी सर्वथा विनम्र और सुशील हो गई थी और ग़नी के संकेत पर सब-कुछ करने को तैयार हो जाती थी। वह जब कभी रामलाल और अपने बच्चों के विषय में सोचती थी तो उसके पूर्ण शरीर का रक्त सिर को चढ़ जाता था और उसका मस्तिष्क काम करना बन्द कर देता था। उसको अपना पिछला कुछ भी याद नहीं आता था। इस कारण अब वह अपने पिछले जीवन को स्मरण करने का यत्न ही नहीं करती थी।

अब उसको ग्राहकों के सामने लाया जाने लगा। यदि उसकी आँखों में कुछ भी घबराहट दिखाई देती, तो ग़नी की चाबुक उसको सीधे मार्ग पर ले आती।

रानी को इस मकान में आये अभी दो मास ही हुए थे कि वह अपना पूर्व जीवन भूल गई और उस घर के जीवन में रुचि लेने लगी। अब उसको मालूम हुआ कि उस मकान में उस जैसी आठ-नौ अन्य स्त्रियाँ भी हैं और वे बहुत प्रसन्नता से अपना काम कर रही हैं। वह स्वयं भी अब ग्राहकों से हँसती, खेलती और उनको प्रसन्न करने का प्रत्येक यत्न करती थी। इस कारण उसको प्रत्येक ग्राहक को प्रसन्न करने पर रुपये और भेंट में कीमती वस्तुएँ मिलती थीं। यह सब-कुछ उस नियमित फीस के अतिरिक्त होता था, जो वहाँ आने वाले को मुन्तज़िमा को देनी होती थी। वह धीरे-धीरे पैसे वाली होती जाती थी।

तीन मास में ग़नी ने अपना पाँच सौ रुपया, चाबुक सवारी का मूल्य लिया और फातिमा को मुन्तज़िमा के हाथ में सिधाई घोड़ी की भाँति देकर विदा माँग चला गया।

रानी रात के बारह-एक बजे तक वेश्या-वृत्ति करती और प्रातः दस बजे तक सोती थी। स्नानादि से छुट्टी पाते बारह बज जाते। तब खाना खा वह सो जाती। मध्याह्न के पश्चात् तीन बजे से छः बजे तक उसको अवकाश मिलता और इस समय में वह मुन्तज़िमा से दी हुई नावलें पढ़ती। ये प्रायः अश्लील होतीं और रानी को अब इनके पढ़ने में स्वाद आने लगा था। कभी किसी दिन उसको अपने भूतकाल की याद आ जाती तो उसको ऐसा अनुभव होता कि ग़नी उसको चाबुकों से सिर पर पीट रहा है और वह अचेत हो जाती। यह कहा जाता कि उसको हिस्टीरिया के फिट पड़ते हैं। इस कारण उसने अपने पूर्व-जन्म के विषय में विचार करना ही छोड़ दिया।

उस घर में एक कासिम जान रसद-पानी और शृङ्गार का सामान देने आया करता था। वह रानी के पास भी शृङ्गार की वस्तुएँ बेचने आया करता था। रानी पर वह मुग्ध हो रहा था और उससे प्यार-मुहब्बत की बातें करता रहता था। रानी का अब स्वभाव-सा हो गया था कि वह हरएक से हँसकर, मुस्कराकर, आँखें मटकाकर बातें करती थी। इससे कासिम समझने लगा कि वह उस पर आसक्त है। वह उसके साथ वहाँ से भागने की बातें सोचने लगा।

रानी को अपनी वर्तमान दिशा में कासिम के संकेतों का अर्थ ही समझ नहीं आता था। वह उसकी बात सुन मुस्करा देती थी। एक दिन कासिम ने कुछ खुलकर कह दिया, "फातिमा बीबी! खुश हो यहाँ पर?"

"हाँ। मुझको यहाँ बहुत आराम मिल रहा है।"

"पर मैं तुमको इससे ज्यादा आराम दे सकता हूँ।"

"तो तुम्हारा भी कोई ऐसा मकान है?"

"मेरा मतलब है कि तुम मेरे घर मेरी बीवी बनकर रहना।"

"फ़जूल है। एक की बीवी बनकर रहने में क्या लुत्फ़ है?"

"यहाँ तो किसी दिन मार डाली जाओगी।"

"क्यों?"

"जब यह हुस्न ख़त्म हो जायेगा, तब तुम यहाँ पर एक फ़जूल औरत समझ कर, मारकर रावी में बहा दी जाओगी और यह रुपया, जो तुम इकट्ठा कर रही हो, यहाँ की मुन्तजिमा खानम छीन लेंगी।"

"नहीं, वह इतनी अच्छी है कि मुझको इस किस्म का कोई ख़तरा मालूम नहीं होता। देखो कासिम! अगर तुमने ऐसी कोई बात करनी है तो यहाँ मत आया करो।"

रानी का मन एक सिधाये हुए घोड़े का-सा व्यवहार कर रहा था। तांगे-टमटम में जुतने वाले घोड़े सवारी के लिए ठीक नहीं रहते। इसी प्रकार एक वेश्या किसी घर-गृहस्थी के योग्य नहीं रहती। जैसे एक स्त्री अपने पति से प्रेम करने लगती है, वैसा ही रानी का इस वेश्यागृह से प्रेम हो गया था और उसको इससे बाहर की दुनिया असुविधाजनक प्रतीत होने लगी थी।

एक दिन रानी से वहाँ की मुन्तज़िमा ने कहा, "बहुत घी खाती मालूम होती हो। मोटी होती जा रही हो।"

"अम्मी!" मुन्तज़िमा इसी नाम से उस घर में बुलाई जाती थी। रानी ने कहा, "यह मेरे खाने की वजह से नहीं, बल्कि घर के अन्दर बन्द रहने की वजह से और न चलने-फिरने की वजह से है।"

"तो फिर क्या किया जाये?"

"मैं तो चाहूँगी कि मुझको घूमने-फिरने की इज़ाज़त दी जाये। इससे यह जिस्म हल्का-फुलका रह सकेगा।"

मुन्तज़िमा मान गई और मोहसिन मियाँ और दो चौकीदारों को, रानी को सैर कराने का काम सौंप दिया गया। वे उसको जहाँगीर के मकबरे में, या रावी के किनारे पर ले जाते। वहाँ वह खूब भागती,

कूदती और हँसती। इससे उसके शरीर में एकत्रित हो रही चर्बी पिघलने लगी और उसके मुख पर ताजे रक्त का प्रवाह, उसके सौन्दर्य को बढ़ाने लगा। कभी-कभी उस घर की दूसरी औरतें भी उसके साथ जाती थीं। तब तो वे खूब हँसती-खेलती थीं।

इस प्रकार कार्य चलते हुए डेढ़ वर्ष हो चुका था। एक दिन सब औरतों ने चिड़ियाघर जाने पर इसरार किया। इस पर यह निश्चय हुआ कि जो-जो औरतें टैक्सी का किराया अपने पास से देना स्वीकार करें, वे जा सकती हैं। इस पर चार औरतें तैयार हो गईं। रानी उनमें एक थी। दो टैक्सियाँ की गईं। प्रत्येक में दो-दो औरतें और एक-एक चौकीदार और मोहसिन तथा मुन्तजिमा बैठ चल पड़ीं। जाने से पहिले मोहसिन ने यह तम्बीह कर दी थी कि उन्होंने शरीफ औरतों की भाँति अपना व्यवहार रखना है। जब उनको बुर्का पहिनने के लिए कहा गया तो रानी ने कह दिया, "वाह! आजकल तो शरीफ औरतें पर्दा नहीं करतीं।"

बात ठीक थी और मोहसिन चुप कर रहा। टैक्सियाँ चिड़ियाघर के सामने जाकर ठहरीं तो वे उतरे और चिड़ियाघर में जाने के लिए चल पड़े। चिड़ियाघर के फाटक पर एक आदमी ने, जो पारसी फैशन की नोकदार दाढ़ी और शरै मूँछें रखे हुआ था, सलाम की। वह युवा था और पठानों की-सी पोशाक पहिने हुए था। सिर पर लुंगी और तिलई कुल्ला था। वह बहुत खुला लम्बा कुर्ता और उस पर वास्केट पहिने था। उसने सलवार और मोटी पेशावरी चप्पल पहिनी हुई थी।

जब औरतें गुजर रही थीं तो उसने रानी को देखा और झुककर सलाम कर दी। रानी मुस्कराई और अपने पर्स में से एक दुअन्नी निकाल उसको देने लगी। उसको समझ आया था कि वह भीख माँगता है। पठान मुस्कराया और बोला, "हुजूर! दीदार का भिखारी हूँ। पैसों का नहीं।"

रानी को आवाज़ पहिचानी-सी प्रतीत हुई। इस पर भी उसने कह

दिया, "दीदार अभी पाया है या नहीं ?"

"पा लिया है ।"

रानी दूसरी औरतों के साथ आगे निकल गई । मोहसिन उस पठान के सामने खड़ा हो, घूरकर उसको देखने लगा । पठान ने मुख मोड़कर कहा, "या खुदा ! एकदम चार-चार ।"

मोहसिन खिलखिलाकर हँसा और भीतर चला गया । वह कदम बढ़ा रानी के साथ होकर कहने लगा, "कोई जाना-बूझा है क्या ?"

"मालूम होता है कि कभी हमारे यहाँ आया है ।"

"बहुत ग़ौर से देख रहा था तुमको ।"

"तो उसको कह दो कि आज आ जाये ।"

मोहसिन मुस्कराया और पिंजड़े के शेरों को देखने लगा । रानी समझ रही थी कि इस पठान को उसने कहीं देखा है । वह उसको अपने ग्राहकों में समझती थी ।

: ७ :

रानी को विस्मय नहीं हुआ जब मुन्तज़िमा चिड़ियाघर के बाहर मिले पठान को लेकर उसके कमरे में दाखिल हुई । रानी शृङ्गार कर, कमरे में बिछे कालीन पर बैठी थी और मसनद से ढासना लगाये हुए थी । समीप इतरदान रखा था और उसमें से भीनी-भीनी खुशबू आ रही थी ।

पठान को रानी के पास बिठाकर मुन्तज़िमा ने आँख से संकेत कर दिया कि मुर्ग़ी मोटी है ।

रानी ने मुस्कराकर उसकी बात समझ जाने का संकेत कर दिया । जब मुन्तज़िमा बाहर चली गई तो पठान ने कहा, "मैंने बाहर कह दिया है कि आज तुमको किसी और के लिए फ़ुरसत नहीं है ।"

"ज़हे क़िस्मत ।"

"तुम फ़ातिमा हो ?"

"हाँ, आप कैसे जानते हैं ?"

"शहर में तुम्हारी शोहरत हो रही है।"

"सच ?"

"हाँ, तुम्हारी खूबसूरती की शोहरत सुनकर ही तो आया हूँ।"

"पर आप तो चिड़िया घर के बाहर मिले थे न ?"

"हाँ, पर शोहरत पहिले सुन रखी थी। बाहर तो पचास रुपये दिये हैं। बताओ तुमको खुश करने के लिए क्या देना होगा ?"

"ऐसा पहिले कभी किसी ने नहीं पूछा।"

"तो अक्सर लोग क्या दे जाते है ?"

"उनके देने की कोई हद नहीं। कुछ नहीं से लेकर दो-तीन सौ से अधिक देने वाले आते हैं।"

इस समय खाना लगाया जाने लगा। उस पठान ने खाने का आर्डर देते समय कहा था, "जो बढ़िया-से-बढ़िया चीज़ है भेज दो।"

शराब के विषय में पूछे जाने पर उसने कहा था, "जो बाईजी पीती हैं।"

मुन्तज़िमा ने बताया कि फातिमा तो केवल शैम्पेन लेती है, तो उसने दो बोतल का आर्डर दे दिया। खाने और शराब के लिए उसने सौ रुपये का नोट पेशगी दे दिया था। इतना रुपया पाने पर मुन्तज़िमा ने समझा था कि कोई अमीरज़ादा है।

खाने की प्लेट-पर-प्लेट आने लगी और दो बोतल तथा दो गिलास वहाँ रख दिये गये। जब तक सामान लगता रहा, वह पठान चुपचाप बैठा रहा। तदनन्तर उसने बैरे को कहा, "जाओ। ज़रूरत होगी तो बुला लेंगे।" बैरा बाहर गया तो पठान ने उठकर भीतर से कमरा बन्द कर लिया और रानी को कहा, "अब खाओ।"

"आप शुरू करिये।"

पठान खाने लगा तो रानी भी खाने लगी। पठान बहुत ही कम खा रहा था। खाते समय वह रानी के मुख पर देख रहा था। देखते-

देखता वह खाना भूल जाता था। रानी ने उसको इस प्रकार विचारों में लीन देख पूछ लिया, "आप खाते क्यों नहीं? मेरे मुख पर क्या देख रहे हैं?"

"तुम्हारी खूबसूरती।"

"आप पहिले भी कभी यहाँ आये हैं?"

"नहीं रानी!"

'रानी' कहने के ढंग पर उसको कुछ ऐसा प्रतीत हुआ कि कोई दूर से उसको पुकार रहा है, परन्तु उसके मस्तिष्क की अवस्था ऐसी थी कि वह किसी लम्बी सोच-विचार करने की शक्ति खो चुकी थी। जब भी वह अपने अतीत के विषय में विचार करने लगती थी, उसके मन पर घने काले बादल छा जाते थे और वह उन बादलों के पार कुछ भी देख नहीं सकती थी। एक क्षण तक विचार कर वह हँस पड़ी और बोली, "आप मेरा यह नाम कैसे जानते हैं?"

"बहुत देर की बात है कि मैं तुमसे मिला था।"

"कब?" रानी ग्रास मुख में डालती-डालती रुक गई और ध्यान से उस पठान युवक को देखने लगी। एक क्षण तक उसको देखकर वह हँस पड़ी और बोली, "आप पुराने पापी मालूम होते हैं।"

"तुम दिन-ब-दिन ज्यादा खूबसूरत होती जा रही हो।"

"सब खुदा की कुदरत है।" रानी ने फिर खाना आरम्भ कर दिया।

रानी ने खाना समाप्त किया। पठान ने बहुत कम खाया। अभी बहुत-सा खाना रखा था। कई प्लेट तो ज्यों-की-त्यों धरी थीं। रान ने हाथ पोंछते हुए कहा, "आप खाते क्यों नहीं?"

"मैं चाहता था कि तुम्हारा पेट भर जाये तो पीछे खाऊँ। कहीं तुम्हारे लिए बचे ही न। क्या जाने कब की भूखी हो तुम?"

"मैंने खा लिया है। अब और नहीं खाऊँगी। आप खाइये।"

पठान ने फिर खाना आरम्भ कर दिया। अब रानी ने एक बोतल

खोल ली और थोड़ी-थोड़ी अपने गिलास में डालकर सरुकियाँ लगाकर पीने लगी। पठान शराब पीने से उसके मुख पर आती सुर्खी देखने लगा। रानी ने उसको अपनी ओर देखते हुए पूछा, "यह सब-कुछ बहुत बढ़िया है। कितना दाम खर्च किया है आपने ?"

"अभी हिसाब नहीं किया। एक सौ का नोट दे आया था।"

"अस्सी रुपये की तो ये दो बोतल ही होंगी।"

"शौक से पियो। और जो-कुछ बनेगा दूँगा।"

"अम्मी को क्या दिया है ?"

"उसने पचास माँगे थे। सो दे दिये हैं।"

"ओह! बहुत पैसे हैं आपके पास ?"

"हाँ। देखोगी ?"

"दिखा दीजिये। क्या हरज है !"

पठान खा रहा था। उसने रानी से कहा, "मेरी इस जेब में हाथ डालकर पर्स निकालो और देखो'।

रानी को ऐसा पहिले किसी ने नहीं कहा था। इससे बहुत खुश हो उसके पास खिसक, उसकी वास्केट की जेब में से पर्स निकाल देखने लगी। वह टसा-टस नोटों से भरी हुई थी। उसने सौ-सौ रुपयों के नोटों का एक बण्डल निकालकर गिन डाला। वे बीस थे। रानी आँखें फाड़-फाड़कर देखती रह गई। इनके अतिरिक्त दस-दस और पाँच-पाँच के कई नोट थे। वह लालसा-भरी दृष्टि से उनकी ओर देखती रही। पठान ने ग्रास मुख में डालते हुए कहा, "क्या इतने से पेट भर जायेगा तुम्हारा ?"

"ये बहुत हैं।"

"तुम सब ले सकती हो। और भी हैं। बहुत हैं। मैं तुमको सब दे सकता हूँ, मगर···।"

रानी ने और शराब गिलास में डालकर पीनी आरम्भ कर दी। पर्स में से निकाले नोट उसके सामने पड़े थे। उसने कुछ विचार कर पूछा, "मगर क्या ?"

"मेरे पास तीस हज़ार तो यहाँ बैंक में है। फिर मैं घर का ज़मींदार हूँ। हमारे पास इतना रुपया है कि तुमको हीरे-जवाहरात में लपेट सकता हूँ।"

"ओह !"

"यह सब-कुछ तुमको मिल सकता है।"

"तुम मज़ाक करते हो।"

"नहीं रानी !"

रानी के मस्तिष्क में फिर एक टीस उठी। यह रानी का शब्द उसके मस्तिष्क में शूल की भाँति चुभा। उसका हाथ, जिसमें शराब का गिलास पकड़ा हुआ था, काँप उठा। उसने शराब का गिलास भूमि पर रख दिया और दोनों हाथों से अपने सिर को पकड़ लिया।

"क्या हुआ है ?" पठान ने खाना बन्द कर चिन्ता प्रकट करते हुए पूछा।

"सिर में दर्द उठी थी। अब तो ठीक है।"

पठान ने दस्तरखान से हाथ पोंछकर जेब से रुमाल निकाल लिया और मुख पोंछने लगा। रानी ने दूसरे गिलास में शराब डालकर पठान को पीने को दी। पठान ने गिलास उसके हाथ से पकड़कर कहा, "मैं नहीं पीता। तुम पिओ।"

"मैं समझती हूँ कि मैं पहिले ही ज़्यादा पी गई हूँ।"

"अभी तो चौथाई बोतल भी खाली नहीं हुई। हाँ, तो मैं कह रहा था कि यह सब-कुछ और जो कुछ मेरे पास और है, तुमको मिल सकता है, मगर तुम्हें मुझसे शादी करनी पड़ेगी।"

"शादी ?" रानी ने विस्मय में पठान के मुख पर देखा और अवाक् बैठी रह गई।

पठान ने कहा, "तुम मुझको बहुत ही अच्छी मालूम होती हो। मैं तुमको बहुत प्यार और मुहब्बत से रखूँगा। सुनाओ चलोगी ?"

"कासिम भी यही कहता था।"

"क्या कहता था ?"

"कि मैं उससे शादी कर लूँ ।"

"वह कौन है ?"

"दुकानदार है । यहाँ खाने-पहिनने और शृङ्गार का सामान बेचने आया करता है ।"

"वह मेरा क्या मुकाबिला करेगा ? उसको बुलाकर बोली दिलवा लो ।"

"वह इतना रुपया नहीं रखता । अभी उस दिन मुझसे पचास उधार माँग कर ले गया है ।"

"ओह !" पठान ने सुख का साँस लेते हुए कहा, "बताओ करूँ बात तुम्हारी अम्मी से ?"

"मुझको यकीन नहीं आता कि वह मानेंगी ।"

"मैं उसको मना लूँगा । तुम अपनी बात बताओ ।"

रानी ने गिलास में भरी शराब एक ही घूँट में पी डाली । उसको गले के नीचे उतारकर कहा, "आप बहुत अच्छे आदमी मालूम होते हैं । मैं हैरान हूँ कि आप मेरे पर इतना क्यों खर्च कर रहे हैं ? इससे बहुत कम मोल पर तो कोई भी कुँवारी खूबसूरत लड़की मिल जायेगी । कहें तो मोहसिन मियाँ को कोई ढूँढने के लिए कहा जाये ?"

"तो तुम मेरे साथ जाने को तैयार नहीं ?"

"यह बात नहीं । मैं समझती हूँ कि आप घाटे का सौदा कर रहे हैं ।"

"मैं सौदा नहीं कर रहा रानी ! मैं तो अपनी खोई हुई चीज ढूँढ रहा हूँ ।"

"क्या खो गया है आपका ?"

"एक बेशकीमती हीरा है ।"

"पर मुझको खरीदकर कैसे उसको ढूँढ लेंगे ?"

"मुझको बताया गया है कि वह हीरा तुम्हारे पेट में चला गया है ।

वहाँ से वह निकालना है।"

रानी इसका मतलब नहीं समझी। वह विस्मय और भय में पठान का मुख देखती रह गई। पठान ने मुस्कराते हुए अपनी वास्केट की अन्दर की जेब में से एक बड़ा-सा चाकू निकाल कर खोल लिया। चाकू को देखकर रानी पठान की ओर आँखें फाड़-फाड़ कर देखने लगी। पठान ने उसको भयभीत देखकर कहा, "डरो नहीं रानी! यह चाकू तो मैंने इसलिए निकाला है कि इतना रुपया देखकर किसी का मन बेईमान न हो जाये और मुझको मार डालने की कोशिश न करे। ऐसों को पता लग जाना चाहिये कि मैं बेवकूफ नहीं हूँ। मैं इस अपने दोस्त को हमेशा अपने पास रखता हूँ। जब यह मेरे पास होता है तो मैं अकेला इसकी मदद से दस-बीस का मुकाबिला कर सकता हूँ।

"हाँ, अब सुनो। मैं तुमको यहाँ से ले जाना चाहता हूँ। मैं तुमसे शादी करूँगा और तुमको सोने और जवाहरात से लाद दूँगा।"

"पर आपने मुझमें क्या देखा है, जो इतने मेहरबान हो रहे हैं?"

"मेरी तुमसे मुहब्बत हो गई है।"

"इतने से अर्से में ही? अभी तो…एक बूँद भी नहीं पी और क्या खुशबू से ही दिमाग़ चक्कर खाने लगा है?"

"मेरा दिमाग़ चक्कर नहीं खा रहा रानी! तुम अपना दिमाग़ ठीक करो।"

"वह कर तो रही हूँ।" उसने बोतल में से और शराब गिलास में उँड़ेल ली। गिलास हाथ में लेकर बोली, "यह दिमाग़ को सही करने की ताकत रखती है।"

"तो पियो, जिससे तुम इस सब को भूल जाओ। शायद मौजूदा हालत को भूल जाने के बाद तुम अपनी पहली असली हालत को याद कर सको।"

"पहली हालत?" अब फिर रानी के मस्तिष्क में टीस उठी, परन्तु इस बार उतनी तीव्र नहीं थी, जितनी पिछली बार उठी थी। उसने सिर

को झटका दे अपनी वेदना दूर करने का यत्न किया। उसके मुख पर काली-सी छाया छा गई, परन्तु वह तुरन्त ही विलीन हो गई। पुनः उसके मुख पर प्रसन्नता लौट आई और वह कहने लगी, "थोड़ी पियो।"

"पहिले मेरी बात सुन लो। याद करो कि पहिले तुमको कब मिला था, मैं?"

रानी ने पठान के मुख पर देखा और कहा, "यहाँ सैकड़ों आ चुके हैं। किस-किसको याद रखूँ? क्या रात बातों में ही गुज़ार दोगे?"

"नहीं, मतलब की बात भी करूँगा। तो तुमको याद नहीं आ रहा कि हम कब मिले थे?"

"क्या करोगे याद करके? उसका आज की रात से क्या ताल्लुक है?"

"तुमने पूछा है न कि मैं तुमसे कब से मुहब्बत करता हूँ। यही बताना चाहता हूँ।"

"क्या फायदा होगा इससे? तुमने रुपया खर्च किया है। उसका लुत्फ़ नहीं लोगे क्या?"

"ले तो रहा हूँ। अच्छा बताओ तुम किसकी लड़की हो?"

"मैं? किसकी लड़की हूँ?" अब फिर उसके सिर में चक्कर आया। उसने समझा कि वह ज्यादा पी गई है। उसने अपने सिर को फिर दोनों हाथों में पकड़ लिया।

"क्यों? क्या हुआ है?" पठान ने पूछा।

"ज्यादा पी गई मालूम होती हूँ।"

"तो और मत पियो। यह देखो चटनी है। थोड़ी-थोड़ी चाटो। ठीक हो जाओगी।"

रानी ने चटनी चाटनी आरम्भ कर दी। पठान ने कहा, "लाहौर माल पर एक दर्जी की दुकान थी। दर्जी का नाम था रहमान खां। कभी सुना है यह नाम?"

रानी के मस्तिष्क में चक्कर आ रहा था। वास्तव में वह जब भी

अपने पिछले जीवन को स्मरण करने लगती थी, उसको ऐसा अनुभव होने लगता था कि ग़नी उसको चाबुकों से पीट रहा है और उन चाबुकों की वेदना में उसका मन कुछ भी विचार नहीं कर सकता था। इस पठान युवक के, बार-बार मन पर छाये बादलों के उस ओर की बात कहने पर, उसको बादलों के पीछे बिजली-सी चमकती प्रतीत होती थी। इस चमक से उसके दिमाग़ में चक्कर आने लगता था।

पठान ने अपनी बात जारी रखी, "उस दर्ज़ी की दुकान पर एक नौकर था। वह हिन्दू था।"

रानी ने आँखें उठाकर पठान की ओर देखा और बहुत ध्यान से उसकी आँखों में देखने लगी। पठान ने आगे कहा, "उस हिन्दू नौकर का नाम रामलाल था। वह उस्ताद रहमान खाँ के घर सौदा-सुल्फ पहुँचाने जाया करता था।"

रानी की आँखें बन्द हो गईं और वह झूमने लगी। पठान ने उसको पकड़ना चाहा, परन्तु उसके पकड़ने से पहिले ही अचेत हो, वह कालीन पर लुढ़क गई।

: ८ :

मुकुट बिहारी माथुर के दिल को भी रामलाल की बीवी के पाकिस्तान भेजे जाने से भारी चोट लगी थी। एक कानूनदान होने के नाते उसने भारत की वर्तमान बीमारी का निदान यह समझा कि शासन न्यायालयों के अधिकार पर छापा डाल रहा है।

जिन दिनों उसने वकालत पढ़ी थी, उसने कानून का यह प्राथमिक सिद्धान्त पढ़ा था कि यदि एक निर्दोष को बचाने के लिए सौ दोषी भी बचते हों, तो निर्दोष को बचाना ही चाहिए।

एक और सिद्धान्त उसने पढ़ा था। वह था शासन चाहे कितना भी अच्छा क्यों न हो, न्यायकर्त्ता नहीं हो सकता। माथुर बैरिस्टर था और उसको इंग्लैण्ड के न्याय-सम्बन्धी रीति-रिवाज स्मरण थे। वहाँ

न्यायकर्त्ता की आज्ञा पार्लियामेण्ट भी रद्द नहीं कर सकती थी। न्यायालय प्राईम-मिनिस्टर के अधीन न होकर इंग्लैण्ड के राजा के अधीन थे।

वह वर्तमान भारत में इन सिद्धान्तों की अवहेलना हो रही देख रहा था। ज्यों-ज्यों भारत की पार्लियामेण्ट नये-नये कानून बना रही थी, वह न्यायालयों से अधिकार छीनकर शासन को दे रही थी।

यह प्रवृत्ति मध्यकालीन राजा-महाराजाओं में थी। आज प्रजा-तन्त्रात्मक प्रवृत्तियों के विकास के साथ-साथ शासन पर न्यायालयों का अधिकार बढ़ता जाता था; परन्तु रूस में कम्युनिस्ट राज्य स्थापित होने के साथ ही न्यायालयों पर शासन का प्रभुत्त्व बना दिया गया। उसकी नकल भारत में भी, यद्यपि वहाँ से कम सीमा तक ही, होने लगी थी। कांग्रेस पार्टी ने शासन और न्याय को पृथक्-पृथक् नहीं होने दिया। इसके अतिरिक्त अनेकों ही बातों में शासन में कांग्रेस पार्टी के पदाधिकारियों को न्यूनाधिक सीमा में अधिकार दे रखा था।

मन्त्रियों के अतिरिक्त कांग्रेस कमेटियों के प्रधान और मन्त्रीगण भी शासन में अधिकार पाये हुए थे। यह भी एक भारी कारण था देश में दुर्व्यवस्था होने का।

रूस में तो बोलशिविक पार्टी शासन में सीधी हस्तक्षेप करती है। व्यवहार में भारत में भी इसी नमूने पर शासन की बागडोर कांग्रेस के हाथ में देने का यत्न हो रहा था। माथुर के मन में आया कि इस प्रकार की दूषित नीति को जनता पर प्रकट किया जाये और उसकी हानियाँ-लाभ उनको बताये जायें। अतएव उसने देश के भिन्न-भिन्न समाचार-पत्रों में लेख भेजने आरम्भ कर दिये। लेख छपते तो थे पत्रों में, परन्तु वे पत्र उसमें वर्णित-घटनाओं का खण्डन भी छाप देते थे। इस पर भी देश में जागृति-सी उठती प्रतीत होने लगी थी।

जब माथुर कांग्रेस पार्टी के शासन में हस्तक्षेप की बात करता तो समालोचक कह देते कि कांग्रेस ने देश को स्वराज्य दिलाया है। इस कारण वह संस्था इस स्वराज्य की रक्षा करना अपना कर्त्तव्य समझती है।'

एक परिणाम माथुर साहब के लेखों का अवश्य हुआ। वह यह कि उनके परिचित यह समझने लगे कि वे आगामी निर्वाचनों में संसद् के लिए खड़ा होना चाहते हैं।

इस विचार को चन्द्र और उसके साथियों ने भी सुना। उसकी पार्टी के लोग उसको कहने लगे कि वह अपने पिता को कम्युनिस्ट पार्टी के टिकट पर खड़ा कर दे। चन्द्र उनको समझाता था कि उसके पिता कम्युनिस्ट विचार नहीं रखते, प्रत्युत् वे तो कम्युनलिस्ट विचार-धारा के मानने वाले हैं। इस पर भी कम्युनिस्ट चन्द्र को कहते रहे। वे यह समझते थे कि एक धनी आदमी उनके प्रचार के लिए एक प्लेटफ़ार्म बना देगा। इस उद्देश्य से एक दिन पार्टी के लोग चन्द्र को साथ लेकर माथुर साहब के पास आ गये। जब माथुर ने उनके आने का कारण पूछा तो उनमें से एक ने आने का प्रयोजन बता दिया। उसने कहा, "समाचार-पत्रों में आपके लेखों को पढ़कर दिल्ली नगर में यह चर्चा चल रही है कि आप आगामी निर्वाचनों में संसद् के लिए खड़े होने का विचार रखते हैं। चन्द्र हमारा साथी है, इस कारण एक साथी के पिता को सफल बनाने की हमारी इच्छा है। हम इस विषय में बातचीत करने आये हैं।"

माथुर ने उनकी बात पर कुछ काल तक विचार कर कहा, "यद्यपि मैंने अभी निश्चय नहीं किया कि मैं निर्वाचन लड़ूँगा ही। तो भी ये विचार मेरे मस्तिष्क में है। मैं शासन में और देश में अव्यवस्था को दूर करने में अपनी बुद्धि से उपाय करना चाहता हूँ, परन्तु निर्वाचन में उम्मीदवार खड़े होने के लिए केवल इच्छा और भावना ही तो पर्याप्त नहीं। निर्वाचनों का एक व्यावहारिक अंग भी है। वह है उसमें सफल होना। मैं अभी इस सफलता के लिए साधन और शक्ति नहीं पाता।"

"इसीलिए तो हम आये हैं। यदि आप अपने मन में निश्चय कर लें तो फिर हम आपको सफल बनाने के साधन जुटाने आरम्भ कर देंगे।"

"आप क्या साधन उत्पन्न कर सकते हैं ? नगर का प्रत्येक नर-नारी मतदाता है। उनके विचार मेरे अनुकूल करने में आप क्या कर सकते हैं ?"

"हमारी पूर्ण पार्टी आपके सन्देश को घर-घर पहुँचा सकती है। इसके अतिरिक्त चुनाव के प्रबन्ध के लिए निर्वाचन एक्सपर्ट बम्बई अथवा कलकत्ता से बुलाये जा सकते हैं। कार्यकर्ता, जो निर्वाचनों का कार्य समझते हैं, आपके चुनाव-क्षेत्र में एकत्रित किये जा सकते हैं और दिल्ली की यूनियनों के सहस्रों सदस्य काम पर लगाये जा सकते हैं।"

"तो आप यह कहने आये हैं कि आपकी पार्टी मेरी सहायता करेगी ?"

"यह तो पार्टी के विचार करने की बात है। हमें एक अंश में लाभ होता है और दूसरे अंश में हानि। तो भी हम उस आंशिक लाभ के लिए हानि भी सहन कर सकते हैं।"

"पर बरखुरदार !" माथुर ने निर्णयात्मक बात कर दी, "मैं अपने निर्वाचनों में उनसे सहायता कैसे ले सकता हूँ, जिनके विरुद्ध मैं अपने निर्वाचन-भाषणों में प्रचार करने वाला हूँ।"

"आप यही तो कहने वाले हैं न कि रूस में राज्य की अवस्था और राज्य का व्यवहार ठीक नहीं है ? वहाँ अधिनायकवाद का ज़ोर है, तो आप कहिये। हमको रूस से कुछ लेना-देना नहीं है। हमको तो सोशल इक्वैलिटि (सामाजिक समानता) मानने वाले ही चाहियें। हम यह तो आशा करते ही हैं कि आप एक निर्धन और धनी में वर्तमान आय का अन्तर ग़लत समझते होंगे। इस अन्तर को दूर करने के लिए नैशनलाइज़ेशन (राष्ट्रीयकरण) एक सफल उपाय है।"

"मेरा आपसे मतभेद है। मैं राष्ट्रीयकरण को एक ठीक उपाय नहीं समझता। राष्ट्रीयकरण से श्रमिकों के श्रम की एक महान् हानि होती है। इससे देश की सामूहिक सम्पत्ति का नाश होता है।

"देखिये, मैं आपको समझाता हूँ। राष्ट्रीयकरण का अर्थ है, देश

के उद्योग-धन्धों की मालिक सरकार हो जाये। सरकार क्या है? आज इस देश के विधान से सरकार जनता से निर्वाचित संसद् है। निर्वाचन में अनेक पार्टियाँ होंगी। एक पार्टी सफल होगी। अन्य हार जायेंगी। यह सम्भव है कि जो पार्टी सफल हो, वह देश के सामूहिक मतदाताओं की तुलना में अल्पमत में हो। अन्य पार्टियाँ सामूहिक रूप में बहुमत में मत रखती हुई भी, संगठित न होने के कारण, पृथक्-पृथक्, सफल पार्टी से कम मत प्राप्त कर सकें।

"इसका परिणाम यह होगा कि देश की सरकार अल्पसंख्यक मतदाताओं की प्रतिनिधि होगी और ऐसी सरकार देश की पूर्ण चल-अचल, खनिज-उद्भिज और श्रम की स्वामी बन जायेगी।

"केवल यही नहीं। निर्वाचित संसद् के सदस्य, जिनके बल तथा सहायता से निर्वाचित होंगे, देश के उद्योग-धन्धों का लाभ उनको ही करायेंगे। नहीं करायेंगे तो आगामी निर्वाचनों में उनकी सहायता कोई नहीं करेगा।

"वर्तमान काल में राष्ट्रीयकरण का अर्थ तो केवल देश की पूर्ण धन-सम्पत्ति सफल पार्टी के सदस्यों और उनके सहायकों के हाथ में सौंप देना होगा।

"इससे भी बढ़कर आपत्ति यह है कि जैसे जनता पर टैक्स लगाने और उन टैक्सों से प्राप्त धन के व्यय करने का अधिकार टैक्स देने वालों के प्रतिनिधियों को होना चाहिये, वैसे ही उद्योग-धन्धों से प्राप्त लाभ को व्यय करने का अधिकार भी उन उद्योग-धन्धों में लगे हुओं के प्रतिनिधियों को होना चाहिये। राष्ट्रीयकरण में ऐसा नहीं होगा। संसद् के सदस्य निर्वाचित होंगे जन-साधारण के मत पर और जन-साधारण में से। वे किसी विशेष काम-धन्धे में काम करने वालों के ही प्रतिनिधि नहीं होंगे।

"जो लोग उद्योग-धन्धों में लगे होंगे, उनमें से एक भी ऐसा नहीं होगा, जो एक मालिक की भाँति उस उद्योग-धन्धे की हानि-लाभ का

उत्तरदायित्व रखने वाला हो। परिणामस्वरूप वे देश के धन से खिलवाड़ करेंगे और देश को इससे महान् क्षति पहुँचनी निश्चित है।

"अब एक उदाहरण लो। सरकार एक स्टील का कारखाना खोलती है। उस कारखाने में काम करने वाले मैनेजर तथा इंजीनियर तक सब वेतनधारी होंगे। उसका ऑडिटर भी वेतनधारी होगा। उन पर होगी संसद् और संसद् के सदस्य, जो कारखाने के हानि-लाभ पर किसी प्रकार से भी आश्रित नहीं होंगे। अर्थात् पूर्ण उद्योग में एक भी ऐसा आदमी नहीं होगा, जो यह अनुभव करता होगा कि उद्योग में हानि-लाभ से उसको हानि-लाभ होने वाला है। अतएव यह एक महान् क्षतिकारक वस्तु हो जायेगी। परिणामस्वरूप सरकारी उद्योगों में सदा ही हानि होगी।"

"पर साहब! रूस में तो इससे उलट हो रहा है।"

"तुमने जाकर देखा है क्या?"

"वहाँ की रिपोर्टों को तो पढ़ा है।"

"वे रिपोर्टें वहाँ की सरकार द्वारा ही छपी हैं न?"

"तो क्या हुआ?"

"हुआ यह कि अपने मुख मियाँ मिट्ठू बनने को कौन तैयार नहीं। उस देश में कोई भी सरकार के कामों पर टीका-टिप्पणी करने वाला नहीं है। वहाँ की सरकार पर टीका-टिप्पणी करने वाला वहाँ रहने ही नहीं दिया जाता।"

"आपकी योजना क्या है? राष्ट्रीयकरण के मुकाबिले में आप क्या चलाना चाहते हैं? यह व्यक्तिगत पूँजीवाद तो हानिकर सिद्ध हो चुका है।"

"पूँजीवाद में अपने गुण-अवगुण हैं। गुण तो ये हैं कि मालिक दिन-रात स्वयं और अपने सेवकों द्वारा अधिक और अधिक उन्नति के लिए यत्नशील रहता है। एक-एक पाई, जो हानि में जाती है, उसको चुभती है और वह उसको बचाने में यत्नशील रहता है। यही कारण है

कि वह नित्य ऐसे आविष्कारों के लिए प्रोत्साहन देता रहता है, जिनसे उसके उद्योग में कम खर्च से अधिक-से-अधिक उपज हो सके। साथ ही वह किसी पदार्थ को व्यर्थ नहीं जाने देता। उसका सदा यह प्रयत्न रहता है कि मुख्य उपज के साथ दूसरे उत्पन्न होने वाले पदार्थ भी किसी उपयोगी कार्य में लाये जा सकें।

"पूँजीवाद में दोष भी हैं। दोष ये हैं कि मालिक अपने उद्योगों में अधिक और अधिक लाभ करने के लिए उसमें संलग्न श्रमिकों की सुख-सुविधा का ध्यान नहीं रखता। उसकी इस स्वार्थपरता को नियन्त्रण में करने के लिए विधि-विधान बनाये जा सकते हैं। श्रमिकों के वेतन, उनके सुख-सुविधा के लिए विधान और उनके बच्चों की शिक्षा और दीक्षा के लिए साधन कानून से जुटाये जा सकते हैं।

"पूँजीवाद का एक और भी दोष है। पूँजीपति की प्रायः सब योजनाएँ निजी स्वार्थ की धुरी पर चलती हैं। उनमें समाज-कल्याण का ध्यान ना के बराबर होता है। इसमें भी संसद् को कानून बना देने चाहियें। उदाहरण के रूप में सिनेमा उद्योग है। फ़िल्म बनाने वाला समाज की उन्नति और समाज के चलन की ओर ध्यान न देकर मनोरंजन को मुख्य मान लेता है। इससे उसको अधिक लाभ की आशा होती है। इसके लिए भी सभ्य सरकार नियम बनाती है और मनोरंजन तथा समाज-कल्याण में उचित सन्तुलन बनाये रखने के लिए नियन्त्रण रखती है।

"यह है मेरा राष्ट्रीयकरण का बदल। प्रत्येक व्यक्ति को स्वतन्त्र रूप से उद्योग-धन्धों को चलाने की स्वीकृति होनी चाहिये। उसको अपने नियन्त्रित स्वार्थहित से प्रेरित होकर काम करने देना चाहिये। यह नियन्त्रण सरकार को, जो जनता का प्रतिनिधित्व करे, अपने हाथ में रखना चाहिये। नियन्त्रणों का उद्देश्य श्रमिक-वर्ग के हितों की रक्षा और सार्वजनिक हितों की रक्षा हो। मानव में विद्यमान स्वार्थ की प्रेरणा से समाज का लाभ प्राप्त करने की योजना होनी चाहिये।"

चन्द्र के साथियों को पता चल गया कि मिस्टर माथुर उनके प्रति-

निधि नहीं हो सकते। एक भी तो ऐसा विषय नहीं था, जो उनमें और माथुर साहब में एक समान होता।

: ६ :

इससे यह चर्चा फैल गई कि मुकुट विहारी माथुर संसद् के लिए निर्वाचन लड़ने वाला है और वह कम्युनिस्ट पार्टी के टिकट पर खड़ा होने के लिए तैयार नहीं हुआ। कांग्रेस के साथ तो उसका विरोध था ही। यह उसके लेखों से स्पष्ट हो रहा था। कांग्रेस की मुख्य नीति का वह अपने लेखों में घोर विरोध कर चुका था। इससे उसके प्रायः परिचित यही आशा करते थे कि वह हिन्दू महा सभा के नाम पर निर्वाचन लड़ेगा।

मुकुट विहारी हिन्दू महा सभा का सदस्य रह चुका था। परन्तु जब डॉक्टर श्यामा प्रसाद मुखर्जी ने एक नवीन पार्टी, 'जन संघ' की स्थापना की तो वह उस पार्टी का सदस्य बन गया। इससे तो हिन्दू महा सभा के सदस्य उसको समझाने चले आये।

"माथुर साहब!" हिन्दू महा सभा के एक सदस्य ने कहा, "हम यह तो समझ सकते थे कि आप कांग्रेस में किसी विचार से गये हैं, परन्तु हिन्दुओं में फूट डलवाने वाली पार्टी में आप कैसे जा पहुँचे?"

"डॉक्टर साहब के व्यक्तित्व से आकर्षित होकर।"

"पर वे तो हिन्दू महा सभा से निकाले हुए व्यक्ति हैं।"

"जानता हूँ। इससे हिन्दू महा सभा की महिमा बढ़ी नहीं थी।"

"पर झगड़ा तो सिद्धान्त का था न?"

"यह समझ में नहीं आया। किस सिद्धान्त पर मतभेद था?"

"डॉक्टर साहब हिन्दू महा सभा के द्वार हिन्दुस्तान के सब रहने वालों के लिए खोल देना चाहते थे।"

"तो क्या आप यह नहीं चाहते?"

"बिलकुल नहीं।"

माथुर हँस पड़ा। हँसकर उसने कहा, "ठीक है। आप रूढ़िवादी

सनातन धर्मावलम्बी होने के नाते हिन्दू महा सभा के द्वार बन्द रखना चाहते हैं। क्या किसी अवस्था में भी कोई इसाई अथवा मुसलमान हिन्दू-समाज में प्रविष्ट नहीं हो सकता ?"

"हिन्दू धर्म स्वीकार करने के पश्चात् ही वह हिन्दू समाज में लिया जा सकता है।"

"हिन्दू धर्म क्या है ?"

"जो किसी भारतीय धर्म-प्रवर्तक का अनुयायी हो, वह हिन्दू धर्म में माना जाता है।"

"परन्तु क्या वे सब, जो आज अपने को हिन्दू कहते हैं, भारतीय धर्म-प्रवर्त्तकों के ही अनुयायी हैं ?"

"बिलकुल।"

"ये शिवलिंग के उपासक किस भारतीय धर्म के अनुसार है। फिर लाखों वे, जो पीर और मज़ारों की पूजा करते हैं, वे कौन भारतीय धर्म के उपासक हैं। यदि इससे भी पहिले की बात कहूँ तो विष्णु, जो क्षीर सागर में निवास करते थे, क्या भारतीय थे ? महादेव, उमा-पति क्या काम-भोज (अफ़ग़ानिस्तान) के रहने वाले नहीं थे ?

"देखिये जी ! हिन्दू-धर्म, जो वास्तव में आर्य-धर्म है, कभी भी भौगोलिक सीमाओं में बँधा नहीं रहा। हाँ, हिन्दू-समाज अवश्य भारतीय समाज है। इसमें धर्म का समावेश नहीं। जब विष्णु को भगवान् का अवतार मानने वाले हिन्दू-समाज में हैं, तो भारतीय धर्म-प्रवर्त्तकों की बात ही कहाँ रही। ईसाई, यदि वे भारत में भारत के बनकर रह सकें तो भारतीय-समाज के बनकर रह सकते हैं। भारतीय-समाज वालों की ही हिन्दू-समाज है। धर्म, जो आजकल मजहब का पर्यायवाचक है, वह हिन्दू-समाज में भेदभाव का कारण कभी नहीं बना।"

हिन्दू-सभाई माथुर की इस व्याख्या को सुनकर खिलखिलाकर हँस पड़े। सभा के प्रधान ने कहा, "आपके मस्तिष्क में भारी कन्फ़्यूज़न (सम्भ्रम) उत्पन्न हो गया है। यही बात डॉक्टर मुखर्जी के साथ

हुई थी।

"भला यह बताइये कि जो आदमी मुहम्मद साहब को दुनिया का सर्वश्रेष्ठ पैग़म्बर मानता है और अन्य सबको नीच समझता है, वह भला कैसे एक निष्ठावान भारतीय हो सकता है? मुहम्मद साहब तो अपने-से किसी दूसरे को परमात्मा का रसूल मानने वाले को काफ़िर कहते थे और काफ़िर से एक मुसलमान की सुलह नहीं हो सकती। तब किस प्रकार एक मुसलमान काफ़िरों की जमायत में सम्मिलित हो सकता है?"

"तो मैंने कब कहा है कि एक मुसलमान ज़रूर हिन्दू महासभा में सम्मिलित हो ही जायगा? मैंने तो केवल यह कहा है हमारे द्वार खुले हों। हमारे व्यवहार के अनुसार आचरण करने वाले हिन्दू महासभा में आ सकते हैं।

"हमारा व्यवहार स्पष्ट है। इस भारत की भूमि को अपनी जन्मभूमि और पुण्यभूमि मानने वाले हिन्दू महासभा में आ सकते हैं। यदि कोई मुसलमान अपने हज़रत के कलाम की व्याख्या इस प्रकार करता है कि वह भारत में रहता हुआ भारत को सजदा कर सकता है, तो वह क्यों न हिन्दू महासभा में लिया जाये?"

"कोई मुसलमान ऐसा नहीं करेगा।"

"आप उनके वकील हैं क्या?"

"नहीं, मैं उनके इतिहास का ज्ञाता हूँ।"

"मैं इतिहास की बात नहीं कह रहा। मैं भविष्य की बात कहता हूँ। कदाचित् भारत में ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न हो रही हैं कि शीघ्र ही मुसलमान और ईसाइयों को अपने धर्म-ग्रन्थों की विवेचना और उनमें आये वाक्यों की व्याख्या को बदलने के लिए विवश होना पड़ेगा। दक्षिण के द्राविड़ों ने अपने द्राविड़ देवी-देवताओं को अपना पूज्य मानते हुए भी अपने को हिन्दू-समाज में सम्मिलित कर लिया था। ऐसी अवस्था पुनः उत्पन्न हो सकती है। उस अवस्था को उत्पन्न करने के लिए हिन्दू

महासभा का द्वार ईसाइयों, मुसलमानों और सब दीनदार अथवा बेदीन (religious & non-religious) के लिए खोलने पड़ेंगे।"

"क्या आपको स्मरण नहीं कि राम ने लंका विजय के लिए जाने से पूर्व शिव मन्दिर में जाकर लिंग की उपासना की थी। उस धर्म का मुख्य पुजारी रावण स्वयं था। क्या यह निमन्त्रण नहीं था लंका की जनता को कि वे 'आर्य' समाज में अपने धर्म को रखते हुए आ सकते हैं।"

"फिर आप में और कांग्रेस में अन्तर ही क्या रह गया है?"

"तो क्या कांग्रेस और मेरे विचार वालों में केवल हिन्दू और मुसलमान को सम्मिलित करने का ही अन्तर है? भाई! नहीं। तुम अभी अपने को समझे ही नहीं। तभी इस साधारण-सी बात पर व्यर्थ का बल दे रहे हो।

"सुनो, कांग्रेस से मेरा मतभेद इस बात में नहीं कि उसमें मुसलमान सम्मिलित हैं, प्रत्युत् मेरा उनसे मतभेद इस बात में है कि वे मुसलमानों को अन्य धर्मावलम्बियों पर जबर करने की स्वीकृति देते हैं। किसी काल में कांग्रेसी, मुसलमानों के अपने को हिन्दुस्तानी न होने की घोषणा करने पर भी, उनको विशेष सुविधाएँ देने के लिए तैयार रहे और अब भी वे उनको जायज़ अथवा नाजायज़ तरीकों से विशेष सहायता देते रहते हैं।

"प्रमाण चाहते हो तो यह भी लो। उत्तर प्रदेश में एक अलीगढ़-यूनिवर्सिटी है और दूसरी गुरुकुल कांगड़ी। अंग्रेज़ों के ज़माने में तो गुरुकुल कांगड़ी को किसी प्रकार की सरकारी सहायता का विचार भी नहीं किया जा सकता था; परन्तु आज हमारी धर्मनिरपेक्ष सरकार करोड़ों रुपये सीधे और उल्टे तरीके से इस मुसलमान संस्था को दे रही है और गुरुकुल कांगड़ी को कुछ लाख भी देने में संकोच हो रहा है।

"और सुनना चाहते हो? कांग्रेस के कर्ता-धर्ता अरबों रुपये भारत की व्यवसायी जनता से कर के रूप में लेकर, मुसलमान देशों में व्यर्थ के दूतावास खोल-खोलकर गँवा रही है।

"यह तो कांग्रेस की हिन्दू-मुसलमान में भेद-भाव की नीति की बात हुई; परन्तु मेरा कांग्रेस से केवल इस बात पर ही मतभेद नहीं, प्रत्युत् अनेकों अन्य बातों पर भी है।

"पण्डितजी की विदेश-नीति की आज बड़ी धूम है। परन्तु मैं उसको देश के लिए अत्यन्त अहितकर मानता हूँ। उदाहरण के रूप में हमारी सरकार ने सबसे पहिले कम्युनिस्ट चीन का पक्ष लेना आरम्भ कर दिया है। यह मैं मानता हूँ कि आज चीन के पूरे देश में कम्युनिस्टों का अधिकार हो गया है, परन्तु क्या किसी देश पर किसी का अधिकार हो जाना मात्र, उसको उस देश का प्रतिनिधि मानने के लिए पर्याप्त है? यदि ऐसा होता तो भारत पर अंग्रेज़ों का डेढ़ सौ वर्ष पर्यन्त पूर्ण अधिकार रहा। क्या वे भारत के अधिकारी शासक कभी भी माने जाने योग्य थे? केवल मात्र अधिकार प्राप्त कर लेने से, कोई उस देश की जनता का प्रतिनिधि नहीं माना जा सकता।

"कम्युनिस्टों ने तलवार के बल पर वहाँ पर स्थापित सरकार को पदच्युत किया था। वह तलवार उनके हाथ में रूस ने दी थी। अभी भी तलवार से आतंक जमाकर कम्युनिस्ट वहाँ पर शासन करते हैं। वहाँ पर केवल कम्युनिस्ट पार्टी के अतिरिक्त कोई दूसरी पार्टी बन नहीं सकती। अर्थात् अभी तक वहाँ पर विचार-स्वातन्त्र्य नहीं है। ऐसे राज्य से भले ही हम शत्रुता न करें, परन्तु उसके वकील कैसे बन सकते हैं? भारत इस समय चीन की कम्युनिस्ट सरकार का वकील बन रहा है।

"स्वराज्य-प्राप्ति के पश्चात् देश में नैतिकता का घोर पतन हुआ है। इसमें कारण है। देश के नेताओं ने अपने पक्षपातपूर्ण व्यवहार के लिए समर्थन प्राप्त करने के लिए अनृत भाषण करने से भी संकोच नहीं किया। उन्होंने अपने सम्बन्धियों और मित्रों की भूलों को छिपाने के लिए अनीतियुक्त व्यवहार चलाया है। कहीं-कहीं तो अपनी पार्टी को पुष्ट करने के लिए कानून और विधान तक को बदलने की चेष्टा की है।

"युवकों में सत्य और चरित्र में निष्ठा का जो लोप इस कांग्रेस के

राज्य में हुआ है, वह तो अंग्रेजों के काल में भी दिखाई नहीं देता था। इसका प्रमाण विद्यार्थियों का स्थान-स्थान पर हड़ताल करना है। इस नियन्त्रण में शिथिलता का कारण शिक्षा-विभाग का अकर्मण्य होना है।

"क्या-क्या बताऊँ ? कांग्रेस की पूर्ण नीति के साथ मेरा घोर विरोध है। आज एक नया स्टंट जनता के सामने रखा जा रहा है। वह है प्रथम पंचवर्षीय योजना। योजना की व्याख्या को छोड़ भी दिया जाये, तो भी इसके लिए धन की उपलब्धि अत्यन्त आपत्तिजनक है। कर्ज़ा लेकर किसी भी योजना को चलाना तो जाति की भावी सन्तानों को शृङ्खलाओं में बाँध देना है। अभी तो प्रथम योजना ही है। न जाने कितनी और पंचवर्षीय योजनाएँ चलेंगी और यदि इसी प्रकार अमेरिका और विश्व बैंक से कर्ज़ा ले-लेकर इन योजनाओं को चलाया गया तो निस्सन्देह आने वाले सैकड़ों वर्षों तक भारत की जनता कर्ज़ा चुकाती रहेगी अथवा दूसरे देशों की पराधीनता में फँस जायेगी।

"मैं चाहता हूँ कि देश में एक ऐसा दल बन सके, जो गांधीजी के मिथ्या अहिंसावाद, पण्डितजी के भ्रममूलक अन्तर्राष्ट्रीयवाद और मौलाना साहब के मिथ्या निरपेक्षवाद को निर्मूल कर सके।"

"तो क्या यह डॉक्टर साहब का दल, जो राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के कन्धों पर बनाया जा रहा है, ऐसा कर सकेगा ?"

"यह मैं कैसे कह सकता हूँ ? मैं तो इतना जानता हूँ कि हिन्दू महासभा व्यर्थ का बल हिन्दू-मुसलमान शब्दों पर देती हुई वास्तविक भारतीयता को गौण बना रही है।

"हिन्दुत्व तथा भारतीयता पर्यायवाचक शब्द हैं। दोनों में मज़हब का झगड़ा नहीं, पर दोनों में श्रेष्ठ व्यवहार और आचरण को प्रथम स्थान प्राप्त है।

"कांग्रेस की आज प्रवृत्ति है भौतिक विकास चाहे वह मानवता के मूल्य पर हो। मैं यह नहीं चाहता। इसी कारण कांग्रेस से बाहर चला

आया हूँ।"

हिन्दू महा सभा वालों को एक नवीन बात समझ आई। वे समझे कि माथुर हिन्दू महा सभा के फ़ार्म पर हस्ताक्षर मात्र को शुद्धि-पत्र समझता है। इस पर एक ने मुस्कराते हुए पूछ ही लिया, "माथुर साहब! क्या आपका यह अभिप्राय है कि कोई मुसलमान अथवा ईसाई हिन्दू महा सभा के फार्म पर हस्ताक्षर कर दे तो उसको हिन्दू-समाज में मान लेना चाहिये?"

"हाँ, मेरा यही अभिप्राय है।"

"तो शुद्धि की आवश्यकता नहीं?"

"यही शुद्धि मान लेनी चाहिये।"

"हस्ताक्षर कर देने के पश्चात् यदि वह आचरण ठीक न रखे तो क्या होगा?"

"वही कुछ होगा जो एक हवन-कुण्ड के सामने बैठ, वेद-मन्त्रों से शुद्धि-संस्कार कराने पर, पुनः किसी प्रकार के अनाचार करने वाले के साथ होगा।"

युक्ति तो माथुर की अति प्रबल थी, परन्तु सदियों के संस्कार दो घड़ी की बात से समाप्त नहीं हो सके। इस कारण हिन्दू महा सभा के लोग सिर हिलाते हुए चल दिये।

माथुर इस प्रकार के विचार-मन्थन में लगा हुआ था और वह गम्भीरतापूर्वक आने वाले निर्वाचनों में खड़े होने अथवा न खड़े होने के विषय में विचार कर रहा था। सन् १९५१ में मई का मास था। धीरे-धीरे निर्वाचनों के लिए वातावरण बन रहा था और माथुर इस विषय पर अधिक और अधिक समय देने लगा था।

इस पर भी वह रामलाल की दुकान का उत्तरदायित्व अपने सिर पर लिये हुए था। वह नित्य, कुछ मिनटों के लिए ही क्यों न हो, रामलाल की दुकान पर जाता था। वहाँ का प्रबन्ध देखता था और रामलाल के बच्चों तथा सुन्दरी से मिल, उनकी आवश्यकताओं को पूछ आता था।

एक दिन वह इसी प्रयोजन से रामलाल के घर गया और शोभा तथा मानिक से मिलकर पूछने लगा, "सुनाओ शोभा! कुछ चाहिये।"

"वैसे तो कुछ नहीं। पर हमें कोई सिनेमा देखे कई मास हो चुके हैं। पिताजी हर सप्ताह दिखाया करते थे।"

"ओह! यह तो मैं भूल ही गया था।" माथुर ने घड़ी में समय देखा और पूछा, "क्या अभी चलोगे?"

"हाँ।" मानिक ने प्रसन्नता में कूदते हुए कहा।

"कपड़े पहिन नीचे दुकान पर आ जाओ। मैं वहाँ हूँ।"

माथुर दुकान पर आया तो एक पठान युवक अपनी वास्केट के लिए कपड़ा खरीद रहा था। कपड़े का दाम देकर उसने कहा, "मुझको ऐसी वास्केट सिलवा दो।" उसने अपनी पहिनी हुई वास्केट दिखा दी।

इस पर गोकुल ने कह दिया, "खान! यहाँ नहीं सिलेगी।"

"क्यों?"

"हम यह नहीं सीते।"

"क्यों, क्या तुम्हारा दर्जी इतनी सीधी चीज़ नहीं बना सकता?"

"बना तो सकता है; पर खान यहाँ इसकी सिलाई तुम दोगे क्या?"

"क्या सिलाई लेते हो?"

"हमने कभी सी नहीं।"

"तो अब के सी दो।"

"सिलाई पच्चीस रुपये लगेगी।"

"पच्चीस?" पठान ने विस्मय में आँखें फाड़कर देखते हुए कहा।

माथुर यह वार्तालाप सुन रहा था। इस समय उसने बात में दखल देते हुए कहा, "खान! तुम नई सड़क पर चले जाओ। वहाँ पर कोई दर्जी पाँच रुपये में सी देगा।"

"पर मैं यहाँ सिलवाना चाहता हूँ।"

"जबरदस्ती है क्या?"

"तो कह दो कि तुमको सीना नहीं आता।"

"सी तो सकता हूँ।" कटर ने आगे आते हुए कहा, "मगर सिलाई पच्चीस से कम नहीं होगी।"

"तो सियो।" पठान ने कपड़ा कटर के काउण्टर पर फेंकते हुए कहा।

गोकुल ने कहा, "सिलाई पेशगी जमा करा दो।"

पठान ने माथे पर त्योरी चढ़ाकर कहा, "यह दुकान है या ठगी।"

सब मुस्कराते हुए पठान की ओर देखते रहे। पठान ने जेब में से पच्चीस रुपये निकाल कर काउण्टर पर रखकर कहा, "रसीद बना दो।"

गोकुल ने रसीद बनाई और कटर ने नाप ले लिया। साथ ही उसने पहिनी कुर्ती का डिज़ाईन एक काग़ज़ पर पैंसिल से बना लिया।

पठान नाप देकर और सबको सलाम कर दुकान से चला गया। जाते हुए माथुर के शब्द उसके कान में पड़े, "कोई पाकिस्तानी जासूस मालूम होता है।"

: १० :

यह पठान रामलाल था। उसने पठान का भेस बनाकर और अपने दाहिने गाल पर मसाले से एक मोटा-सा काला तिल बना, रूप बदला हुआ था। नोकदार पारसी फैशन की दाढ़ी, शरैई मूँछें, गाल पर तिल, सिर पर लम्बे पटे, लुंगी, कुर्ता, वास्केट और सलवार तथा पाँव में मोटी पेशावरी चप्पल पहिन, वह अपनी ही दुकान में अपने बदले भेस की परीक्षा करने आया था।

मुकुट विहारी माथुर को चार्ज देकर, वह कलकत्ता चला गया था। वहाँ धकुरिया के पास पठानों की एक बस्ती थी। उसने उस बस्ती वालों से मित्रता बनाई और उनके बोलने की शैली को जानने और अभ्यास करने का यत्न करने लगा। इस समय में उसने दाढ़ी, मूँछें और पटे बढ़ाने आरम्भ कर दिये थे। दो मास में अपने रूप में पर्याप्त परिवर्तन कर और अपनी योजना को और आगे चलाने के लिए दिल्ली चला

आया। बदले भेस की परीक्षा के लिए उसने अपनी दुकान में जाकर वास्केट बनवाने का नाटक किया। यह जान कि उसको कोई नहीं पहिचान सका, यहाँ तक कि माथुर जैसा पढ़ा-लिखा विद्वान् भी उसको पाकिस्तानी जासूस समझता है, वह बहुत प्रसन्न हुआ। जब वह दुकान से बाहर निकला तो मकान पर से शोभा और मानिक को देख, वह वहाँ से भागा। उसको अपने मन की दृढ़ता पर सन्देह था। वह अपने बच्चों को गले लगाने के लिये लालायित हो उठा था।

अगले दिन वह पाकिस्तान हाई कमिश्नर के दफ्तर में जा पहुँचा। वहाँ पहुँच उसने पूछगीछ करने के कमरे में जाकर, वहाँ बैठे क्लर्क से अपनी समस्या कह दी। उसने कहा, "मेरा बाप बम्बई, पूना, सितारा, शोलापुर इत्यादि नगरों में रुपया कर्ज देने का व्यापार करता था। मैं बचपन से ही उसके साथ रहता था। उसके फौत होने के बाद मैं इस काम को करता रहा। पाकिस्तान बनने के वक्त मेरा बहुत सा रुपया यहाँ के लोगों के पास लगा हुआ था। इसलिए मैं उस वक्त पाकिस्तान नहीं जा सका। तब से लेकर अब तक रुपया इकट्ठा करता रहा हूँ। अब मैंने अपना सारा रुपया इकट्ठा कर लिया है और पाकिस्तान में चला जाना चाहता हूँ। मुझको परवाना राहदारी चाहिये।"

"बहुत मुश्किल है, खान!"

"तो मैं काफिर के मुल्क में मरूँगा?"

"नहीं, मरने के लिए तुम पाकिस्तान जा सकते हो। पर अभी तो तुम मरने वाले मालूम नहीं होते।"

"देखो दोस्त! मेरे बाप ने और मैंने हिन्दुस्तान में बहुत रुपया कमाया है। वह मैं अपने मुल्क में ले जाकर, वहाँ मकान बनाना चाहता हूँ। अब वहाँ शादी करूँगा और अपनी जिन्दगी आराम से बसर करूँगा। लेकिन पहिले जाने के लिए तो राहदारी चाहिये।"

क्लर्क विचार करने लगा था कि वह इसके विषय में क्या कर सकता है। कुछ विचार कर उसने पूछा, "कितना रुपया कमाकर ले चले हो?"

"तीस हज़ार से ऊपर है। वह नोटों और सोने में है।"

इतनी रकम की बात सुन क्लर्क के मुख में पानी आ गया। इस कारण उसने कहा, "कानून से तो तुमको राहदारी उस वक्त तक नहीं मिल सकती, जब तक यहाँ की सरकार से पहिले राहदारी न बनवाओ। मगर एक बात है। अगर तुम कुछ खर्च कर सको तो मैं एक तरकीब बता सकता हूँ।"

"क्या तरकीब है?"

"इस तरह नहीं। पहिले बताओ। क्या एक सौ रुपये तक खर्च कर सकोगे?"

"कर दूँगा। पर पहिले बताओ कि कैसे करोगे?"

"तुमको कुछ नहीं करना। एक किस्म की फार्म है। उसको 'ऐल' फार्म कहते हैं। वह बाहर बैठे मुन्शी से लेकर भरवा लाओ और बाकी मैं कर दूँगा।"

रामलाल कोठी के बाहर चला गया। बाहर एक पेड़ के नीचे बैठे अर्ज़ीनवीस से बोला, "भाई! एक फार्म 'ऐल' भर दो।"

"एक रुपया फार्म का दाम और दो रुपये भरवाई निकालो।"

"बहुत ज़्यादा है।"

"यहाँ भाओ-ताओ नहीं होता।"

विवश रामलाल ने तीन रुपये मुन्शी की डैस्क पर रख दिये और कहा, "दोस्त! लिखो।"

अर्ज़ीनवीस ने एक फार्म निकाला और उसकी खानापुरी करने के लिए पूछने लगा। पूछते हुए वह बोलता हुआ लिखने लगा। उसने लिखा, "मैं, रहीम खाँ वल्द याकूब खाँ, साकन ज़का खेल का हूँ। हिन्दुस्तान में मैं और मेरा बाप रुपया कर्ज देने का काम करता था। मुल्क की तकसीम के वक्त रुपया वसूल न कर सकने की वजह से पाकिस्तान में नहीं जा सका। अब मैं अपने गाँव ज़का खेल में जाना चाहता हूँ और पाकिस्तान का बाशिन्दा बनकर रहना चाहता हूँ। पाकिस्तान सरकार से

दरख्वास्त है कि मुझको परवाना राहदारी अनायत फरमाया जाये ।

"साथ ही रुपया साथ ले जाने की इजाज़त मिले ।"

इस प्रकार अर्ज़ी लिख देने पर कहा, "किसी से गवाही कराओ ।"

"मेरा तो यहाँ कोई वाकिफ नहीं है ।"

"तो गवाही के लिए दस रुपये और देने पड़ेंगे ।"

"बहुत मुसीबत है ।"

"खान !" अर्ज़ीनवीस ने मुस्कराते हुए कहा, "यहाँ से इतना रुपया कमाकर ले जा रहे हो । दस-बीस से क्या फरक पड़ जाता है ?"

"अच्छा बाबा लो ।" रामलाल ने अपनी कुर्ता की जेब में से एक मैला-सा बटुआ और उसमें से एक दस रुपये का नोट निकालकर देते हुए कहा, "इस तरह रुपये बाँटने लगा तो घर पहुँचने तक कुछ भी नहीं रहेगा ।"

अर्ज़ीनवीस ने खुद ही गवाही कर दी और दस का नोट जेब में रख लिया ।

रामलाल अर्ज़ी पर दस्तखत कर, उसको लेकर क्लर्क के पास जा पहुँचा । क्लर्क ने अर्ज़ी देखी और सौ रुपये का नोट लेने के लिए हाथ बढ़ा दिया । रामलाल ने कहा, "पहिले काम, पीछे इनाम ।"

"नहीं खान ! पहिले सूद पीछे मूल ।"

रामलाल कुछ देर तक बाबू का मुख देखता रहा । पीछे उसने उसी जेब और बटुए में से दस-दस रुपये के नोट निकाले और बाबू को देकर कहा, "देखो, ईमान की कसम खाकर कहो, परवाना बना दोगे ?"

"हाँ, कल आना ।" बाबू ने नोट जेब में रख लिये ।

अगले दिन रामलाल गया तो उसको पाकिस्तानी मुहर लगा परवाना राहदारी मिल गया और साथ ही रुपये का चालान मिल गया ।

उसी सायंकाल वह फ्रण्टियर मेल में सवार हो अमृतसर और फिर वहाँ से वागा जा पहुँचा । वहाँ उसकी जाँच-पड़ताल हुई । उसका रुपया

भी देखा गया और उसको चालान के अनुकूल पाकर पाकिस्तान में चले जाने दिया गया।

लाहौर पहुँच वह उसमानी होटल में जा ठहरा। बैंक में पहुँच उसने हिन्दुस्तानी नोटों को पाकिस्तानी नोटों में तब्दील कराया और उसे बैंक में जमा करा दिया।

अब लाहौर की गली-गली और बाज़ार-बाज़ार में रानी को ढूँढने लगा। उसने औरतों के निकास महकमा के एक क्लर्क को भारी रिश्वत देकर दोस्त बना लिया और उससे पिछले चार महीने में सब निकाली गई फ़ातिमा नाम की औरतों का पता किया। हकीकत में औरतों को बेचने का काम बिलकुल खुफ़िया और बिना लिखत-पढ़त के किया जाता था। यह तो कभी भी नहीं लिखा जाता था कि कोई औरत बेची गई है अथवा किसी वेश्या के दलाल को दी गई है। केवल उन औरतों की ठीक लिखत-पढ़त होती थी, जिनको उनके अपने सम्बन्धियों के हवाले किया जाता था। दूसरी औरतों के विषय में तो प्रायः सब लिखत-पढ़त जाली होती थी।

इस कारण फ़ातिमा का पता करना अति कठिन था। उस क्लर्क ने एक सौ रुपया घूँस लेकर एक लम्बी सूची उन औरतों की लाकर दे दी, जो फ़र्वरी और मार्च के महीनों में हिन्दुस्तान से लाई गई थीं। उनमें एक सौ से ऊपर फ़ातिमा के नाम की औरतें थीं। कुछ तो अपने सम्बन्धियों के पास पहुँचा दी गई थीं और शेष की शादी कर दी गई थी। क्लर्क ने यह बता दिया कि शादी करने वालों के नाम और पता फ़र्ज़ी लिखे जाते हैं।

परिणाम यह निकला कि इस सब कोशिश का कुछ भी फल नहीं हुआ। रानी को ढूँढना एक अति कठिन काम हो गया। औरतों के निकासी के विभाग के क्लर्क ने एक बात बताई थी कि जिन औरतों को उनके सम्बन्धी नहीं ले जाते, उनको अक्सर पेशा करने के लिए दलालों के हाथ में दे दिया जाता है। इसके बाद उसने उन स्थानों पर अपनी

खोज करनी आरम्भ कर दी, जहाँ वेश्यागार थे। नगर-नगर और कस्बों में, जहाँ-जहाँ पेशा करने वाली औरतों का पता चला, वह गया और रानी को ढूँढता रहा। इस तरह डेढ़ वर्ष के लगभग व्यतीत हो गया; परन्तु कुछ भी परिणाम नहीं निकला। वह लाहौर, गुजरांवाला, सियालकोट, गुजरात, झेलम, रावलपिण्डी, मुलतान, मौंटगुमरी, हैदराबाद, कराची, पेशावर इत्यादि नगरों की मट्टी छानता हुआ पुनः लाहौर में आ गया। कभी-कभी तो वह इतना निराश हो जाता था कि रावी में डूब मरने के विषय में विचार करने लगता था। फिर बच्चों का ध्यान कर वह दुगुने उत्साह के साथ खोज में लीन हो जाता था।

एक बात उसके मन में बैठ चुकी थी कि रानी के बिना दिल्ली लौटना किसी अवस्था में ठीक नहीं। वह नहीं जानता था कि किस मुख से अपने बच्चों को कहेगा कि उनकी मां नहीं मिली।

एक दिन, इसी प्रकार मन की निराशावस्था में वह जहाँगीर के मकबरे में एक लान में लेटा हुआ, आँखें मूँदे अपनी अवस्था पर मनन कर रहा था कि उसको ऐसा अनुभव हुआ कि कोई उसके समीप आकर बैठ गया है। उसने आँखें खोलीं तो समीप एक मैले-कुचैले कपड़ों में आदमी बैठा दिखाई दिया। रामलाल को सन्देह हुआ कि कोई पाकेटमार है। इस कारण वह उठकर बैठ गया। कुछ देर तक रामलाल उस आदमी की भद्दी सूरत देखकर, मन में विचारता रहा और फिर उठकर वहाँ से टल जाने के लिए पगड़ी, जो कुल्ले पर बँधी हुई पास ही रखी थी, उठाकर सिर पर रख ली। इस पर उस साथ बैठे आदमी ने उसको सम्बोधन कर कहा, "खाँ साहब! बहुत उदास मालूम होते हो।"

"हाँ, दोस्त!" रामलाल ने कहा और उठ खड़ा हुआ। वह आदमी भी उसके साथ ही खड़ा हो पूछने लगा, "कोई ऐसी बात हो, जिसमें मैं मदद कर सकूँ, तो फ़रमाइये।"

"दिल की बातों में कोई किसी की क्या मदद कर सकता है?"

यह कह रामलाल मकबरे से बाहर को चल पड़ा। उस आदमी ने

साथ-साथ चलते हुए कहा, "यह तो आपने ठीक फ़रमाया है। मगर दिलजोही तो की ही जा सकती है। कहिये तो कुछ तफ़रीह का सामान कर दिया जाये ?"

"क्या तफ़रीह हो सकती है इस जगह ?"

"कहिये तो कोई माशूका मुहैया कर दूँ ?"

"माशूका ? क्या औरतें यहाँ पेड़ों से लगी रहती हैं, जो इस वीरान जगह पर पैदा कर दोगे ?"

"हुजूर !" उस आदमी ने मुस्कराते हुए कहा, "खुदा हिन्दुस्तान की सरकार का भला करे। उसने इतनी औरतें यहाँ भेजी हैं कि पेड़ों के साथ नहीं तो सड़कों पर ज़रूर रुलती फिरती हैं।"

रामलाल ने इसको मतलब की बात समझी। खड़े हो ध्यान से उस आदमी की तरफ़ देख उसने पूछा, "पागल हो गये हो क्या ? मुझको लाहौर में रहते एक साल हो गया है और मुझको एक भी आवारा औरत दिखाई नहीं दी।"

वह आदमी खिलखिलाकर हँस पड़ा। हँसकर उसने कहा, "आपको ऐनक की ज़रूरत मालूम होती है। हकीकत में हर शरीफ़ आदमी को इन चीज़ों को देखने के लिए ऐनक की जरूरत रहती है। आपके लिए वह ऐनक मैं बन सकता हूँ।"

रामलाल अभी भी लॉन में खड़ा हुआ उस आदमी की ओर ध्यान-पूर्वक देख रहा था। प्रश्न-भरी दृष्टि से अपनी ओर देखते हुए रामलाल को उस आदमी ने कहा, "आपको एतबार नहीं आ रहा न ? आज़मा कर देखिये।"

"आज़माने को दिल तो चाहता है, मगर जानते हो कि माल ठीक न हुआ तो यह उदासी और भी बढ़ जायेगी।"

"खान ! मेरे साथ चलो। मैं तुमको हुस्न के बाज़ार की सैर कराऊँगा। जब कोई चीज़ पसन्द आ जाये तो बताना, मैं इन्तज़ाम कर दूँगा।"

"और तुमको तुम्हारी मेहनत की उजरत क्या देनी होगी?"

"शाम को दो घण्टे की सैर के लिए पाँच रुपये और चाय-पानी।"

रामलाल मान गया। दोनों तांगे में सवार हो शहर की ओर चल पड़े। टांगे में बैठे हुए उन्होंने कोई बात नहीं की। हीरा मण्डी के चौक पर तांगा छोड़, दोनों टिब्बी बाजार की ओर चल पड़े। सूर्यास्त हो चुका था और बाजार लग गया था। नीचे दुकानों में और बैठकों की खिड़कियों में वेश्याएँ सज-धज कर बैठी हुई थीं और बाजार में चलने-फिरने वालों से आँखें लड़ा रही थीं। रामलाल एक-एक दुकान और बैठक के सामने खड़ा हो अपनी खोज की वस्तु को ढूँढता रहा। एक सिरे से दूसरे सिरे तक बाजार छान डाला। अच्छी-बुरी सब प्रकार की औरतें थीं; परन्तु वह तो किसी और को ढूँढ रहा था। जब उसको अपनी वस्तु वहाँ नहीं मिली तो उसने अपने साथी से कहा, "यहाँ तो कुछ पसन्द की चीज नहीं है।"

"और भी जगह हैं। मगर वहाँ तो एक शाम को एक ही जगह पर जाया जा सकता है। कभी-कभी तो वहाँ का सब माल देखने के लिए कई-कई दिन लग जाते हैं।"

"क्यों?"

"वे होटलनुमा रण्डीखाने हैं। वहाँ पर एक-एक घर में कई-कई औरतें रहती हैं। शौकीन लोग वहाँ जाते हैं, खाते-पीते हैं। कमरे का किराया देते हैं और पसन्द की औरत कुछ अर्सा के लिए या रात-भर के लिए मुनासिब फीस पर मिल जाती है।"

रामलाल को रोमांच हो आया। इस पर भी वह वहाँ जाने के लिए तैयार हो गया। उसने कहा, "मेरे पसन्द की चीज नहीं होगी तो लौट आऊँगा।"

"हाँ। हाँ। यह तो है ही। वहाँ बैठ कुछ खाने-पीने का बन्दोबस्त करना होगा और तब तक देख-भाल हो जाया करेगी।"

टिब्बी बाजार से भाटी दरवाजा को जाते हुए रामलाल का साथी

उसको एक मकान में ले गया। मकान के बाहर बोर्ड लगा था 'होटल नीलम।' दोनों भीतर जाकर एक कमरे में बैठ गये। होटल का बैरा उनके पास आकर रामलाल के साथी को सलाम कर खड़ा हो गया।

"भाई ! क्या तैयार है?"

"मुर्ग मुग़लिया है।"

"तो दो प्लेट ले आओ और साथ नान। और देखो, कोई बहुत बढ़िया माल चाहिये।"

बैरे ने मुस्कराकर कहा, "समझता हूँ सरकार !"

जब वे खाना खा रहे थे तो एक औरत, जो पाउडर और सुर्खी से लथपथ थी, लाकर उनके सामने बैठा दी गई। रामलाल के साथी ने रामलाल की ओर देखा तो रामलाल ने सिर हिला दिया। वह औरत नाक चढ़ा और अँगड़ाई ले चल दी। रामलाल के साथी ने बैरा से कहा, "नीलम को लाओ न।"

"वह आज खाली नहीं है।"

"कोई और?"

"बस यही है। बहुत देरी से आये हैं आप।"

"अच्छी बात है। अब तुम जा सकते हो।"

जब बैरा चला गया तो रामलाल के साथी ने कहा, "बाज़ार में घूमते हुए देर हो गई है। अब दस बज रहे हैं और माल की छटकन ही रह गई है।"

"तो कल सही। पर तुम कहाँ मिलोगे?"

"जहाँ आप फ़रमायें। आप कहाँ रहते हैं?"

"वहाँ नहीं दोस्त ! मैं तुमको वक्त और जगह बता दूँगा। वहाँ पर मिल जाना।"

खाना खा, जब रामलाल ने होटल का बिल दिया तो पाँच का एक नोट साथी को भी दे दिया। "तुम्हारा नाम क्या है?" रामलाल ने मेज़ से उठते हुए पूछा,

"रहमान खाँ।"

"ओह।" रामलाल ने विस्मय प्रकट कर कहा, "यह मेरे स्वसुर का नाम है।"

दोनों हँसते हुए बाहर निकल गये।

: ११ :

कई दिन तक रामलाल रहमान खाँ के साथ घूमता रहा; परन्तु जिसको वह ढूँढ रहा था, वह नहीं मिली। जब बीस-बाईस दिन इस भाग-दौड़ में गुज़र गये, तो रहमान खाँ ने कहा, "खान! तुम किसी की तलाश में हो। तुमको तफ़रीह नहीं चाहिए। जिसकी तलाश में तुम हो, वह मिल नहीं रही। शायद लाहौर में है नहीं।"

"देखो रहमान! तुमने जो माँगा, वह मैंने दिया। तुमने चाय-पानी की बात कही थी, मैं तुमको मुर्ग और मछली खिलाता रहा हूँ। इसलिए तुमको गिला करने में कोई वजह नहीं।"

"नहीं खान! गिला की बात नहीं कह रहा। मैं तो कह रहा हूँ कि मुझको तो हक से ज़्यादा मिल रहा है। इसलिए मुझको तुमसे हमदर्दी है और तुमसे और ज़्यादा लेते हुए मेरा दिल काँपता है।"

"कुछ फ़िक्र न करो। बताओ कोई और जगह है, जहाँ इस किस्म का माल मिलता है?"

"एक-दो घर और हैं। मगर वहाँ जाने से पहिले इन्तज़ाम करना पड़ता है। आम आदमियों को वहाँ जाने की इजाज़त नहीं।"

"तो इन्तज़ाम करो।"

अगले दिन रहमान ने अपनी नाकामयाबी बताई। उसने कहा, "मैंने बहुत कोशिश की है। मगर वहाँ का ठेकेदार कहता है कि जब तक ग्राहक की कोई वाकफ़ियत न हो, वे उसको भीतर नहीं घुसने देंगे।"

"पर वहाँ कोई अच्छी चीज़ है भी?"

"यह तो नहीं कह सकता। हाँ, वहाँ जाने वाले अच्छे ख़ानदानी

आदमी ही होते हैं।"

"तो भाई! कोई वाकफीयत पैदा करो। आखिर तुम किस मर्ज का इलाज हो।"

"अच्छा आप एक हफ्ते की मोहलत दीजिये। मैं कोशिश करूँगा।"

यद्यपि रामलाल बहुत ही निराश हो रहा था, इस पर भी उसने यह फ़ैसला किया हुआ था कि चाहे सारे पाकिस्तान के रंडीखानों की ही ज़ियारत क्यों न करनी पड़े, वह करेगा। यदि रानी न मिली तो वह वापिस हिन्दुस्तान अपना मुँह नहीं दिखायेगा।

हर रोज़ शाम के वक्त रामलाल रहमान के साथ मिला करता था। एक दिन उसने कहा,"खान! मैं कुछ-कुछ कामयाब हुआ हूँ। रावी रोड पर एक दर्सगाह है। वहाँ के एक चाबुक सवार, ग़नी से मुलाकात हो गई है। उसने बताया है कि वहाँ एक फ़ातिमा नाम की औरत है और उसकी बहुत माँग है। ग़नी को मैंने आपके मुताल्लिक कहा है और वह कहता था कि वहाँ के ठेकेदार से पूछकर बतायेगा।

फ़ातिमा का नाम सुन, रामलाल के सिर में चक्कर आने लगा। वह कठिनाई से अपने चित को ठीक कर बोला, "इन्तज़ाम करो। जो-कुछ खर्चा होगा दूँगा।"

उस रात और अगले दिन रामलाल का दिल धकधक करता रहा। रात को उसको नींद नहीं आई। दिन के समय वह खाना नहीं खा सका। खाते समय उसको उबकाई आने लगती थीं। उसने खाना छोड़ दिया। जब होटल में बैठने को भी तबीयत नहीं की, तो वह उठ कमरे को ताला लगा, बाज़ार घूमने को निकल गया। उसने समझा अजायब-घर देखने से तबीयत बहल जायेगी। वह एक घण्टा-भर अजायबघर में रहा। वहाँ से जी उकताया तो वह चिड़ियाघर जा पहुँचा। चिड़ियाघर में भी चित्त नहीं लगा तो वह वहाँ से लौट पड़ा। जब वह चिड़ियाघर के फाटक से निकल रहा था तो उसने देखा कि टैक्सियों में से औरतें हँसती-खेलती हुई उतर, एक अधेड़ आयु के आदमी के साथ चिड़ियाघर देखने

आ रही हैं। उसको उनमें से एक औरत रानी-सी दिखाई दी। वह रानी से कुछ मोटी थी और उसका रंग कुछ फीका था। रानी के मुख का रंग तो कन्धारी अनार की भाँति होता था। इन दो बातों के अति-रिक्त शेष रूप-रेखा रानी से बिलकुल मिलती थी।

रामलाल ने उसको देखा तो चिड़ियाघर के फाटक में ही खड़ा रह गया। वह अभी मन मे विचार ही कर रहा था कि वह रानी है अथवा नहीं कि वे औरतें चिड़ियाघर के फाटक पर आ पहुँचीं। रामलाल एक ओर हटकर खड़ा हो गया। जब रानी से मिलती-जुलती औरत उसके पास से गुजरी, तो उसने उसका ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने के लिए झुककर सलाम कर दी। रानी ने समझा कि वह खैरात माँग रहा है। इससे उसने अपनी पर्स में से कुछ निकाला और उसको देने के लिए हाथ बढ़ाया। इस पर रामलाल ने कह दिया, "हुजूर! दीदार का भिखारी हूँ, पैसों का नहीं।"

पश्चात् वह आगे निकल गई। जब वह दूर चली गई तो रामलाल टैक्सी वालों के पास जाकर पूछने लगा, "ये लोग कहाँ से आये हैं?"

टैक्सी ड्राइवर ने रामलाल को सिर से पाँव तक देखकर कहा, "कुछ जेब में है?"

"खुदा का फज़ल है।"

"तो रावी रोड पर मोहसिन ठेकेदार का मकान पूछ लेना। ये तवायफ़ हैं।"

रामलाल के पूर्ण शरीर का खून मुख की ओर चढ़ आया और उसका मुख तांबे की भाँति लाल हो गया। टैक्सी ड्राइवर ने देखा और पूछा, "खान! क्या बात है?"

"कुछ नहीं।" यह कहकर रामलाल वहाँ से चला आया। वह समझ रहा था कि उसकी मंज़िल दिखाई देने लगी है। उसका मन कह रहा था कि वह रानी ही थी। वह उसको पहिचान नहीं सकी। उसको अपने भेस की खूबी का ज्ञान था। गोकुल और माथुर भी उसको पहिचान

नहीं सके थे।

सायंकाल वह रहमान से मिला, तो रहमान ने कह दिया, "ग़नी की मार्फत इन्तज़ाम हो गया है। उसको पाँच रुपये अलहदा देने पड़ेंगे।"

"पर मैं तो आज रावी रोड पर मोहसिन ठेकेदार के यहाँ जाना चाहता हूँ। मुझको वहाँ किसी अच्छी चीज़ की खबर मिली है।"

रहमान हँस पड़ा और कहने लगा, "वहीं चलने को तो मैं कह रहा हूँ। वहाँ पर एक फातिमा नाम की रण्डी है। कहते हैं कि बहुत कमाल की खूबसूरत है।"

रामलाल भौचक्का हो खड़ा रह गया। वह मन में विचार कर रहा था कि यह कैसा संयोग है। उसको विश्वास हो रहा था कि वह उसकी रानी ही है।

आज उसने अपनी जेब नोटों से ठसाठस भर ली और एक बड़ा-सा चाकू अपनी वास्केट के अन्दर की जेब में छिपाकर चल पड़ा। वह हर तरीके से रानी को वहाँ से छुड़ा लाने के लिए तैयार होकर चला था।

जब वह मोहसिन मियाँ के घर पर पहुँचा, तो रहमान ने ग़नी से परिचय करा दिया और अपने पाँच रुपये लेकर चल दिया। ग़नी उसको मोहसिन के पास ले गया। बातचीत हुई तो मोहसिन ने कहा, "ओह खान! तुम वही हो न, जो चिड़ियाघर के फाटक पर दीदार की भीख माँग रहे थे?"

"हाँ; और उसी के लिए आया हूँ, जो मुझको बख्शीश देना चाहती थी।"

"उसके कमरे का किराया बहुत ज़्यादा है।"

"क्या है?"

"पाँच रुपये घण्टा।"

"बस? और सारी रात का क्या लोगे?"

"पचास रुपया।"

"ठीक है। रुपया तुमको देना होगा क्या?"

"हाँ। और खाने-पीने के लिये?"

"जो बढ़िया-से-बढ़िया चीज़ यहाँ पर मिल सकती है।"

"पीने को?"

"जो फ़ातिमा पीती है?"

"वह तो शैम्पेन पीती है। एक बोतल चालीस रुपये की मिल सकेगी।"

"दो बोतल वह भी ले आओ।"

"तो कुछ पेशगी मिलना चाहिये।"

रामलाल ने पचास रुपया एक और सौ रुपया एक देकर कहा, "महबूबा को मैं खुद खुश कर लूँगा।"

रामलाल ने पाँच रुपये ग़नी को देकर विदा कर दिया। इस पर मोहसिन रामलाल को मुन्तज़िमा के हवाले कर स्वयं खाने का प्रबन्ध करने चला गया।

: १२ :

जब-जब रामलाल उसको पुरानी बातें स्मरण कराने का यत्न करता था, रानी खो-खो जाती थी। रामलाल समझ गया कि वह है तो रानी ही, परन्तु किसी कारण से उसके मस्तिष्क पर, किसी प्रकार के भय से अथवा किसी और कारण से बहुत भारी बोझा है और वह अपने पिछले जीवन को भूल सी गई है।

जब वह अचेत हो गई तो रामलाल ने उसको गोदी में ले लिया और रुमाल, पानी में भिगोकर, उसकी आँखों और माथे पर फेरने लगा। धीरे-धीरे रानी को चेतनता हुई। वह अपने में बहुत दुर्बलता अनुभव करती थी। उसके सिर में अभी भी तीव्र वेदना हो रही थी।

उसने आँखें खोलीं और अपने को उसी पठान की गोद में देख, फिर आँखें मूँद लीं। इस पर रामलाल ने कहा, "रानी! क्या हो गया है तुमको? तुम पहिचानती नहीं मुझको?"

उसने पठान की बाँह का आश्रय लेकर उठने का यत्न किया तो रामलाल ने उसको लेटे रहने को कहा। रानी ने लेटे-लेटे ही कहा, "मुझको कुछ धुँधला-सा याद पड़ रहा है। मैं रहमान खाँ की लड़की हूँ और मेरा विवाह एक हिन्दू से हुआ था; परन्तु तुम वही हो? उसका रूप-रंग कुछ और था।"

"रानी! यहाँ कोई गुसलखाना है क्या?"

"है।"

"तो सिर को ठण्डे पानी से धो डालो। शराब का नशा उतर जायेगा तो तुम मुझको पहिचान सकोगी। यह दाढ़ी और पटे सब अपने को छिपाने के लिए रखे हुए हैं। मैं रामलाल ही हूँ।"

रानी के सिर में फिर चक्कर आने लगे थे। वह रामलाल का आश्रय लेकर उठी। गुसलखाने में जाकर उसने अपने सिर को नल के नीचे दे दिया और ऊपर से पानी का नल खोल दिया।

धीरे-धीरे उसको होश आने लगा। वह सिर तथा मुख पोंछ फिर बड़े कमरे में आ गई और बोली, "न जाने मुझको क्या हो गया है। जब भी मैं अपने पिछले जीवन के विषय में स्मरण करने लगती हूँ, मेरे मस्तिष्क पर बादल-से छा जाते हैं और मुझको उनके पार कुछ भी दिखाई नहीं देता।

"आपके कहने पर अब मैं कुछ-कुछ समझने लगी हूँ कि मैं इस घर से पहिले भी कहीं थी और मेरा बाप था, मेरा भाई था और एक खाविन्द भी था। आप वे हैं?"

"हाँ, हाँ! तुम्हारा एक ख़ाविन्द था। तुम्हारे दो बच्चे हैं। एक शोभा और एक मानिक। कुछ आया याद?"

इस समय रानी ने फिर अपने सिर को हाथों में पकड़ लिया। इस समय उसकी आँखों से आँसू बहने लगे। इन आँसुओं ने उसके मस्तिष्क के बादलों को छिन्न-भिन्न करना आरम्भ कर दिया था। उसने तरल नेत्रों से मुख उठाकर पूछा, "वे कहाँ हैं?"

"दिल्ली में। कनॉट प्लेस के मकान में भाभी की देख-रेख में हैं।"

अब तो रानी की आँखों से आँसू वेग से बहने लगे थे और एका-एक वह रामलाल की गोदी में सिर देकर रोने लगी।

रामलाल उसके सिर पर प्यार दे-देकर उसको सांत्वना देने लगा। रानी ने अब फिर सिर उठाया और पूछा, "उनको क्यों नहीं लाये?"

"यहाँ उनकी रक्षा करनी बहुत कठिन थी।"

रानी ने कहा, "कुछ-कुछ तो समझ आने लगी है। एक गनी था। उसने मुझको चाबुक से पीट-पीटकर पागल बना दिया है। पर यह सब कैसे हुआ, मैं समझ नहीं सकी।"

"सब समझ आ जायेगा। कुछ दिन तक मेरे साथ चलकर आराम करोगी, तो तुम जान जाओगी कि मैं रामलाल हूँ। तुमको भारत सरकार ने पकड़कर पाकिस्तान में भेज दिया था और यहाँ तुमको रंडियों के दलाल मोहसिन के हाथ बेच दिया गया था।

"इस समय प्रश्न तो यह है कि यहाँ से कैसे चला जाये? मैं यहाँ अकेला हूँ। मैं भेस बदल कर आया हुआ हूँ और अपना और तुम्हारा भेद यहाँ खुलने नहीं देना चाहता। भेद खुल जाने से आजन्म की कैद के सिवाय और कुछ नहीं होगा।"

"तो आप क्या करना चाहते हैं?"

"मैं तुमसे यहाँ फिर शादी करूँगा। इसका प्रस्ताव तुम्हारी अम्मी से और मोहसिन मियाँ से अभी करूँगा। उनको धन देकर खुश करना चाहता हूँ। तुम ऐतराज़ नहीं करना। शेष देखती जाओ।"

रानी इस योजना से भयभीत प्रतीत होती थी। रामलाल ने उसके मन में उत्साह भरने के लिए उसको कहा, "थोड़ी-सी शराब फिर पी लो। साहस बँध जायेगा।"

रानी सचेत तो हो गई थी, परन्तु उसकी स्मरण-शक्ति अभी लौटी नहीं थी। कुछ धुँधला-सा चित्र उसके सामने, उसके पूर्व-जीवन का आ रहा था। इस पर भी उसने समझा कि इस वेश्या-जीवन से छुट्टी पाने

के लिए अवसर है। कम-से-कम वह पठान धनी आदमी है और उसका जीवन सुख से व्यतीत हो सकता है। सबसे विचित्र बात उसको अपने बच्चों की याद आ रही थी, जो उसके मन में एक गुदगुदी उत्पन्न करने लगी थी। उसने कह दिया—

"जो समझ में आये करिये।"

"ठीक है। यहाँ से तो चलना ही चाहिए। शोभा और मानिक की माँ के लिए यह स्थान ठीक नहीं है।"

"पर कौन-सा ठीक स्थान होगा?"

"यह कल शादी के पीछे विचार कर लेंगे।"

रानी चुप रही तो रामलाल ने अपना बटुआ उठाकर, उसमें सब नोट बटोरकर रख लिये। बटुआ जेब में डालकर, उसने छुरी अपनी वास्केट के अन्दर छिपा ली। पश्चात् उसने कमरे का दरवाज़ा खोलकर आवाज़ दी, "कोई है? कोई है?"

इस समय रात का एक बज रहा था और घर के लोग सोने की तैयारी कर रहे थे। आवाज़ सुन रसोईघर का एक नौकर आया और वहाँ आकर पूछने लगा, "क्या है ख़ान? क्या चाहिए?"

"घर की अम्मी जान को बुलाओ।"

"वे तो सो गई होंगी।"

"उनको जगा दो।"

"क्या हुआ है?"

"हुआ है तुम्हारा सिर। उसको कहो कि बहुत आमदन की बात कर रहा हूँ।"

"मुझको क्या मिलेगा?"

"अम्मी को लाने का एक रुपया।"

"ऊँ-हूँ। रात के एक बजे किसी को जगाकर लाना, पाँच रुपये का काम है।"

"यह डाकुओं का घर है क्या? जाओ, दो रुपये दूँगा।"

नौकर अभी भी खड़ा था। इस पर रामलाल ने त्योरी चढ़ाकर कहा, "दो कम हैं क्या ? तो एक चपत और मिलेगी।" इतना कह रामलाल ने हाथ उठाया, तो नौकर दो कदम पीछे हटकर खड़ा हो गया और पूछने लगा, "दो तो मिल जायेंगे न ?"

"हाँ।"

वह भागा हुआ कोठी की ड्योढ़ी की ओर गया और पाँच मिनट के भीतर अम्मी को बुला लाया। अम्मी आई और पठान तथा फ़ातिमा को कमरे के एक कोने में खड़ा देख पूछने लगी, "फ़ातिमा ! तुमने बुलाया है ?"

"मैंने बुलाया है।" रामलाल ने कहा, "भीतर आ जाओ। एक बहुत ज़रूरी बात करनी है।"

इस समय नौकर ने दरवाज़े पर से आवाज़ दी, "ख़ान ! मेरा इनाम।"

"ओह ! इधर आओ।" रामलाल ने रुपये-रुपये के दो नोट देकर कहा, "अब तुम भाग जाओ।"

अम्मी को बैठाकर उसके सामने रानी और रामलाल बैठ गये। बात रामलाल ने आरम्भ कर दी। उसने कहा, "देखो अम्मी ! मैं इस औरत से शादी करना चाहता हूँ।"

"मैं यह नहीं चाहती।"

"क्यों ?"

"मैंने इसको सिधाया है। इसको यहाँ का काम और तरीका सिखाया है। इसको खिला-पिलाकर इस योग्य बनाया है कि यह ग्राहकों से बात-चीत कर सके।"

"और यह डेढ़ वर्ष से कमा-कमाकर तुमको दे रही है।"

"यह मुझको दे रही है या मैं इसकी कमाई का इन्तज़ाम कर रही हूँ, बहस तलब बात है। पर मैंने इसको पाँच-सौ रुपये पर ख़रीदा था और फिर इसके सिधाने का पाँच-सौ रुपया ग़नी को दिया था। उन दिनों

इसको खिलाने-पिलाने का खर्च दो सौ रुपया महीना तीन महीने तक दिया। इसके अलावा इतना कुछ करने के बाद, कुछ पगड़ी भी तो चाहिए।"

रामलाल हँस पड़ा और पूछने लगा, "उसकी भी कीमत लगा लो। क्या पगड़ी बनती है इस दुकान को छोड़ने की?"

मुन्तज़िमा मुस्कराकर बोली, "कम-से-कम एक हज़ार रुपया।"

"मैं समझता हूँ कि मोहसिन को भी बुला लो। शायद उसका भी कुछ हिसाब बनता हो। अगर तुम्हारे इस काम में कोई और भी पत्तीदार, चूहा, बिल्ली हो तो उसको भी आ जाना चाहिये।"

मुन्तज़िमा ने दरवाजे से बाहर झाँककर आवाज़ दी, "ओ फज्जू! ओ फज्जू!!"

फज्जू आया तो उसने कहा, "मोहसिन मियाँ को बुलाना।"

मोहसिन भी आँखें मलता हुआ आ गया और प्रश्न-भरी-दृष्टि से इन तीनों की ओर देखने लगा। मुन्तज़िमा ने बताया, "यह खान फ़ातिमा से शादी करना चाहता है।"

"यह कैसे हो सकता है? खान! अपना हिसाब करो और जाओ।"

"बहुत अच्छा। बताओ हिसाब।"

मोहसिन ने जेब में से एक काग़ज़ निकालकर हिसाब बता दिया। शराब का दाम और खाने का हिसाब सुनाया। उस हिसाब में उसने बताया, "ैरे की उजरत दो रुपया, कमरे में खाना लाने की उजरत, पाँच रुपया। इस प्रकार कुल एक सौ ग्यारह रुपया बारह आना। इस सबके इलावा मेरे पाँच रुपये। सब एक सौ सोलह बारह आने।"

रामलाल ने जेब में से रुपये निकालकर मोहसिन के सामने फेंककर कहा, "एक सौ पहिले दे चुका हूँ।"

"शुक्रिया।" मोहसिन ने रुपये उठाये और उठकर चलने लगा। रामलाल ने उसको कहा, "ठहरो।"

मोहसिन खड़ा हो गया। रामलाल खड़ा हो, दरवाज़े के पास जाकर, जेब में से चाकू निकाल खड़ा हो गया और बोला, "फ़ातिमा! चलो। देखूँ, तुमको कौन रोकता है?"

रानी उठ खड़ी हुई और रामलाल के समीप आकर खड़ी हो गई। मोहसिन आगे बढ़ने लगा तो रामलाल ने कहा, "खबरदार, एक भी कदम उठाया तो।"

इस समय मुन्तज़िमा ने मोहसिन को कहा, "पर वह शादी करता है तो करने दो। तुम क्यों मना करते हो?"

"क्यों मना करते हो नहीं, तुम कैसे मना कर सकते हो?" रामलाल ने कहा, "यह बालिग़ है। अपनी मर्ज़ी से जहाँ जाना चाहे, जा सकती है।"

"पर खान!" मुन्तज़िमा ने कहा, "इस चाकू को नीचे करो। इसके सामने तो बात हो नहीं सकती। देखो मोहसिन! हमने इस लड़की पर कुछ खर्च किया है और खान वह सब-कुछ देने को तैयार है।"

"क्या देने को तैयार है?" मोहसिन के माथे से त्योरी उतर गई।

"मैंने हिसाब बताया है। दो हज़ार पाँच सौ तो मेरा है। बकाया तुम बता दो।"

मोहसिन समझ गया कि झगड़ा करने से तो जान जाने का डर है और सुलह से कुछ तो मिलेगा ही। उसने कहा, "मैं फ़ातिमा को सैर कराता रहा हूँ। पाँच सौ रुपया मुझको मिलना चाहिये।"

"और कोई है, जिसको कुछ चाहिये?"

"तो इतना तुम दे दो। बाकी फिर सोच-समझ लेंगे।"

"देखो मियाँ!" रामलाल ने चाकू की धार की तेज़ी को दिखाते हुए कहा, "इतना रुपया तो मैं यहाँ लेकर आया नहीं। मेरे रहने की जगह पर चलो, तो सब, जितना माँगते हो, मिल जायेगा। तीन हजार का हिसाब बताया है। साथ एक मुल्ला को ले चलो। वहीं पर निकाह पढ़ा लूँगा।

"और देखो, फ़ातिमा के पास जेवर हैं, कपड़े हैं और नकद भी कुछ

है। यह सब-कुछ फ़ातिमा तुम्हारे लिए छोड़ जायेगी। यह यहाँ से कुछ भी नहीं ले जायेगी। क्यों फ़ातिमा ! ठीक है न ?"

"हाँ, अम्मी कहती हैं कि उसने मेरी आमदनी का इन्तज़ाम किया है। तो यह सब मैं इनको अभी दे जाऊँगी।"

अम्मी जानती थी कि यह तो हजारों रुपयों की चीज है। इस कारण उसने कहा, "मोहसिन मियाँ ! खान ठीक कहता है कि उसके घर जाकर लेन-देन किया जा सकता है।"

"मगर खान ने धोखा दिया तो ?"

"जो इतना कुछ दे रहा है, वह दो-तीन हज़ार के लिए धोखा नहीं करेगा। क्यों खान ! कुरान शरीफ की कसम खाकर कहो कि जो-कुछ फ़ैसला हुआ है दे दोगे।"

"हाँ, कसम खाकर कहता हूँ। देखो, मैं फ़ातिमा को साथ लिए जा रहा हूँ। इसकी सब जायदाद तो अम्मी को अभी मिल रही है। मैं तीन हज़ार रुपया दूँगा। एक सौ रुपया शादी में खर्च करने के लिए इसमें से ही निकाल लेना।

"कल सुबह मेरे पते पर, जो मैं तुमको दूँगा, आ जाना। मुल्ला और यहाँ के दो गवाह साथ लाना। लिखत-पढ़त वहीं पर होगी।"

मोहसिन कुछ कहने वाला था, मगर मुन्तज़िमा ने उसको कहने से रोकते हुए कहा, "खान ठीक कहता है। पर इस वक्त यहाँ से जाओगे कैसे ? जाओ मोहसिन एक ताँगा ले आओ।"

"एक शर्त पर जाता हूँ। मेरे आने से पहिले फ़ातिमा की जायदाद को हाथ नहीं लगाना।"

"नहीं लगाऊँगी, मियाँ ! नहीं लगाऊँगी। अभी तो फ़ातिमा ने चाबी भी नहीं दी।"

मोहसिन जाने लगा तो मुन्तजिमा भी जाने लगी, मगर रामलाल, जो अभी तक कमरे के दरवाजे पर खड़ा था, उसको रोकते हुए बोला,

"तुम नहीं जा सकतीं। तुम यहीं रहो।"

"क्यों?"

"इसलिए कि मेरे हाथ में छुरी है और यह मेरे हुक्म के खिलाफ़ काम करने वाले के पेट में घुस जायेगी।"

मोहसिन गया और ताँगा ले आया। रामलाल ने रानी से अलमारी की चाबी लेकर कमरे के बीच में फेंकते हुए कहा, "यह लो।"

इतना कह रानी को अपने आगे कर, स्वयं उसके पीछे-पीछे चलकर वह मकान के बाहर को चल पड़ा।

जब रामलाल ने चाबी कमरे के बीचोंबीच फेंकी तो मोहसिन और मुन्तजिमा दोनों उसको उठाने के लिए भागे। कुछ देर तक दोनों चाबी पर झगड़ा करते रहे। एकाएक मुन्तजिमा को कुछ स्मरण हो आया और उसने कहा, "सुबह रुपये लेने कहाँ जाओगे? खान का पता तो पूछा ही नहीं।"

मोहसिन चाबी का विचार छोड़ खान के पीछे भागा। रामलाल और रानी इस समय ताँगे में बैठ, ताँगे वाले को कह रहे थे, "अनारकली बाजार में उसमानिया होटल पर चलो।"

मोहसिन ने हाथ खड़ा कर ताँगे को रोकते हुए कहा, "ठहरो खान! ठहरो।"

वह हाँफता हुआ ताँगे के पास आकर पूछने लगा, "साहब! अपना पता तो देते जाइये। कहाँ पहुँचूँ सुबह?"

रामलाल ने अपना छपा कार्ड जेब से निकालकर दे दिया। जब ताँगा चला गया तो मोहसिन और मुन्तजिमा, जो उसके पास आ खड़ी हुई थी, दोनों गम्भीर विचार में डूबे हुए भीतर रानी के कमरे में चले आये। वहाँ पहुँच मुन्तज़िमा ने कहा, "बेचारी बहुत ही अच्छी थी। गऊ मालूम होती थी।"

"तो तुमने उसको जाने क्यों दिया है?"

"इसलिए कि यह हमारा रण्डीखाना बिना लाइसेन्स के है। हल्ला

होता तो मकान की तलाशी होती और दस औरतें और पकड़ी जातीं। यह पठान तो फ़ातिमा से शादी करने की बात कहकर बच जाता और हमको लड़कियों से पेशा कराने के लिए और फ़ातिमा को बेचने के इल्जाम में पाँच साल की सजा हो जाती। जहाँ तक रुपये का सम्बन्ध है, रानी की जायदाद तीन हज़ार से कहीं ज़्यादा है।"

पंचम् परिच्छेद

: १ :

भारत में निर्वाचनों का ज्वर बढ़ रहा था। पूर्ण देश में एक कोने से लेकर दूसरे कोने तक सभाएँ, जुलूस, विज्ञापन और प्रत्येक प्रकार की चहल-पहल चल रही थी। एक-एक जगह के लिए चार चार पाँच-पाँच उम्मीदवार खड़े थे। यह अनुमान लगाया जा रहा था कि संसद् की साढ़े-चार सौ जगहों के लिए लगभग दो हज़ार प्रत्याशी खड़े होने वाले थे और औसतन एक प्रत्याशी का पचास हजार रुपया खर्च होने वाला था। इस प्रकार दस करोड़ रुपया जनता का खर्च होने वाला था। इनके साथ-साथ राज्यों की तेईस धारा-सभाओं के तीन हज़ार सदस्यों के लिए लगभग दस हज़ार प्रत्याशी खड़े होने थे। धारा-सभा के प्रत्याशी औसतन बीस-बीस हज़ार रुपया खर्च करने वाले थे। इनका सामूहिक खर्चा बीस करोड़ के लगभग होने वाला था। दोनों मद्दों में खर्चे का अनुमान तीस करोड़ के लगभग था।

तीस हज़ार धारा-सभाओं और संसद् के उम्मीदवारों के लिए, अवैतनिक रूप में काम करने वालों की संख्या अन्तिम पन्द्रह दिनों के लिए तीस लाख और दो-दो मास काम करने वाले लगभग पन्द्रह लाख होंगे। यदि निर्वाचन पर मानव दिनों के व्यय का हिसाब लगावें तो वह तेरह करोड़ पचास लाख दिन होगा और प्रतिदिन एक आदमी की उजरत पाँच रुपये मान लें तो कुल हानि साढ़े-सड़सठ करोड़ रुपया होगी। इस प्रकार निर्वाचन का खर्चा, जो देश को वहन करना पड़ेगा, वह एक अरब

रुपये के लगभग होगा ।

यह खर्चा तो किसी महान् उद्देश्य की पूर्ति के लिए ही हो सकता है। क्या यह उद्देश्य देश-सेवा है ? हो सकता है कि इने-गिने उम्मीदवार इस भावना से प्रेरित होकर यह खर्चा करते हों, परन्तु अधिक संख्या उन उम्मीदवारों की होगी, जो आत्म-ख्याति और आत्मोन्नति की योजना से निर्वाचनों के अखाड़े में आयेंगे। यह निर्विवाद सत्य था कि वे अपने खर्च किये हुए से कई गुना अधिक लाभ करने के विचार से निर्वाचन लड़ेंगे।

मुकुट विहारी माथुर इन सब बातों को समझता था। इस कारण जब उसको जन-संघ के निर्वाचन-बोर्ड ने खड़े होने को कहा तो उसने बिलकुल इन्कार कर दिया। माथुर का यह निर्णय सबको विस्मय में डालने वाला था। माथुर को प्रेरणा देने के लिए जन-संघ के मुख्य कार्यकर्ता आये। उनके सामने माथुर ने अपने मन के भाव रख दिये और कहा, "मैं इस प्रजातन्त्रात्मक विधान को एक महान् धोखा मानता हूँ। इससे जनता के वास्तविक प्रतिनिधि, देश के वास्तविक योग्य व्यक्ति और विचारक कभी भी खड़े होने का साहस नहीं करेंगे। मैं तो पचास हज़ार व्यय कर सकता हूँ, परन्तु यह निश्चय ही है कि अन्य, जो वहाँ आयेंगे, उनमें से प्रायः यह रुपया खर्च कर इसका प्रतिकार उपलब्ध करने की आशा में ही आयेंगे। इतना रुपया खर्च करने वाले प्रायः स्वार्थी, सिद्धान्तरहित और नीतिविहीन ही होंगे। उनमें मैं, यदि सफल भी हो गया तो क्या कर सकूँगा।"

एक साहब कहने लगे, "माथुर साहब ! अब तो यह विधान बन गया है। इसको कार्य में लाया ही जायेगा। आप इसमें नहीं जायेंगे तो आपके स्थान पर कोई अयोग्य और स्वार्थी चला जायेगा। क्या यह अच्छा नहीं होगा कि एक व्यक्ति तो स्वार्थ-रहित, निर्भीक और योग्य वहाँ पहुँच जावे ?"

"नहीं साहब ! मैं इस नमक की खान में नहीं जाऊँगा। इससे देश

कल्याण होने की सम्भावना नहीं है। मैं बताता हूँ कि कांग्रेस क्या करने वाली है। यह ऐसे लोगों को खड़ा करेगी, जो इतना रुपया खर्च कर सकते होंगे और जो इतने अयोग्य होंगे कि देश के एक-आध नेता के संकेत पर वोट देने के लिए तैयार रहेंगे।

"पण्डित जवाहरलाल जी की ख्याति देश के भीतर इतनी अधिक है कि कांग्रेस में रहता हुआ दूसरा कोई नेता हो ही नहीं सकता। अतएव इस प्रकार के निर्वाचनों का परिणाम यह होने वाला है कि संसद् में ऐसे लोग एकत्रित हो जावेंगे, जो पण्डित जी की हाँ-में-हाँ मिलाने के अतिरिक्त कुछ कर ही नहीं सकेंगे।

"कहीं कोई योग्य आदमी वहाँ चला गया और वह कांग्रेस की अर्थात् पण्डित जवाहरलाल जी की नीति का विरोध करने खड़ा हो गया तो संसद् के प्रायः सदस्य सो जाया करेंगे और वोट डालने के समय 'ह्विप' के संकेत पर वोट डाल आया करेंगे।"

"तो फिर इस सबको हटाने का उपाय क्या है? घर बैठे रहने से तो कुछ बनेगा नहीं?"

"मैं समझता हूँ कि वास्तविक बात संसदादि संस्थाओं में जाना नहीं, प्रत्युत् देश की जनता में राष्ट्रीय विचारधारा उत्पन्न करनी है। यह संसदादि संस्थाओं से बाहर रहकर अधिक कुशलता से हो सकेगा। मैं उन सदस्यों का, जो संसदादि में जाकर देश में जागृति उत्पन्न करना चाहते हैं, विरोधी नहीं हूँ। इस पर भी मैं इनसे बाहर रहकर कार्य करने को अधिक उपयोगी समझता हूँ। इस प्रकार शक्ति के कम-से-कम व्यय के साथ अधिक-से-अधिक फल प्राप्त किया जा सकता है।

"जब देश पराधीन था, तब भी इन दो विचारधाराओं के लोग विद्यमान थे। एक वे थे, जो शाहनशाहों के दरबार में जाकर दलित किये जाने वाले हिन्दुओं की रक्षा का प्रयत्न करते थे। उनमें बहुसंख्या में स्वार्थी लोग होते थे। इस पर भी कुछ तो निःस्वार्थ भाव से जाति की सेवा करने के लिए वहाँ होते ही थे।

"फिर अँग्रेज़ों के राज्य में भी कुछ लोग ऐसे थे, जो अँग्रेज़ी शासन को सहयोग देकर भारत माता की सेवा का यत्न करते थे। उनमें भी अधिकांश स्वार्थी रहे होंगे; परन्तु यह बात निर्विवाद सत्य है कि कुछ तो 'लिबरल' ऐसे थे ही, जो सरकार को सहयोग देने में ही देश का कल्याण समझते थे।

"मुग़लों के काल में और ब्रिटिशकाल में भी राज्य से बाहर रहकर देश का कल्याण करने वाले लोग रहे हैं। नानक, तुलसी, दादू, कबीर, रामदास प्रभृति एक ओर थे और गुरु तेग़ बहादुर, गुरु गोविन्दसिंह, शिवाजी इत्यादि दूसरी ओर थे, जो राज्य से बाहर रहकर देश और जाति की सेवा करने में संलग्न थे। ब्रिटिशकाल में भी बाल गंगाधर तिलक, वीर सावरकर, विपिन चन्द्रपाल, लाला लाजपतराय, स्वामी श्रद्धानन्द, महात्मा गांधी इत्यादि देश-कल्याण का काम कर रहे थे।

"किन के प्रयत्न सफल हुए, यह विचार का विषय नहीं। विचारणीय बात यह है कि आज भी संसदादि सभाओं में जाकर कार्य करने वालों के अतिरिक्त, इनसे बाहर कुछ योग्य व्यक्ति होने चाहियें, जो देश-कार्य में संलग्न हों।

"मेरा विचार है कि जैसे मुग़लों के काल में शिवाजी इत्यादि राज्य से बाहर रहने वाले और ब्रटिश काल में बाल गंगाधर इत्यादि राज्य से बाहर रहने वाले अधिक सफल हुए हैं, वैसे ही यदि हम संसदादि संस्थाएँ, जो प्रायः स्वार्थियों से भर जायेंगी, से बाहर रहकर जागृति उत्पन्न करने का यत्न करें तो हम कम महत्व का कार्य नहीं करेंगे।"

इसके बाद कहने-सुनने को कुछ नहीं रहा। हाँ, माथुर की सेवाएँ निर्वाचन-आन्दोलन के सम्बन्ध में ली जाती रहीं और वे जन-संघ की नीति और कार्यक्रम की व्याख्या करते रहे।

इस काल में जहाँ माथुर का ध्यान अपनी वकालत से हट गया, वहाँ अपने परिवार की समस्याओं से भी दूर हो गया।

जब तक नीरा काश्मीर से लौटकर आई, तब तक माथुर निर्वाचन-

कार्य में लीन हो चुका था। वह प्रायः जन-संघ की सभाओं में जाता था और रात बहुत देर से लौटता था। फिर यदि कोई मुकद्दमा अगले दिन लेना होता तो उसकी तैयारी में रात के एक-दो बजे तक बैठ मुकद्दमा तैयार करता। दिन में जिस दिन कचहरी नहीं जाना होता, उस दिन वह जन-संघ के संगठन को सुदृढ़ करने के लिए जन-संघ कार्यालय में चला जाता। इस प्रकार दिन व्यतीत हो रहे थे।

नीरा काश्मीर से लौटी तो अपने कार्यालय में जाने लगी और अपने कार्यों में व्यस्त हो गई। दिन-भर कार्यालय का काम कर सायंकाल की चाय वह घर पर पीती और फिर डॉक्टर बलवंतसिंह, जो उसकी किसी निश्चित स्थान पर प्रतीक्षा करता होता, के साथ किसी क्लब, सिनेमा अथवा यूँ ही घूमने चली जाती। रात का खाना दोनों इकट्ठे किसी होटल में खाते और प्रायः रात के बारह बजे डॉक्टर नीरा को घर पर छोड़ जाता। इस समय माथुर या तो अपने कार्यालय में मुकद्दमा तैयार कर रहा होता अथवा किसी पुस्तक के अध्ययन में लगा होता।

इस प्रकार सप्ताह-पर-सप्ताह बीत रहे थे और नीरा अपने पिता के दर्शन तक नहीं कर पाती थी। सायंकाल की चाय के समय और दिन के खाने के समय चन्द्र नीरा का साथ दिया करता था। एक दिन नीरा ने उससे पूछ ही लिया, "उस लड़की का क्या हुआ, जिसकी तुम बाँह पकड़ कर घसीटा करते थे?"

"उससे झगड़ा हो गया है। उसने हमारी पार्टी भी छोड़ दी थी और पार्टी ने भी उसको मिट्टी में मिला दिया है।"

"क्यों?"

"हम अपने कार्यकर्ताओं के मन पर यह अंकित करना चाहते हैं कि पार्टी छोड़ने पर क्या परिणाम हो सकता है। इसी कारण यह सब-कुछ किया गया है।"

"क्या सब-कुछ किया है?"

"हमने प्रमिला को बदनाम करना आरम्भ कर दिया। सब कर्म-

चारियों में यह विख्यात कर दिया कि वह मिस्टर जॉनसन की रखेल है। यह सूचना बहुत चतुराई से मिसेज़ जॉनसन के कानों तक पहुँचा दी गई। परिणाम यह हुआ कि मिस्टर जॉनसन ने लिखकर अपनी बदली बम्बई करवा ली है और नये मैनेजर के आने पर प्रमिला को नौकरी से निकाल दिया गया है। वह अब भूखी मरती होगी।"

"बहुत ही नीच आदमी हो तुम लोग?" नीरा ने माथे पर त्योरी चढ़ाकर कहा।

"इसमें कोई नीचता नहीं। पार्टी की प्रतिष्ठा रखने के लिए हम किसी भी उपाय को बुरा नहीं समझते।"

"तो तुम्हारी पार्टी में एक बार सम्मिलित होने पर उसको छोड़ा नहीं जा सकता।"

"अभी हमारी पार्टी इतनी प्रबल नहीं कि हम इस प्रकार से छोड़ जाने के बुरे प्रभाव को सहन कर सकें।"

"क्या तुम्हारा उस लड़की से घनिष्ठ सम्बन्ध नहीं था?"

"था; परन्तु यह एक साधारण-सी बात है। पार्टी में हम इसको एक बोतल लैमोनेड पीने अथवा एक प्याला चाय पीने से अधिक महत्त्व नहीं देते।"

"पर तुम लोग पार्टी से बाहर वालों में यह सम्बन्ध निन्दनीय मानते हो क्या?"

"पार्टी से बाहर वालों में नहीं, प्रत्युत् पार्टी छोड़ जाने वालों में इस कार्य की निन्दा करते हैं। केवल यही नहीं। इस विषय में तो हमने केवल कल्पना कर ली और फिर निन्दा आरम्भ कर दी।"

"चन्द्र! यह तो बहुत ही बुरी बात है। मैं भी तुम्हारी पार्टी में सम्मिलित होने वाली थी; परन्तु अब यह विचार करने की बात हो गई है।"

"देखो नीरा! मेरी राय मानो। तुम हो सरकारी नौकरी में। तुमको सरकार के विरोधी दल में सम्मिलित नहीं होना चाहिये। तुम्हारे जैसों के लिए तो पार्टी से बाहर रहकर पार्टी के सिद्धान्तों का प्रचार करना

चाहिये। यदि तुम कहो तो पार्टी का साहित्य तुम्हारे पढ़ने के लिए ला दिया जाया करे ?"

"मैंने कुछ पुस्तकें कम्युनिज़्म पर पढ़ी हैं और उनको पढ़कर मेरे मन में इस विचार-धारा के विषय में और अधिक जानने की इच्छा हो गई थी; परन्तु तुम्हारी इस कथा को सुन तो मन में ग्लानि ही उत्पन्न हुई है।"

नीरा अगले दिन अपने काम पर जाने से पूर्व अपनी माँ से प्रमिला का पता पूछने चली गई। प्रमिला की माँ नीरा की माँ से कई बार मिलने आ चुकी थी। माँ ने बताया कि अब तो कई महीनों से वह मिलने नहीं आई। उसने नीरा से पूछा, "क्या बात है ?"

"प्रमिला की माँ से कुछ काम था।"

"वह कूचा घासीराम में मकान नम्बर ३४१२ में रहती है।"

नीरा ने अब अपनी एक छोटी-सी मोटर गाड़ी रख ली हुई थी। वह उसको कोठी के सेहन में खुला ही छोड़ दिया करती थी। इसकी सफाई के लिए उसने क्लीनर रखा हुआ था और इसको स्वयं चलाती थी। महीने में एक बार सर्विस करवा लेती थी।

आज वह गाड़ी में सवार हो कूचा घासीराम के सामने जा खड़ी हुई। वहाँ उसने गाड़ी को ताला लगाया और प्रमिला की माँ का घर ढूँढ़ती हुई वहाँ जा पहुँची। मकान का कुन्डा खटखटाया तो प्रमिला की माँ नीचे आ खड़ी हुई। वह नीरा को खड़ी देख, विस्मय में पूछने लगी, "क्या बात है नीरा बेटी ?"

प्रमिला की माँ यद्यपि नीरा से कभी बोली नहीं थी, परन्तु जानती थी कि वह माथुर की लड़की है और बहुत अच्छा वेतन पाती है। नीरा ने खड़े-खड़े ही कहा, "आप बहुत दिनों से आई नहीं। माताजी ने कहा था कि पता करती आऊँ।"

"मैं तो ठीक ही हूँ। इधर कई दिनों से एक काम घर में करने लगी हूँ। इससे अवकाश नहीं मिलता।"

"क्या काम करने लगी हैं ?"

"यूँ तो अब इस काम की आवश्यकता नहीं रही, परन्तु जब करने लगी हूँ तो अब करने को ही जी चाहता है। लिफाफे बनाया करती हूँ। इस प्रकार दिन-भर में आठ-दस आने की मज़दूरी कर लेती हूँ।"

"ओह ! तो प्रमिला कहाँ है ?"

"उसकी नौकरी छूट गई थी। फिर वह बीमार हो गई। अब वह ठीक है और कनॉट सरकस में एक दुकान पर काम पर जाती है।"

"किस दुकान पर जाती है ?"

"एक डॉक्टर हैं। कोई सिंह-सा नाम है। वहाँ टाइपिस्ट का काम मिल गया है। वेतन कुछ कम मिलता है, फिर भी गुज़र हो जाता है।"

यही जानने तो नीरा आई थी। वह प्रमिला से मिलना चाहती थी। इस समय तो वह अपने काम पर चली गई। सायंकाल वह डॉक्टर सिंह की दुकान पर प्रमिला का पता करने जा पहुँची। प्रमिला अपना काम समाप्त कर छुट्टी करने वाली थी। नीरा को अपनी मेज़ के समीप आ खड़े होते देख, विस्मय में खड़ी हो, नमस्ते कर प्रश्न-भरी-दृष्टि में उसकी ओर देखने लगी। नीरा ने पूछा, "अभी छुट्टी हुई है अथवा नहीं ?"

प्रमिला ने मैनेजर से कहा और नीरा के साथ दुकान से बाहर निकल आई। दोनों नीरा की मोटर के समीप खड़ी हो बातचीत करने लगीं। नीरा ने कहा, "चलो किसी रेस्टोरॉं में चलकर चाय पी लें।"

"नहीं बहिन जी! मुझको घर जाना है। माताजी प्रतीक्षा करती होंगी।"

"केवल आधा घण्टा लगेगा।"

"आप यहीं बता दीजिये कि क्या काम है ?"

नीरा विचार कर रही थी कि वहाँ ही बात करे अथवा न। इसी समय डॉक्टर बलवन्तसिंह मोटर में वहाँ आ पहुँचा। मोटर में से उतर वह इनके पास आकर खड़ा हो कहने लगा, "मैं दरियागंज जा रहा था। यहाँ तुम्हारी मोटर खड़ी देख, यहीं ठहर गया हूँ।"

"मैं इनसे बात कर रही थी। अच्छा प्रमिला मैं कल मिलूँगी। कल अपनी माताजी से पूछ रखना, इकट्ठे चाय पियेंगे।"

"कल मैं आपसे इसी जगह मिलूँगी, परन्तु चाय के लिए क्षमा चाहती हूँ।"

"क्यों?"

"तो आप जानती नहीं? मैं एक सौ रुपया महीना वेतन पाती हूँ और आप एक सहस्र के लगभग। हम दोनों का इकट्ठे चाय पीना जचता नहीं। मैं जब आपको पिला नहीं सकती तो आपसे पीना भी नहीं चाहती।"

"अच्छा न सही। कल मिलूँगी। तुम कभी माताजी से मिलने नहीं आईं?"

"एक बार आपके यहाँ आपके पिताजी से मिलने गई थी, परन्तु वे मिले नहीं। फिर विचार कर कि किसलिए जाऊँ, जाने को तबीयत नहीं की।"

"मेरा विचार है कि मिलना चाहिए।"

"विचार करूँगी।"

पश्चात् नीरा और बलवन्तसिंह, दोनों अपनी-अपनी मोटरों में दरिया-गंज की ओर चल पड़े। नीरा अपनी मोटर कोठी में रखकर बाहर आ ही रही थी कि माथुर साहब अपनी मोटर में वहाँ आ पहुँचे। डॉक्टर बलवन्त-सिंह कोठी के बाहर अपनी मोटर के पास खड़ा था। माथुर अपनी मोटर से उतर, डॉक्टर से हाथ मिलाकर कहने लगा, "आइये, आइये। चाय पियेंगे।"

नीरा की इच्छा नहीं थी, परन्तु डॉक्टर बलवन्तसिंह मान गया। उसने नीरा से कहा, "आज चाय यहाँ ही पी लेते हैं और पश्चात् सिनेमा देखने चलेंगे।"

नीरा ने घड़ी में समय देखा और सिनेमा के समय में देरी देख कोठी में चली आई।

: २ :

बातों-ही-बातों में प्रमिला के विषय में नीरा ने अपने पिता को बता दिया। उसने कहा, "प्रमिला की शैल कम्पनी से नौकरी छूट गई है। अब वह डॉक्टर सिंह की दुकान पर टाइपिस्ट का काम करती है। उसको अब सौ रुपया मासिक वेतन मिलता है।"

माथुर ने सुन लिया और चुपकर रहा, मानो उसको बात में रुचि नहीं। परन्तु इस कथा पर डॉक्टर बलवन्तसिंह ने पूछ लिया, "उसी लड़की की बात करती हो न, जो तुम्हारे साथ वहाँ खड़ी थी?"

"हाँ।"

"उसका पिता क्या काम करता है?"

"पिता नहीं है। पहिले लड़की दो सौ रुपया महीना पर शैल कम्पनी में काम करती थी। वहाँ से नौकरी छूटी तो बीमार हो गई और माँ लिफ़ाफ़े बनाकर गुज़र करती रही है।"

चाय समाप्त हुई तो नीरा और डॉक्टर मोटर में सवार हो चले गये। माथुर अपने कार्यालय में पहुँच, नीरा ने जो सूचना दी थी, उसकी मन में विवेचना करने लगा। उसको विश्वास हो गया था कि प्रमिला की नौकरी किसी ने चुग़ली खाकर छुड़वा दी है और उसकी मां को लिफ़ाफ़े बनाने की आवश्यकता पड़ी है।

माथुर विचार करता था कि इसमें चन्द्र का हाथ हो सकता है। उसको चन्द्र का कहना स्मरण हो आया कि, "प्रमिला के विषय में इस बार हम असफल रहे हैं, परन्तु शीघ्र ही हम इस असफलता को सफलता में बदल देंगे। हमारी योजना बन चुकी है और हम इस बार असफल नहीं होंगे। हमारी पार्टी से दग़ा करने वाले पनप नहीं सकते।"

उस दिन के चन्द्र के ये शब्द माथुर के मस्तिष्क में भली भाँति अंकित थे। एकाएक उसको विचार आया कि चन्द्र के कारण ही उसने अपने काम के छूट जाने की सूचना नहीं भेजी होगी। वह चन्द्र के पिता के पास चन्द्र की निन्दा करना नहीं चाहती होगी। माथुर उस भावुक और

आत्माभिमानी लड़की से यही आशा करता था। अतएव उसने स्वयं ही उसको लिखने का निश्चय कर, अपने पैड पर एक चिट्ठी लिख, चपरासी के हाथ भेज दी।

चपरासी चिट्ठी का उत्तर नहीं लाया। उसने कहा, "एक लड़की ने चिट्ठी ले पढ़कर कहा है कि यथासमय उत्तर भेज देगी।"

माथुर उत्तर की प्रतीक्षा करने लगा और दिन व्यतीत होने लगे। जब कई दिनों तक वहाँ से उत्तर नहीं आया तो माथुर ने चन्द्र को बुलाकर पूछा, "क्यों जी साहबज़ादे! प्रमिला से क्या षड्यन्त्र किया है?"

"तो नीरा ने आपको बता दिया है।"

"नीरा ने कुछ नहीं बताया। मुझको एक अन्य साधन से यह ज्ञान हुआ है कि उसकी मां अब लिफ़ाफ़े बनाकर निर्वाह करती है।"

"हमने क्या किया है, बताने की आवश्यकता नहीं। मैंने तो कहा था कि हमारी योजना बन चुकी है और इस बार हम असफल नहीं होंगे।"

"तो तुम्हारी योजना सफल हुई है, पर जानते हो इसका परिणाम क्या हुआ है?"

"मालूम है। हमारी खुफ़िया पुलिस सब समाचार रखती है। नौकरी छूटने से उसके दिल को इतना धक्का लगा कि वह एक मास तक खाट से उठ नहीं सकी। पीछे उसको अब नौकरी मिल गई है।"

"तो यह ठीक हुआ है?"

"इसमें सन्देह नहीं। आज संसार में संगठन एक महान् सत्य है। संगठन के विरोधी विनाश को प्राप्त होने चाहियें।"

"पर कैसे कहते हो कि वह संगठन का विरोध करती थी? देखो चन्द्र! इस देश में सरकार का संगठन है और उस संगठन के नियम-उपनियम हैं। वह बेचारी उस संगठन के नियमों का पालन कर ही रही थी।"

"यदि सरकार का संगठन सत्य होता तो वह उसकी रक्षा करता। वह

संगठन नहीं है। वह तो कांग्रेस का नाम लेने वाले, महात्मा गांधी की जय बुलाने वाले कुछ स्वार्थियों का एक मजमा है। संगठन में कुछ सिद्धान्त होते हैं, कुछ उद्देश्य होते हैं और फिर संगठन की रक्षा का प्रबन्ध होता है। वहाँ यह कुछ नहीं है।"

माथुर इस बात को समझता था। उसको भी कांग्रेस और कांग्रेस सरकार पर यही आपत्ति थी, परन्तु वह यह भी जानता था कि कम्युनिस्टों में संगठन के सब अंग होते हुए भी उद्देश्य और उसके प्राप्त करने की विधि अशुद्ध है। कम्युनिस्टों का संगठन तो आसुरी संगठन था।

उसने केवल यह कहा, "तुम्हारी आपत्ति कांग्रेस पर ठीक हो सकती है, परन्तु तुमने सरकार के विरुद्ध काम किया है न? एक निर्दोष को दोष लगाकर कष्ट दिया है।"

"पिताजी! सफलता एक महान् सत्य है। यदि हम सफल हुए हैं तो निःसन्देह वह दोषी थी और जो कुछ हमने किया है वह ठीक था।"

"अच्छी बात है, पर इतना याद रखना कि जो अन्त में सफल होता है, वही सफल माना जाता है।"

इतना कह माथुर उठकर जाने लगा और बोला, "अभी तो मुझको एक सभा में जाना है।"

"पर पिताजी! आज दस तारीख हो गई है और अभी तक जेब-खर्च नहीं मिला।"

"तो क्या यह खर्चा तुम्हारा संगठन नहीं दे सकता?"

इस बात पर चन्द्र भौचक्का हो खड़ा रह गया। वास्तव में दो दिन हुए, माथुर ने डेढ़ सौ रुपया, जो वह चन्द्र को दिया करता था, प्रमिला की माँ के नाम मनीऑर्डर कर दिया था। उसको जब प्रमिला का कोई उत्तर नहीं आया तो उसने वह रुपया भेज दिया। वह आशा करता था कि रुपया उसकी माँ ले लेगी और यदि प्रमिला को यह रुचिकर नहीं हुआ तो वह रुपया वापिस करने आयेगी। इससे उसको समझने का अवसर मिल जायेगा।

यही हुआ। माँ ने रुपया वसूल कर लिया। सायंकाल जब प्रमिला काम से लौटी तो माँ ने उसको रुपया दिखाते हुए कहा, "यह मनीऑर्डर आया है। शायद तुम्हारे पहिले दफ्तर का है।"

प्रमिला ने रुपये का फार्म पढ़कर कहा, "यह माथुर साहब ने सहायतार्थ भेजा है और मैं उनसे किसी प्रकार की सहायता लेना नहीं चाहती।"

"मैं समझ नहीं सकी थी कि रुपया किसने भेजा है। यह समझ कि तुम्हारे दफ्तर का होगा, ले लिया था। पर वकील साहब को सहायता देने की क्या आवश्यकता पड़ी है?"

"ठीक तो नहीं कह सकती। उस दिन नीरा आपसे मिलने आई थीं। फिर मुझसे मिली थीं। फिर अगले दिन भी मिली थी और सहायता देने का यत्न करती रही थी। मैंने इन्कार कर दिया था। माथुर साहब का एक पत्र भी आया था। उसमें भी उन्होंने पूछा था कि किसी वस्तु की आवश्यकता हो तो लिखूँ। मैंने न तो उत्तर दिया है और न ही उनसे मिलने गई थी। कदाचित् इसीलिए यह रुपया भेज दिया है।"

"तुम मुझको यह सब-कुछ बता दिये होती तो मैं रुपया वापिस कर देती। मैं समझती हूँ कि रुपया तो अब भी लौटाया जा सकता है। तुम उनको वापिस मनीऑर्डर कर दो।"

"और सवा दो रुपये अपनी जेब से खर्च करूँ। साथ ही उन्होंने मनीऑर्डर लौटा दिया तो मुझको वापिस लेना ही पड़ेगा। वह मेरा भेजा हुआ होगा।"

"तो जाकर लौटा आओ।"

"अब यही विचार कर रही हूँ। मैं नहीं चाहती थी कि उनके पुत्र की निन्दा कर उनके मन को दुःखाती। पर मैं किसी से दी गई दान-दक्षिणा पर पलना नहीं चाहती।"

"चिरंजीव रहो बेटी! मैं सूखी रोटी और एक समय खाकर जी सकती हूँ, पर अपनी मान-प्रतिष्ठा को बेच नहीं सकती। तुम्हारे भी

ऐसे विचार सुन मेरा चित्त गद्गद् प्रसन्न हो उठा है।"

अगले दिन सायंकाल वह माथुर साहब की बैठक में जा पहुँची। वे एक मुकद्दमे की तैयारी कर रहे थे। मुवक्किल और एक अन्य सज्जन सामने बैठे मुकद्दमा समझा रहे थे। प्रमिला आई तो माथुर साहब ने घड़ी में समय देख कहा, "प्रमिला बेटा! तुम ज़रा चन्द्र की माँ के पास बैठो। मैं अभी वहाँ आ रहा हूँ।"

"पर मुझको तो केवल एक मिनट का काम है।" इतना कह वह अपनी पर्स खोलने लगी।

माथुर ने हाथ से संकेत कर उसे रोककर कहा, "मैं जानता हूँ कि तुम किसलिये आई हो। इसी कारण मैं समझता हूँ कि तुमको कुछ प्रतीक्षा करनी पड़ेगी। यदि तुमको कहीं जाना होगा तो ड्राईवर मोटर में छोड़ आयेगा।"

विवश वह भीतर चन्द्र की माँ के पास चली गई। एक घण्टा-भर प्रतीक्षा करने पर माथुर भीतर आया और प्रमिला को अपनी पत्नी से बातें करते देख, प्रसन्न हो कहने लगा, "तो आखिर तुमको आना ही पड़ा है न? क्यों प्रमिला!

"मैं समझ गया था कि तुम मुझसे क्यों नाराज़ हो। केवल इसलिए कि मैं चन्द्र का पिता हूँ। पर एक बात मैंने तुमको कही थी कि तुम मेरी बेटी के तुल्य हो। यह तुम भूल गई प्रतीत होती हो।

"एक दिन मैंने तुमको लिखा था कि 'एक पिता का अधिकार है कि अपनी लड़की की सहायता करे। इस कारण तुम मेरे कार्यालय से डेढ़-सौ रुपया मासिक ले जाया करो।' उस समय तुम्हारा काम लग गया था। अब भी तुमको उसके अनुसार काम करना चाहिये था। जब तुमने नहीं किया तो यह रुपया भेजना पड़ा है।"

"पर मेरी नौकरी तो अब फिर लग गई है। हमारा गुज़ार मज़े में हो रहा है। इसके अतिरिक्त मैं यह विचार करती हूँ कि मैं आपसे यह रुपया क्यों लूँ?"

इतना कहते-कहते उसने अपने बैग में से डेढ़ सौ रुपये के नोट निकाल माथुर साहब के सामने रख दिये। उसने कहा, "यूँ तो हमारे देश में सब बड़े पिता समान होते हैं और सब छोटे पुत्र तथा पुत्री समान; परन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि सब बड़े सब छोटों की सहायता ही किया करें। मैं अपना अधिकार आपसे कुछ भी लेने का नहीं समझती।

"इस पर भी मैं आपका धन्यवाद करती हूँ। आपने एक बार मुझको सुमति दी थी। उसके लिए मैं आपकी कृतज्ञ हूँ।"

इतना कह वह उठ खड़ी हुई और जाने को तैयार हो गई। माथुर ने कहा, "प्रमिला! बैठो। मैं तुम्हारे इस व्यवहार से बहुत प्रसन्न हूँ। तुम में यह आत्म-सम्मान देख, मुझको हर्ष हो रहा है। मैं यह रुपया तुमको कभी नहीं भेजता, यदि मुझको यह पता न चलता कि घर की आय में वृद्धि करने के लिए तुम्हारी माँ को लिफ़ाफ़े बनाने का काम करना पड़ता है।"

प्रमिला अभी भी खड़ी थी। उसने खड़े-ही-खड़े कह दिया, "यह बात ठीक है। इस नये स्थान पर मेरा वेतन बहुत कम है। यद्यपि उसमें हम अपना काम चलाने में कठिनाई अनुभव कर रहे हैं, परन्तु यह कोई कारण नहीं कि हम आपसे किसी प्रकार की सहायता लें।

"पिताजी! आपके पुत्र का व्यवहार मेरे साथ ऐसा रहा है कि मैं आपसे किसी प्रकार की सहायता लेना अपना अपमान समझती हूँ।"

विवश माथुर ने कहा, "अच्छी बात है। मैं तुमको अपमानित करना नहीं चाहता। न ही मेरा यह आशय था। यद्यपि मैं तुम्हारे इस रुपये लेने को अपमानजनक नहीं समझता। तो भी यह समझने की बात बलपूर्वक तुम्हारे मस्तिष्क में डाल नहीं सकता। न ही मिन्नत करने से कोई समझ सकता है।

"इस पर भी मैं समझता हूँ कि तुम बहुत ही अच्छी लड़की हो और अच्छे लोगों से सम्बन्ध बनाना एक अच्छी बात ही है। इस कारण मैं तुमसे फिर यही कहता हूँ कि तुम इस घर में सदैव बेटी की भाँति आ

सकती हो और एक बेटी के अधिकार पा सकती हो।"

"मैं इस आश्वासन के लिए सदा आपकी आभारी रहूँगी।"

: ३ :

प्रमिला के व्यवहार से माथुर नाराज़ नहीं था। विपरीत इसके वह अब भी उसकी सहायता करने के उपायों पर विचार कर रहा था। एक बात वह समझ रहा था कि यह लड़की स्वाभिमान से पूर्ण है और इसके स्वाभिमान को किसी प्रकार की ठेस पहुँचाना एक भारी पाप होगा। इस कारण वह इस समस्या पर गम्भीरतापूर्वक विचार कर रहा था।

उसको दो बातें समझ में आ रही थीं। एक तो इन, माँ-बेटी और इसके भाई पर देख-रेख रखना, जिससे ये निर्धनता के कारण किसी गड्ढे में न गिर जायें, दूसरी बात थी कि किसी छुपे हुए ढंग से इनकी आय में वृद्धि कराना।

माथुर इस विषय में योजना बना रहा था, परन्तु निर्वाचन-कार्य में संलग्न होने के कारण उसकी योजना न तो परिपक्व होने में आती थी और न ही कार्यान्वित हो सकती थी।

परन्तु भाग्य-चक्र शान्त नहीं था। वह चल रहा था। जिस दिन बलवन्तसिंह ने नीरा और प्रमिला को डॉक्टर सिंह की दुकान के बाहर बातचीत करते देखा था, उस दिन से दूसरे-तीसरे दिन बलवन्तसिंह प्रमिला को किसी-न-किसी स्थान पर मिल जाता था। एक-दो बार बलवन्तसिंह डॉक्टर सिंह की दुकान पर कुछ खरीदने भी आया था, परन्तु वहाँ तो प्रमिला उसको दूर से ही देखती थी। प्रमिला अपनी मेज़ पर टाईपराइटर के पीछे बैठी काम किया करती थी।

प्रायः जब प्रमिला दुकान से छुट्टी पा, घर जाती और कर्नॉट प्लेस पार्क में से गुज़रती तो बलवन्तसिंह सामने से पैदल आता मिल जाता और दूर से ही वह उसको 'गुड-डे' कह निकल जाता।

एक-आध बार जब नीरा दुकान पर कुछ शृङ्गार का सामान खरीदने

आई, बलवन्तसिंह उसके साथ था। नीरा उसको दुकान में छोड़, प्रमिला से सुख-समाचार पूछने चली जाती और खड़े खड़े ही बात हो जाती।

इन दूर-दूर की भेंटों का परिणाम उस दिन हुआ, जिस दिन प्रमिला और बलवन्तसिंह दोनों सामने से आते हुए इकट्ठे कर्नॉट प्लेस पार्क में घुसे।

"गुड-डे मिस प्रमिला!" डॉक्टर ने कहा और प्रमिला के साथ-साथ चल पड़ा।

"नमस्ते जी।" प्रमिला ने उत्तर दिया।

"आप कहाँ रहती हैं, मैं अक्सर आपको इधर जाते देखता हूँ।"

"हमारा घर चाँदनी चौक में है। नीरा बहिन उस दिन बता रही थीं कि आप कैन्टोनमैण्ट में काम करते हैं। इस पर भी आपको मैं प्रायः यहाँ ही देखती हूँ।"

"कैन्टोन्मैन्ट कोई बलख़-बुख़ारा नहीं है। मोटर से पन्द्रह-बीस मिनट आने में लगते हैं। यहाँ प्रौविन्शियल लेबोरेटरी है। मैं अपने रोगियों के 'स्पेसिमन' यहाँ टैस्ट कराने लाया करता हूँ। यहाँ के डॉक्टर मेरे दूर के सम्बन्धी हैं। आज भी दो रोगियों के मूत्र की परीक्षा करानी थी। वह यहाँ देकर किसी रेस्टोराँ में चाय पीने जा रहा हूँ। प्रायः चाय पी कर लौटता होता हूँ तो आप मिलती हैं। उस दिन आपने नीरादेवी को कहा था कि आप चाय पिला नहीं सकतीं, इस कारण किसी से पीती भी नहीं। नीरा को आपकी बात से सन्तोष हो गया था, परन्तु आप क्षमा करेंगी, मुझको आपकी युक्ति कुछ जची नहीं थी।

"जब दो मित्र अथवा परिचित इकट्ठे बैठ चाय पीते हैं तो क्या यह सौदेबाज़ी होती है? क्या यह लेखा-जोखा का विषय होता है? मैं तो ऐसी बात न किसी को कहना पसन्द करूँगा और न ही किसी से सुनना।

"यदि आप मुझको कहतीं कि आप मेरे साथ चाय नहीं पी सकतीं,

क्योंकि आप पिला नहीं सकतीं तो मैं तो लज्जा में गल जाता । मैं इसका यह अर्थ समझता कि आप मुझको इतना कमीना समझती हैं कि एक प्याला चाय पिलाकर, मैं उसके बदले में चाय पीने की आशा करता हूँ।"

प्रमिला मुस्कराई और बोली, "आप बहुत ही सेंस्सेटिव (द्वुष-प्रकृति) मालूम होते हैं।"

"वाह, आप आघात पहुँचायें और फिर कोई उस आघात को अनुभव करे तो उसको द्वुष प्रकृति कहकर उसकी भर्त्सना करें ?"

"बात यह है कि नीरा के भाई साहब ने मेरे साथ भले लोगों का-सा व्यवहार नहीं किया। वह ही मेरे एक अच्छे स्थान से नौकरी छूटने में कारण है। मैं उसकी बहिन के साथ किसी प्रकार का व्यवहार रखना नहीं चाहती थी।"

"ओह ! अब समझा।" इस समय वे ओडियन सिनेमा के सामने पहुँच गये थे। अब डॉक्टर बलवंतसिंह खड़ा हो गया और कहने लगा, "तो इसका अर्थ यह हुआ कि यदि मैं आपको चाय का निमन्त्रण दूँ, तो आप उस कारण से, जो आपने नीरा को बताया था, इन्कार नहीं करेंगी ?"

"पर और कारण भी तो हो सकते हैं।" प्रमिला भी खड़ी हो गई थी।

"हाँ, तो मेरे निमन्त्रण को इन्कार करने का भी कोई कारण है ?"

"केवल यह कि आपका मेरे से परिचय अभी बहुत ही साधारण है।"

"तो इसको असाधारण रूप कैसे दिया जा सकता है ?"

"पर देखिये न, मैं एक निर्धन परिवार की लड़की और शिक्षा में, सोशल-स्टेटस में तथा प्रत्येक प्रकार से आपसे कम हूँ। फिर आप मेरे से परिचय बढ़ाने में क्या लाभ समझते हैं, इसका पता करने से ही साधारण को असाधारण करने पर विचार किया जा सकता है।"

"निर्धन तो आप हैं। यह तो आपने उस दिन नीरा को भी कहा था, यद्यपि शब्द दूसरे थे। पर शिक्षा में आप मुझसे कम हैं क्या ? मुझको

तो ऐसी कोई बात प्रतीत नहीं हुई। आप ग्रेजुएट हैं, मैं केवल इण्टर हूँ। पीछे डॉक्टरी पढ़ ली, जैसे आपने टाईपराइटर सीख लिया। दोनों कामों में वेतन का ही अन्तर है। हैं दोनों काम ही। इनमें शिक्षा का किंचित् मात्र भी सम्बन्ध नहीं।

"सोशल-स्टेटस का मैं कुछ भी अर्थ नहीं समझा। मैं तो आग्रह करूँगा कि आइये चाय पियेंगे और साथ ही इस प्रश्न पर और भी गम्भीरतापूर्वक विचार भी कर लेंगे। प्रमिलादेवी! मनुष्य एक सोशल (सामाजिक) प्राणी है। इसकी इच्छा दूसरों से मेल-जोल पैदा करने की बनी रहती है। इस कारण यदि मैं आपसे अपना परिचय बढ़ाना चाहता हूँ तो कोई अस्वाभाविक बात नहीं करता। आइये। मैं इतना कमीना नहीं कि चाय के बदले में चाय की आशा करूँगा।"

प्रमिला बलवंतसिंह की युक्तियों से परास्त तो हुई, साथ ही उसके व्यक्तित्व से आकर्षित भी हुई। दोनों चाय पीने चले गये। बहुत बातें हुईं और दोनों के मन पर एक-दूसरे के व्यक्तित्व का प्रभाव पड़ा। इसका परिणाम यह हो गया कि जब कभी दोनों कनॉट प्लेस में मिल जाते तो चाय पीने बैठ जाते और आधा-पौन घण्टा बहुत ही विचारपूर्ण तथा रोचक बातचीत होती।

इसका एक और परिणाम भी हुआ। घनिष्ठता बढ़ने के साथ-साथ प्रेम भी बढ़ने लगा। यद्यपि बलवंतसिंह प्रमिला के मन की इस अवस्था को जान गया था, तो भी नीरा की भाँति उसको छू तक नहीं सका था।

सप्ताह में दो-तीन बार प्रमिला से भेंट हो जाती और दोनों 'यौर्क होटल' में चाय पीने चले जाते। वहाँ भिन्न-भिन्न राजनीतिक तथा सामाजिक विषयों पर बातचीत होती। दोनों के परिवारों की अवस्था और अन्य विशेषतायें, दोनों को पता लग चुकी थीं। बलवंतसिंह चाहता था कि वह अपने मन की अवस्था प्रमिला से वर्णन करे, परन्तु जब भी वह उसकी आँखों में देखता था, तो उनमें बच्चों की-सी सरलता देख रुक जाता था।

एक दिन वह अपने को रोक नहीं सका और उसने प्रमिला के हाथ को अपने हाथ में पकड़कर कहा, "क्या मैं......।"

प्रमिला ने हाथ खींच लिया और कहा, "हाँ, कहिये। क्या कहना चाहते हैं ?"

एक क्षण के लिए तो बलवंतसिंह घबरा-सा गया, परन्तु शीघ्र ही अपने मन को दृढ़ कर बोला, "मैं यह कहने जा रहा था कि क्या मैं आपके हाथ को पकड़ने का अधिकार पाने योग्य हूँ ?"

"ओह !" प्रमिला ने मुस्कराते हुए कहा, "जिस बात का अधिकार पाने के विषय में आप पूछ ही रहे हैं, उसको पूछने से पहिले प्राप्त भी करना चाहते हैं ? हाथ पकड़ने का अधिकार, हाथ पकड़कर पूछना चाहते थे ?"

बलवंतसिंह हँस पड़ा। उसने कहा, "यह तो सिम्बौलिक (प्रतीकात्मक) था।"

"ठीक है; परन्तु एक ओर तो आप एक बात पाने के विषय में पूछ रहे हैं और दूसरी ओर उत्तर पाना तो दूर रहा, पूछने से भी पहिले उसी बात को प्राप्त कर लेना चाहते हैं ? छोड़िये इस बात को। आप मेरा हाथ पकड़कर क्या करेंगे ?"

"आपका भुर्ता करूँगा। क्या होता है जब एक पुरुष किसी स्त्री का हाथ पकड़ता है ? मैं आपको अपनी पत्नी बनाना चाहता हूँ।"

"तो यह कहिये कि आप मुझसे विवाह का प्रस्ताव कर रहे हैं ! मुझको यह प्रस्ताव कुछ बुरा प्रतीत नहीं हुआ; परन्तु मेरी माँ हैं और मेरा एक भाई भी है। उसने बहुत अच्छे नम्बर लेकर हॉयर-सेकण्डरी पास किया है और वह अब कॉलेज में पढ़ने की इच्छा रखता है। अतएव जब तक वह पढ़ाई समाप्त नहीं कर लेता, मैं नौकरी छोड़ नहीं सकती। माँ और भाई के खर्चे के लिए रुपया आना ही चाहिए। इसका अभिप्राय यह हुआ कि मैं, कम-से-कम तीन वर्ष तक नौकरी छोड़ नहीं सकती और विवाह नहीं कर सकती।"

"यह तो कोई लम्बी-चौड़ी कठिनाई नहीं है। पहिली बात तो यह कि जितने रुपये तुमको इस नौकरी से मिलते हैं, उससे अधिक तो मैं ही आपके भाई और माँ को दे सकता हूँ अर्थात् चार-पाँच वर्ष के लिए मैं अपनी पत्नी को पत्नी की पदवी देते हुए एक नौकरी भी दे सकता हूँ।"

"नौकरी में क्या काम लेंगे ?"

"जब पत्नी बनना स्वीकार कर लिया जायेगा तो काम मिल जायेगा। मेरे पास बहुत काम है। एक-आध अपनी पत्नी के लिए नियत कर दूँगा।"

"इसके अतिरिक्त इस प्रस्ताव की प्रथम स्वीकृति मेरी माँ से माँगनी होगी। मेरी स्वीकृति तो पीछे होगी।"

"यह भी हो जायेगी।"

"कैसे होगी ?"

"मैं अपनी माँ को आपकी माँ के पास भेज दूँगा। मेरा विचार है कि वे आपकी माँ को मना लेंगी।"

"एक तीसरी बात भी है। वह है आपका नीरा से सम्बन्ध।

"देखिये, मैं···! मैं आपके मन के भावों को एक-दो महीनों से समझ रही हूँ। इस कारण मैंने आपके विषय में कुछ समझा-बूझा है। मेरा अनुमान है कि आपका नीरादेवी से काफी घनिष्ठ सम्बन्ध है। यह तो कोई नहीं कह सकता कि वह सम्बन्ध किस प्रकार का है। परन्तु है वह घनिष्ट। नीरा से मैं कुछ भी सम्बन्ध रखना नहीं चाहती। इस कारण पछ रही हूँ।"

बलवन्तसिंह एक-दो क्षण तक प्रमिला की आँखों में देखता रहा। पश्चात् उसने कहा, "मैं समझता हूँ कि अब समय आ गया है कि आपको पूर्ण परिस्थिति से अवगत कर दूँ। पत्नी बनने से पूर्व आपको मेरे नीरा से सम्बन्ध का ज्ञान हो जाना चाहिए।

"नीरा और मेरा परिचय एक चाय-पार्टी पर हुआ था। इसको दो वर्ष से ऊपर हो चुके हैं। पिछले वर्ष दो मास तक हम इकट्ठे काश्मीर में

घूमते रहे हैं और वास्तविक रूप में वह मेरी पत्नी तब ही बन गई थी। तबसे ही मैं उससे विवाह करने का प्रस्ताव करता रहा हूँ, परन्तु वह नहीं मानी। उसका विवाह के विषय में विचार केवल सम्भोग-मात्र से है। वह सदा इस यत्न में रहती है कि सन्तान न हो। इसके लिए वह 'प्रौफिलैक्टिक्स' प्रयोग में लाती है। मैं इस प्रकार के जीवन से ऊब गया हूँ। घर पर, जो सुख-सुविधा और प्रेम तथा परस्पर-निर्भरता का वातावरण रहता है, वह बन नहीं पाता। बिना विवाह के न मैं उसको अपने घर में रख सकता हूँ, न वह मेरे घर में रह सकती है। हमारी सुख की घड़ियाँ, यदि इसको सुख कहा जाये, तो होटलों और रैस्टोरां में होती रही हैं। कुछ दिन हुए, मैंने नीरा से अन्तिम बार कहा था कि विवाह हो जाना चाहिए और उसको मेरे घर चलकर रहना चाहिए, परन्तु उसने इस प्रस्ताव को ठुकराते हुए कह दिया कि वह यौन-सम्बन्ध के अतिरिक्त किसी प्रकार से भी न तो मेरे आश्रित होना चाहती है और न ही किसी का आश्रय बनना चाहती है। मैंने उसको कहा भी था कि इस प्रकार हमारे सम्बन्ध टूट भी सकते हैं। इस पर उसने कहा था कि वह इस बात की चिन्ता नहीं करती। उस दिन के पश्चात् मैं उससे मिलने नहीं गया। अभी तक तो उसने भी मुझसे मिलने का यत्न नहीं किया।"

प्रमिला यह कथा सुन कितनी ही देर तक विचार-मग्न बैठी रही। इस पर बलवन्तसिंह ने कहा, "मैं घरेलू-जीवन के लिए व्याकुल हो रहा हूँ। इस पर आप जैसी लड़की से परिचय भाग्य की बात समझता हूँ। यदि आपको मेरा प्रस्ताव अरुचिकर न हो तो मैं अपनी माँ को आपकी माँ के पास भेज सकता हूँ। वे आजकल दिल्ली में ही हैं।"

: ४ :

नीरा का दृष्टिकोण दूसरा था। वह समझती थी कि घरेलू वातावरण तो कृत्रिम ढंग से बनाया जा सकता है और इसकी आवश्यकता वह

अभी अनुभव नहीं करती थी। उसकी सब प्रकार की तृष्णाएँ पूर्ण हो रही थीं। केवल यौन-तृष्णा के लिए वह किसी पुरुष की संगत की आवश्यकता समझती थी। डॉक्टर बलवंतसिंह इस कमी को पूरा कर रहा था।

डॉक्टर बलवंतसिंह ने जब उसको यह कहा था कि विवाह न करने की अवस्था में उनका वर्तमान सम्बन्ध टूट भी सकता है तो उसने कह दिया था कि वह इस बात की चिन्ता नहीं करती। वास्तव में वह विश्वास रखती थी कि वह इतनी सुन्दर है कि डॉक्टर उसको छोड़कर जा नहीं सकता।

जब कई दिन तक डॉक्टर नहीं आया तो उसने समझा कि वह उसको विवाह-बन्धन में बाँधने के लिए विवश करना चाहता है। जब देखेगा कि वह उसको विवश नहीं कर सका, तो फिर पुराने सम्बन्ध बना लेगा। कुछ और दिन व्यतीत होने पर भी जब डॉक्टर के दर्शन नहीं हुए, तो उसमें स्वाभिमान जाग पड़ा। वह विचार करने लगी कि क्या वह इतनी उसके अधीन हो गई है कि उसके बिना जीवन दुर्भर हो जायेगा? वह मन में यह संकल्प कर बैठी कि वह स्वयं उसके पीछे नहीं भागेगी। डॉक्टर को आना होगा तो स्वयं ही उसके पास आयेगा।

एक मास व्यतीत होते-होते परिस्थिति बदली। उसको कुछ ऐसा प्रतीत हुआ कि माँ बनने के लक्षण उसमें दिखाई देने लगे हैं। वह इस विषय में इतनी सावधान रहती थी कि उसको विश्वास ही नहीं होता था कि उसके गर्भ स्थित हो सकता है। वह अनियमितपन में कोई अन्य कारण ही मानती रही; परन्तु पन्द्रह-बीस दिन और निकल जाने पर उसको अपनी परिवर्तित अवस्था का विश्वास हो गया।

अब वह इससे छुटकारा पाने का ढंग सोचने लगी। पहिले तो इस प्रयोजन से लिखे व्यायाम करने लगी। जब उनसे कुछ नहीं बना तो वह सफाई करवा देने के लिए उचित लेडी-डॉक्टर की खोज करने लगी। इस सब समय में उसको एक बार भी विचार नहीं आया कि डॉक्टर बलवंतसिंह से मिलकर विवाह के लिए मान जाये। वह समझती थी कि

यह तो दो-चार दिन की तकलीफ़ है और विवाह में जीवन-भर का बन्धन होगा।

नई दिल्ली में बंगाली मार्केट के पास एक लेडी-डॉक्टर जगन का पता लगा तो वह उसके पास जा पहुँची। उसने पूर्ण वृत्तान्त सुन और नीरा को मोटर में आया देख, एक सहस्र रुपया माँग लिया। बहुत कहने-सुनने के बाद सात-सौ पर फ़ैसला हुआ। साथ ही डॉक्टर का यह कहना था कि वह अपने पति को साथ लेकर आये। उसने बताया कि वह अविवाहित लड़कियों के गर्भपात नहीं करती।

इस बात ने नीरा को गम्भीर विचार में डाल दिया। उसने लेडी-डॉक्टर से कहा भी कि वह अपने पति की इच्छा से ही ऐसा करवा रही है और वे स्वयं आ नहीं सकते। इस पर भी लेडी डॉक्टर अपनी इस शर्त पर दृढ़ रही। उसने कहा कि वह किसी का भेद खोलना पसन्द नहीं करती। इससे उसकी अपनी बदनामी होती है। इस पर भी उसका निश्चय है कि बिना पुरुष के साथ आये, वह उसको हाथ नहीं लगायेगी।

नीरा के लिए यह भी एक समस्या हो गई कि क्या वह डॉक्टर बलवन्तसिंह को यहाँ आने के लिए मनाये? क्या वह आना स्वीकार करेगा? उसको विश्वास था कि स्वयं डॉक्टर होते हुए, वह इस लेडी-डॉक्टर के पास आना पसन्द नहीं करेगा। तो फिर उसके सामने रहस्य खोलने की आवश्यकता ही क्या है? इससे वह किसी को भाड़े पर वहाँ लाने का विचार करने लगी।

लेडी डॉक्टर को देने के लिए रुपया तो उसके पास तैयार था। हाँ, उसके पास अस्थायी रूप में बनने के लिए पति कोई नहीं था। इससे वह भारी चिन्ता में डूब गई। वह घर लौट आई।

चन्द्र नीरा के आभा-हीन मुख को कई दिन से देख रहा था। साथ ही वह उसको डॉक्टर बलवन्तसिंह के साथ आते-जाते नहीं देखता था। इससे वह नीरा से इस सबका कारण जानने के लिए उत्सुक हो उठा। परन्तु दिल्ली में निर्वाचनों के दिन थे और वह कम्युनिस्ट उम्मीदवारों

की सहायता में दिन-रात लगा हुआ था। इस कारण नीरा से एकान्त में मिलने का अवसर नहीं मिल रहा था।

निर्वाचन समाप्त हुए। परिणाम घोषित हो गये। दिल्ली में जनसंघ को एक भी स्थान नहीं मिला। हिन्दू महा सभा भी सर्वथा असफल रही। कम्युनिस्टों द्वारा समर्थित दो व्यक्ति सफल हो गये और कांग्रेस को आशातीत सफलता मिली। इन सफलताओं की घोषणा के पश्चात् दावतें होने लगीं। अब चन्द्र को घर आने और अपने भावी प्रोग्राम पर विचार करने का अवसर मिलने लगा।

एक बात से वह बहुत प्रसन्न था कि उसके पिता के विपुल प्रयत्न करने पर भी जनसंघ को घोर असफलता मिली। वह अपने एक समर्थित उम्मीदवार की सफलता के जशन से वापिस लौटा तो माथुर चाय पर बैठे मिल गये। चन्द्र ने कुछ मुस्कराकर कहा, "पिताजी! जनसंघ की असफलता पर तो सबको विस्मय हो रहा है। जितना शोर था, अब आपकी संस्था की उतनी ही भद्द हुई है।"

माथुर ने भी मुस्कराते हुए कहा, "कुछ शिक्षा तो हमको मिली है इन निर्वाचनों से। इस पर तो हम अवकाश के समय विचार करेंगे, परन्तु तुम्हारी पार्टी जिनका समर्थन करती रही, वे तो कांग्रेस में सम्मिलित हो रहे हैं। वे तो कभी भी कम्युनिस्ट नहीं थे।"

"इस बात की हमको चिन्ता नहीं। हम तो अपनी पार्टी के प्रचार के लिए एक-आध प्लेट-फार्म चाहते थे। वह मिल गया था।"

"इतना कुछ लाभ तो जनसंघ को भी हुआ है। हमने अपना कार्य-क्षेत्र निर्माण किया है। वास्तविक कार्य तो अब ही होगा।"

चन्द्र ने देखा कि निर्वाचनों में की पराजय के पश्चात् भी उसके पिता के विचारों में अन्तर नहीं पड़ा। अपने इस अनुमान की जाँच के लिए उसने कह दिया, "मैं समझता था कि इस पराजय के पश्चात् आप अपने सिद्धान्तों पर पुनः अवलोकन करने पर विवश हो जायेंगे।"

"सिद्धान्तों पर अवलोकन तो सदैव चलता रहता है। तुम लोगों

की भाँति हम ऐसे नहीं हैं कि अढ़ाई-सौ वर्ष पूर्व के एक यहूदी के अधूरे-ज्ञान से उत्पन्न विचारों को धर्मपुस्तक की भाँति निर्भ्रान्त मानते रहें। हाँ, एक सिद्धान्त हमारा अटल है। वह है सबके साथ यथायोग्य व्यवहार रखने का। इस मौलिक सिद्धान्त के अधीन हम अपनी कार्य-विधियों को बदलते रहते हैं।"

चन्द्र पिता की युक्ति के सामने अपनी बात को चला नहीं सका। इस कारण चाय समाप्त कर अपने कमरे में जाने लगा तो नीरा आई और अपने कमरे को चल पड़ी। चन्द्र ने उसको देखा तो आवाज़ दे दी, "नीरा दीदी! चाय तैयार है।"

"पी चुकी हूँ।" यह कह वह अपने कमरे में चली गई। चन्द्र अपने कमरे में जाता-जाता रुक गया और नीरा के पीछे-पीछे उसके कमरे में जा पहुँचा। नीरा धम्म से आराम कुर्सी पर बैठी तो चन्द्र ने उसके सामने खड़े होकर पूछा, "क्या है दीदी!"

"कुछ नहीं, मैं थक गई हूँ।"

"तभी तो कहता था कि चाय पी लो। यहाँ मँगवाऊँ?" बिना नीरा के उत्तर की प्रतीक्षा किये उसने बैरा को आवाज़ दे दी, "ओ मीटू! दीदी के लिए चाय यहाँ ही ले आओ।"

पश्चात् नीरा के सामने की कुर्सी पर बैठकर कहने लगा, "दीदी! तुम्हारा मुख देखने से यह पता चलता है कि तुम कुछ बीमार हो। क्या है तुमको?"

"कुछ कष्ट तो है।" नीरा के मन में चन्द्र उसकी समस्या का सुझाव प्रतीत हुआ।

"क्या कष्ट है?"

"तुम समझ नहीं सकोगे।"

"मैं दूध-पीता बच्चा तो हूँ नहीं। सब-कुछ समझता हूँ। किसी डॉक्टर को दिखाया है क्या?"

"दिखाया है। वह ऑपरेशन के लिए कहता है।"

"ओह ! तो पिताजी से कहूँ ?"

"नहीं, यह उनको बताने की बात नहीं है। वे पिछली सदी के जीव बीसवीं सदी की बातों को समझ नहीं सकेंगे।"

"समझा। तो फिर ?"

"तुम मेरे साथ चलो तो ऑपरेशन हो सकता है।"

"डॉक्टर बलवंतसिंह क्या साथ जाने से इन्कार करते हैं ?"

"मैंने उनसे कुछ कहा ही नहीं। कहना भी नहीं चाहती।"

चन्द्र गम्भीर विचार में पड़ गया। वास्तव में वह नीरा से अधिक समझदार था। इस कारण उसने नीरा की इस उलझन में सहायता करने का निश्चय कर लिया। उसने बिना बीमारी के विषय में अधिक पूछ-गीछ किये पूछा, "किस डॉक्टर को दिखाया है ?"

"लेडी डॉक्टर जगन को।"

"जो बंगाली मार्केट में काम करती है ?"

"हाँ।"

"तुम उस मूर्ख के पास कैसे पहुँच गई थीं ?"

"क्यों ?"

"वह कुछ नहीं जानती। मैं तुमको अपनी एक परिचित लेडी-डॉक्टर के पास ले चलूँगा। सब ठीक हो जायेगा।"

इस समय बैरा चाय लेकर आ गया। वह चाय रखकर गया तो नीरा ने पूछा, "क्या देना पड़ेगा ?"

"ऐसे केसिज़ का वह दो सौ रुपया लेती है।"

"और ?"

"और क्या ? यदि उसके नर्सिंग होम में ठहरने की आवश्यकता पड़ी तो बीस रुपया प्रतिदिन का और लेगी।"

नीरा को समझ आ गया कि चन्द्र इस विषय में उससे अधिक जानता है। अतएव उसने कह दिया, "चन्द्र भैया ! मेरी इस विषय में सहायता कर दो। मैं बहुत एहसान मानूँगी।"

"तो चलो अभी चलें ।"

: ५ :

नीरा ने चाय समाप्त कर, अपनी पर्स में से नोटों का एक बण्डल निकाल चन्द्र के हाथ में देते हुए कहा, "अभी ये पाँच सौ हैं । ज़रूरत होगी तो और मिल जायेंगे ।"

चन्द्र और नीरा बाहर निकल पड़े । चन्द्र के कहने के अनुसार टैक्सी करने का विचार किया गया । चन्द्र टैक्सी करने गया और नीरा कोठी की ड्योढ़ी में खड़ी प्रतीक्षा करने लगी । इस समय चौधरी मथुरासिंह और मोतीराम कोठी में दाखिल हुए । मोतीराम को नीरा की उस दिन की सूरत स्मरण थी, जब वह बाल कटवा कर हेयर-कटर की दुकान में से निकली थी । आज उसकी सूरत देख, वह उसको तुरन्त पहिचान नहीं सका । नीरा के मुख पर आज चिन्ता और भय से मुर्दनी छाई हुई थी । वह ड्योढ़ी में खंभे से आश्रय लिये खड़ी थी । मथुरासिंह ने पहिचाना तो उसको भी भारी विस्मय हुआ । उसको समझ आया कि माथुर साहब ने अपनी लड़की का विवाह निमन्त्रण दिये बिना कर दिया है । नीरा बीमार प्रतीत होती थी ।

इस प्रकार के विचारों में वे माथुर साहब की कोठी में प्रवेश कर गये । माथुर अकेला था और कोई कानूनी पुस्तक पढ़ रहा था । वह चौधरी मथुरासिंह और मोतीराम को आया देख समझ गया कि चन्द्र की भाँति वे भी उसकी खिल्ली उड़ाने आये हैं; परन्तु वह तो जीवन भर मुकद्दमे जीतता और हारता रहा था । इससे न तो उसको जीतने पर हर्ष होता था और न ही हारने पर दुःख । उसके मुवक्किल खुशियाँ मनाते थे अथवा शोकग्रस्त होते थे । वह सदा एक समान गम्भीर बना रहता था । यह उसका स्वभाव बन गया था कि वह प्रत्येक विजय के समयदेखता था कि किस बात पर उसके पक्ष की जीत हुई है और किस बात से हार । यह मनोवृत्ति उसकी इन निर्वाचनों में जन-संघ की हार के समय भी थी ।

उसके लिए यह हार एक अध्ययन और मनन का विषय बन गया था।

"आइये चौधरी साहब! बहुत-बहुत बधाई हो।" माथुर ने उनको बैठक में प्रवेश करते देख कहा।

"सब ठीक है।" चौधरी ने बैठते हुए कहा, "हमको अफ़सोस है कि हम बधाई नहीं दे सकते। पर माथुर साहब! आपकी पार्टी का हल्ला तो बहुत था। हल्ले के अनुपात में परिणाम तो पसंगा-भर भी नहीं निकला।"

"हाँ, यह तो हम जानते थे कि हम बहुमत में नहीं आ सकते थे, परन्तु हमारी इतनी हार कि हम दिल्ली में एक भी सीट नहीं पा सकेंगे, की हम आशा नहीं करते थे।"

"पर यह हुआ कैसे?"

"इसके कुछ कारण तो मैं जानता हूँ, परन्तु वे बाहरी कारण हैं। आन्तरिक कारण भी हैं, जिनके विषय में हमको एक जाँच समिति बनानी पड़ेगी। इस समय जो भी कारण बताये जायेंगे, वे कोरे अनुमान-मात्र ही तो होंगे"

"तो आप अपनी हार का वैज्ञानिक रूप में अध्ययन करना चाहते हैं?"

"हाँ।"

"ठीक है। पर हम तो आपको कुछ और ही कहने आये थे।" मोतीराम ने अनौपचारिक बात छोड़ मतलब की बात आरम्भ कर दी। उसने कहा, "आपसे हमारा सम्बन्ध बहुत मधुर रहा है। हम समझते हैं कि आप जैसे योग्य आदमी के लिए कांग्रेस जैसी पार्टी ही उपयुक्त है। आप इन बच्चों में भाग-दौड़ करते शोभा नहीं पाते।"

"कांग्रेस में सम्मिलित तो हुआ था, परन्तु वहाँ मन नहीं जमा।"

"जो बात आपको पसन्द नहीं आई, वह व्यक्तिगत ही तो हो सकती है। उसका सुधार हो सकता है। जहाँ तक सिद्धान्त का प्रश्न है, वह तो आप भी मानेंगे कि कांग्रेस ही एक मानी हुई पार्टी है और इसमें सब

राष्ट्रवादियों को सम्मिलित हो, इसके हाथों को सुदृढ़ करना चाहिए। इस समय हम प्रथम पंचवर्षीय योजना चला रहे हैं। इसकी सफलता पर बहुत-कुछ निर्भर है। भावी सन्तान के सुख-सम्पदा-सम्पन्न होने अथवा भूखे मरने का प्रश्न इस योजना की सफलता-असफलता के साथ सम्बन्धित है।"

माथुर ने गम्भीर हो इस कथन को सुना और कहा, "मोतीराम! यह बात यदि कोई कांग्रेस का वह नेता, जिसको योजना का ज्ञान होता, आकर मुझको कहता तो उससे एक-आध प्रश्न पूछता; परन्तु आपको इस योजना की वकालत करते और योजना के लिए कांग्रेस के साथ सहयोग की बात कहते सुन विस्मय हुआ है। आप जानते नहीं कि योजना क्या है?

"इस पर भी मैं आपसे पूछता हूँ कि क्या यह योजना देशोन्नति के लिए है अथवा कांग्रेस दल की उन्नति के लिए?"

"देशोन्नति के लिए।" चौधरी ने कहा।

"तो देश के वे रहने वाले, कांग्रेस के बाहर रहते हुए इन योजनाओं में सहयोग क्यों नहीं दे सकते? योजना को सफल करने के लिए कांग्रेस में सम्मिलित होना क्यों आवश्यक है? यदि योजना पूर्ण देश की वस्तु है, तो सब देशवासियों की एक हाई-पॉवर समिति इसके निर्माण और संचालन के लिए क्यों नहीं बनाई गई?"

"निर्माण के समय तो सब योग्य आदमियों से राय ली गई है।"

"राय लेना एक बात है और संचालन करना दूसरी बात है। उदाहरण के रूप में मैं तुमको देशी चिकित्सा-शास्त्र के विषय में बताता हूँ। योजना बनाते समय वैद्यों और हकीमों से राय ली गई थी; परन्तु किया वही गया, जो कांग्रेसी स्वास्थ्य मन्त्री के दिमाग में घुसा हुआ था। पार्लियामेण्ट में भी सदस्यों ने हल्ला-गुल्ला मचाया, परन्तु पार्टी के नियन्त्रण का वास्ता डालकर डॉक्टरी चिकित्सा के लिए एक अरब रुपये से ऊपर दिया जा रहा है और आयुर्वेद तथा यूनानी के विषय के लिए

दो करोड़ से भी कम दिये जाने को कहा है। राय लेने से काम नहीं चलता।

"मैं एक बात आपको और बता देना चाहता हूँ कि निर्वाचनों में तो राजनीतिक विषयों और नीतियों के आधार पर उम्मीदवार खड़े किये जाते हैं, परन्तु योजना तो राजनीतिक विषय नहीं। इस कारण इसके लिए तो सब दलों और योजना की विद्याओं में योग्य विद्वानों की निर्माण और संचालन समिति होनी चाहिए।"

"पर यह कैसे हो सकता है? राज्य कांग्रेस के हाथ में है और योजना राज्य की सहायता के बिना चल नहीं सकती। अतः कांग्रेस के बाहर का कोई आदमी कैसे सरकारी योजना में हस्तक्षेप कर सकता है?"

"यही तो मेरी आपत्ति है, इस वर्तमान शासन पर। योजना का सम्बन्ध देश के शासन से नहीं है। कोई भी दल सत्तारूढ़ हो, उसकी योजना चलाने के लिए राजनीति से पृथ_ एक शसक्त समिति बनानी चाहिए, जिससे शासक दल बदल जाने पर भी योजना में अन्तर न पड़ जाये।

"पर आप तो मुझको कांग्रेस में सम्मिलित होने के लिए कह रहे हैं, क्योंकि देश की योजना चल रही है अर्थात् कांग्रेस से बाहर रहने वालों का योजना से कोई वास्ता नहीं।"

चौधरी निरुत्तर हो चुका था। इस पर भी उसने कुछ कहने के विचार से कह दिया, "वकील साहब! कांग्रेस हो अथवा कोई अन्य दल हो, है तो योजना। अच्छी तो है। तो सबका सहयोग होना ही चाहिए।"

"यह जो आपने कहा है कि है तो योजना और अच्छी तो है, इस विषय में भी मेरा मतभेद है। व्याख्या की बातों को छोड़ भी दूँ, तो भी यह समझ लेना चाहिए कि सिद्धान्त से भी योजना गलत दिशा से आरम्भ की गई है। हमको शिक्षा से आरम्भ करना चाहिए था। हमको देश में चरित्र-निर्माण से योजना का श्रीगणेश करना चाहिए था। इस

अवस्था में तो करों में महान् वृद्धि कर अथवा विदेशों से ऋण लेकर चोर और अयोग्य ठेकेदारों और सरकारी नौकरों के हाथ में वह रुपया व्यर्थ गँवाने की योजना बन जायेगी।"

मोतीराम समझ रहा था कि जिस प्रयोजन से वे वहाँ आये थे, वह तो व्यर्थ की बहस में भूला जा रहा है। उसने चौधरी को संकेत कर कहा, "माथुर साहब! मैं तो एक और ही प्रयोजन से आज आया हूँ। इन सार्वजनिक कामों में तो मत-भेद चलता ही रहेगा। मैं तो उस काम के लिए आया हूँ, जिसमें मत-भेद हो ही नहीं सकता।

"मेरी बीवी रामलाल के घर में रहती है और अपने घर नहीं आती। हमने सुना है कि रामलाल का कारोबार और उसके घर का प्रबन्ध आपके संरक्षण में है। रामलाल ने आपके नाम कुछ लिखा-पढ़ी कर दी है। वह स्वयं कहाँ है, हम नहीं जानते। इस प्रकार आपसे ही इस विषय में बातचीत करने आया हूँ।"

"फरमाइये। क्या चाहते हैं आप?"

"सुन्दरी आपकी नौकरानी है अथवा बीवी?"

माथुर का मुख क्रोध से लाल हो गया। उसको कुछ ऐसा मालूम हुआ कि वास्तव में पहले मीठी-मीठी बातें कर, फिर ये लड़ने आये हैं। इससे उसने अपने क्रोध पर नियन्त्रण रख, सतर्क हो कहा, "देखो मोतीराम! मैं रामलाल के कारोबार को देखता हूँ। वह अपनी बीवी के पाकिस्तान भेज दिये जाने के कारण संसार से विरक्त हो कहीं उत्तर-काशी इत्यादि स्थान पर रहकर ध्यान-योग में अपना जीवन लगाने का यत्न कर रहा है। जाने से पूर्व वह मुझको अपनी दुकान और बच्चों का संरक्षक बना गया था। उसके पास कुछ नकद रुपया भी था। वह भी मेरे चार्ज में है। यह रुपया, दुकान और बच्चे यदि वह लौट आया तो उसको वापिस दे देने होंगे, अथवा जब बच्चे बालिग़ होंगे तो उनको सौंप देने चाहियें। जहाँ तक मुझको मालूम है, बच्चों की देखभाल का काम सुन्दरी अपनी इच्छा से करती है। वह मुझसे कुछ वेतन नहीं

लेती। वह न तो नौकरानी है, न ही मेरी बीवी।"

"तो मैं उसको अपने घर ले जा सकता हूँ क्या ?"

"जब वह किसी प्रकार से भी मेरे अधीन नहीं तो मैं कैसे उसके विषय में कुछ कह सकता हूँ ?"

"यदि मैं उसको ले जाऊँ तो आप बच्चों का क्या प्रबन्ध करेंगे ?"

"यदि वह चली जायेगी तो किसी भली औरत को उन बच्चों की देखभाल के लिए मैं नियुक्त कर दूँगा।"

"वे सुन्दरी के साथ मेरे घर पर क्यों नहीं जा सकते ?"

"मैं उन सुकुमार बच्चों को एक 'ब्रोदल' (वेश्यागार) के मैनेजर और एक चीट (धोखेबाज़) के घर नहीं भेज सकता। सुन्दरी जाना चाहती है तो जा सकती है।"

मोतीराम ने अपने को एक वेश्यागार का मैनेजर कहे जाने पर बहुत बुरा माना। उसको क्रुद्ध देख चौधरी ने उसको शान्त करते हुए कहा, "व्यर्थ की बातों पर झगड़ा करने में लाभ नहीं। वकील साहब ! इस विषय पर कोई समझौता नहीं हो सकता क्या ?"

"दादा मोतीराम क्या चाहते हैं ?"

"दो में से एक बात। या तो सुन्दरी को आप रामलाल के घर से निकाल दें, जिससे वह विवश हो अपने पति के घर जा सके। या मोतीराम को रामलाल के घर में सुन्दरी के साथ रहने की स्वीकृति दे दें।"

"जहाँ तक सुन्दरी को घर से निकालने की बात है, मैं नहीं निकालूँगा। वह अपनी स्वेच्छा से रह रही है। वह स्वेच्छा से जायेगी तो मैं रुकावट नहीं डालूँगा। दादा को मैं बच्चों के पास रहने नहीं दूँगा। कारण बता चुका हूँ।"

"तो कोई सूरत नहीं, जिससे बात तय हो सके ?"

"एक बात हो सकती है। मुझको एक-दो दिन में सुन्दरी की इच्छा जानने का अवसर दो। मैं उसको अपने पति के घर जाने की प्रेरणा देने का यत्न करूँगा। दो दिन पश्चात् आपको बता सकता हूँ कि वह

स्वेच्छा से दादा के घर जाना चाहती है अथवा नहीं।"

"वह नहीं जाना चाहती।"

"मुझको भी यत्न करने दो। शायद मैं सफल हो जाऊँ।"

"देखिये माथुर साहब! मोतीराम पेशावर का रहने वाला है। वहाँ के रहने वालों के लिए औरत एक बहुत बड़ा मानबिन्दु है। इसके लिए फ्रन्टी-यर के लोग लड़-मरने को तैयार रहते हैं। मैं इसको यह कहकर यहाँ लाया हूँ कि माथुर साहब हिन्दू हैं। हिन्दू सभ्यता के उपासक हैं। इस कारण वे कभी भी किसी हिन्दू स्त्री को पति का घर छोड़ने की राय नहीं देंगे। मेरी सम्मति है कि आप सुन्दरी को समझाइयेगा तो वह अवश्य मान जायेगी। बच्चों की बात तो केवल आपकी सुविधा के लिए कही थी। यदि आपको कोई अन्य उपयुक्त स्त्री उनकी देखभाल के लिए न मिल सके तो आप बच्चों को सुन्दरी के साथ भेज सकते हैं। एक बात और हो सकती है कि आप मोतीराम को अवसर दें कि वह अपनी स्त्री के पास रहकर, उसको समझा सके।"

माथुर को कुछ ऐसा समझ आ रहा था कि दोनों किसी प्रकार की शरारत करने का फ़ैसला कर आये हैं। वह इनके मन की बात जानने के लिए अवसर और समय चाहता था। इस कारण उसने अपनी पहली बात दुहरा दी, "परसों आना। फिर विचार करेंगे। यदि सुन्दरी अपनी इच्छा से मान जाये तो अच्छा ही है।"

माथुर रामलाल के घर में सुन्दरी की रक्षा का प्रबन्ध करना चाहता था। उसको चौधरी की एक बात खटक रही थी। चौधरी ने कहा था कि फ्रन्टीयर के रहने वालों के लिए औरत एक बड़ा मान का प्रश्न है। इससे वह यह समझा था कि मोतीराम फ़ौजदारी करने पर उतारू हो रहा है। मन में यह विचार कर वह काँप उठा था।

जब मोतीराम और चौधरी मथुरासिंह माथुर को दो दिन का समय देकर कोठी से बाहर निकले तो माथुर ने टेलीफोन उठाया और चीफ कमिश्नर के पी० ए० से मिला लिया। माथुर ने चीफ कमिश्नर

साहब से मिलने का समय नियत कर लिया। यह अगले दिन नौ बजे का था। वह एक तो चीफ कमिश्नर को कहकर सुन्दरी की रक्षा कराना चाहता था और दूसरे मोतीराम के विषय में कुछ पेशबन्दी कराना चाहता था।

: ६ :

चौधरी और मोतीराम माथुर की बैठक से निकले तो परस्पर झगड़ने लगे।

"चौधरी साहब!" मोतीराम ने कहा, "इस समय बैठक में कोई नहीं था। जब उसने कहा था कि मैं 'चीट' हूँ, मैं उसका गला दबाकर काम समाप्त कर देना चाहता था। आपने व्यर्थ में मना कर दिया।"

"मना किया तो ठीक ही किया है। माथुर साहब की लड़की और लड़का हमको कोठी में जाते देख गये थे और यदि आकर वे पिता का मृत शव देखते तो हम पकड़े जाते और पीछे फाँसी के तख्ते पर लटक जाते।"

"बहुत कायर हैं आप चौधरी! यदि पकड़े जाते और मुकद्दमा होता तो उसमें कोई-न-कोई बात ढूँढ ली जाती और हम बच जाते।"

"बच भी जाते तो पंचवर्षीय योजना में जो लाखों का काम मिलने वाला है, सब समाप्त हो जाता।"

"मैं तो मरने-मारने पर तैयार हूँ और आप रुपये-पैसे कमाने की बातें कर रहे हैं।"

"मैं चाहता हूँ कि साँप भी मर जाये और लाठी भी बच जाये।"

"हो चुका। यह वकील बहुत काइयाँ है। कुछ-न-कुछ और बात बना लेगा। हम मूर्खों की भाँति मुख देखते रह जायेंगे।"

मोतीराम का मन चाहता था कि वह चौधरी को विदा कर दे और स्वयं भीतर जाकर माथुर का काम तमाम कर दे। इस कारण वह कोठी के बाहर आकर ठहर गया। उस दिन कोठी का चौकीदार भी वहाँ नहीं

था और मोतीराम इस अवसर को खोना नहीं चाहता था। उसने चौधरी को कहा, "तुम जाओ। मैं अभी थोड़ी देर में आऊँगा।"

चौधरी मोतीराम के मन की भावना को समझता था। इस कारण उसको समझाने लगा कि कोई काम उतावली में नहीं करना चाहिये। वह मोतीराम को आश्वासन दे रहा था कि सुन्दरी उसके घर अवश्य आ जायेगी। इसी समय सामने से एक टैक्सी, बहुत वेग से भागती हुई आई। मोतीराम और चौधरी कोठी के बाहर सड़क पर खड़े थे।

चौधरी ने कहा, "देखो, देखो! एक ओर हट जाओ। कोई बेवकूफ़ चला आ रहा है।"

टैक्सी कोठी के अन्दर जाकर ठहरी और चन्द्र उसमें से निकल, भागकर कोठी के भीतर चला गया। चौधरी ने चन्द्र के मुख पर घबराहट के चिह्न देखे थे। उसके मन में इस घबराहट का कारण जानने की इच्छा उत्पन्न हुई। वह तो भीतर जा माथुर साहब से पता करना चाहता था, परन्तु मोतीराम ने टैक्सी-ड्राइवर से ही पूछ लिया, "कहाँ से लाये हो इनको?"

"यहीं चाँदनी चौक में, लेडी डॉक्टर सरवर के यहाँ से। वहाँ कोई बीमार है और यह बाबू गाड़ी भगाता हुआ कुछ लेने आया है।"

मोतीराम डॉक्टर सरवर के विषय में जानता था। वह एक क्षण तक नीरा के वहाँ जाने के विषय पर विचार करता रहा। एकाएक नीरा का आभा-हीन मुख, जैसा उसने उसके जाते समय देखा था, उसकी आँखों के सामने आ गया। उसको नीरा का वह रूप भी स्मरण हो आया, जो उसने दो वर्ष पूर्व, उसके हेयर-ड्रेसर की दुकान में से निकलते समय देखा था। उसको कुछ सन्देह हुआ तो उसने चौधरी का हाथ पकड़ कर कोठी से बाहर ले जाते हुए कहा, "चौधरी! बड़ा मज़ा रहेगा। चलो ज़रा डॉक्टर सरवर के यहाँ चलें।"

"वहाँ क्या है?"

"माथुर साहब की लड़की वहाँ गई है और कुछ गड़बड़ हो गई है।"

चौधरी कुछ समझ नहीं सका था। इस पर भी वह मोतीराम से घसीटा हुआ मेन बाज़ार की ओर जा रहा था। उनको मार्ग में ही एक खाली टैक्सी जाती मिल गई और वे डॉक्टर सरवर के मकान के आगे जा पहुँचे। लेडी डॉक्टर दीवान-हॉल की सड़क पर, दीवान-हॉल से कुछ दूर जाकर रहती थी।

मकान के नीचे टैक्सी खड़ी हुई तो डॉक्टर बाहर निकल आई। डॉक्टर के मुख विवर्ण हो रहा था। मोतीराम ने पूछा, "डॉक्टर! अभी एक लड़का चन्द्र यहाँ से गया है न? मरीज़ा का क्या हाल है?"

सरवर मोतीराम को जानती थी। मोतीराम का होटल और वहाँ पर के व्यवसाय का इस क्षेत्र से घना सम्बन्ध था। इस कारण मोतीराम को इस लड़के और लड़की के विषय में जानते देख, उसको आश्चर्य नहीं हुआ। उसने कहा, "तो उसने बताया नहीं आपको?"

"हमको जाते हुए कह गया है कि हम यहाँ पहुँच जावें।"

"चन्द्र कुछ मूर्ख मालूम होता है। बहुत हल्ला करने की आवश्यकता नहीं थी। लड़की तो ऑपरेशन के दो मिनट के भीतर ही मर गई थी। वह लड़की के माता-पिता को सूचना देने गया था।"

"तो उसके शव को ठिकाने लगाने के लिए ही उसने हमको भेजा प्रतीत होता है। अच्छा ऐसा करो कि तुम उसको सी और लपेटकर तैयार रखो। हम एक ट्रक लेकर आते हैं और श्मशान में ले जाकर सब-कुछ ठीक कर देंगे।"

यह कह मोतीराम और चौधरी टैक्सी में बैठ विचार करने लगे कि क्या किया जाये। दोनों की राय बैठी कि थाने में सूचना दे देनी चाहिये। थानेदार परिचित है ही, वह सब-कुछ ठीक कर लेगा। चन्द्र अपने माता-पिता को बुलाने गया है। बहुत ही मज़ा रहे यदि पुलिस के आने पर वे यहाँ शव को लेने आये हुए हों।

मोतीराम ने कहा, "शीघ्र चलो। कहीं मुर्दा ग़ायब हो जाये।"

थानेदार कोतवाली में नहीं था। चौधरी ने उसके घर पर टेलीफ़ोन किया। वहाँ पर वह मिल गया और चौधरी ने अपना परिचय देकर बताया, "बहुत आमदन का केस लेकर आया हूँ। परन्तु विलम्ब नहीं होना चाहिये।"

"बताओ न, क्या बात है?"

"डॉक्टर सरवर के यहाँ गर्भपात कराते हुए एक लड़की मर गई है। अभी शव वहाँ पड़ा है। एक बहुत ही अमीर और मशहूर आदमी की लड़की है। अगर पुलिस समय पर पहुँच जाये तो काम बन जायेगा।"

थानेदार ने कहा, "चौधरी साहब! डॉक्टर सरवर पाँच सौ रुपया महीना पुलिस को देती है। इस पर भी अगर आप इस मुआमले में रुचि रखते हों तो मैं ऐसा प्रबन्ध कर सकता हूँ कि केस श्मशान-भूमि में पकड़ा जाये।"

"भाई! एक बड़ी मुर्ग़ी है। पकड़ने से मतलब नहीं। मतलब उनको तंग करने से है और साथ ही कुछ आमदन की सूरत करने से है।"

"अच्छी बात है। ड्यूटी पर जो इन्स्पेक्टर है, उसको टेलीफ़ोन पर बुला दो।"

ड्यूटी पर नियुक्त इन्स्पेक्टर हरबंससिंह को टेलीफ़ोन पर बुलाया गया। थानेदार ने उसको कह दिया कि वह दो कॉन्स्टेबलों को लेकर डॉक्टर सरवर के घर चला जाये और वह स्वयं सीधा वहाँ पहुँच रहा है। थानेदार ने यह भी कह दिया कि बहुत हल्ला-गुल्ला नहीं करना।

हरबंससिंह दो कॉन्स्टेबलों को लेकर वहाँ पहुँच गया। उनको आया देख, डॉक्टर सरवर काँप उठी। बहुत कठिनाई से हृदय को दृढ़ कर वह बाहर आई और हैड-कॉन्स्टेबल से पूछने लगी, "क्या बात है?"

"हम यहाँ पहरा देने आये हैं। थानेदार साहब स्वयं आ रहे हैं।"

"इतने में तो मेरी भारी बदनामी हो जायेगी।"

"यह थानेदार साहब से कहियेगा।"

"तो आप भीतर आ जाइये।"

वे मकान के अन्दर हो, दरवाज़ा बन्द कर, मार्ग रोक बैठ गये। हरबंससिंह जानता था कि डॉक्टर पुलिस के मेहरबानों में से है। इस कारण वह अपनी ओर से कुछ कहना नहीं चाहता था। इस पर भी थानेदार साहब के आने तक वह मार्ग रोककर बैठ गया।

भीतर टेलीफ़ोन खड़का। डॉक्टर उठकर टेलीफ़ोन सुनने चली गई। हरबंससिंह भी उसके साथ-साथ वहाँ जा पहुँचा। डॉक्टर को यह बात ठीक नहीं लगी। इस पर भी वह कुछ कर न सकी। डॉक्टर ने टेलीफ़ोन उठाया। ज्यों-ज्यों वह टेलीफ़ोन सुनती जाती थी, उसका हाथ, जो टेलीफ़ोन पकड़े था, काँपता जा रहा था। हरबंससिंह यह देख रहा था। वह समझ गया कि अवश्य कोई मुआमला है, जो बहुत ही संगीन है। इस कारण उसने झपटकर टेलीफ़ोन पकड़ लिया और अपने कान से लगाकर सुनने लगा। टेलीफ़ोन में कोई कह रहा था, "डॉक्टर! तुम बोलती क्यों नहीं? मैंने तुमको जो कहा है, वह तुम समझी हो अथवा नहीं?"

हरबंस सिंह ने उत्तर दिया, "साहब! डॉक्टर दूसरे कमरे में मरीज़ को देख रही हैं। आप क्या चाहते हैं?"

"तुम कौन हो?" आवाज़ आई।

"मैं डॉक्टर सरवर का मुलाज़िम हूँ।"

"एक मरीज़ा तुम्हारे यहाँ मर गई है न?"

"जी।"

"उसकी पुलिस में रिपोर्ट कर दो।"

"आप उसके क्या लगते हैं?"

"मैं उस लड़की का बाप हूँ।"

"और आप यह कह रहे हैं?"

"हाँ, मैं चाहता हूँ कि डॉक्टर स्वयं ही उसकी रिपोर्ट कर दे और पुलिस वालों से जैसा मुनासिब समझे फ़ैसला कर ले। वह स्वयं ही उसका दाह-संस्कार कर दे। अगर वह यह नहीं करेगी तो मैं स्वयं

पुलिस में रिपोर्ट कर दूँगा।"

हरबंससिंह नहीं समझा कि इसका क्या उत्तर दे ? उसने केवल यह कहा, "मुझको ऐसा प्रतीत होता है कि आप लड़की के पिता नहीं हैं। कोई दूसरा लड़की के घर वालों को बदनाम करने के लिए यह टेलीफ़ोन कर रहा है।"

"तुम डॉक्टर को बुलाओ। तुम मेरा मतलब नहीं समझ सकते।"

"साहब! डॉक्टर नहीं आ सकतीं।" इस समय थानेदार वहाँ आ गया। डॉक्टर सरवर उसके साथ थी। हरबंससिंह ने टेलीफ़ोन डॉक्टर को देकर कहा, "डॉक्टर! खुद बात करो।"

डॉक्टर ने टेलीफ़ोन में कहा, "हाँ साहब! मैं डॉक्टर हूँ।"

टेलीफ़ोन करने वाले ने कहा, "मैं लड़की का पिता हूँ। मुझको तुम्हारे भेजे हुए आदमी ने मेरी लड़की के विषय में बताया है कि वह तुम्हारे क्लिनिक में मर गई है। मैं चाहता हूँ कि तुम मुआमिले को जैसा चाहो निपट-निपटा लो। यदि तुमने कुछ इधर-उधर करना चाहा तो मैं पुलिस में रिपोर्ट कर दूँगा।"

"आपकी बदनामी होगी।"

"देखो, वह लड़का तुमसे बात करता है, जिसको तुमने मेरे पास भेजा था।"

टेलीफ़ोन में कोई दूसरा बोलने लगा, "डॉक्टर! मेरा पिता कहता है कि उसको बदनामी का भय नहीं है। वह किसी के अधीन नहीं है और एक गुनाहगार के गुनाहों को छुपाना नहीं चाहता। उनका कहना है कि जो पाप करता है, उसको उसका फल भोगना ही चाहिए। वे तो स्वयं ही पुलिस में रिपोर्ट करने जा रहे थे, मगर मैंने तुम्हारी ख़ातिर बहुत मिन्नत-समाजत की है और वे इतना मान गये हैं कि डॉक्टर स्वयं इस केस को निपट ले। वे इसमें हस्तक्षेप नहीं करेंगे।

"इस कारण मेरा विचार है कि किसी एम्बुलैन्स कार में लादकर श्मशान में ले जाओ। मैं वहाँ ही आ रहा हूँ।"

"पर चन्द्र !" डॉक्टर ने रोनी-सी आवाज़ में कहा, "पुलिस तो यहाँ आ गई है। मीना महल वाले मोतीराम को न जाने तुमने क्या बताया है। वह यहाँ आया था और फिर उसने पुलिस में रिपोर्ट कर दी मालूम होती है।"

"तो पुलिस वालों से निपट लो।"

"उसके लिए रुपया चाहिए।"

"कितना चाहिए ? एक सौ तो तुमको दिया ही था।"

"एक सौ से काम नहीं बनेगा। कम-से-कम पाँच सौ और चाहिएं।"

"इतना तो मेरे पास है नहीं। पिताजी एक पैसा नहीं देंगे। हाँ, लड़की की उँगली में एक हीरे की अँगूठी है। उससे काम चला लो।"

डॉक्टर ने टेलीफ़ोन बन्द कर दिया। उसने थानेदार की ओर घूम-कर कहा, "बैठिये।"

इन्स्पेक्टर बैठा तो मोतीराम और चौधरी भी वहाँ आ गये। डॉक्टर ने खड़े-खड़े ही कहा, "यह मुकुट विहारी माथुर की लड़की है। गर्भपात करवाने आई थी। साथ में इसका भाई था। न जाने क्या खराबी हुई कि ऑपरेशन होते ही उसका देहान्त हो गया। मैंने इसके भाई को भेजा था कि वह अपने सम्बन्धियों को लाकर शव को ले जाये। अभी लड़की के पिता का टेलीफोन आया था कि उनमें से कोई नहीं आयेगा। यदि मैं चुपचाप दाह-संस्कार कर दूँ तो ठीक, नहीं तो वह स्वयं पुलिस में रिपोर्ट कर देगा। वह अपनी बदनामी से नहीं डरता।

"अभी लड़की का भाई टेलीफोन में कह रहा था कि माथुर साहब तो पुलिस में रिपोर्ट कर रहे थे, परन्तु लड़के ने उनकी मिन्नत-समाजत कर उनको मना लिया है कि यदि मैं चुपचाप शव का क्रिया-कर्म करा सकूँ तो ठीक, नहीं तो मुआमिला पुलिस में जाना ही चाहिये।"

: ७ :

चौधरी और मोतीराम माथुर की बात सुन चकित रह गये। उनको

उससे यह आशा नहीं थी। उनको विश्वास था कि माथुर लड़की के देहान्त की बात सुन भागा हुआ आयेगा और शव को चुपचाप श्मशान-भूमि पर ले जाकर संस्कार करने का यत्न करेगा। अब उसको पुलिस में रिपोर्ट करने को तैयार देख, वे भौचक्के हो मुख देखते रह गये।

थानेदार ने यह परिस्थिति देख कहा, "इस अवस्था में तो मुझको यह केस रजिस्टर करना ही पड़ेगा। कहीं पीछे माथुर साहब ने किसी बड़े अफ़सर के पास रिपोर्ट कर दी तो मेरा तो काम तमाम हो जायेगा।"

"नहीं इन्स्पेक्टर साहब! वे कुछ नहीं करेंगे।" डॉक्टर ने कहा, "वे चुप रहेंगे और लड़की कहीं भाग गई विख्यात हो जायेगी। इस कारण मेरे हाल पर दया करिये। आप चुपचाप यहाँ से चले जाइये और मुझको इसके संस्कार करने का अवसर दीजिये।"

"क्यों चौधरी साहब?" कोतवाल ने मथुरासिंह की ओर देखकर पूछा, "आप तो कहते थे बहुत आमदन की बात है। यहाँ तो कुछ और ही बात निकली।"

"ये माथुर साहब हमारे लिए एक समस्या बन रहे हैं। जैसी हम उनसे आशा करते हैं, वे सदा उससे उलट ही व्यवहार बनाते हैं।"

"मैं समझता हूँ कि वे ठीक ही कह रहे हैं। एक कानूनदाँ को जो-कुछ करना चाहिये, वही वे करने का विचार रखते हैं। अब तो यह हमारे विचार करने की बात है कि हम क्या करें। कानून तो यह है कि डॉक्टर को हथकड़ी लगाकर हवालात में भेज दूँ और शव को पोस्ट-मार्टम के लिए हस्पताल भेज दूँ। बताइये चौधरी साहब! आप क्या चाहते हैं?"

"मैं समझता हूँ कि हमारी डॉक्टर साहब से शत्रुता नहीं। हम तो माथुर को फँसाकर उससे रुपया ऐंठना चाहते थे। वह फँस नहीं रहा। इस कारण हम इस मुआमिले को 'हशअप' कर देने के लिए ही आपसे सिफारिश करेंगे।"

"पर बात इतनी सरल नहीं, जितनी आप समझते हैं? माथुर क्या-

कुछ कर देगा, मैं नहीं जानता ।"

"आप उससे बात कर लीजिये ।"

"बात करने का अर्थ है रिपोर्ट कर लूँ ।"

"तो फिर क्या किया जाये, कोतवाल साहब? डॉक्टर को तो बचाना ही चाहिये ।"

कोतवाल ने मुस्कराते हुए कहा, "हमारे यहाँ आने की भी तो कुछ दक्षिणा बनती है ।"

"क्या नज़र कर दूँ?" डॉक्टर ने उत्सुकता से पूछा ।

"पाँच सौ । यह कम-से-कम है ।"

डॉक्टर भीतर गई और अपने कमरे में से पाँच सौ रुपये के नोट ले आई । वह उसने कोतवाल साहब की जेब में डालते हुए कहा, "मैं जीवन-भर आपके एहसान में दबी रहूँगी ।"

कोतवाल ने उठते हुए कहा, "अब इस शव को शीघ्र ही श्मशान-भूमि में पहुँचा दो । कहीं देर की तो काम बिगड़ भी सकता है ।"

कोतवाल ने एक सौ रुपया हैड-कॉन्स्टेबल को और पचास-पचास अन्य सिपाहियों को देते हुए कहा, "एक-एक कर यहाँ से चल दो ।"

इधर से निश्चिन्त हो डॉक्टर ने चौधरी को एक दूसरे कमरे में ले जाकर कहा, "इसके शव को ठिकाने लगाने में मेरी सहायता कर दें ।"

इस काम के लिए चौधरी ने दो-सौ रुपये माँगे और वे डॉक्टर ने दे दिये । इस पर चौधरी और मोतीराम शव का प्रबन्ध करने चले गये । सबको विदा कर डॉक्टर नीरा के शव के पास गई और उसकी उंगली में से हीरे की अँगूठी उतार सन्तोष अनुभव करने लगी । उसका अनुमान था कि आर्थिक दृष्टि से वह घाटे में नहीं रही ।

: ८ :

चन्द्र ने नीरा के देहान्त की सूचना सबसे पहिले माँ को देनी उचित समझी । माँ रसोईघर में खाना बनवा रही थी । चन्द्र विवर्ण मुख से

आया और कहने लगा, "माँ! इधर आओ। गड़बड़ हो गई है।"

माँ घबराई हुई बाहर आई तो चन्द्र ने सब वृत्तान्त, जैसा वह जानता था, बताते हुए कहा, "मैं उसको अपनी एक परिचित लेडी डॉक्टर के पास ले गया था। उसने औज़ार डालकर बच्चा निकालने का यत्न किया तो न जाने क्या हुआ कि दो मिनट में ही नीरा के श्वास समाप्त हो गये।"

नीरा की माँ तो अर्ध-चेतनता की अवस्था में वहाँ ही कुर्सी पर बैठ गई। उसके मस्तिष्क में तो ऐसा बवण्डर उठा कि वह समझ नहीं सकी कि क्या करना चाहिए। माँ को सूचित कर चन्द्र पिता के पास पहुँचा और बोला, "पिताजी! भीतर आइये। माँ आपको बुला रही हैं।"

माथुर ने जब पत्नी का पीत मुख देखा, तो उसके माथे पर हाथ रखकर उसे देखने लगा। नीरा की माँ ने चन्द्र की ओर संकेत कर बहुत ही धीमी आवाज़ में कहा, "इससे पूछिये।"

माथुर ने विस्मय में चन्द्र के मुख की ओर देखा तो चन्द्र ने आँखें नीची किये हुए कह दिया, "नीरा का देहान्त हो गया है।"

"कहाँ?"

"डाक्टर सरवर के क्लिनिक में।"

"वहाँ क्यों गई थी?"

चन्द्र ने उत्तर नहीं दिया और भूमि की ओर देखता रहा। माथुर ने अपनी पत्नी को एक चम्मच ब्राण्डी पिलाई तो उसमें कुछ शक्ति का संचार हुआ। माथुर ने उसको बिस्तर पर लेटा दिया और चन्द्र को उसके अपने कमरे में ले जाकर बैठाया और उस पर जिरह करनी आरम्भ कर दी। धीरे-धीरे वह पूर्ण बात से परिचित हो गया। सब बात जान माथुर अपने कार्यालय में चला गया। चन्द्र उसके साथ-साथ था। माथुर टेलीफ़ोन डायरेक्टरी खोल उसमें नम्बर देखने लगा। इस पर चन्द्र ने पूछा, "डाक्टर का नम्बर देख रहे हैं क्या?"

"मैं कोतवाली का नम्बर देख रहा हूँ।"

"क्यों ?"

"उस डॉक्टर की और तुम्हारी रिपोर्ट कर रहा हूँ।"

"क्यों ?"

"तुम लोग हत्या करने के अपराधी हो।"

चन्द्र ने टेलीफोन पर हाथ रखकर कहा, "पिताजी! डॉक्टर और मेरी आप चिन्ता न करिये। इस समय विचारणीय बात तो यह है कि आपका और परिवार का कितना अपमान होता है।"

"अपमान अस्थायी वस्तु है। कुछ ही दिनों में लोग भूल जायेंगे, परन्तु यह पाप छिपाने पर जीवन-भर मन को कष्ट पहुँचता रहेगा। देखो चन्द्र! तुमने समाज का नियम भंग किया है और तुमको उसका दण्ड मिलना चाहिये।"

"दण्ड आप दे दीजिये। मैं चुपचाप सहन कर लूँगा, परन्तु घर की लोक-लाज का विचार कीजिये। डॉक्टर पकड़ी जायेगी, शव का 'पोस्ट-मार्टम' होगा। कल समाचार-पत्रों में छपेगा, 'जन-संघ के एक नेता के पारिवारिक जीवन का कच्चा चिट्ठा'। यह बात भारत-भर में विख्यात हो जायेगी। जहाँ हम जायेंगे, लोग आँखें फाड़-फाड़कर हमारी ओर देखेंगे। वे मन में हँसेंगे और कहेंगे, 'बड़ा नेता बना फिरता था। घर पर अपने बच्चों पर भी देखभाल नहीं कर सका।'

"फिर मुकद्दमा होगा। गवाहियाँ होंगी। महीनों ही समाचार-पत्रों में छपता रहेगा, दिल्ली के विख्यात बैरिस्टर मुकुट बिहारी की लड़की की शव-परीक्षा का परिणाम, शव-परीक्षा करने वाले की साक्षी और फिर कोर्ट का फैसला होगा......।"

"बकवास बन्द करो। यह सब व्यर्थ की बात है। इसके अतिरिक्त मेरा भी तो एक संसार है। वह मेरी आत्मा का जगत है। मैंने इस मूर्ख संसार के अतिरिक्त भी कहीं जाना है। इतने घोर पाप छिपाकर वहाँ मैं क्या मुख लेकर जाऊँगा। तुम बहिन-भाई ने जो-कुछ मेरे लिए किया है, उसको मैं इसी संसार में भोगकर जाना चाहता हूँ।"

इतना कह माथुर ने पुनः डायरेक्टरी देखनी आरम्भ कर दी। इस समय चन्द्र ने झुककर पिता के पाँव पकड़ लिये। उसने कहा, "रिपोर्ट करने से पहिले ही आप मुझको दण्ड क्यों नहीं दे देते ?"

चन्द्र रो रहा था। उसके आँसू टप-टप उसके पिता के पाँवों पर पड़ रहे थे। उसे इस प्रकार विह्वल हो रोते देख माथुर ठहर गया और विचार करने लगा।

चन्द्र के रोने और मिन्नत-समाजत करने का शब्द उसकी माँ सुन, बिस्तर से निकल वहाँ आ गई और माथुर को अन्यमनस्क भाव में बैठे देख तथा बेटे को पिताजी का पाँव पकड़, मिन्नत करते देख स्वयं भी पसीज उठी। उसकी आँखें भी भीग गई थीं। वह वहीं एक कुर्सी पर बैठ पूछने लगी, "क्या हो रहा है ?"

"मैं पुलिस में रिपोर्ट करना चाहता हूँ, जिससे डॉक्टर और चन्द्र पकड़ लिये जायें और इन पर लड़की की हत्या का मुकद्दमा चल सके। परन्तु लड़का फाँसी का तख्ता सामने गड़ा देख मुझको ऐसा करने से मना कर रहा है।"

"ठीक तो कह रहा है। लड़की तो गई, अब लड़के को फाँसी दिलवाना चाहते हो ?"

"देखो रानी ! लड़का और लड़की तो उस दिन ही चले गये थे, जिस दिन इन्होंने माता-पिता का कहना मानना बन्द किया था। यह तो उस नाटक का, जो इन्होंने आरम्भ किया था, अन्तिम 'सीन' (दृश्य) है। अब मैं उस नाटक को, जो लगभग सारा खेला जा चुका है, उलट कैसे सकता हूँ ?"

"पिताजी !" चन्द्र ने कहा, "आप इस बार क्षमा कर दीजिये। मैं इस नाटक को उलट दूँगा।"

"देखो जी !" चन्द्र की माँ ने कहा, "कोई ऐसा ढंग बताओ, जिससे यह बात अब समाप्त हो। लड़के को फाँसी दिलवाने से क्या लड़की की मृत्यु का दुःख कम हो जायेगा ?"

"मुझको तो कुछ समझ नहीं आता कि मैं क्या करूँ ?"

"कुछ ऐसा करो, जिससे लड़की का दाह-संस्कार हो सके। पीछे दूसरी बातों पर विचार कर लेंगे।"

"मैं तो उसमें सम्मिलित होना नहीं चाहता।"

"तो न होइये।"

"मैं नहीं चाहता कि हम में से कोई भी उसके संस्कार के समय वहाँ हो।"

"ठीक है। पर यह होगा कैसे ?"

"वह डॉक्टर स्वयं उसका प्रबन्ध करे।"

"तो उसको टेलीफोन कर दो।"

इस प्रकार एक योजना बन गई और जब तक डॉक्टर को माथुर ने यह नहीं कह दिया कि वह संस्कार कर दे, चन्द्र ने पिता के पाँव नहीं छोड़े। पीछे चन्द्र ने स्वयं डॉक्टर को टेलीफोन पर बताया और जब उसने हीरे की अंगूठी की बात कही, तब डॉक्टर तथा पुलिस वालों से बात निश्चय हो सकी।

रात के बारह बजे डॉक्टर सरवर का टेलीफोन आया, "माथुर साहब! काम हो गया है। अभी तक तो सब बात गुप्त रही है। श्मशान-भूमि में एक जाली नाम लिखा दिया गया है। अब मेरा मान और अपमान आपके हाथ में है। आप अब अपनी लड़की के ग़ायब हो जाने की ऐसी कहानी बना लीजिये, जिससे आपके परिवार की मान-मर्यादा और मेरी भी इज्जत बनी रह सके।"

माथुर ने बिना उत्तर दिये टेलीफोन बन्द कर दिया।

: ६ :

माथुर को प्रातःकाल ही चौधरी मथुरासिंह का टेलीफोन आया। इसमें उसने लड़की के देहान्त पर शोक प्रकट कर कहा, "माथुर साहब! न जाने भगवान् किस प्रकार कर्मों का फल देता है। कोई कुछ कह नहीं

सकता। कर्मों की गति अति गहन है। इस कारण मेरा तो यही कहना है कि अब मोतीराम की बीवी को आप उसके घर में भिजवा दीजिये। मोतीराम बहुत छटपटा रहा है। कहीं कुछ किसी का अनिष्ट कर बैठा तो बहुत गड़बड़ होगी। आपकी लड़की का रहस्य उसको भी पता है। मैं चाहता हूँ कि अब उसको और क्रुद्ध करना उचित नहीं।"

माथुर ने कहा, "आप लड़की के विषय में क्या कहते हैं अथवा करना चाहते हैं, मैं कुछ नहीं समझता। रही मोतीराम की बीवी की बात। वह तो मैं मन से चाहता हूँ कि अपने पति के घर में चली जाये और उसके लिए मैं पूरी कोशिश करूँगा। मैं अभी वहाँ जा रहा हूँ और आशा करता हूँ कि सायंकाल तक इस विषय में कुछ-न-कुछ समाचार आपको दूँगा।"

चौधरी ने टेलीफ़ोन बन्द कर मोतीराम को, जो समीप ही बैठा था, कहा, "मोतीराम ! बधाई हो। निश्चय जानो कि सुन्दरी शाम से पहले तुम्हारे घर में आ जावेगी। यह लड़की का रहस्य बहुत बढ़िया हाथ में आया है। अब माथुर साहब की नाक में नकेल पड़ गई है और हम उसको उँगलियों के संकेत पर नचा सकेंगे।"

मोतीराम बहुत प्रसन्न था। वह रात को तो मीना महल होटल की अनैक्सी में काम करता था और दिन को नैशनल कन्स्ट्रक्शन कार्पोरेशन का काम करता था। इस कार्पोरेशन में पाँच पत्तीदार थे। चौधरी मथुरासिंह, मथुरासिंह की पत्नी, सोहनसिंह, सोहनसिंह की पत्नी और मोतीराम। पत्ती के अतिरिक्त मोतीराम को वेतन भी मिलता था। चौधरी अपने परिचय से ठेके लेता था और कम्पनी उन कामों को करती थी। चौधरी बिल पास करता था और लाभ में हिस्से पत्ती होती थी।

चौधरी मथुरासिंह ने अभी कल ही एक ऐसे काम का बिल म्युनिसिपल कमेटी से पास कराया था, जिसके करने का ठेका नैशनल कन्स्ट्रक्शन कार्पोरेशन को मिला था। यह काम न कभी आरम्भ हुआ था और न ही समाप्त। इस पर भी काम के पूरा होने का सर्टिफिकेट प्राप्त

कर लिया गया था। बिल पास होकर चैक चौधरी ले आया था।

वह चैक मोतीराम अपने बैंक में जमा कराकर वापिस में लौटा तो कार्पोरेशन के कार्यालय में आधी दर्जन पुलिस के लोग बैठे थे। एक क्षण के लिए चकित हो वह देखता रह गया। उसे आता देख, पुलिस सब-इन्स्पेक्टर ने मोतीराम के कन्धे पर हाथ रखकर कहा, "तुम हिरासत में हो।"

"क्यों ?"

"तुम्हारे वारंट हैं। जालसाजी का इल्ज़ाम है।"

"कहीं भूल तो नहीं कर रहे ? मैं मोतीराम हूँ।"

"जनाब ! जानता हूँ। आपके इस दफ़्तर की तलाशी ली जा रही है।"

मोतीराम कार्यालय के बाहर रखी बैंच पर बैठ गया। पुलिस के कर्मचारी कम्पनी के रजिस्टर और चिट्ठी-पत्री की फ़ाइलें देख रहे थे। इस समय चौधरी मथुरासिंह भी पकड़ा हुआ वहाँ आ गया। चौधरी का मुख विवर्ण हो रहा था। वह भी मोतीराम के पास लाकर बिठा दिया गया।

एक घण्टा-भर की खोज के पश्चात् पुलिस, जिसमें खुफ़िया पुलिस का एक अधिकारी भी था, सब काग़ज़-पत्र ले, थैलों में बन्द कर, सील कर मोतीराम और चौधरी को पुलिसवैन में बैठाकर थाने ले गई।

कोतवाल तथा हैड-कॉन्स्टेबल वहाँ पर उपस्थित थे। चौधरी ने कोतवाल को एक ओर ले जाकर पूछा, "यह क्या हुआ है ?"

कोतवाल का उत्तर था, "कुछ पता नहीं। दो घण्टे से ऊपर हुए हैं कि डिप्टी-कमिश्नर बहादुर का टेलीफ़ोन आया था कि म्युनिसिपल कमेटी और नैशनल कन्स्ट्रक्शन कॉर्पोरेशन के कार्यालयों पर छापा डालकर, खुफ़िया पुलिस के अफ़सरों के सामने तलाशी लेकर, उचित चिट्ठी-पत्री पर अधिकार कर लिया जाये। साथ ही आप दोनों के वारण्टों की तामील हो जाये।

"एक बात विचित्र यह हुई है कि खुफ़िया पुलिस के दोनों अफ़सर, जो जाँच पर लगाये गये हैं, मराटे हैं और केन्द्रीय विभाग के हैं।"

: १० :

वास्तव में यह प्रतिक्रिया थी चौधरी की माथुर को धमकी देने की। प्रातःकाल चौधरी ने माथुर को टेलीफ़ोन पर कहा था कि उसकी लड़की का रहस्य मोतीराम को विदित है। अब उसको और अधिक कुछ नहीं करना चाहिए। माथुर ने चीफ़-कमिश्नर से भेंट तो इस कारण माँगी थी कि वह सुन्दरी की मोतीराम से रक्षा का प्रबन्ध करना चाहता था। परन्तु जब चौधरी ने धमकी दी तो माथुर गम्भीर हो विचार करने लगा कि केवलमात्र स्वरक्षा से काम नहीं चलेगा। उसने निश्चय कर लिया कि अब तो आक्रमण करना ही होगा।

माथुर मोतीराम और चौधरी के म्युनिसिपल कमेटी में बहुत-से कारनामों को जानता था। उसको विदित था कि चौधरी म्युनिसिपल कमेटी का सदस्य होते हुए भी कन्स्ट्रक्शन कार्पोरेशन का, जो म्युनिसिपल कमेटी के ठेके लेती है, हिस्सेदार है। उसको यह भी विदित था कि कार्पोरेशन कमेटी के बहुत-से झूठ-मूठ के काम करती है और चौधरी उसके झूठे बिलों को पास करा देता है।

म्युनिसिपल कमेटी का एक क्लर्क, जिसको माथुर ने उन दिनों नौकर कराया था, जब वह स्वयं कमेटी का सदस्य था, चौधरी की प्रायः सब बातें माथुर को आकर बता जाया करता था। आज जब चौधरी ने उसको धमकी दी तो ये सब बातें उसके मस्तिष्क में तरो-ताज़ा हो आयीं। जब वह चीफ़-कमिश्नर से मिलने गया तो यह सब-कुछ उसके मन में विद्यमान था।

चीफ़-कमिश्नर माथुर से भली-भाँति परिचित था। इस कारण जब माथुर ने मोतीराम और चौधरी का कच्चा चिट्ठा बयान किया तो उसने कहा, "कुछ थोड़ा-सा प्रमाण भी हो तो जाँच हो सकती है।"

इस पर माथुर ने उस क्लर्क का पता बता दिया, जो उसको कमेटी के समाचार दिया करता था। उसने कहा, "मैं चाहता हूँ कि मिस्टर श्रवणकुमार सक्सेना म्युनिसिपल कमेटी के अकाउण्टैण्ट को यदि एकाएक बुला लिया जाये तो सब बात स्पष्ट हो जायेगी। इस जाँच का रहस्य एक ही है कि सब-कुछ एकाएक किया जाये।"

"यह कैसे हो सकता है?"

"आप अपना कोई चपरासी दीजिये। मैं उसको अपनी मोटर में एक चिट देकर भेजता हूँ और पन्द्रह मिनट में श्रवणकुमार यहाँ आ जायेगा। उसके बयान आपके सामने हो जाने चाहियें।"

चीफ़ कमिश्नर ने कुछ विचार कर कहा, "ठीक है।" उसने अपने एक चपरासी को बुलाकर कहा, "यह माथुर साहब एक चिट्ठी देते हैं। यह चिट्ठी लेकर उसके पास ले जाओ, जिसका पता उस पर है। उस आदमी को हो सके तो साथ ही लेते आओ। देखो, आधे घण्टे के भीतर आ जाना चाहिये।"

माथुर ने केवल यह लिखा, "मिस्टर सक्सेना! आप तुरन्त इस आदमी के साथ मोटर में चले आइये। बहुत जरूरी काम है।"

जब चपरासी मिस्टर सक्सेना को लेने चला गया तो चीफ़ कमिश्नर ने सेन्ट्रल इन्टेलिजेन्स डिपार्टमेण्ट के उच्च अधिकारी को टेलीफ़ोन द्वारा दो चतुर इन्स्पेक्टरों को तुरन्त भेज देने को कह दिया।

जब तक मिस्टर सक्सेना आया, खुफिया पुलिस के इन्स्पेक्टर पहुँच चुके थे। सक्सेना ने बयान दे दिया। इस बयान में सबसे आपत्तिजनक बात थी पिछले दिन का रुपया वसूल करना, जिसका बिल बिना किसी प्रकार का काम किये, कार्पोरेशन ने पास करवा लिया था।

लगभग बारह बजे तक कमेटी के कार्यालय और नैशनल कन्स्ट्रक्शन कार्पोरेशन के कार्यालयों की तलाशी आरम्भ हो गई और मोतीराम और चौधरी मथुरासिंह हिरासत में ले लिए गये।

अगले दिन चौधरी और मोतीराम रिमांड के लिए मजिस्ट्रेट के

सामने उपस्थित किये गए। सरकारी वकील ने लिखित बयान दिये कि चौधरी मथुरासिंह और मोतीराम का सरकार और म्युनिसिपल कमेटी को धोखा देने, झूठे बिल बनाकर रुपया वसूल करने का मुकद्दमा है। चौधरी मथुरासिंह के विरुद्ध यह भी आरोप था कि म्युनिसिपल कमेटी का सदस्य होते हुए ऐसी कम्पनी में हिस्सेदार है, जो म्युनिसिपल कमेटी के काम में है और लाभ करने के लिए बनी है। लाखों रुपयों का मामला है और सब काग़ज़ात तैयार करने में कम-से-कम पन्द्रह दिन लग जायेंगे। तब तक के लिए पुलिस रिमांड चाहती है।

चौधरी और मोतीराम की ओर से तीन वकील थे और उन्होंने दोनों की ज़मानत के लिए प्रार्थना कर दी। सरकारी वकील इस ज़मानत के विरुद्ध था। उसका कहना था कि अपराधी सरकार के लाखों रुपये ठग लेने के अपराध में पकड़े गये हैं। इस ठगे रुपये के बल पर ये साक्षियों को वरगलाने का यत्न करेंगे। और साथ ही कुछ लोग ऐसे भी हो सकते हैं, जो चौधरी साहब के निजी प्रभाव के कारण गवाही देने से इन्कार कर दें।

जमानत स्वीकार नहीं हुई। इसकी अपील सेशन-कोर्ट में की गई। वहाँ भी सरकारी वकील ने चौधरी के, गवाहों और प्रमाणों को गुम कर देने की सम्भावना बताई; परन्तु सेशन-कोर्ट ने इसको काफी वजह नहीं मानी और जमानत स्वीकार कर ली। दोनों को पचास-पचास हज़ार की जमानत पर छोड़ दिया गया।

: ११ :

माथुर चीफ़-कमिश्नर के कार्यालय से लगभग ग्यारह बजे लौट आया था। आज उसके लिए कई बातें विचार करने को थीं। सबसे बड़ी समस्या तो यह थी कि नीरा के एकाएक ग़ायब हो जाने की कथा बनानी थी। आज कचहरी में नहीं जाना था, इस कारण वह निश्चिन्त हो इस विषय पर विचार करने लगा। एकाएक उसका ध्यान एक बहुत

ही बढ़िया लिफ़ाफ़े पर, जो उसकी मेज़ पर सामने पड़ा था, चला गया। लिफ़ाफ़े पर पता लिखा था, 'श्री मुकुट विहारी माथुर, एम० ए०, बार-एट-लॉ।'

माथुर ने लिफ़ाफ़े को उठाकर उसमें का पत्र निकाला। यह एक निमन्त्रण-पत्र था। उसने पढ़ा। लिखा था, "डॉक्टर बलवन्तसिंह ऐम० डी० (लन्दन) और श्रीमती बलवन्तसिंह (प्रमिला बी० ए०) अपने विवाह के उपलक्ष में भोज पर श्री मुकुट विहारी माथुर को सपरिवार, बृहस्पतिवार सात फ़रवरी, १९५२ को, मैडन होटल के बाहर लॉन में आठ बजे आमन्त्रित करते हैं। पधारकर कृतार्थ करें।"

कार्ड के कोने में हाथ से लिखा था, "पिताजी! आपकी कृपा से मैं इस नवीन जीवन में पदार्पण कर रही हूँ। पूर्ण आशा है कि आशीर्वाद देने आवेंगे। माताजी को भी अवश्य लाइयेगा।"

माथुर इस निमन्त्रण को पढ़ और समझ चकित रह गया। वह मन में विचार कर रहा था, 'आज ही यह निमन्त्रण? क्या संयोग है?'

चन्द्र के मन पर नीरा के देहावसान से भारी चोट लगी थी। वह रात-भर भाँति-भाँति के विचारों में लीन, पलंग पर करवटें लेता रहा था। वह याद करता रहा था कि वह भी प्रमिला से यौन-सम्बन्ध बनाये हुए था और वह भी इस यत्न में रहती थी कि सन्तानोत्पत्ति न हो। यही बात नीरा कर रही थी। दोनों एक-दूसरे के विषय में जानते हुए भी साहस नहीं कर सकते थे कि इसको स्वीकार करें।

नीरा अपने में बीजारोपण को रोकने में असफल हुई। यदि प्रमिला भी अपने प्रयत्नों में असफल होती तो उसके लिए भारी कठिनाई उत्पन्न हो जाती और यह भी सम्भव है कि प्रमिला का भी जीवनान्त हो जाता।

इतना विचार कर वह कांप उठा। वह नीरा के असफल रहने क कारणों पर और उसके गर्भपात कराने के विषय पर विचार करने लगा। ऐसा उसने क्यों किया? वह समझता था कि बलवन्तसिंह के साथ उसको विवाह कर लेना चाहिए था। क्या ऐसी परिस्थिति में वह प्रमिला

से विवाह कर लेता ? इस प्रश्न पर वह स्तब्ध रह गया। उसको समझ आ रहा था कि वह भी विवाह के लिए राज़ी न होता और प्रमिला को गर्भपात कराने के लिए ही कहता। तो क्या बलवन्तसिंह ने नीरा को गर्भपात करने के लिए कहा था ? नीरा के कहने के अनुसार तो उसने बलवन्तसिंह से अपने गर्भ के विषय में कहा तक नहीं था। नीरा ने ऐसा क्यों नहीं कहा ? उसकी समझ में आया कि उसकी भाँति नीरा भी वैवाहिक जीवन के उत्तरदायित्व से बचने का यत्न कर रही थी और इसका भयानक परिणाम उसके सामने था।

बहुत विचारोपरान्त उसको यह समझ आया कि विवाह से बचने में कारण तो गृहस्थ-जीवन के उत्तरदायित्व से बचना ही हो सकता है; परन्तु बिना विवाह के यौन-सम्बन्ध कैसे ठीक हो गया ?

कभी वह विचार करता था कि कोई मरे अथवा जिये, समाज को इसकी चिन्ता क्यों है ? नीरा बालिग़ थी। वह बच्चे पैदा करना नहीं चाहती थी। उसने गर्भपात कराना चाहा और इस प्रयत्न में उसका जीवनान्त हो गया। तो समाज की क्या हानि हुई ? समाज इस विषय में क्यों ऐसा नियम बनाती है ? यह युक्ति उसके मन में कुछ अधिक देर तक टिक नहीं सकी। वह विचार करता था कि यदि गर्भपात से जीवनान्त करना आपत्तिजनक नहीं तो पानी में डूब मरना क्यों आपत्तिजनक है ? तब तो किसी भी बालिग़ की आत्महत्या आपत्तिजनक नहीं होनी चाहिए। इसके लिए उसका मन नहीं माना।

वास्तव में वह नीरा के देहावसान से इतना डर गया था कि उसको नींद नहीं आ रही थी और इस उनींदेपन में वह अस्त-व्यस्त विचारों में डूब रहा था।

देरी से सोने के कारण वह देरी से उठ पाया। दिन के आठ बज गये थे और वह अभी तक भी सो रहा था। जब वह उठा तो माथुर चीफ़-कमिश्नर से मिलने चला गया था। जब माथुर चीफ़-कमिश्नर के यहाँ से लौटा तो चन्द्र स्नान कर चाय पी रहा था। जब

माथुर प्रमिला और बलवन्तसिंह का निमन्त्रण लेकर अपनी पत्नी को बताने लगा तो चन्द्र प्रातः का अल्पाहार समाप्त कर उठने ही वाला था। माथुर ने निमन्त्रण-पत्र चन्द्र की माँ के हाथ में दिया तो वह पढ़ने लगी। जब चन्द्र की माँ ने निमन्त्रण-पत्र पढ़कर कहा, "तो प्रमिला और बलवन्तसिंह का विवाह हो गया है?" यह सुन चन्द्र जाता-जाता रुक गया और सुनने लगा।

चन्द्र की माँ ने कहा, "पूर्ण परिवार को बुलाया है।"

"हाँ। नीचे उसने अपने हाथ से भी कुछ लिखा है?"

चन्द्र ने पछा, "विवाह कब हुआ है?"

"यह नहीं लिखा। हाँ, भोज आज रात को आठ बजे है।"

"नीरा को भी बुलाया है?"

माथुर की हँसी निकल गई। उसने कहा, "मेरे पूर्ण परिवार को निमन्त्रण है। साहबज़ादे चन्द्र को भी है।"

"अब हम कैसे जा सकते हैं?" चन्द्र की माँ ने कहा।

"मोटर में सवार होकर।"

"आप भी कैसी बातें करते हैं? मेरा मन अभी तक स्थिर नहीं है। इस कारण मैं कहीं नहीं जा सकती।"

"तो तुमने फ़ैसला कर लिया है कि नीरा की मृत्यु की घोषणा करोगी?"

"क्यों?"

"घोषणा तो मैं कल करने लगा था। ऐसी घोषणा करता कि भारत के सब समाचार-पत्रों में बड़े-बड़े शीर्षकों के साथ मेरा और तुम्हारी लड़की का नाम छप जाता। तुम और तुम्हारे पुत्र ने यह करने नहीं दिया। अब तुम यह घोषणा स्वयं करना चाहती हो?"

"क्या करूँ? मुझको कुछ समझ नहीं आता।"

"नहीं समझ आता तो पूछ लो। किसी से राय लेने में क्या हानि है?"

"तो आप बताइये कि क्या करना चाहिए ?"

"आज सायंकाल बलवंतसिंह के भोज पर चलो और स्वाभाविक रूप में वहाँ कह देना कि नीरा बम्बई गई है।

"एक-दो दिन में उसके कार्यालय से भी पूछ-गीछ होगी। वहाँ मैं कह दूँगा कि वह बम्बई गई है। वह अब बम्बई से कभी नहीं लौटेगी।"

नीरा की माँ ने गहरा साँस लिया और चुप कर रही। इस पर माथुर ने चन्द्र को कहा, "साहबज़ादे को भी इसी योजना के अनुसार ही सबसे कहना चाहिये। मेरी राय मानो तो तुम भी रात को 'डिनर' पर चलो। हम सब को पूरे चार सौ बीस की भाँति अपना व्यवहार रखना चाहिये।" इतना कहते-कहते माथुर की विकराल हँसी निकल गई।

चन्द्र और उसकी माँ इससे डर गये। माथुर ने आगे कहा, "देखो विधाता का विधान। बलवंतसिंह और प्रमिला, दोनों हमारे परिवार का अंग बनने वाले थे। परन्तु इन लोगों के आचरण से वे तो गये ही, और हम कहाँ पहुँच गये हैं ?"

: १२ :

भोज के समय डॉक्टर बलवंतसिंह ने माथुर को अपनी पत्नी के बाईं ओर बैठा दिया। प्रमिला की माँ डॉक्टर की माँ के पास बैठी थी और उसके पास चन्द्र की माँ बैठ गई। चन्द्र माथुर साहब के बाईं ओर था। डॉक्टर ने माथुर को अपनी पत्नी के पास बैठाते हुए कहा, "ये कहती हैं कि आप इसके पिता समान हैं। मैंने इसीलिए आपके लिए यह स्थान नियत किया है।"

इस पर प्रमिला ने कहा, "नीरा नहीं आई, पिताजी ?"

"नहीं बेटा ! वह बम्बई गई है।"

इस पर बलवंतसिंह ने पूछ लिया, "कब ?"

"कल सायंकाल गई है।"

"कब तक लौटेगी ?" प्रमिला ने उत्सुकता से पूछा।

"क्यों ? कुछ काम है ?"

"जो स्थान उसके लिए बन रहा था, वह मैंने ले लिया है न। उससे क्षमा माँगना चाहती थी।"

"माँग लेना, जब वह आयेगी। मेरे लिए तो तुम में और उसमें कोई अन्तर नहीं। मैं हृदय से तुमको आशीर्वाद देता हूँ कि फूलो-फलो और दीर्घ तथा सुखमय जीवन पाओ।"

इस पर डॉक्टर बोल उठा, "आशीर्वाद देते समय एक बात आप भूल गये हैं, पिताजी! आपने इसको पुत्र-पौत्रों से युक्त होने की आशीष नहीं दी।"

"ओह! आजकल की लड़कियों की बातों को देख-देखकर तो यह धारणा बनती जाती है कि कदाचित् वे सन्तान चाहती ही नहीं। इस पर भी मैं अपनी ग़लती का सुधार करता हूँ। मैं चाहता हूँ कि आपका घर धन-धान्य और सन्तान से भरपूर हो।"

"पर पिताजी! हमने इसीलिए तो विवाह किया है।" बलवंतसिंह का कहना था।

बात बदलने के लिए प्रमिला ने चन्द्र को सम्बोधन कर दिया, "सुनाइये, आप कैसे हैं ?"

चन्द्र झेंप रहा था। उसने गला साफ कर कहा, "मुझको तुम्हारे इस नये जीवन में प्रवेश करने पर बहुत खुशी हुई है।"

"इस जीवन के लिए मुझको आपके पिताजी का धन्यवाद करना चाहिये। उन्होंने एक शब्द में जो सीख दी थी, उसके लिए जहाँ मैं उनकी जीवन-भर आभारी रहूँगी, वहाँ आपके अपराधों को भी क्षमा करती हूँ। मैंने अब सबके साथ ईमानदारी का व्यवहार अपना लिया है। इस कारण मैं निर्भय हो गई हूँ। मैं जानती हूँ कि मैंने किसी से भी कुछ छिपाकर नहीं रखा, जिसके लिए मुझको लज्जा लगती हो।"

चन्द्र आँखें नीची किये बैठा रहा। बलवंतसिंह, जो प्रमिला के दूसरी ओर बैठा था, बीच में बोल उठा, "मैं भी नीरा से क्षमा माँगने वाला

था। मुझको आशा थी कि वह अवश्य आयेगी। वास्तव में यह प्रबन्ध इतनी जल्दी-जल्दी हुआ है कि निमन्त्रण इससे पहिले तैयार नहीं हो सके।"

भोजन आया और सब खाने लगे। डिनर के पश्चात् घर लौटते समय माथुर ने कहा, "चन्द्र! यह जो-कुछ हुआ है, उस पर विचार किया है क्या? वास्तव में प्रमिला की जगह तुम्हारे साथ थी और बलवंतसिंह की नीरा के साथ।"

"रात-भर सोचता रहा हूँ, पिताजी! परन्तु कुछ समझ नहीं आया।"

"रात का सोचा सदैव व्यर्थ होता है। देखो चन्द्र! तुम और तुम्हारी बहिन, दोनों दास-मनोवृत्ति के जीव थे। जो-कुछ यूरोपियन साहित्य में, विशेष रूप में फ्रेंच-साहित्य में तुम लोगों ने पढ़ा, उसको मनन किये बिना सत्य मान, उस पर आचरण करने का यत्न किया है।

"किसी काल में राजा-महाराजाओं की दास-दासियाँ महाराजा दैव की जय-जयकार बुलाया करती थीं। महाराजा दैव—परमात्मा का स्वरूप माना जाता था और समझा जाता था कि वह कभी भी भूल नहीं कर सकता। समय के साथ यह दासता की भावना राजा-महाराजाओं के स्थान नेताओं में केन्द्रित हो गई। महात्मा गांधी की जय और स्टालिन की जय होने लगी। मैं तो हिटलर, स्टालिन, मुसोलिनी, लेनिन और गांधी, नेहरू इत्यादि को आप्त-व्यक्ति मान, उनकी पूजा करने वालों को वैसा ही दास मानता हूँ, जैसा महाराजा दैव की जय करने वाले एक दास को। महाराजा अपने पैतृक प्रभाव से और एक नेता अपनी वाक्-शक्ति से प्रजागणों को दासता की शृङ्खलाओं में बाँध रखते हैं। दोनों अवस्थाओं में जन-साधारण को अपना मार्ग विचारकर निर्माण करने का अवसर नहीं मिलता। जयकारों की नाद-ध्वनि में विचार-शक्ति लोप हो जाती है।"

चन्द्र दासता की यह व्याख्या सुन मन में बेचैनी अनुभव करता था। उसके पिता ने एक समय प्रमिला को लिखा था कि 'ईमानदार

बनो'। केवल इस बात ने प्रमिला के जीवन का काँटा बदल दिया था। वह चन्द्र की रखेल और कम्युनिस्ट पार्टी की यन्त्रवत् कार्य करने वाली मशीन के स्थान डॉक्टर बलवंतसिंह की पत्नी और स्वतन्त्रता से बड़े-से-बड़े व्यक्ति से मत-भेद रखने का अधिकार पा गई है।

आज उसके पिता ने उसको कहा कि वह दास है, नेताओं का अथवा कुछ युरोपियन लेखकों का। इसने चन्द्र को विचार करने पर विवश कर दिया। उसने अपने पिता से पूछा, "कैसे समझा जाये कि मैं किसी का दास हूँ?"

माथुर का स्पष्ट सुझाव था, "जब भी कोई बात मानने के लिए कहा जाये अथवा कोई कार्य करने को कहा जाये, तब उसको मानने अथवा करने से पहले पूछो, 'क्यों'। इस क्यों का उत्तर ही तुम्हारी दासता की शृङ्खलाओं को तोड़ देगा।

"देखो, मैं उदाहरण से बात समझाता हूँ। कांग्रेस के नेता ने कहा कि काश्मीर का, प्लेबिसाईट के बिना भारत में विलय नहीं होगा। मैं पूछता हूँ कि 'क्यों?'

"इस क्यों का उत्तर उस नेता ने बीसियों बार देने का यत्न किया, परन्तु उस उत्तर ने नवीन कई 'क्यों' उत्पन्न करने के अतिरिक्त और कुछ नहीं किया।

"प्लेबिसाईट करना इस बात को स्वीकार करता है कि काश्मीर में मुसलमानों की संख्या अधिक है और मुसलमानों को काश्मीर का भारत में विलय स्वीकार होने में सन्देह है।

"परन्तु भारत का वह नेता तो मुसलमानों को हिन्दुओं से अधिक देश-भक्त मानता है। वह हिन्दुओं को साम्प्रदायिक कहता रहता है। मुसलमानों में कभी साम्प्रदायिकता उसको दिखाई नहीं दी। कहीं कुछ ऐसा दिखाई दे तो उसका यह विश्वास है कि वह तो हिन्दुओं की साम्प्रदायिकता की प्रतिक्रिया-मात्र है।

"यदि यह बात मान लें कि देश के छोटे-छोटे भागों के रहने वालों

की अनुमति के बिना उनके स्थान को देश में सम्मिलित नहीं कर सकते, तब तो देश के लिए एक अति विकट समस्या उत्पन्न हो जायेगी। देश का कोई भी भाग देश में रहेगा ही नहीं।

"ऐसी अवस्था में उस नेता की इस बात पर फूल नहीं चढ़ाये जा सकते; परन्तु किस कांग्रेस-विचार के आदमी की शक्ति है कि नेता के इस कथन का खण्डन कर सके। यही तो दासता है।

"जहाँ बुद्धि को बेचकर, किसी दूसरे के कहने मात्र पर फूल चढ़ाये जायें, उसको ही तो दासता कहेंगे।"

चन्द्र अपनी पार्टी के कामों पर भी क्यों का प्रश्न करने लगा तो उसको बीस में से उन्नीस बातें ऐसी प्रतीत हुईं, जो वह केवल इस कारण मानता था कि पार्टी के नेताओं का आदेश है। वे बातें 'क्यों' की परि-निरीक्षा (स्क्रूटिनी) के सामने स्थिर नहीं रहती थीं। इस प्रकार उसके मन में, बैठे हुए विचारों के विरुद्ध विद्रोह उत्पन्न होने लगा।

एक दिन उसने मनुष्य समाज के इतिहास की कम्युनिस्ट-व्याख्या का अध्ययन करते हुए यह पढ़ा कि मनुष्य के सब कार्य भूख, अर्थात् शारीरिक आवश्यकताओं से प्रेरित होकर किये जाते हैं। तो वह पूछ बैठा, "कैसे ?"

बस फिर क्या था। विचार करते ही उसको अनेकों बातें ऐसी दिखाई देने लगीं, जो भूख, प्यास अथवा यौन-तृषा से प्रेरणा पाकर नहीं, परन्तु किसी अन्य कारण से की जा रही हैं। उसने नीरी का, गर्भपात के लिए अपने जीवन को संकट में डालने की, बात पर विचार किया तो उसको पता चल गया कि यह किस बात की प्रेरणा से हुआ है। वह अपने को कुरूप होने से बचाना चाहती थी। फिर वह विचार करता था कि अन्य स्त्रियों का, पुत्र-पुत्री प्राप्त करने की लालसा की पूर्ति में, प्रसव के कष्ट को भोगने के लिए, तैयार होना तो किसी शारीरिक आवश्यकता की पूर्ति के हेतु नहीं हो सकता।

इस प्रकार उसके मन में एक नया संसार खुल गया। कम्युनिस्ट

पार्टी का आदेश आया कि पार्टी की प्रतिष्ठा बनाने के लिए नेहरू सरकार का विरोध होना चाहिये। चन्द्र के मन में प्रश्न उपस्थित हुआ कि पार्टी की प्रतिष्ठा क्यों स्थापित करनी चाहिये? उसने यह प्रश्न अपनी पार्टी के नेताओं के सामने रख दिया। सब उसका मुख देखने लगे। नेता थे विपिन विहारी जोशी। वे बोले कि केन्द्रीय सभा का आदेश है।

"पर इसमें युक्ति क्या है?"

"हमको नियन्त्रण में बँधे हुए होने से यह माननी ही है।"

"पार्टी में नियन्त्रण ध्येय है अथवा किसी अन्य ध्येय में कारण?"

"मुख्य ध्येय तो प्रोलिटेरिएट-डिक्टेटरशिप स्थापित करना है।"

"जोशी जी! प्रश्न तो वही रहा कि वह डिक्टेटरशिप क्यों स्थापित करनी है?"

"इसीमें देश का कल्याण है।"

"तो यह देश का कल्याण नेहरू सरकार की प्रत्येक बात का विरोध करने में कैसे हो गया? मान लो कि पण्डित नेहरूजी यह घोषणा करते हैं कि देश में समाजवाद स्थापित होगा। तो क्या इसका भी विरोध किया जायेगा?"

"जब नेहरू जी ऐसा कहेंगे तो केन्द्र से नया आदेश हो जायेगा।"

"तो हमको ही यह जानने का अधिकार क्यों नहीं दिया जाता?"

"वे नेता हैं। नेताओं का कहना मानना हमारी पार्टी का नियम है।"

चन्द्र चुप कर रहा और समझ गया कि यह तो दासता है। एक बात उसके मन में स्पष्ट होती जाती थी कि डिक्टेटरशिप किसी की भी हो, मानवता को दासता की शृङ्खलाओं में बाँधने वाली है।

: १३ :

नीरा की अस्थियाँ उनके द्वारा चुनवा ली गईं, जिन्होंने उसका

संस्कार किया था और उन अस्थियों का प्रवाह हरिद्वार में कर दिया गया। परन्तु नीरा बम्बई से नहीं लौटी और धीरे-धीरे यह विश्वास हो गया कि वह किसी के साथ भाग गई है।

चौधरी को म्युनिसिपल कमेटी की मेम्बरी से पृथक् कर दिया गया। मोतीराम को होटल से पृथक् होना पड़ा और नैशनल कन्स्ट्रक्शन कार्पोरेशन को बैंक में से धन के निकालने और सरकार से मिलने वाले बिलों पर रोक लगा दी गई।

मोतीराम और चौधरी जब ज़मानत पर छूटकर बाहर आये तो उन्होंने सोहनसिंह से पूछा, "हमारा मुकद्दमा माथुर को क्यों नहीं दिया।"

"उसने मुकद्दमे में राय देनी तो स्वीकार की है। स्वयं कचहरी में उपस्थित हो बहस करने से न कर दी है।"

"क्यों?"

"यह तुम जाकर पूछ लो। मेरे साथ तो यह हुआ है कि स्थानीय थानेदार ने यह कह दिया है कि मैं होटल की अनेक्सी का काम-धन्धा नहीं कर सकता। केन्द्रीय सरकार के पुलिस के अधिकारी मेरे कार्य की देखभाल कर रहे हैं।"

मथुरासिंह माथुर से मिलने गया। उसने माथुर साहब से कहा, "आप इस मुकद्दमे में मेरी सहायता क्यों नहीं करते?"

"कर तो रहा हूँ। बात यह है कि मैं हूँ तुम्हारा मित्र। मैंने तुमको म्युनिसिपल कमेटी में सदस्य बनने में सहायता दी थी। इस कारण, यदि मैं खुले रूप में तुम्हारा मुकद्दमा लड़ूँ तो सब यही अनुमान लगायेंगे कि मैं भी तुम्हारी कार्पोरेशन से लाभ उठाने वाला हूँ। मैं ऐसी कोई धारणा बनने नहीं देना चाहता।"

"यह तो कोई प्रबल युक्ति नहीं है।"

"तुम्हारे विचार में यह दुर्बल युक्ति हो सकती है, परन्तु इसमें मैं अपना और तुम्हारा भी अनिष्ट मानता हूँ। देखो मथुरासिंह! तुम्हारे केस की फाइल मेरे पास रखी है और उसके विषय में सब विचार यहाँ

पर ही होता है। मैं और दूसरे वकील अपनी ओर से पूरा ज़ोर लगा रहे हैं। इस पर भी यह बात तुमको समझ लेनी चाहिये कि तुम्हारा पक्ष बहुत दुर्बल है। उन कामों की एक लम्बी सूची तैयार कर ली गई है, जिनके कराने का ठेका कार्पोरेशन को मिला था और जो करवाये नहीं गये थे, परन्तु जिनके बिल म्युनिसिपल कमेटी में गये हैं, पास हुए हैं और रुपया अदा हो गया है। मुसीबत तो यह है कि निर्माण उपसमिति के तुम चेयरमैन हो और सब ऐसे बिलों पर तुम्हारे हस्ताक्षर हैं। कई कामों की जाँच-रिपोर्ट पर भी तुम्हारे हस्ताक्षर हैं। इस पर भी हम प्रत्येक बात में तुम्हें बचाने का यत्न करेंगे।"

सोहनसिंह के होटल की अनेक्सी बन्द होने के कारण मोतीराम की नौकरी छूट गई। सोहनसिंह इस पर भी मोतीराम को एक सौ रुपया महीना दे रहा था। मोतीराम की आय बन्द हो गई थी और मुकद्दमे पर व्यय हो रहा था। यद्यपि उसके पास संचित धन कुछ तो था, इस पर भी अवस्था अनिश्चित होने के कारण उसने सुन्दरी को घर लाने का आग्रह नहीं किया था; परन्तु सुन्दरी के मन में कुछ और ही विचार काम कर रहा था।

जिस दिन मोतीराम और चौधरी मथुरासिंह के पकड़े जाने का समाचार पत्रों में छपा था और शोभा ने पढ़कर भाभी को सुनाया था, उस दिन से ही वह अपने मन में कुछ विचार करने लगी थी। वह नित्य शोभा को पूछती, "शोभा बेटी! तनिक पढ़ो तो। तुम्हारे दादा का कोई समाचार छपा है क्या?"

एक दिन शोभा ने सुनाया कि दादा जमानत पर छूट गये हैं। दिल्ली के रामनारायण गोटे वाले ने दादा की पचास हज़ार की जमानत दी है।

"पचास हज़ार की?" सुन्दरी ने विस्मय प्रकट करते हुए पूछा।

"हाँ, भाभी! यही लिखा है।"

"तो तुम्हारे दादा घर पर आ गये हैं क्या?"

"हाँ। समाचार-पत्र में लिखा है, 'विद्वान् सेशन-जज ने अपनी आज्ञा में लिखा है कि जमानत स्वीकार न करने का अर्थ यह हो सकता है कि मुलज़िम अपने मुकद्दमे की पैरवी न कर सके। यह तो अन्याय हो जायेगा, यदि किसी मुलजिम को सब सम्भव अवसर, अपने को बरी कराने के न दिये जायें। ज़मानत में इन्कार तब ही हो सकती है, जब मुलज़िम के लापता हो जाने का डर हो। पचास हज़ार की ज़मानत काफ़ी बड़ी है और यह विश्वास किया जाता है कि मुलज़िम भागेगा नहीं।"

"जज का भगवान भला करे।" सुन्दरी के मुख से निकल गया। शोभा मुख देखती रह गई। वह इस समय बारह वर्ष की ही थी और मनोद्गारों को समझ नहीं सकती थी। इस कारण उसने पूछा, "भाभी! दादा तो बहुत दुष्ट आदमी है न?"

"हाँ, बेटी! पर वे मेरे पति हैं। मेरा उनके साथ धर्म का सम्बन्ध है। मैं उनसे स्वयं तो लड़ सकती हूँ, परन्तु किसी दूसरे के द्वारा उनका अनिष्ट किया जाता देख नहीं सकती।"

उसी सायंकाल जब माथुर दुकान पर आया तो गोकुल ने कह दिया, "वकील साहब! भाभी आपसे मिलना चाहती हैं।"

"क्या बात है?"

"बताया कुछ नहीं। केवल यह कहला भेजा है कि जब आप आयें तो प्रार्थना कर दी जाये कि एक-दो मिनट के लिए दर्शन दें।"

माथुर मकान पर जा पहुँचा। सुन्दरी ने हाथ जोड़ नमस्कार की और उनको बैठाया। पश्चात् उसने अपने मन की बात कह दी। उसने कहा, "शोभा ने समाचार-पत्र में पढ़कर बताया है कि वे जमानत पर छूट गये हैं।"

"हाँ, भाभी!"

"कैसा मुकद्दमा है?"

"सरकार को धोखा देकर लाखों रुपये ऐंठने का मुकद्दमा है। इसमें मुख्य अपराधी तो चौधरी मथुरासिंह हैं। दादा बच सकते हैं, यदि वे

एक बार अपना मुकद्दमा चौधरी से पृथक् कर लें।"

"तो क्या होने वाला है ?"

"इनकी कम्पनी की सब जायदाद ज़ब्त हो जायेगी और चौधरी तथा दादा को सात-सात वर्ष तक की कैद हो सकती है। शेष तो जज के अधिकार में है कि दण्ड कम कर दे।"

"इनके बच जाने की कितनी आशा है ?"

"भाभी ! जहाँ तक मैं इस मुकद्दमे को समझा हूँ, इनके निर्दोष सिद्ध होने की तो बिलकुल आशा नहीं। हाँ दोष कितना बड़ा है और इनके दोष का कितना बड़ा दण्ड होना चाहिये, यह जज के विचार और निर्णय करने की बात है।"

"तो बहुत कठिनाई में हैं वे ?"

"हाँ। केवल मात्र एक ही आशा है। वह यह कि वह अपना मुकद्दमा चौधरी से पृथक् कर दें। इस अवस्था में भी कुछ दण्ड हो जाये, तो कह नहीं सकता।"

"वकील साहब ! मैं उनके पास जाना चाहती हूँ। इस भीड़ के समय में उनसे दूर नहीं रहना चाहती।"

माथुर सुन्दरी के इस निश्चय को सुन भौचक्का हो देखता रह गया। उसको चुप देख सुन्दरी ने कहा, "मैं उनके घर जा रही हूँ।"

माथुर ने केवल यह कहा, "भाभी ! कैद होने से पहिले वह तुमको मार डालने की योजना बना रहा था।"

सुन्दरी ने मुस्कराते हुए कहा, "तो क्या आप समझते हैं कि मैं उनके हाथ से मारे जाने के भय से यहाँ छुपी बैठी हूँ। पत्नी, पति के हाथ से मरे तो इससे उसकी अच्छी गति और क्या हो सकती है ? उनके होटल में पाप होता था। उस पाप की कमाई में से घर का खर्चा चलता था और उनके दिन-रात पापयुक्त कामों में लिप्त रहने से उनकी मति भ्रष्ट हो रही थी। उन पाप-कर्मों में मैं भागीदार न बनने के लिए यहाँ चली आई थी। अब तो यह सब-कुछ नहीं रहेगा न। बताइये, मैं चली जाऊँ ?

आप बच्चों की देखभाल का प्रबन्ध कब तक कर सकेंगे?"

माथुर ने कहा, "एकदम प्रबन्ध तो कठिन है। देखो भाभी! तुम ऐसा करो। दिन के समय जब बच्चे स्कूल जाते हैं, तो चली जाया करना और उनके स्कूल से आने के पूर्व आ जाया करना। इधर मैं शीघ्र ही कोई प्रबन्ध कर दूँगा।"

"अच्छी बात है। शीघ्रातिशीघ्र प्रबन्ध कर दीजिये।"

"कल तुम जाना। पहले देख तो लो कि वहाँ का वातावरण तुम्हारे अनुकूल भी है अथवा नहीं। पीछे बताना।"

सुन्दरी ने केवल यह कहा, "आप शीघ्र ही किसी औरत का प्रबन्ध कर लीजिये। मुझको वहाँ जाना ही है।"

: १४ :

माथुर का विचार था कि सुन्दरी के वहाँ जाने पर मोतीराम क्रोध से पागल हो उठेगा और सुन्दरी का कुछ अनिष्ट कर बैठेगा। इस कारण सुन्दरी को मन से वह वहाँ जाने की राय नहीं दे सका। इस पर भी वह यह विचार कर रहा था कि यदि सुन्दरी चली ही गई तो वह बच्चों को अपने घर ले जायेगा।

इस प्रकार विचार कर वह रामलाल के मकान से नीचे उतर आया। वह दुकान पर गया तो वहाँ एक और झगड़ा हो रहा था। एक पठान दो वर्ष पूर्व एक वास्केट सीने के लिए दे गया था और आज वह लेने चला आया था।

पठान कह रहा था, "तुम बेईमान है। मैंने तब भी कहा था कि तुम सिलाई पेशगी माँगता है तो जरूर तुम्हारा दिल बेईमान है। बताओ तुमको याद नहीं?"

माथुर को पठान की बात याद आ गई। उसने कहा, "ख़ान! क्या बात है?"

पठान ने माथुर को देख, सलाम की और कहा, "खुदा का शुक्र है

कि यह गवाह भी आ गया है। देखो साहब! दो साल हुए मैंने इनसे एक वास्केट के लिए कपड़ा खरीदा था और वास्केट सीने को दी थी। पहले तो यह वास्केट सीना नहीं चाहता था। जब मैंने सिलवाने का इसरार किया तो सिलाई पचीस रुपया माँगने लगा। मैं वह भी देने को तैयार हुआ तो सिलाई पेशगी की माँग कर दी। मैंने दे दी। उसी रात मैं पाकिस्तान चला गया था और फिर अपने घर वज़ीरस्तान में। वहाँ से आज ही दिल्ली आया हूँ और अपनी वास्केट चाहता हूँ।"

गोकुल ने वास्केट हाथ में पकड़ी हुई थी। उसने पठान की बात के उत्तर में कहा, "जी, मैं तो यह कह रहा हूँ कि खान ठीक कहता है। मैंने कहा है कि सिलाई की रसीद दिखादे और वास्केट ले जाये।"

इस पर माथुर ने कहा, "पठान! रसीद दिखाओ।"

"वह तो हमारे घर वज़ीरस्तान में रह गई है।"

माथुर हँस पड़ा और बोला, "तो एक रसीद लिख दो कि मैंने वास्केट वसूल पाई। अपने दस्तख्त कर दो और किसी की पहिचान लिखा दो।"

"हमको यहाँ कोई नहीं जानता।"

"यही तो मुश्किल है। बिना शहादत के तुम्हारी रसीद की कोई कीमत नहीं।"

"अच्छा एक है, जो मेरी शहादत कर सकता है। वह उस टैक्सी में बैठा है।"

"पर उसकी शनाख़्त कौन करेगा?"

पठान कुछ देर तक विचार कर बोला, "उसकी शनाख़्त तुम कर देना।"

इस पर माथुर और गोकुल हँसने लगे। माथुर ने कहा, "बिना जाने उसकी शनाख़्त मैं कैसे कर सकता हूँ?"

"साहब! तुम उसको जानता होगा। वह दिल्ली का एक बड़ा आदमी है।"

माथुर ने बाहर टैक्सी की ओर देखा। उसमें एक औरत मुख दूसरी ओर किये बैठी थी। माथुर कुछ देर तक विस्मय में विचार करता रहा। वह सोच रहा था कि यह कौन औरत है, जो दिल्ली में विख्यात है और इस पठान की शहादत करती है। उसने कहा, "अच्छा चलो। उसकी शहादत करवा दो।"

माथुर पठान के साथ-साथ टैक्सी की ओर चल पड़ा। वह औरत इनको उधर आते देख, टैक्सी में से उतर आई और माथुर साहब को हाथ जोड़कर नमस्ते करने लगी। माथुर ने उसको पहचान लिया। यह रानी थी। रानी मुस्करा रही थी।

"तुम ?" माथुर के मुख से निकल गया।

"रानी !" गोकुल ने कहा, "तुम इसके साथ ?" उसने पठान की ओर देखा। पठान इनकी ओर पीठ किये दुकान को देख रहा था। रानी ने कहा, "मैं बच्चों को देखना चाहती हूँ।"

इस समय तक माथुर सँभल गया था। उसको यह समझ आया कि रानी इस पठान का आश्रय ले भारत में आई है। इससे उसने तुरन्त कहा, "चलो ऊपर चलो। वहाँ पर बच्चे हैं।"

पठान को वहीं छोड़, माथुर और गोकुल रानी को लेकर मकान पर चढ़ गये। पठान ने टैक्सी वाले को भाड़ा दिया और इन सबके पीछे-पीछे मकान पर चढ़ आया। शोभा और मानिक घूमने जाने के लिए तैयार खड़े थे। रानी ने आवाज़ दी, "शोभा !"

शोभा ने पहचाना और लपककर गले से चिपट गई। सुन्दरी ने आवाज़ सुनी तो वह भी आकर रानी से गले मिली। माथुर के कहने पर सब बैठ गये। पठान को भी एक कुर्सी पर बैठने को कहा गया। जब भेंट करने का उत्साह ठण्डा हुआ तो रानी ने कहा, "माथुर बाबू ! क्या यह चमत्कार नहीं कि मैं यहाँ वापिस आ सकी हूँ ?"

"बिलकुल 'मिरेकल'। हम तो स्वप्न में भी इस बात की आशा नहीं कर सकते थे।"

"यह 'मिरेकल' इस पठान की सूरत में इनका किया हुआ है।"

"पठान की सूरत में?"

माथुर रामलाल के मुख पर देख रहा था। रामलाल खिलखिलाकर हँस पड़ा। उसने कहा, "वकील साहब! दो वर्ष पूर्व मैं इस दुकान पर यह देखने आया था कि मेरा यह बहुरूपिया-पन कितना पूर्ण है। मुझको यह जानकर हर्ष हुआ था कि आपमें से कोई भी मुझको पहिचान नहीं सका। मैं आज प्रातःकाल दिल्ली में पहुँचा हूँ और फतेहपुरी में रीगल होटल में ठहरा हूँ। मैं रानी को बच्चों से मिलाने के लिए लाया था। मेरे मन में मज़ाक सूझा कि अपनी वास्केट तो माँग लूँ। सौभाग्य से आप भी आ गये।"

माथुर बहुत ही गम्भीर विचार में पड़ा हुआ था। वह विचार कर रहा था कि रानी की कानून की रूह से भारत में क्या स्थिति है। वह भारत की नागरिक नहीं। सरकार ने उसको देश से निकाल दिया हुआ है। वह रामलाल की बीवी नहीं। कानून ने उसको रामलाल की बीवी माना नहीं और फिर वह यहाँ कैसे आ पहुँची है?

इसके आने का समाचार यदि पाकिस्तान सरकार को मिल जाये तो वह इसको पकड़ने का यत्न करेगी और कदाचित् भारत सरकार इसको पकड़कर पुनः पाकिस्तान सरकार के हवाले कर देगी।

एकाएक उसको एक बात सूझी। उसने पूछा, "रीगल होटल में क्या नाम लिखाया है।"

लिखाया है "यकूब जू, शादीपुर ज़िला बारह मूला का रहने वाला हूँ और अपनी बीवी फ़ातिमा के साथ हिन्दुस्तान की सैर करने आया हूँ।"

"ठीक। तुम अभी ऐसे ही रहो। एक-दो दिन में सिमला चलेंगे और वहाँ हाईकोर्ट में दरख्वास्त देनी पड़ेगी।"

"क्या प्रार्थना देनी होगी?" रानी ने पूछा।

"प्रार्थना रामलाल की ओर से होगी कि वह अपनी पत्नी को

पाकिस्तान से ले आया है। वह उसकी कानून से जायज़ बीवी है। उसको भारत सरकार द्वारा न पकड़े जाने की आज्ञा जारी की जाये। इस प्रार्थना में पहिले इंजंक्शन का उल्लेख करना होगा।"

इस पर रानी ने कहा, "यह सब फ़जूल है। हम तो एक दूसरी योजना बनाकर आये हैं। मैं फ़ातिमा पाकिस्तान की रहने वाली हूँ। इन मियाँ रहीम खाँ से मेरी शादी हो गई है। हम भारत के किसी अन्य नगर में इसी रूप में रहना चाहते हैं।"

"और ये बच्चे?"

"ये भी मुसलमान कर लिये जायेंगे और हमारे साथ रहेंगे।"

"पर यह क्यों?"

"इसलिए कि मेरा मन अब इस बेग़ैरत क़ौम में रहने को नहीं करता। जिस कौम की सरकार अपनी औरतों को बिना जाँच-पड़ताल किये ग़ैरों के हाथ में देने का कानून बना सकती है, उस कौम का एक जुज़ बनकर रहना मुझको पसन्द नहीं।"

सब बैठे हुओं की आँखें लज्जा के मारे झुक गईं। सुन्दरी इस औरत की दुखद् कथा के निर्माण में अपने पति का हाथ जान लज्जा से लाल हो उठी। सब चुप थे। रानी की आँखें तरल हो रही थीं।

रामलाल ने इस चुप्पी को तोड़ते हुए कहा, "माथुर साहब! वह सब-कुछ, जो रानी के साथ पाकिस्तान में बीता है, यदि आपको बताया जाये तो आप भी वैसा ही समझने लगेंगे, जैसा रानी समझती है। मैं तो उसके हिन्दू-जाति पर आरोप का उत्तर नहीं दे सका।"

रानी ने अपने ढुलकते आँसू पोंछते हुए कहा, "मैं विचारों से मुसलमान न कभी थी, न अब हूँ। मुझको उनकी बातें कभी भी पसन्द नहीं थीं। एक हिन्दू की शराफ़त देखकर हिन्दू बन बैठी थी। अब समझती हूँ कि उसके हमकौम तो मुसलमानों से भी गये-गुज़रे हैं। क्या ग़ज़ब का कानून बनाया है! एक मूर्ख सुपरिण्टेण्डेण्ट के हाथ में हज़ारों औरतों की मान-मर्यादा दे दी है। यह कानून बनाने वाले हिन्दू कौम

के चुने हुए पाँच सौ के लगभग नेता हैं। धिक्कार है मुझ पर, जो मैं भी उनमें अपनी और अपनी सन्तान की गणना करा सकूँ।"

माथुर समझता था कि रानी के वाक्य अति कटु हैं, परन्तु वह जानता था कि उनमें बहुत अंशों तक सच्चाई है।

वह अभी हिन्दुओं को भेड़-बकरियों की भाँति कांग्रेस को वोट देते देख चुका था।

उसने दिल्ली में एक चुनाव-क्षेत्र के समीप कांग्रेस कैम्प के बाहर, कांग्रेस के निर्वाचन-चिह्न, बैलों की जोड़ी के समीप खड़ी कुछ औरतों को यह कहते सुना था, 'जै गऊ माता की।'

इसको देख एक हिन्दू सभाई स्वयंसेवक ने जब लोगों को कहा, "भाई! इस तस्वीर पर मत भूल जाना। कांग्रेस गऊ को माता मानने वालों की पार्टी नहीं है। वह गऊ रक्षा का कानून तक बनाने को तैयार नहीं।" इस पर कांग्रेस के कार्यकर्ता कहने लगे, "झूठ है। भला पण्डित जवाहरलाल जी से बड़ा गऊ-रक्षक कौन हो सकता है?"

माथुर ने एक और स्थान पर कांग्रेस के निर्वाचन-चिह्न के समीप एक औरत को गूँथे आटे के एक पेड़े को लिए खड़े देखा था। वह कह रही थी, "भगवान के लिए कांग्रेस गऊ के मुख में पेड़ा देते जाओ।"

एक और कांग्रेस कैम्प के बाहर उसने राम, लक्ष्मण और सीता के एक सुन्दर चित्र के नीचे यह लिखा देखा था, 'महात्मा गांधी के राम। वोट गऊ के बछड़ों वाले डिब्बे में डालो।'

माथुर ने आँखें नीची किये हुए कहा, "रानी! तुम भी अनेकों भारतवासियों की भाँति भूल रही हो। जिन्होंने कानून बनाया है, वे तो हिन्दू नहीं हैं। वे अपने को हिन्दू कहते भी नहीं। वे सेक्युलर भावनाओं को मानने का दावा करते हैं। कहाँ तक उनकी सेक्युलर योजनाएँ शुद्ध और सत्य हैं, यह आज विचार का विषय नहीं। इस पर भी यह सत्य है कि संसद् के प्रायः सदस्य अथवा जिनके आदेश पर वे कार्य करते हैं, वे अपने को हिन्दू नहीं मानते।

"इसके विपरीत जो तुमको छुड़ाकर यहाँ ले आया है, वह तो हिन्दू होने का दावा करता है। इस पर भी मैं समझता हूँ कि अभी तुमको आराम करना चाहिए। दुःख के कारण विचार करने की शक्ति क्षीण हो जानी स्वाभाविक ही है।

"बच्चों से मिल लो और इन को यहाँ ही रहने दो। एक मुसलमान औरत और मर्द के साथ हिन्दू बच्चे व्यर्थ का सन्देह उत्पन्न करने वाले हो जायेंगे।"

: १५ :

माथुर तो रामलाल को यह कहकर कि वह अगले दिन प्रातः आठ बजे उसकी बैठक में आ जाये और वहाँ पर वे भावी कार्यक्रम बनायेंगे, चला गया।

शोभा और मानिक अपने पिता से उस उत्साह से नहीं मिल सके, जिससे वे अपनी माँ से मिले थे। वे धीरे-धीरे उसके पास आये और समीप आकर खड़े हो गये। बच्चों के संकोच को देखकर रानी और रामलाल दोनों हँस पड़े।

सुन्दरी ने रानी से कहा, "भगवान् का कोटि-कोटि धन्यवाद है कि तुम आ गई हो। बच्चों को छोड़कर मैं जा नहीं सकती थी और अब मैं अपने घर जाना चाहती हूँ।"

"क्यों?"

"तुम्हारे दादा एक मुसीबत में फँस गये हैं और उनके पास रहना मैं अपना धर्म समझती हूँ।"

"पर वकील साहब तो कह गये हैं कि बच्चों को अभी यहाँ ही रहने दूँ।"

"पर आखिर तो आओगी ही।"

"शायद न आऊँ।"

"क्यों?"

"मैं अब हिन्दू बनकर रहना नहीं चाहती। मुझ को अब शर्म आती है अपने को हिन्दू कहने में।"

"रानी बेटी! 'घोड़े की बला तबेले पर' क्यों डाल रही हो? हिन्दू धर्म ने क्या बिगाड़ा है?"

"तो यह किसने बिगाड़ा है?"

"मैं तो बहुत पढ़ी नहीं। यह रामलाल बाबू ही तुमको समझा सकेगा।

अगले दिन सुन्दरी बच्चों को स्कूल भेज मोतीराम के घर जा पहुँची। मोतीराम घर पर नहीं था। घर में नौकर सफाई कर रहा था। यह उस घर में नया था और सुन्दरी को जानता नहीं था। जब वह वहाँ पर पहुँची तो वह बितर-बितर मुख देखता रह गया। सुन्दरी बैठक घर में जाकर, एक कुर्सी पर बैठकर नौकर को बोली, "लालाजी कहाँ है?"

"वे घर पर नहीं है। आप क्या चाहती हैं?"

"कहाँ गये हैं?"

"शायद होटल पर होंगे।"

"तो जाओ उन को कहो कि उनको बीबीजी घर पर बुलाती हैं।"

"बीबी! उनकी कोई बीवी नहीं है। आप बाहर हो जायें। मैं ताला लगाकर उनको कहने जा सकता हूँ।"

"अच्छी बात है।" यह कह सुन्दरी घर से बाहर होगई और बोली, "जाओ उनको बुला लाओ।"

नौकर गया और मोतीराम को बुला लाया। वह समझ गया था कि सुन्दरी ही हो सकती है। आते ही उसने पूछा, "तो तुम आ गई हो?"

"हाँ, मगर अभी वहाँ जाना पड़ेगा। बच्चों की देखभाल के लिए अभी वहाँ कोई नहीं।" उसने रानी के लौटने की बात बतानी उचित नहीं समझी।

"तो इस समय आने की क्या आवश्यकता थी ?"

"आप पर भीड़ का समय आया देख चली आई हूँ। माथुर साहब को मैंने कल ही कह दिया था कि वे बच्चों के लिए कोई प्रबन्ध कर लें।"

"और उन्होंने क्या कहा है ?"

"उन्होंने दो-तीन दिन तक प्रबन्ध कर लेने का वचन दिया है। तब तक मैं नित्य दोपहर के समय तो आ ही सकूँगी।"

"मेरी नौकरी छूट गई है।"

"इससे कुछ हानि नहीं हुई।"

"परन्तु आमदन रुक जायेगी।"

"कोई और साधन बन जायेगा।"

"मुझको मुकद्दमे के लिए रुपया चाहिये।"

"सब सोना भूषण किधर गये हैं ?"

"सब बेचकर ठेकेदारी में लगा दिया था और वह सरकार ने अपने अधिकार में कर लिया है।"

"तो खर्चा कम करेंगे। भगवान् की कृपा हुई तो यह कठिनाई का समय भी निकल जायेगा।"

"मैं समझता हूँ कि मुझको कैद होगी और वह भी पाँच वर्ष से कम नहीं।"

"माथुर साहब कहते थे कि आप बच सकते हैं, यदि आप उनसे पृथक् में राय करें। वे कहते थे कि आप अपना बयान चौधरी से पृथक् में और माथुर साहब की राय से दें। वह आप के विषय में निराश नहीं हैं।"

"यह मैं देख लूँगा, परन्तु मैं तो यह कह रहा था कि अब यहाँ पर वह आनन्द नहीं मिल सकेगा, जो तुमको रामलाल के घर मिलता होगा। वहाँ तुम मालकिन बनकर रह रही थीं।"

"कुछ हानि नहीं होगी। मुझको आपके साथ ग़रीबी भी पसन्द है।"

"बहुत प्रेम उमड़ आया है मुझसे ?"

"जी नहीं, इसको प्रेम नहीं कहते। इसको कर्तव्य कहते हैं। मुसीबत

के समय, पत्नी का कर्तव्य है कि पति के साथ रहे।"

"छोड़ो इस बात को। कब जा रही हो तुम ?"

"तीन बजे तक जाऊँगी। अभी तो बहुत समय है। भीतर नहीं चलियेगा।"

मोतीराम अभी मकान के बाहर ही खड़ा था। सुन्दरी के सुझाव पर वह भीतर चला गया।

नौकर को काम पर लगा बैठक में बैठ, उसने सुन्दरी से पूछा, "क्या माथुर बाबू ने कहा है कि मैं छूट सकता हूँ ?"

"उन्होंने कहा है कि वे यत्न कर सकते हैं।"

"मुझको विश्वास नहीं आता। कैद होने से पहिले मैंने माथुर को धमकी दी थी कि यदि तुम मेरे घर न भेजी गईं, तो मैं उसको मार डालूँगा। मुझको सन्देह है कि उसने ही हमारे कार्पोरेशन की रिपोर्ट की है।"

"यह बात आपको सोहनसिंह ने कही है।"

"हाँ।"

"देखिये, यह सोहनसिंह आपको एक नहूसत चिपट गया है। पहिले उसने आपसे रामलाल का झगड़ा कराया। अब वह आपको माथुर से लड़ाना चाहता है। वह अव्वल दर्जे का झूठा और बेईमान आदमी है।"

"तुम्हारे पास इस बात का क्या प्रमाण है ?"

"है, तभी तो कहती हूँ। पहले तो वह आपका बीस हज़ार रुपया हज़म कर गया। फिर उसने यह वेश्यागार खोल लिया। आपको पकड़वाया उसने, आपको छुड़ाया रामलाल ने। आपसे बीसियों बेकसूर मुहल्ले वालों की शिकायत करवाई उसने और स्वयं चौधरी बनकर उनकी पुलिस वालों से सुलह कराई। इसमें सैकड़ों खुद खा गया और सैकड़ों ही पुलिस को दिलवाये। रामलाल की झूठी रिपोर्ट करवा दी। क्या अभी और प्रमाण चाहियें ?"

"सोहनसिंह कुचक्री हो सकता है, परन्तु माथुर ठीक आदमी नहीं है। अभी भी मैं माथुर साहब का एक ऐसा रहस्य जानता हूँ कि उनको नाकों चने चबवा सकता हूँ।"

"फिर वही बात। पहिले अपनी तो समेट लीजिये। पीछे दूसरों को चने चबवाने की बात विचार कर लीजियेगा। मैं तो आपसे यही कहने आई हूँ कि अपने मन की मैल निकाल दीजिये। शुद्ध हृदय से माथुर साहब से सहायता माँगिये। वे अब भी आपको बचाने में सफल होंगे। उनकी योग्यता का वकील आपको नहीं मिलेगा।"

"मुझको उस पर विश्वास नहीं बैठता।"

"और सोहनसिंह पर विश्वास है? मैं आपसे विनती करती हूँ कि आप इस बेईमान का साथ छोड़िये और भगवान् पर भरोसा रखिये। सब-कुछ ठीक होगा।"

मोतीराम यह तो जानता था कि सोहनसिंह बेईमान और झूठा है, परन्तु उसको विश्वास नहीं आता था कि वह उससे भी धोखा कर रहा है। सुन्दरी ने कहा था कि वह उसकी जड़ों में तेल दे रहा है। वह सुन्दरी से व्यर्थ का झगड़ा न कर, चुप कर रहा। सुन्दरी ने समझा कि उसने मोतीराम के मन पर कुछ तो प्रभाव पैदा किया है।

जब सुन्दरी लौट गई तो वह सोहनसिंह के पास गया। सोहनसिंह और चौधरी मुकद्दमे के विषय में विचार कर रहे थे। जब वह वहाँ पहुँचा तो चौधरी ने कहा, "मोतीराम! मैं यह देख रहा हूँ कि हमारे मुकद्दमे की पैरवी पृथक्-पृथक् रहने से भली-भाँति हो सकेगी।"

"क्यों?"

"वकीलों की यही राय है। मैं भी यही समझता हूँ। मैं अपने पृथक् बयान दे रहा हूँ। तुम अपने विषय में विचार कर लो।"

"तो कौन वकील तुम्हारा मुकद्दमा करेगा और कौन मेरा?"

"वैसे तो मुकद्दमा माथुर की बैठक पर ही तैयार होगा, परन्तु अदालत में हम एक-दूसरे से पृथक्-पृथक् रहकर ही लड़ेंगे। तुम्हारे मुकद्दमे

की पैरवी सेठ बनवारीलाल करेंगे।"

"वह तो अदालत में बात भी नहीं कर सकता।"

"सब-कुछ ठीक हो जायेगा। घर पर तो सब मिलकर ही राय किया करेंगे।"

"तो मेरे बयान क्या होंगे?"

"यह तुम बनवारीलाल सेठ से मिलकर बात कर लो।"

"बनवारीलाल को कितनी फीस देने के लिए कहा हुआ है?"

"पहली अदालत में पाँच सौ देने को कहा गया है।"

"अभी क्या दिया है?"

"पचास पहिले दिन दिये थे। शेष तुम दे देना।"

"मेरे पास तो अब रुपये नहीं हैं।"

"रुपये का बन्दोबस्त हो जायेगा।"

मोतीराम सीधा बनवारीलाल सेठ की बैठक पर जा पहुँचा। बनवारीलाल कचहरी से आया ही था और चाय पी रहा था। मोतीराम को देख बोला, "मोतीराम! तुम आ गये हो, सो ठीक किया है। मुकद्दमे ने रंग बदला है और तुमको सावधान हो जाना चाहिये।"

"क्या हुआ है?"

"चौधरी ने अपनी फाईल माथुर साहब के यहाँ से मँगवा ली है।"

"तो तुम मेरा मुकद्दमा करोगे?"

"हाँ, मेरा पाँच सौ पहिले जमा हो जाना चाहिये।"

"मैंने चौधरी से कहा है, और वह कहता है कि प्रबन्ध हो जायेगा।"

"नहीं मोतीराम! वह नहीं देगा। सोहनसिंह अभी आया था और कह गया है कि अब उन्होंने वकील पृथक्-पृथक् कर लिये हैं। इस कारण मुझको मेरी फीस तुम दोगे।"

"मैं ही दूँगा, परन्तु आज तो लाया नहीं। एक-दो दिन में जमा करा दूँगा।"

"ठीक है। अभी तारीख में दस दिन हैं। उससे पहिले फीस जमा

करा देना।"

मोतीराम इस सब का अर्थ नहीं समझ सका। वह सेठ की बैठक से नीचे उतर आया और सड़क पर खड़ा-खड़ा विचार करने लगा कि क्या करे। इस समय उसको माथुर की बात याद हो आई। वह उसकी कोठी में जा पहुँचा।

माथुर बैठक में अकेला बैठा था और एक कानून की पुस्तक देख रहा था। मोतीराम को देख उसने पूछा, "कैसे आये हो मोतीराम?"

"मुझको सेठ ने बताया है कि चौधरी अपने मुकद्दमे की फाईल यहाँ से ले गया है। यह ठीक है क्या?"

"हाँ।"

"मेरे मुकद्दमे के कागज़ात?"

"वे थे ही क्या? तुम्हारी पुलिस में रिपोर्ट और एक-दो, रुपया जमा कराने की रसीदें और कुछ सेठ के लिखे नोट। इनके अतिरिक्त जो-कुछ भी रुपया खर्च कर मसाला इकट्ठा किया गया था, वह चौधरी के वकील यहाँ से उठाकर ले गये हैं।"

"पर यह क्यों हुआ है?"

"यदि सत्य बात बताऊँ तो तुम मेरा विश्वास नहीं करोगे।"

"क्यों नहीं करूँगा? आपसे मेरा बहुत पुराना परिचय है। भला आपकी बात का विश्वास नहीं करूँगा तो किस की बात का करूँगा?"

"एक बार मैंने तुमको बताया था कि तुमको, गांधीजी की हत्या के पश्चात्, पकड़वाने वाला सोहनसिंह था और छुड़ाने वाला रामलाल। जानते हो तुमने क्या कहा था? तुम्हारा कहना था कि मैं जानता ही क्या हूँ?"

"वह मेरी भूल भी हो सकती थी।"

"इसी प्रकार तुम अब भी नहीं मानोगे।"

"आप समझा दीजियेगा। मैं बहुत कम पढ़ा-लिखा आदमी हूँ।"

"तो सुनो। चौधरी ने अपने ब्यान लिखाये हैं। उसमें वह यह

कहना चाहता है कि यह कारोबार अकेले मोतीराम का है। बेईमानी तुमने की है। वह तुम्हारा मित्र होने के कारण तुम्हारी बात का विश्वास करता रहा है और तुम्हारे बिल पास करवाता रहा है। शेष सब ज़िम्मेदारी तुम्हारी है। जो रुपया वह तुमसे लेता रहा है, वह उधार दिया हुआ है। वह लाभ की रकम नहीं थी।"

"तो फिर?"

"फिर यह कि तुम दस वर्ष के लिए जेल में और वह अपनी सुस्ती के कारण दस-बीस हजार जुरमाना देकर छूट जायेगा।"

"तो मुझको क्या करना चाहिये?"

"सेठ तुम्हारी फाईल भी यहाँ से ले जाना चाहता था। मैंने नहीं दी। देखो मोतीराम! मैं जानता हूँ कि एक समय तुम मुझको मार डालने की कोशिश में थे; परन्तु तुम्हारी पत्नी सुन्दरी ने रामलाल के बच्चों की देखभाल कर अपने सुहृदय का परिचय दिया है और उसके लिए ही मैंने तुम्हारी फ़ाईल अपने पास रख छोड़ी है। तुम चाहो तो मैं तुम्हारा मुकद्दमा लड़ूँगा। मुझको विश्वास है कि तुमको कम-से-कम दण्ड के साथ मुक्त करवा सकूँगा।"

मोतीराम चुप था। वह समझ नहीं सका था कि चौधरी, जो उससे इस प्रकार की बातें करता था, मानो उसका सगा भाई है, उससे इस प्रकार क्यों किनारा कर जायेगा?

उसको चुप देख, माथुर ने कहा, "मैं आज तो सिमले जा रहा हूँ। दो-तीन दिन में लौटकर आऊँगा। तब तुम मेरे पास आना। मैं कोशिश कर तुम्हारा मुकद्दमा लड़ूँगा।"

: १६ :

मोतीराम गया तो रामलाल और रानी उसकी बैठक पर पहुँच गये। माथुर ने रानी से पूछा, "बताओ रानी! क्या फ़ैसला किया है?"

"जब आप हमारे लिए इतना कुछ कर रहे हैं तो मैं आपका कहा

मानने में ही अपना कल्याण मानती हूँ।"

"तो सुनो। तुम्हारा पाकिस्तान भेजा जाना तुम्हारे हित में नहीं है। यहाँ पर बिना हाईकोर्ट की डिग्री के तुम्हारे लिए रहना सुरक्षित नहीं। इस कारण तुम और रामलाल, दोनों आज ही सिमला चलने के लिए तैयार हो जाओ। मैं एक और मुकद्दमे में वहाँ जा रहा हूँ। तुम्हारा काम भी करा दूँगा।

"जब हाईकोर्ट यह निर्णय दे दे कि तुम रामलाल की वैध बीवी हो, तब तुम भारत में रह सकोगी। चाहे तो हिन्दू बनकर रहना और चाहे मुसलमान बनकर।"

"मैंने अब फ़ैसला कर लिया है कि मैं वैसे ही रहूँगी, जैसे पहले रहती थी। भारत में भारतीय बनकर ही रहना चाहिये। ये कहते हैं कि भारतीय ही हिन्दू कहाते हैं। यदि यह ठीक है तो मैं हिन्दू बनकर रहने में कुछ भी हानि नहीं समझती। मुसलमान तो भारतीय बनकर रहना नहीं चाहते थे। कदाचित् वे अब भी पसन्द नहीं करेंगे। इस कारण मुसलमान बनकर रहने का प्रश्न ही नहीं रहा।"

सिमला हाईकोर्ट ने विमेन-रिकवरी विभाग पर पक्का इन्जँक्शन लगा दिया कि फ़ातिमा उर्फ़ रानी रामलाल की बीवी को पकड़कर पाकिस्तान भेजने का उनका अधिकार नहीं है।

मोतीराम ने यह बयान दे दिया कि वह तो कार्पोरेशन में कर्मचारी-मात्र था। मालिक चौधरी और सोहनसिंह थे। ये लोग अपनी जान बचाने के लिए उसको आगे रख रहे थे। इनका अपना रुपया ही होता था, जो वे उसके नाम में, खाते में जमा कराते रहते थे। इस कारण इस कार्पोरेशन में, जो-कुछ भी अनियमितपन रहा, उसका उत्तरदायित्व उस पर किसी प्रकार भी नहीं।

इसको माथुर ने भली भाँति सिद्ध कर दिया और सेशन-कोर्ट में जाकर मोतीराम छूट गया। चौधरी की जायदाद कुर्क हो गई और उसको पाँच वर्ष की कठोर क़ैद का दण्ड हुआ।

एक दिन मुकद्दमे से माथुर लौटा तो चन्द्र को हाथ में नोटबुक और पुस्तकें लिये हुए आते देख, माथुर ने पूछ लिया, "यह क्या है ?"

"किताबें हैं। मैंने 'लॉ' में प्रवेश ले लिया है। मैं समझता हूँ कि कानून पढ़े बिना राजनीति समझ में नहीं आ सकती।"

"हुर्रे !" माथुर ने प्रसन्नता से उछलते हुए कहा, "बहुत ठीक कर रहे हो।"

रानी को पाकिस्तान से लौटे हुए एक वर्ष से ऊपर हो चुका था और वह रामलाल के व्यवहार से जहाँ प्रसन्न थी, वहाँ चकित भी। पाकिस्तान में वह वेश्या-वृत्ति कर चुकी थी और रामलाल इसको जानता था। इस पर भी उसका व्यवहार रानी से वैसा ही मधुर और प्रेममय था, जैसा पाकिस्तान जाने से पहिले था। वह इस पर प्रायः विस्मय किया करती थी, परन्तु उसको उससे पूछने का साहस नहीं होता था।

जब मोतीराम मुकद्दमे से बरी हो गया तो एक दिन रामलाल ने माथुर और मोतीराम को अपने यहाँ आमन्त्रित किया। वह सुन्दरी की बच्चों की देख-भाल के कारण पुनः मोतीराम से अपना सम्बन्ध ठीक करना चाहता था।

इस दिन रानी अपने मन के संशयों को और अधिक मन में दबाकर रख नहीं सकी। उसने खाने की मेज़ पर बैठे हुए पूछ ही लिया, "वकील साहब ! आप हिन्दू हैं क्या ?"

माथुर हँस पड़ा। उसने हँसकर कहा, "रानी ! यह प्रश्न आज कैसे उत्पन्न हो गया ? कोई नई बात हुई है ?"

"महात्मा गांधी भी हिन्दू थे और पण्डित जवाहरलाल जी भी हिन्दू हैं। यहाँ वे लोग भी हिन्दू हैं, जो किसी औरत के कहीं भूल से किसी मर्द की ओर नज़र भर कर देख लेने पर उसको पतिता मानते हैं। सुन्दरी भाभी भी हिन्दू हैं, जो अपने पति से मार डालने के यत्न के पश्चात्, भीड़ के समय उसके पास जाने में अपना धर्म समझती हैं और वे भी हिन्दू हैं, जो पति के माँसाहारी होने पर, उसको जीवन-भर के लिए

छोड़ जाती हैं। इधर आप हैं, जो यह जानते हुए कि मैं कितनी पतिता हूँ, मेरे घर खाने के लिए चले आये हैं। इसी से मैं विस्मय करती हूँ कि हिन्दू कौन हैं ?"

"रानी! ये सब हिन्दू हैं। मैं भी हिन्दू हूँ। विचारणीय बात तो केवल इतनी है कि कौन किस प्रकार का हिन्दू है। मैं महात्मा गांधी के ढंग का हिन्दू नहीं हूँ, न ही मैं पण्डित जवाहरलालजी की प्रकार का हूँ।

"हिन्दू एक जाति है। इसमें अच्छे और बुरे सब प्रकार के लोग हैं। इसमें दास-प्रवृत्ति के और स्वतन्त्र-प्रवृत्ति के लोग भी सम्मिलित हैं।

"मैं तो स्वतन्त्र-प्रवृत्ति रखता हूँ। मैं प्रत्येक बात को मानने अथवा करने के पूर्व उसके विषय में 'क्यों' का प्रश्न पूछने वाला हूँ। तुम पाकिस्तान से लौटी और रामलाल ने तुम्हारी उस दुर्दशा का वृत्तान्त बताया, जो पाकिस्तान में हुआ था। इस पर भी मैं तुम्हारी सहायता के लिए तैयार हो गया था। मेरे मन ने कहा, 'क्यों सहायता न करूँ ?' इस 'क्यों' का उत्तर आया कि तुम एक श्रेष्ठ औरत हो। तुम्हारी सहायता करनी चाहिये। मैं उन दासों में नहीं हूँ, जो यह जानकर अपना मत बनाते हैं कि अमुक बड़ा आदमी क्या मत रखता है ?

"मेरे लिए स्लोगनों (समाघोषों) का कुछ मूल्य नहीं है। मेरे लिए तो भय नाम की कोई वस्तु नहीं है। कोई मेरे विषय में क्या कहता है, यह मेरे चिन्तन का विषय नहीं है। मेरे लिए तो एक ही कर्तव्य है कि मेरा आचरण भय-रहित, स्वतन्त्रता-युक्त और विचारकर निश्चय किया, हुआ हो।"

विलोमगति

कोष में 'विलोम' शब्द के अर्थ हैं, प्रतिकूल, विपरीत, संगीत में स्वर का अवरोह या उतार। विलोमगति प्रगति से विपरीत अर्थ रखती है।

परन्तु जैसे केवल सुन्दर नाम रख लेने से कोई कुरूप रूपवान नहीं बन जाता, उसी प्रकार अपने मत को प्रगतिवाद कहने-मात्र से कोई मत उन्नतिशील नहीं हो जाता।

'प्रगतिवादी' कम्युनिस्ट विचारधारा को मानने वाले ही हैं। कम्युनिज्म के प्रवर्त्तक कार्ल मार्क्स और उसके साथी एंजिल कम्युनिज्म के तीन स्तम्भ मानते हैं। एक, वर्ग-युद्ध में विश्वास, अर्थात् सांसारिक वस्तुओं पर श्रमिकों का अधिकार लाना। दूसरा, उद्देश्य की प्राप्ति के लिए सब साधनों की उपादेयता और तीसरा, उद्देश्य की प्राप्ति युक्ति अथवा समझौते से न मानकर, केवल रक्त-रंजित क्रान्ति से ही सम्भव समझना।

इन तीनों बातों के आधार पर प्रगतिवाद का ढाँचा खड़ा किया गया है। युक्ति और अनुभव इन तीनों आधारों को निरर्थक, असफल और मानवता के लिए अहितकर सिद्ध करते हैं। आज तक संसार में उन्नति इन आधारों पर कदापि नहीं हुई। इतिहास इस बात का साक्षी है कि संसार के बड़े-बड़े तथा सफल आन्दोलन, जिनसे मनुष्य का कुछ भी कल्याण हुआ है, वे विचार-परिवर्तन के आन्दोलन हुए हैं, विचार थोपने नहीं। विचार-परिवर्तन प्रचार, आग्रह और कटु अनुभवों के परिणाम होते हैं।

भारत में इस्लाम का प्रचार बल से करने का यत्न किया गया। बल इस्लाम राज्य तो स्थापित हो गया, परन्तु विचार-परिवर्तन नहीं हो

सका। जब विचार-संघर्ष हुआ और बुद्धि इस्लाम की सहायक सिद्ध नहीं हुई तो इस्लामी शासन पलट गया, परन्तु हिन्दू विचारधारा जीवित रही।

ईरान, मिस्र, टर्की इत्यादि देशों में अवश्य इस्लामी विचारधारा का प्रचार बल से हुआ है। परन्तु इसमें कारण यह है कि पराजित विचारधारा इस्लामी विचारधारा से युक्ति में हीन थी। भारत में भी निम्न-बुद्धि के तथा अशिक्षित लोगों में इस्लाम का प्रचार हुआ; परन्तु यह भी सत्य है कि यहाँ की विचारधारा ने गुरु नानक, कबीर, तुलसी, समर्थ गुरु रामदास इत्यादि अनेकों विचारक उत्पन्न किये, जिन्होंने इस्लामी विचारधारा के दाँत खट्टे कर दिए। इस कारण यहाँ परिणाम ईरान आदि देशों से भिन्न हुआ है।

यही बात कम्युनिज़्म की हो रही है। रूस में ज़ार का शासन समाप्त हुआ क्योंकि ज़ार का शासन राजनीतिक दृष्टि से हीन वस्तु थी। कम्युनिस्ट बल से राज्य तो पा गए परन्तु वे कम्युनिस्ट-विचारधारा को लोगों पर थोप नहीं सके। कार्ल मार्क्स और ऐंजिल का, श्रमिकों का शासन स्वप्न-मात्र रह गया है। वहाँ शासन कुछ धूर्त, चतुर, क्रूर और स्वार्थ-लोलुप कम्युनिस्टों का रह गया है। रूस में जहाँ विचार-स्वातन्त्र्य नहीं, जहाँ बोलशिविक पार्टी के अतिरिक्त अन्य कोई पार्टी नहीं बन सकती, जहाँ अन्य देशों की पुस्तकें, पत्र-पत्रिकाएँ तथा विचार-साहित्य पढ़ने पर प्रतिबन्ध है, वहाँ यह कहना कि शासन जनता का है और बोलशिविक पार्टी के उन कुछ सदस्यों का नहीं, तथा जनता उन्नति की ओर जा रही है, केवल मात्र भ्रम है।

कथित प्रगतिवाद का युक्तियुक्त विश्लेषण और विवेचना प्रस्तुत उपन्यास में अत्यन्त ही रोचक ढंग से की गई है। उपन्यास विचारोत्पादक है।

उपन्यास के लेखक प्रसिद्ध उपन्यासकार श्री गुरुदत्त हैं। मूल्य ५)

दिनांक Date	उधारकर्ता की संख्या Borrower's No.	दिनांक Date	उधारकर्ता की संख्या Borrower's No.
SEP 1997	505/Q		